श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर (राज.)

श्री आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति

उदयपुर-अहमदाबाद

द्वारा प्रकाशित साहित्य

आगम ग्रन्थ	लेखक
श्री अन्तकृद्दशाङ्ग सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री अन्तकृद्दशाङ्ग सूत्र	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री उपासक दसाङ्ग सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री विपाक सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री नन्दी सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री उत्तराध्ययन सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'

आगम साहित्य	लेखक
भक्ति कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
स्वर्णिम पद् चिन्ह	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
विचार विचि	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
आवर्त्त	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद प्रवचन कुमुदी	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
काव्य कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
काव्य रश्मि	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद काव्यांकुर	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
मानस के राजहंस	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्रुत स्तोत्रस्विनी	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
स्वरूप चिंतन	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
पद्य पुष्प	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
चिंतनामृत	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
देहरी के दीप	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
शाश्वत स्वर	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
संगीत कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
चिंतन अनुचिंतन	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
अंतर्यात्रा	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद काव्यामृत	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
अंत: अभ्युदय	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
जैन तत्त्व दर्शन (खण्ड-1) (थोकड़ा श्री भगवती सूत्र)	श्री विमल कुमार जी नवलखा
जैन तत्त्व दर्शन (खण्ड-2) (थोकड़ा श्री प्रज्ञापना एवं विविध सुत्तागमो से)	श्री विमल कुमार जी नवलखा

जैन तत्त्व दर्शन

खण्ड 1

श्री भगवती सूत्र

जैन तत्त्व दर्शन

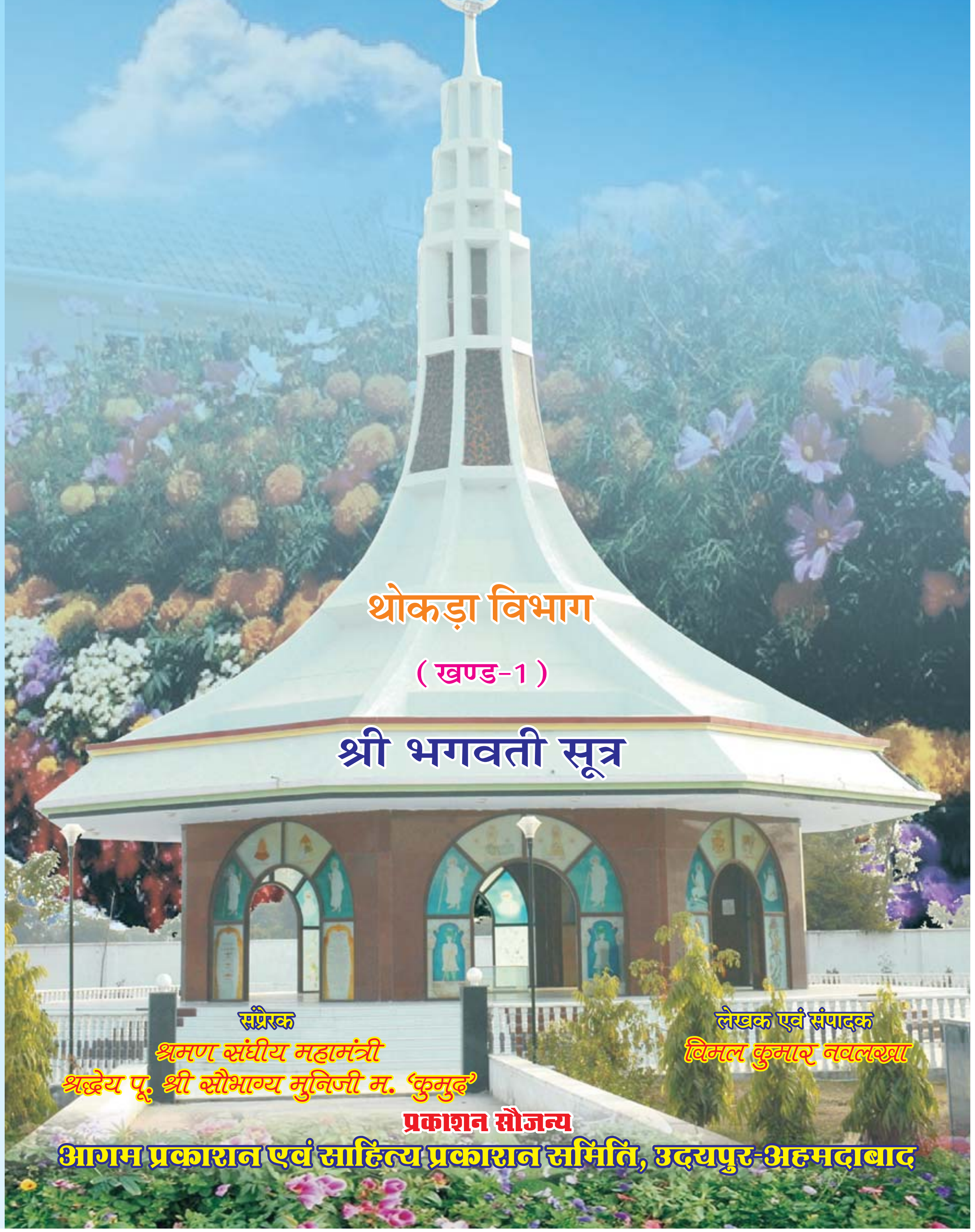

थोकड़ा विभाग

(खण्ड-1)

श्री भगवती सूत्र

संप्रेरक
श्रमण संघीय महामंत्री
श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक एवं संपादक
विमल कुमार नवलखा

प्रकाशन सौजन्य
आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति, उदयपुर-अहमदाबाद

जैन तत्त्व दर्शन

थोकड़ा विभाग

(खण्ड-1)

श्री भगवती सूत्र

संप्रेरक

श्रमण संघीय महामंत्री

श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक एवं संपादक

विमल कुमार नवलखा

प्रकाशन सौजन्य

आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति

उदयपुर- अहमदाबाद

प्रकाशक

श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर

卐

पुस्तक - जैन तत्त्व दर्शन
थोकड़ा विभाग खण्ड-1
(श्री भगवती सूत्र)

संप्रेरक - श्रद्धेय पूज्य श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक - विमल कुमार नवलखा

प्रकाशक - श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर

सौजन्य - आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति
उदयपुर-अहमदाबाद

पुस्तक प्राप्ति स्थान - 1. आगम प्रकाशन समिति अहमदाबाद, फोन : 09327013225
2. श्री अम्बा गुरू शोध संस्थान, उदयपुर, फोन : 2412992
Web-Site : www.saubhagyaguru.com
3. विमल कुमार नवलखा, पीपोदरा ता. मांगरोल, जि. सूरत (गुज.)
फोन. 02621-234884 मो. 09426883605

मुद्रक - स्वदेशी ऑफसेट, उदयपुर (राज.)-313001
E-mail : swadeshioffset@gmail.com
Ph. : 0294-2417204, Mo. : 09784845675

प्रथमावृत्ति - 1000

मूल्य - ₹ 50.00 (अर्द्ध मूल्य)

लेखक के उद्गार...✍

संसार में धर्म के समान अन्य कोई वस्तु श्रेष्ठ एवं उपकारक नहीं है। धर्म ही प्राणी मात्र को विपत्ति के समय में सहायता देने वाला तथा पतन के गर्त्त से बचाने वाला है। सच तो यह है कि सांसारिक पदार्थ यहाँ तक कि जीव के साथ रहने वाला शरीर भी आयु कर्म की समाप्ति होने पर यहीं रह जाता है, केवल धर्म ही जीव के साथ परलोक में जाता है, धर्म ही जीव को सुख एवं शांति प्रदान करता है।

धर्म अमृतमय रसपान है, जो इस दुनियाँ को अशांति और असंतोष की व्याधि से मुक्त कर सकता है। अतएव धर्म के व्यापक और सर्वतोमुखी प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है।

जैन धर्म के मूलभूत सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार से संपूर्ण विश्व में सुख-शांति का संचार हो सकता है। जैन धर्म के मूलभूत तत्त्व इतने उदार एवं व्यापक है जो विश्व स्तरीय समस्याओं का व्यावहारिक समाधान करने की क्षमता रखते हैं। भगवान महावीर के मौलिक सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता और अनुकूल अवसर आज पहले से कही अधिक रूप से उपस्थित है। आज जैन समाज पर यह गुरुत्तर दायित्व है कि वह अपने चरम तीर्थंकर आराध्य महाप्रभु के अनमोल उपदेशों को विविध एवं विधिवत् रूप से विश्व के कोने-कोने में फैलाये, यही भक्ति का सच्चा परिचय है।

आज का युग विज्ञान का युग है, हमारे जैन आगमों में वैज्ञानिक तत्त्व कूट-कूट कर भरे हैं। एक-एक पद में हजारों हजार अर्थ, उनमें अनन्त-अनन्त वैज्ञानिक रहस्य छुपे हुए है, उन्हें पढ़कर, उनका चिंतन मनन कर विश्व को हम बहुत कुछ प्रदान कर सकते हैं, अथवा विश्व इन आगमों से बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है। मक्खन प्राप्त करने वाला हितेक्षुक दही का बिलौना करता है। मधुर इक्षु रस को चाहने वाला गन्ने को पीलता है। चंदन की सुगंध प्राप्त करने वाला उसे घिसता है, मोती का इच्छुक महासागर का मंथन करता है। इसी प्रकार सारभूत तत्वों को प्राप्त करने वाला अथाह परिश्रम, आगम मंथन करता है।

गहन, सारभूत, रहस्यमय तत्वों से भरे वीतराग महाप्रभु की वाणी रूप आगम ग्रंथों के सारभूत तत्वों की प्राप्ति करने हेतु हमारे महामहिम पूर्वाचार्यों ने आगमों की अनुप्रेक्षा कर, अथाग परिश्रम कर थोकड़ों के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। ये थोकड़े जैनागमों के सारभूत हैं। ये आगम का रसायन है, आगमों का अर्क और आगमों की कुंजी है।

मेरे मानस में हमेशा कुछ कर दिखाने की अभिलाषा रही है। मनुष्य शरीर ही मुक्ति का निमित्त है, इसके बिना मोक्ष संभव ही नहीं है। अत्यंत प्रबल पुण्योदय से इस भव की प्राप्ति हुई है, इसे पाने के लिए देव भी लालायित रहते हैं। मनुष्य भव में ही विशिष्ट विवेक प्राप्त होता है। बुद्धि का प्रकर्ष होता है। ऐसे जीवन को प्राप्त कर भी यदि कुछ विशेष नहीं किया, धर्म आरोहण नहीं किया, आत्म कल्याण की साधना नहीं की तो यह भव प्राप्त करना ही निरर्थक हो जावेगा। मात्र विषय भोग में या मात्र सांसारिक उलझनों में पड़कर या फँसकर, आसक्त होकर यों ही वृथा जीवन बर्बाद कर देने से तो गाँठ की पूँजी भी जायेगी और भारी ऋणी भी बन जाना होगा। ऐसे महान् दुर्लभ मनुष्य भव की प्राप्ति पुनः न जाने कब होगी। अतः मेरा चिंतन हमेशा धर्म का रसपान करने में ही ओतप्रोत रहने में निमग्न रहता है।

इस बार मैंने जैनागमों के थोकड़ों को कुछ नया रूप देकर लिखा है, इनमें जगह-जगह चार्ट और समीकरण दिये हैं, जिन्हें सहज रूप से चिंतन मनन किये जा सकते हैं। विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत स्नातक एवं अनुस्नातक (ग्रेजुएट, पोस्ट ग्रेजुएट) विद्यार्थियों को जहाँ जैन साहित्य और दर्शन के विषय पढ़ाये जाते है, वहाँ उन विद्यार्थियों को अत्यंत सरल रूप से समझने में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होंगे। मुमुक्षुगण जिन्हें बोल थोकड़ों का ज्ञान है अथवा सीखना चाहते है, उन्हें तो अत्यंत सरल लगेंगे। कुल मिलाकर संपूर्ण समाज के लिए यह कृत्ति वरदान सिद्ध हो ऐसी मेरी मनोकामना रही है।

जैन तत्त्व दर्शन थोकड़ा विभाग के दो ग्रंथ बनाये है। एक प्रथम भाग में श्री भगवतीसूत्र के थोकड़ों पर दिग्दर्शन किया है, और दूसरे भाग में श्री प्रज्ञापनासूत्र एवं अन्य आगमों जैसे जीवाजीवाभिगम, उत्तराध्ययन,

नंदी, समवायांग, ठाणांग, अनुयोगद्वार आदि कई आगमों के विविध थोकड़ों का समायोजन किया है।

मेरा मनोबल बढ़ाने में मेरी दो बहिन साध्वीश्री शीलप्रभाजी साध्वीश्री सत्यप्रभाजी महासती वर्यायों का अतुलनीय योगदान रहा, जिन्हें स्वयं को कई आगम कंठस्थ है, चार्ट आदि देने की उनकी भावना समाहित है।

मेवाड़ संघ शिरोमणी पूज्य प्रवर्तक स्व. गुरुदेव श्री अम्बालाल जी महाराज सा. का आशीर्वाद तो मुझ पर बाल्यावस्था से ही रहा है, यह उन्हीं के आज्ञा निर्देशों का परिणाम है, आज जो भी हूँ यह गुरु भगवन्तों के आशीर्वाद स्वरूप हूँ। मेरे लेखन कार्य और शैली को मेवाड़ संघ कुलभूषण श्रमणसंघीय महामंत्री, परम श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्य मुनिजी महाराज 'कुमुद' ने देखा और श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान के द्वारा प्रकाशित कराने का विचार व्यक्त किया। यह क्षण मेरे लिए कितना सुखद था, इसकी कल्पना शब्दों द्वारा अवतरित नहीं की जा सकती। बस एक अनमोल क्षण था, आत्म रमण का क्षण था, भावनात्मक क्षण था।

मेरा मूल उद्देश्य ज्ञान का अर्जन उपार्जन और प्रचार-प्रसार रहा है। इससे पूर्व भी मैंने समस्त जैनागमों का हिन्दी सारांश लिखने का संयोजन किया है। अभी कुछ दिनों पूर्व मैंने पर्वराज पर्यूषण में प्रवचनादि के लिए एक पुस्तक "अन्तर्मन के मोती" लिखी जो प्रकाशित होकर समाज को लाभान्वित कर रही है। बस यही ध्येय है कि इसी प्रकार जिनशासन की सेवा में लगा रहूँ और ज्ञान, विवेक, बुद्धि का समायोजन कर संपूर्ण जैन समाज की सेवा करता रहूँ।

अरिहन्त भगवन्तों की अविनय आशातना हो गई हो तो बारम्बार क्षमा प्रार्थी हूँ। पाठक महानुभावों से सानुरोध निवेदन है कि आगम एवं अनेक ग्रन्थों से समायोजन कर यह पुस्तक लिखी गई है, फिर भी जानते, अजानते, दृष्टि अथवा लिपि दोष से कही भी त्रुटियाँ रह गई हो वृहद् हृदय से क्षमा करें।

पीपोदरा | लेखक
ता. 1.2.2011 | **विमल कुमार नवलखा**
(जगपुरा वाला)

लेखक परिचय

प्रस्तुत '**जैन तत्त्व दर्शन**' थोकड़ा विभाग (खण्ड-1) **श्री भगवती सूत्र** पुस्तक के रचनाकार तत्त्वचिन्तक आगमों के अध्येता श्री विमल कुमारजी नवलखा का जन्म वि.सं. २०११ के कार्तिक सुदी ५ ज्ञान पंचमी दि. १-११-१९५४ को भीलवाड़ा जिलान्तर्गत आसीन्द तहसील के जगपुरा ग्राम में हुआ।

पुण्योदय से आप आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. एवं मेवाड़ संघ शिरोमणि पू. प्रवर्तक श्रद्धेय श्री अम्बालालजी म.सा. के सम्पर्क में आये। गुरुदेवों के शुभाशीर्वाद से अपनी प्रामाणिकता के बल पर व्यावसायिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित होकर परिवार व समाज की सेवा में अग्रसर बनें। आपकी धार्मिक-भावना एवं श्रुत-सेवा की रूचि प्रबल से प्रबलत्तर होती गई। सन् १९७५ में आप श्री स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा के सक्रिय एवं कर्मठ सदस्य बनें तथा पूरे भारतवर्ष में प्रत्येक राज्य के प्रमुख नगरों में पधारकर पर्युषण पर्वाराधनार्थ सेवाएं प्रदान की। जैन-समाज के लिए अति उपयोगी जैनागमों के हिन्दी सारांश जैन-धर्म-दर्शन के लिए अप्रतिम देन है। आपकी इस श्रुत-सेवा से सम्पूर्ण जैन समाज गौरवान्वित हुआ है।

आपकी दो बहिनें श्रद्धेया शीलप्रभाजी म.सा. एवं श्रद्धेया सत्यप्रभाजी म.सा. आचार्य श्री विजयराजजी म.सा. के सानिध्य में संयम-साधना में निरंतर अग्रसर है।

प्रस्तावना

आगम साहित्य में लोक को शाश्वत बताया गया है, कहा है कि लोक अनादिकाल से है, और रहेगा। विश्व संदर्भ में जैनों का दृष्टिकोण यह है कि यह विश्व अकृत्रिम है, इस लोक का निर्माता या सृष्टिकर्त्ता नहीं है। ''ऋषि भासित'' के अनुसार लोक की शाश्वतता के सिद्धान्त का प्रतिपादन भगवान पार्श्वनाथ ने किया। वस्तुतः यह सिद्धान्त तो अनादि ध्रुव सिद्धान्त रहा है, पहले भी समस्त ज्ञानियों ने कहा, आगे चलकर भगवान महावीर ने भी इसका अनुमोदन किया (ऋषि भासित 31/9, भगवती 9/33)। जैन दर्शन लोक को शाश्वत, अकृत्रिम मानता है, और यह स्वाभाविक है, और यह अनादिकाल से चला आ रहा है। किन्तु जैनागमों का यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता, जैन दार्शनिकों का विश्व के संदर्भ में नित्यता का स्वीकार करना, कूटस्थ नित्यता नहीं परिणामी नित्यता है। परिवर्तनशीलता मानकर भी प्रवाह और प्रक्रिया की अपेक्षा से नित्य या शाश्वत कहते हैं।

जैनागमों में विश्व के मूलभूत घटक के लिए अस्तिकाय, तत्त्व, द्रव्य आदि शब्द प्रयोग मिलते हैं। अस्तिकाय दो शब्दों के मेल से बना है, अस्ति का अर्थ है सत्ता या अस्तित्व और काय का अर्थ- शरीर। यहाँ शरीर शब्द भौतिक शरीर अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ, यहां इसका लाक्षणिक अर्थ होता है ''कायत्व माख्यं सावयवत्वं'' (पंचास्तिकाय टीका) जो अवयवी द्रव्य है, वे अस्तिकाय हैं। अवयवी (अंगों से युक्त) यानि विभिन्न अंग, हिस्से हैं, वे अस्तिकाय हैं। धर्म, अधर्म, आकाश अविभाज्य, अखंड द्रव्य है, किन्तु क्षेत्र की अपेक्षा लोक व्यापी है, अतः कल्पना की जा सकती है, यद्यपि परमाणु स्वयं में निरंश, अविभाज्य और निरवयव है, परन्तु वे ही परमाणु स्कंध बनकर कायत्व या अवयवत्व धारण कर लेते हैं। अतः जैन दर्शन में परमाणु पुद्गल को भी अस्तिकाय माना है। परमाणु में दूसरे परमाणु को स्थान देने की अवगाहन शक्ति है, उसमें कायत्व का सद्भाव है। भगवती सूत्र में परमाणु को तो अप्रदेशी भी कहा है, इसलिए अस्तिकाय कहना ही होगा। तत्वों की चर्चा के प्रसंग पर जड़ और चेतन द्रव्यों यानि जीव और अजीव की चर्चा की है, और आश्रव संवर आदि उनके पारस्परिक संबंधों की भी चर्चा की है। जीव अजीव की चर्चा और उनके भेदों के साथ जीवों के भी परस्पर भेद बताये तथा उनके आश्रव, बंध आदि के प्रसंग में अपेक्षा से अभेद को भी स्वीकार किया। द्रव्य शब्द सामान्य होते हुए भी द्रव्यों की लक्षणात्मक विशेषताओं के आधार से उनमें भेद करता है। द्रव्य सामान्य, विशेषात्मक है। द्रव्य परिवर्त्तनशील अपरिवर्तनशील दोनों गुण धारण करता है और तत्त्व उभय (परिवर्त्तन, अपरिवर्त्तन) तत्वतः अपेक्षा ऐसे ही भेद से उनका ज्ञान होता है। तत्त्व भेदात्मकता का बोध देता है। जैन दर्शन भेद, अभेद दोनों को स्वीकार करता है किन्तु उनमें अपेक्षाएं भिन्न होती है। जैनागमों में जो अस्तिकाय है, वे द्रव्य है ''गुणानां आसवो दव्वो'' (उत्तरा. 28/6) गुण द्रव्यों के आश्रित रहते हैं। द्रव्यों के वर्गीकरण में अस्तिकाय (जीव, धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल) तथा अनस्तिकाय (काल) है।

आत्मा एक मौलिक तत्त्व है, स्वतंत्र अस्तित्व है, जड़ से इसकी उत्पत्ति नहीं होती। पांच इंद्रियों के विषयों का ज्ञान करने वाला आत्मा है। (सूत्रकृतांग टीका 1/1/8)। सामान्य रूप से जीव को अपौद्गलिक, विशुद्ध, चैतन्य एवं जड़ से भिन्न माना है। जीव में संकोच, विस्तार, प्रदेश परिस्पंदन, मूर्त्त कर्मों से आबद्ध होना आदि जो होता है उसका कारण पर भाव है। रागादि जीव के परिणाम हैं किन्तु विकृत परिणाम है। साधकों का अन्तिम लक्ष्य निर्विकार चेतना की साधना है।

हमारा वर्त्तमान जीवन (व्यक्तित्व) न सर्वथा पौद्गलिक है, न सर्वथा अपौद्गलिक। कोई भी शरीरधारी जीव अपौदगलिक नहीं है, जैनाचार्यो ने उसमें संकोच, विस्तार, बंधन आदि माने हैं वे विकार परिणाम का कारण हैं- मूल स्वरूप तो अपौद्गलिक ही है और अपौद्गलिक उसकी (जीव की) अन्तिम परिणति है, जो शरीर मुक्ति से पहले कभी प्राप्त नहीं होती। जीव की अपौद्गलिकता आदर्श है, जागतिक तथ्य नहीं।

भगवान महावीर से प्रश्न पूछा कि भगवान! जीव वही है जो शरीर है, या जीव भिन्न है, और शरीर भिन्न है? भगवान ने फरमाया हे गौतम! जीव शरीर भी है और शरीर भिन्न भी है (भगवती 13/7)।

श्री भगवती सूत्र में चारों अनुयोगों का सुन्दर समावेश है, फिर भी तत्त्व निरुपण, द्रव्य निरुपण, अस्तिकाय-अनस्तिकाय इन सबका सुन्दर विवेचन

होने से द्रव्यानुयोग का समुन्दर लगता है। प्रत्येक शतक में विभिन्न प्रकार के प्रश्न, प्रश्नकर्त्ताओं ने जिज्ञासा स्वरूप, कदाचित ज्ञानवृद्धि स्वरूप, कदाचित शंका समाधान स्वरूप, कदाचित परीक्षा स्वरूप पूछे हों, परन्तु छत्तीस हजार प्रश्नों का विस्तृत विवेचन पाकर, श्रद्धालु हो या तार्किक स्वमति हो या अन्यमति (स्वसिद्धान्त-परसिद्धान्त) श्रमण हो या श्रावक स्वयं को धर्म में अवस्थित कर ही लेता है। प्रश्न चर्चा करने आये अन्य तीर्थी भी नतमस्तक हो गये। गोशालक के प्रभाव से यत्किंचित शंकास्पद बने गांगेय अणगार की परीक्षा (सच्चा तीर्थंकर कौन?) स्वरूप भांगों के निष्पादन ने जहां गांगेय अणगार को विश्व प्रसिद्ध बना दिया, वहां स्वयं गांगेय अणगार ने सद्बोध प्राप्त कर कर्मक्षय कर सिद्ध स्वरूप प्राप्त किया। भव्य जीवों को सम्यक्त्व और मिथ्यात्व कहां से कहां पहुंचा देता है, जमालि के अधिकार से सीखने को मिलता है (गांगेय अणगार, जमालि अधिकार भ. श. 9 उ. 32) नरक, देवता, तिर्यंच, मनुष्य चार गति के जीवों का जन्म, मरण, कर्म बंध, स्थिति, अवगाहना, आदि संबंधित, तीन लोक, 6 द्रव्य, नवतत्त्व, द्वीप समुद्र, जीवाजीव से संबंधित अनेक प्रश्नों का समुचित समन्वय के साथ समाधान श्री भगवती सूत्र में हुआ है।

वर्तमान समय में 32 आगम माने जाते है, श्री भगवतीसूत्र पाँचवाँ अंगसूत्र है। बड़ा ही महत्वशाली है, इसमें श्रमण भगवन् श्री महावीर स्वामी से जिन-जिन के प्रश्नोत्तर हुए उनके नाम इस प्रकार है-

साधु-साध्वी (1) इन्द्रभूति (गौतम स्वामी) (2) अग्निभूति (3) वायुभूति (4) मंडित पुत्र (5) रोहा अणगार (6) मुरूदत्त पुत्र (7) नारद पुत्र (8) तिष्य (9) निर्ग्रंथी पुत्र (10) सर्वानुभूति (11) सुनक्षत्र (12) सिंह मुनि (13) शिवराजर्षि (14) ऋषभ दत्त (15) जमालि (16) स्कंदक (17) आनन्द रक्षित (18) कालास्यवेषी पुत्र (19) काश्यप (20) मैथिल (मेदिल) (21) कालिय पुत्र (22) केशी स्वामी (23) पिंगलक (24) उदायन राजर्षि (25) गांगेय अणगार (26) आर्या देवानन्दा (27) आर्याचंदनबाला (28) अइमुत्त (अति मुक्तक)।

श्रावक श्राविका-(1) ऋषिभद्र (2) शंख (3) पोक्खली (4) चेड़ाराजा (5) अभिचिकुमार (उदायन राजा का पुत्र) (6) अम्बड़ परिव्राजक (7) श्रेणिक राजा (8) रेवती श्राविका (9) सुदर्शन (10) प्रभावती (11)उत्पला (12) मृगावती (13) जयन्ती (14) चेलना (15) कोणिक राजा (16) सहस्त्रानीक (17) शतानीक (18) शिवभद्र (19) बल (20) धारिणी (21) आनन्द (22) कामदेव (23) मंडुक (24) आलम्भिया नगरी के श्रावक (25) तुंगिया नगरी के श्रावक (26) सुलसा (27) शिवानन्दा आदि।

देव-(1) शक्रेन्द्र (2) ईशाननेन्द्र (3) चमरेन्द्र (4) सूर्याभदेव आदि।

अन्यतीर्थिक और तापस-(1) अग्नि वैश्यायन (2) अच्छिद्र (3) अर्जुन गोमायु पुत्र (4) अन्नपालक (5) अयंपुल (6) उदय (7) कलन्द (8) कर्णिकार (9) कालोदायी (10) गर्दमाल (11) गोशालक (12) नर्मोदय (13) नामोदय (14) पूरण (15) वैश्यायन (16) साण (17) शैल पालक (18) शैलोदायी (19) शैवालोदायी (20) सुहस्ती (21) शंख पालक (22) हालाहला (23) शिवराज (24) सोमिल ब्राह्मण आदि।

देश, नगरी और पर्वत आदि के नाम-(1) कयंगला (कृतांगला) (2) काकन्दी (3) काशी (4) कूर्मग्राम (5) कोशाम्बी (6) कोलाकसन्निवेश (7) क्षत्रियकुंडग्राम (8) चम्पा (9) ताम्रलिप्ती (10) तुंगिया (11) नालंदा (12) बिभेल सन्निवेश (13) भारत (14) मगध (15) मलय (16) माहण कुंडग्राम (17) मिथिला (18) मेंढ़ियग्राम नगर (19) मोया नगरी (20) राजगृह (21) लाटदेश (लाढ़) (22) वच्छ देश (23) वज्रदेश (24) बंगदेश (25) वाणारसी (बनारस) (26) वाणिज्य ग्राम (27) विन्ध्यगिरि (28) वितभय (29) वैशाली (30) वैभारगिरि (पर्वत) (31) शखणा सन्निवेश (32) श्रावस्ती (33) सिद्धार्थग्राम (34) सिंधु सौवीर देश (35) सुंसुमारपुर (36) हस्तिनापुर आदि।

चैत्य और उद्यान-(1) अशोक वन खण्ड (2) कोष्ठक चैत्य (3) गुणशील (4) नन्दन (5) द्युति पलाश (6) पूर्णभद्र (7) पुष्पवर्तिका (8) बहुशाल (9) मणिभद्र (10) मृगवन (11) शंखवन (12) सहस्त्राम्रवन उद्यान आदि।

उपरोक्त साधु-साध्वी-साध्वी, श्रावक-श्राविका, देव अन्यतीर्थिक आदि के पूछे गये प्रश्नों के उत्तर श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी ने दिये है। 36000 प्रश्न पूछे गये, उनके उत्तर विस्तार के साथ श्री वीर प्रभु ने फरमाये है।

इस शास्त्र रूपी महासागर में से तत्त्व रूपी अनमोल रतन ग्रहण करने की अभिलाषा वाले भव्य प्राणियों के लिए भगवान ने चार अनुयोग द्वार फरमाये-

(1) द्रव्यानुयोग-जीवादि नवतत्व कर्म, छ द्रव्य, सात नय, चार निक्षेप, सप्त भंगी, आठ पक्ष, उत्सर्ग, अपवाद, सामान्य विशेष, आविर्भाव, तिरोभाव, कार्यकारण भाव, द्रव्य, गुण, पर्याय, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इत्यादि वस्तु वर्णन हो, द्रव्यानुयोग कहते है।

(2) गणितानुयोग-क्षेत्र की लंबाई, चौड़ाई, नदी, द्रह, पर्वत आदि का परिमाण, देवलोक, विमान, नरक, नरकावासा, ज्योतिषी देवों की चाल, ग्रह नक्षत्र का उदय, अस्त, सम, वक्र, होना, वर्गमूल, धन आदि की फलावट का वर्णन गणितानुयोग।

(3) चरणकरणानुयोग-मुनि के पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति, दस यति धर्म, सत्ररह प्रकार का संयम, बारह प्रकार तप, पच्चीस प्रकार प्रतिलेखना, आहार के 47 दोष, 124 अतिचार, श्रावक के 12 व्रत, ग्यारह पड़िमा, सामायिक, पौषध आदि का वर्णन जिसमें किया जाय वह चरणाकरणानुयोग है।

(4) धर्मकथानुयोग-तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, आदि 63 श्लाघ्य पुरुषों का जीवन चारित्र तथा मांडलिक राजा, सामान्य राजा, सेठ, सेनापति आदि का जीवन चरित्र और न्याय नीति, हेतु, युक्ति, अलंकार आदि का वर्णन धर्मकथानुयोग है।

इन चारों में द्रव्यानुयोग कार्यरूप, शेष तीन कारण रूप है। भगवतीसूत्र में चारों अनुयोगों का समावेश है, तथापि द्रव्यानुयोग विशेष है। इसे द्रव्यानुयोग की महानिधि की उपमा दी है। (1) यह मूल एक श्रुत स्कंध है (2) मूल 41 शतक है। (3) 138 अन्तर शतक है, बत्तीसवें शतक तक एक-एक शतक है। 33 से 39वें शतक तक 12-12 और 40वें शतक में 21 अन्तर शतक है (32+84+21+1=138) है। (4) भगवतीसूत्र के 19 वर्ग है (5) 1924 उद्देशा है (1925 कही है उपलब्ध 1923 है)। 8वें शतक तक 10×8=80+34+34+12+10+1+10+10+14+17+10+10+ 10+(21) 80 + (22) 60 + (23) 50, (24) 24 (25) 12 (26) 11 (27) 11 (28) 11 (29) 11 (30) 11 (31) 28 (32) 28 (33) 124 (34) 124 (35) 132 (36) 132 (37) 132 (38) 132 (39) 132 (40) 231 (41) 196 ये 1924 उद्देशा हुए।

(6) भगवतीसूत्र में वर्तमान में करीब 15775 श्लोक परिणाम है।

(7) भगवतीसूत्र की टीका वर्तमान में 18000 श्लोक परिणाम है।

(8) भगवतीसूत्र की वाचना 67 दिन में दी जाती है। गोशालक के पन्द्रहवें शतक की वाचना दो दिन में देने से 67 दिन लगते है, एक दिन में पूरी हो जाये तो 66 दिन लगते है। पहले से आठवें शतक तक 2-2 दिन से 16 दिन, नवमें से 14वें शतक तक तीन-तीन दिन से 18 दिन, पन्द्रहवें गोशालक का एक दिन में न हो सके तो दूसरे दिन आयंबिल करके पढ़ना चाहिए (और भी शेष रह जाय तो तीसरे दिन भी आयंबिल करके पढ़ना चाहिए), 15वें से 20वें शतक तक प्रत्येक की तीन-तीन दिन से 15 दिन, 21वें 22वें 23वें की एक-एक दिन 3 दिन, 24वाँ 25वाँ दो-दो दिन से 4 दिन, 26वें से 33वें तक 8 शतक एक-एक दिन से 8 दिन, 34वें से 41वें तक 8 शतक के 8 दिन। इस प्रकार शिष्यों को भगवतीसूत्र की वांचना देनी और वाचना लेने वाले मुनि आयंबिल आदि तप करें।

(9) निर्युक्ति भद्रबाहू स्वामी ने बनाई है (10) चूर्णि पूर्वधर आचार्यों ने बनायी है।

(11) टीका अभयदेव सूरि एवं आचार्य श्री घासीलालजी म. ने बनाई है।

(12) भगवतीसूत्र के 5 नाम (1) भगवतीसूत्र (लोक प्रसिद्ध) (2) पंन्चमांग (3) विवाहपण्णत्ति (व्याख्या प्रज्ञप्ति) (4) शिव शान्ति (मोक्ष पद देने वाला) (5) नवरंगी (प्रश्नोत्तर होने से)

श्री भगवतीसूत्र महाप्रभावशाली है, इसका पठन, पाठन, चिंतन, मनन करने से, भक्तिपूर्वक आराधन करने से ज्ञान दर्शन चारित्र का लाभ प्राप्त होता है। तीर्थंकर भगवान अनादि काल से फरमाते आ रहे है। भूतकाल में अनन्त जीव मोक्ष गये है, वर्तमान में महाविदेह से जा रहे है, भविष्य काल में भी अनन्त जीव मोक्ष जावेंगे। इस भगवतीसूत्र के प्रत्येक शतक प्रत्येक उद्देशा के अन्त में गणधर श्री गौतम स्वामी ने भगवान श्री महावीर स्वामी को सेवं भंते, सेवं भंते शब्द कहे है, अर्थ है कि हे भगवान! जैसा आप फरमाते है, वैसा ही है, यथार्थ है, सत्य है, भव्य प्राणियों के लिए हितकारक है, इससे उनकी भगवान के प्रति अतिशय विनय भक्ति भाव प्रदर्शित होते है। सेवं भंते! सेवं भंते!!

"तमेव सच्चं णीस्संकं जं जिणेहिं पवेइयम्"

प्रारम्भिका

श्रमण संघीय महामंत्री श्री सौभाग्यमुनि 'कुमुद'

विश्व के सभी धर्मों को यदि दो भागों में बांटे तो वे दो विभाग होंगे- ईश्वरवदी और पुरुषार्थवादी।

ईश्वरवाद बहुत सरल और सहज है, अतः उसके अनुयायी करोड़ों में है। ईश्वरवादी धर्मों में व्यक्ति को कुछ ज्यादा नहीं करना पड़ता। केवल ईश्वर को खुश करना, जिससे वह भक्त के अपराध क्षमा कर दे और उसका हित करे। वैदिक (वैष्णव), इस्लाम, ख्रिस्ती आदि ईश्वरवादी धर्म है, और सारा विश्व लगभग इन्हीं धर्मों का अनुयायी है।

विश्व में पुरुषार्थवादी धर्म केवल दो माने जाते हैं जैन और बोद्ध। जहां तक बौद्धों का प्रश्न है, उनके विषय में अधिक जानकारी नहीं है, किन्तु इतना जरूर अपने सामने है कि यह पुरुषार्थवादी धर्म है तो बौद्ध जीवन में सद् पुरुषार्थ होना चाहिए जिससे उनके मतानुसार मुक्ति मिले। मुक्ति योग्य प्रारम्भिक पुरुषार्थ भी नहीं देखकर विचार होता है कि यह मार्ग भी कतिपय क्रियाकाण्डों तक ही रह गया है।

जहां तक जैन धर्म का प्रश्न है, इसमें भी सद् पुरुषार्थ में भटकाव तो आया है। मन्दिरों में मूर्तियां बिठाकर उनके सामने भक्ति के नाम पर वही नाचना कूदना सब किया जाता है जो ईश्वरवादी धर्मों में किया जाता है।

हां इतना जरूर है कि इस धर्म में भी कुछ शाखाएं ऐसी जरूर हैं जो शुद्ध पुरूषार्थ में ही विश्वास करती हैं।

ऐसी धाराएं जो पुरूषार्थ से कटिबद्ध है, उन्हें केवल शास्त्र और त्यागी साधु साध्वीजी का ही सहारा है। सत्पुरूषार्थवादी इस जिन धर्म की प्रणाली में साधु साध्वीजी का सर्वोपरि महत्व तो है ही, किन्तु उनकी संख्या कम ही होती है। सभी को सर्वदा सत्संग नहीं मिल पाता।

शास्त्र ज्ञान, पुरूषार्थवादी विचारधारा का प्रमुख आधार है। जिन शासन में बत्तीस आगम मान्य है। केवल ज्ञानी और विशिष्ट ज्ञानी महापुरूषों के द्वारा प्ररूपित ये शास्त्र जीव-जगत के ज्ञान विज्ञान के समुद्र जैसे हैं।

इन शास्त्रों में प्रत्येक द्रव्य का सूक्ष्मतम विश्लेषण उपलब्ध है। शास्त्रकारों का अन्तिम लक्ष्य तो निश्चय ही चेतना को मुक्ति का स्वरूप प्रदान करने का है किन्तु जैसे दिन को प्रकाश पूर्ण सिद्ध करने के लिए रात्रि के अंधकार को भी जानना समझना पड़ता है। ऐसे ही चेतना के गहनतम ज्ञान का विश्लेषण करते हुए अचेतन पदार्थों के स्वरूप का विश्लेषण भी विस्तार पूर्वक किया है।

ज्यों ज्यों व्यक्ति अचेतन पदार्थों के परिणमन को समझता है, वैसे वैसे उसकी चेतना के परिणमन की विशेषताओं के विषय में जिज्ञासा बढ़ती है।

विश्व रचना में जहां जड़ पदार्थ पुद्गल का परिणमन कारण है, जीव का परिणमन कारण है, वैसे ही धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आदि चार अन्य द्रव्य भी प्रमुख है। जिनके विषय में आधुनिक विश्व विज्ञान लगभग अनजान है।

जो पुद्गल द्रव्य हैं उसके भी स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु आदि स्थूल और सूक्ष्म, असंख्य भंग-प्रभंग रूप अनेक विकल्प हैं इनके।

सूक्ष्मतम व्याख्याओं के साथ शास्त्रकारों ने एक-एक अणु-परमाणु को टटोला है।

कौन कहता है कि भारत में पदार्थ विज्ञान नहीं है? कोई भी वैज्ञानिक भगवती सूत्र, प्रज्ञापना सूत्र आदि सूत्र पढ़कर देखें। शास्त्र सूत्र होते हैं, उनमें विस्तृत व्याख्याएं नहीं होकर मात्र यथार्थ के संसूचन है। यदि वैज्ञानिक चाहे तो संसूचन को खोलकर विस्तार दे सकते हैं।

वैज्ञानिक आज अणु को अभंग और अन्तिम रूप में मानते हैं। उसका विखंडन असंभव है। जैन शास्त्रों में परमाणु को निरंश पहले से ही कहा हुआ है, जिसमें कोई अंश नहीं, जिसे अलग किया जा सके। अभी कुछ समय पहले वैज्ञानिकों ने दावा किया कि अणु को खण्डित कर दिया गया, तो निरंश वाला सिद्धान्त कहां ठीक रहा? सच तो यह है कि जो खण्डित हो गया, वह परमाणु था ही नहीं। परमाणु कल्प समान था, क्योंकि परमाणु खंडित होता ही नहीं। यह व्याख्या त्रिकाल सत्य है।

इस पुस्तक में श्रीमद् भगवती सूत्र से विषय बद्ध कुछ सामग्री का संचय किया गया है। पाठकों को इसे पढ़ने पर ज्ञात हो सकेगा कि हम जो पदार्थ देख रहे हैं, यह पुद्गलों का एक विलक्षण समीकरण मात्र है। नितान्त त्रिकाल सत्य पदार्थ यहां कुछ भी नहीं है। मात्र परमाणु है जो त्रिकाल सत्य है। आत्मा ही चेतना प्रधान ऐसा अन्तिम सत्य स्वरूप है जो त्रिकाल अस्तित्व से सम्पन्न है।

श्री विमलजी नवलखा ने श्रम किया है और भगवती सूत्र का दोहन कर कुछ सार इसमें लिया है। स्वाध्यायी साधकों के लिए इसमें उत्तमोत्तम सामग्री का संकलन हैं। थोकड़ों का ज्ञानार्जन करने वाले साधु साध्वीजी के लिए अति उपयोगी सिद्ध होगा।

आशा है, पाठकों को इसका मंगल लाभ प्राप्त होगा।

आगम प्रकाशन समिति और साहित्य प्रकाशन समिति उदयपुर एवं अहमदाबाद में अच्छा काम कर रही है। इसने अनेक टीका शास्त्रों का प्रकाशन किया है और चल भी रहा है। इसी के साथ अन्य साहित्य प्रकाशन का कार्य भी चल रहा है।

इन समितियों के पदाधिकारियों और साहित्य सेवा में आर्थिक सहयोग देने वाले दानदाताओं को भी मैं साधुवाद देता हूँ।

सौभाग्य मुनि 'कुमुद'

नवी मुंबई-8 जून 2011 **महामंत्री 'श्रमण संघ'**

भगवती सूत्र थोकड़ा विभाग

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
1	9 बोल का थोकड़ा	श.1 उ. 1	1
2	45 द्वार की गाथाएं	श.1 उ. 1	1
3	आत्मारंभ परारंभ	श.1 उ. 1	6
4	इह भविए णाणे पर भविए णाणे	श.1 उ. 1	6
5	संवुडा-असंवुडा अणगार	श.1 उ. 1	7
6	100 बोल का थोकड़ा	श.1 उ. 1	7
7	1242 अलावों का थोकड़ा	श.1 उ. 1	8
8	संसार संचिट्ठण काल	श.1 उ. 1	8
9	असंयत भव्य द्रव्य देव	श.1 उ. 1	9
10	असंज्ञी मनुष्य	श.1 उ. 1	9
11	कंखा, मोहनीय	श.1 उ. 1	9
12	श्रमण निर्ग्रंथ 13 कारण कंखा मोह.	श.1 उ. 1	11
13	अस्ति नास्ति का थोकड़ा	श.1 उ. 1	13
14	मोहनीय कर्म का थोकड़ा	श.1 उ. 1	13
15	क्रोधी मानी आदि भांगों का थोकड़ा	श.1 उ. 1	14
16	रोहा अणगार का थोकड़ा	श.1 उ. 1	17
17	लोक स्थिति का थोकड़ा	श.1 उ. 1	18
18	16 दण्डक का थोकड़ा	श.1 उ. 1	19
19	गर्भ का थोकड़ा	श.1 उ. 1	19
20	वीर्य का थोकड़ा	श.1 उ. 1	21
21	अगुरू लघु का थोकड़ा	श.1 उ. 1	22
22	गुरू, लघु, गुरुलघु, अगुरूलघु	श.1 उ. 1	23
23	निर्ग्रंथ की लघुता	श.1 उ. 1	23
24	आयुष्य का थोकड़ा	श.1 उ. 1	24
25	कालास्य वेषी पुत्र अणगार	श.1 उ. 9	24

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
26	अपच्चक्खाण-आधाकर्मादि	श.1 उ. 9	24
27	अन्य तीर्थियों के प्रश्नोत्तर	भ.श.1/उ.10	25
28	उच्छवास निःश्वास	श./2उ.1	25
29	मड़ाई निर्ग्रंथ	श./2उ.1	26
30	खंदकजी का थोकड़ा	श./2उ.1	26
31	सवणे-णाणे	श.2उ.5	29
32	पंचास्तिकाय	श.2उ.10	29
33	देव देवी वैक्रिय	श.3 उ.1	31
34	चमरेन्द्रजी के उत्पात	श.3 उ.2	32
35	अवधि ज्ञान की विचित्रता	श.3 उ.4	35
36	अणगार वैक्रिय	श.3 उ.5	36
37	ग्रामादि विकुर्वण	श.3 उ.6	36
38	शक्रेन्द्र, इशानेन्द्र, लोकपाल-राजधानियां	3/7,4/1-8	37
39	अधिपति देवों का थोकड़ा	श.3 उ.8	39
40	देवता देवी परिषद परिवार, स्थिति	श.3 उ.10	39
41	कम्पमान का थोकड़ा	श.5 उ.7	41
42	सप्रदेशी अप्रदेशी	श.5 उ.8	44
43	वर्द्धमान, हायमान, अवट्ठिया	श.5 उ.8	45
44	सोवचय-सावचय	श.5 उ.8	46
45	राजगृह नगर	श.5 उ.9	46
46	वेदना निर्जरा	श.6 उ.1	47
47	कर्मबंध का थोकड़ा	श.6 उ.3	48
48	50 बोलों की बंधी	श.6 उ.3	50
49	कालादेश	श.6 उ.4	51
50	पच्चक्खाण	श.6 उ.4	53
51	तमस्काय	श.6 उ.5	54
52	आठ कृष्णराजी, लोकांतिक देव	श.6 उ.5	55
53	मारणान्तिक समुद्घात	श.6 उ.6	56

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
54	काल विशेषण	श.6 उ.7	57
55	पृथ्वी	श.6 उ.8	58
56	आयुष्य बंध	श.6 उ.8	60
57	जीव के सुख-दुःखादि	श.6 उ.10	60
58	आहार	श.7 उ.1	61
59	सुपच्चक्खाण-दुपच्चक्खाण	श.7 उ.2	62
60	वनस्पति के आहारादि	श.7 उ.3	65
61	जीव का थोकड़ा	श.7 उ.4	66
62	खेचर तिर्यंच पंचेंद्रिय की योनि	श.7 उ.5	67
63	आयुष्य बंध का थोकड़ा	श.7 उ.6	68
64	काम भोगादि	श.7 उ.7	70
65	अणगार क्रिया	श.7 उ.7	71
66	छद्मस्थ अवधि ज्ञानी	श.7 उ.8	72
67	असंवुडा अणगार	श.7 उ.9	73
68	अन्य तीर्थी	श.7 उ.10	74
69	9 दण्डक	श.8 उ.1	76
70	भांगों का थोकड़ा	श.8 उ.1	78
71	भांगों का थोकड़ा	श.8 उ.1	79
72	आशीविष	श.8 उ.2	84
73	पांच ज्ञान	श.8 उ.2	85
74	ज्ञान लब्धि का थोकड़ा	श.8 उ.2	87
75	वृक्ष का थोकड़ा	श.8 उ.3	94
76	आजीविक	श.8 उ.5	94
77	प्रासुक अप्रासुक आहार	श.8 उ.6	96
78	अदत्त	श.8 उ.7	98
79	प्रत्यनीक	श.8 उ.8	100
80	व्यवहार	श.8 उ.8	100
81	ईरिया बंध का बंध	श.8 उ.8	101

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
82	सम्पराय बंध	श.8 उ.8	104
83	कर्म और परिषह	श.8 उ.8	105
84	बंध प्रयोग बंध, विश्रसा बंध	श.8 उ.9	106
85	देशबंध सर्वबंध	श.8 उ.9	108
86	आराधना पद	श.8 उ.10	111
87	पुद्गल परिणाम तथा कर्मों का थो.	श.8 उ.10	112
88	56 अन्तर द्वीपा	श.9/3 से 30	114
89	असोच्चा केवली	श.9/उ.31	116
90	असोच्चा केवली	श.9 उ.31	117
91	सोच्चा केवली	श.9 उ.31	119
92	गांगेय अणगार का भांगा	श.9 उ.32	121
92अ	जमालि अधिकार		130
93	दस दिशा का थोकड़ा	श.10 उ.1	132
		श.11 उ.10	
		श.16 उ.8	
94	विस्मय का थोकड़ा	श.10 उ.3	135
95	उत्पल कमल	श.11 उ.1	136
		श.11/2 से 8	
96	लोक का थोकड़ा	श.11 उ.10	140
97	काल का थोकड़ा	श.11 उ.11	144
98	तीन जागरण	श.12 उ.1	146
99	जयन्ती बाई के प्रश्नोत्तर	श.12 उ.2	149
100	पुद्गलों का मिलना बिखरना	श.12 उ.4	150
101	पुद्गल परावर्त्तन	श.12 उ.4	152
102	पुद्गल परावर्त्तन (छठा कर्म ग्रंथ)	कर्म ग्रंथ छठा	157
103	कषाय के 53 बोल	श.12 उ.5	158
104	रूपी अरूपी	श.12 उ.5	159
105	भव भ्रमण	श.12 उ.7	160

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
106	पांच देव	श.12 उ.9	161
107	आत्मा का थोकड़ा	श.12 उ.10	163
108	उत्पन्न संख्या के 39 बोल	श.12 उ.1-2	165
109	उपयोग का थोकड़ा	श.13 उ.1	168
110	नरक लोक आदि 7 द्वार	श.13 उ.4	168
111	प्रदेश स्पर्शना ओघाया	श.13 उ.4	170
112	जीव अवगाढ़ादि द्वार	श.13 उ.4	174
113	योग	श.13 उ.7	175
114	पांच मरण	श.13 उ.7	176
115	विग्रह गति	श.14 उ.1	177
116	उन्माद	श.14 उ.2	178
117	वर्षा और तमस्काय	श.14 उ.2	179
118	देवता के शास्त्र	श.14 उ.3	179
119	अग्नि	श.14 उ.5	180
120	आहार	श.14 उ.6	181
121	तुल्य	श.14 उ.7	181
122	श्रमण निर्ग्रंथों के सुख की तुल्यता	श.14 उ.9	183
123	केवली और सिद्ध	श.14 उ.10	184
124	अधिकरण	श.16 उ.1	184
125	शक्रेन्द्रजी	श.16 उ.2	185
126	स्वप्न का थोकड़ा	श.16 उ.6	186
127	14 स्वप्नों का फल	श.16 उ.6	189
128	96 बोल का थोकड़ा	श.17 उ.2	190
129	एयणा-चलणा	श.17 उ.3	191
130	पृथ्वी,अप्,वायुकाय के उपपात	श.17 उ.6 से 11	192
		श.20 उ.6	
131	पढ़म अपढ़म	श.18 उ.1	192
132	चरम अचरम	श.18 उ.1	195

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
133	माकंदी पुत्र अणगार के प्रश्न	श.18 उ.3	198
134	जीवाजीव के 48 द्रव्य जीव के परिभोग में	श.18 उ.4	198
135	जुम्मा	श.18 उ.4	198
136	देवता की विकुर्वणा	श.18 उ.5	199
137	परमाणु आदि का थोकड़ा	श.18 उ.6	200
138	यक्षावेश और उपाधि आदि	श.18 उ.7	201
139	मंडुक श्रावक	श.18 उ.7	201
140	पुण्य खपाने का थोकड़ा	श.18 उ.7	202
141	परमाणु	श.18 उ.8	203
142	भवी द्रव्य	श.18 उ.9	204
143	स्पर्शना	श.18 उ.10	204
144	सोमिल ब्राह्मण के प्रश्नोत्तर	श.18 उ.10	205
145	बारह द्वार	श.19 उ.10	206
		श.20 उ.1	
146	अवगाहना के 44 बोल	श.19 उ.3	208
147	सूक्ष्म बादर	श.19 उ.3	209
148	महा आश्रव	श.19 उ.4	210
149	चरम परम का थोकड़ा	श.19 उ.5	211
150	द्वीप-समुद्र का थोकड़ा	श.19 उ.6	212
151	लवण-समुद्र का थोकड़ा	श.19 उ.6	213
152	निव्वत्ति का थोकड़ा	श.19 उ.8	215
153	करण का थोकड़ा	श.19 उ.9	216
154	छह द्रव्य का थोकड़ा	श.19 उ.2	217
155	वर्णादि के भांगा	श.20 उ.5	218
156	परमाणु	श.20 उ.5	224
157	तीन बंध	श.20 उ.7	224
158	कर्मभूमि	श.20 उ.8	225
159	विद्याचारण-जंघाचारण लब्धि	श.20 उ.9	226

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र विवरण	पृष्ठ सं.
160	सोपक्रमी निरुपक्रमी	श.20 उ.10	227
161	कति संचय अकति संचय	श.20 उ.10	228
162	छक्क समज्जिया	श.20 उ.10	229
163	शालि का थोकड़ा	श.21 उ.1से8	230
164	ताल तमाल का थोकड़ा	शतक 22	231
165	आलू का थोकड़ा	शतक 23	231
166	गम्मा का थोकड़ा	श.24 उ.1 से 24	232
167	28 बोलों की योगों का अल्प बहुत्व	श.25 उ.1	273
168	समयोगी विषम योगी	श.25 उ.1	274
169	15 योगों का अल्प बहुत्व	श.25 उ.1	275
170	जीव द्रव्य अजीव द्रव्य	श.25 उ.2	276
171	स्थित अस्थित	श.25 उ.2	277
172	संस्थान छह	श.25 उ.3	278
173	पांच संस्थान	श.25 उ.3	278
174	संस्थान के 20 बोल	श.25 उ.3	279
175	संस्थान के कृतयुग्म	श.25 उ.3	281
176	आकाश प्रदेशों की श्रेणी	श.25 उ.3	282
177	द्रव्य का थोकड़ा	श.25 उ.4	284
178	जीव के कड़जुम्मा	श.25 उ.4	287
179	जीव कम्पमान अकम्पमान	श.25 उ.4	287
180	पुद्गलों की बहुया	श.25 उ.4	288
181	69 बोलों का अल्प बहुत्व	श.25 उ.4	289
182	अजीव के कड़ जुम्मा	श.25 उ.4	289
183	अजीव कम्पमान	श.25 उ.4	290
184	सर्व से और देश से कम्पमान अकम्पमान	श.25 उ.4	292
185	काल का थोकड़ा	श.25 उ.5	294
186	6 नियंठा (निर्ग्रंथ) का थोकड़ा	श.25 उ.6	295
187	संजय (संयत) का थोकड़ा	श.25 उ.7	308
188	नारकी के नेरिये	श.25 उ.8	318
189	भवी नेरिया	श.25 उ.9	319
190	अभवीनेरीया	श.25 उ.10	319
191	समदृष्टि नेरीया	श.25 उ.11	319
192	मिथ्या दृष्टि नेरीया	श.25 उ.12	319
193	बंधी शतक 47 बोलों की बंधी	श.26 उ.1 से 11	319
194	करिंसु शतक	श.27 उ.1 से 11	324
195	समज्जिया शतक	श.28 उ.1 से 11	325
196	पठ्ठविंसु-निठ्ठविंसु शतक	श.29 उ.1 से 11	325
197	समवसरण	श.30 उ.1 से 11	326
198	खुड्डाग-कड़जुम्मा	श.31 उ.1 से 28	329
199	उद्वर्त्तना (उवटना)	श.32 उ.1 से 28	330
200	एकेन्द्रिय शतक 12 अंतर शतक	श.33 के 12 अंतर शतक 124 उद्देशक	331
201	श्रेणी शतक	श.34 अंतर शतक 12 उ.124	332
202	एकेन्द्रिय महाजुम्मा (महायुग्म शतक)	श.35 अंतर शतक 12 के 132 उद्देशक	335
203	बेइन्द्रिय महाजुम्मा	श.36 के 12 अंतर शतकों के 132 उद्देशक	339
204	तेइन्द्रिय महाजुम्मा	श.37 के 12 अंतर शतकों के 132 उद्देशक	341
205	चौइन्द्रिय महाजुम्मा	श.38 के 12 अंतर शतकों के 132 उद्देशक	341
206	असंज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा	श.39 के 12 अंतर शतकों के 132 उद्देशक	341
207	संज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा	श.40 के 21 अंतर शतकों के 231 उद्देशक	341
208	राशि जुम्मा (राशि शतक)	श.41 के 196 उद्देशक	348

जैन-तत्त्व दर्शन

थोक संग्रह-भाग-1 (श्री भगवती सूत्र)

1. 9 बोल का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 1) श्रमण भगवान महावीर स्वामी से प्रश्न चर्चा में निमग्न श्री गौतम स्वामी के प्रश्नों का यथार्थ उत्तर फरमाते हुए श्री वीर प्रभु फरमाते हैं-(1) जो चल रहा है, उसको चला हुआ कहना चाहिए, इसी तरह (2) जिस कर्म की उदीरणा की जा रही है, उसको उदीरणा किया हुआ (3) जिस कर्म को वेदा जा रहा है, उसे वेदा हुआ, भोगा हुआ (4) पड़ते हुए को पड़ा हुआ (5) छिदते हुए को छिदा हुआ (6) भेदन किये जाते को भेदन यानि तीव्र से मंद रस करते हुये को मंद रस किया हुआ (7) जलते हुए को जला हुआ, नष्ट होते को नष्ट हुआ (8) आविचि मरण (जैसे एक लहर (तरंग) के बाद दूसरी लहर आती है और वह नष्ट हो जाती है, इसी तरह एक के बाद एक क्षण आयुष्य का नष्ट हो जाता है इसे आवीचि मरण कहते हैं।) द्वारा प्रतिक्षण मरते को मरा हुआ (9) जिस कर्म की निर्जरा की जा रही है उसे निर्जरा किया हुआ कहना चाहिए इनमें से पहले के 4 पद (बोल) एक अर्थ वाला, उदात्त अनुदात्त आदि विविध घोष वाले, विविध प्रकार के व्यंजन (अक्षर) वाले है तथा बाद के 5 बोल (पद) णाणट्ठा (अनेक अर्थ वाले), अनेक घोष वाले, अनेक व्यंजन वाले है, पूर्व के 4 पद आसरी केवल ज्ञान उत्पन्न कराते हैं, आगे के 5 पद आसरी सिद्ध गति प्राप्त कराते हैं। इसमें चौभंगी बनती है-(1) समान अर्थ समान व्यंजन जैसे-क्षीरं (क्षीर, दूध) (2) समान अर्थ विविध व्यंजन-जैसे-क्षीरं (क्षीर) पयः (दूध) (3) भिन्न अर्थ समान व्यंजन-जैसे- आक का दूध, गाय का दूध (4) भिन्न अर्थ भिन्न व्यंजन-जैसे-घट पट (घड़ा, कपड़ा आदि)।

2. 45 द्वार की गाथाएं-(भ.श. 1 उ. 1) 45 बोल के थोकड़े में (1) **नारकी के नैरयिकों की** स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट 33 सागरोपम (2) नारकी के नैरयिक धमणी (लौहार की धमण) की तरह श्वासोच्छवास लेते है। (3) नैरयिक आहारट्ठी (आहार की इच्छा वाले) होते हैं। (4) नैरयिकों का आहार दो प्रकार-का जानते हुए और नहीं जानते हुए आहार करना। (5) नैरयिक द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव यावत् 288 प्रकार का आहार नियमा 6 दिशा का लेते हैं। प्रायः वे वर्ण में काले, नीले, गंध में दुर्गन्ध का, रस में तीखे और कड़वे रस का, स्पर्श में 4 अशुभ स्पर्शों

(खुरदरा, भारी, शीत, लूक्ष) का आहार लेते हैं, पहले के वर्णादि गुणों को मिटाकर नये वर्णादि गुण प्रकट करते हैं। (6) नैरयिक सब आत्म प्रदेशों से आहार करते है यावत् 12 बोलों से आहार करते हैं, सब आत्म प्रदेशों से परिणमाते हैं, सब आत्म प्रदेशों से उच्छवास लेते हैं, सब आत्म प्रदेशों से श्वास छोड़ते हैं, इसी प्रकार चोभंगी दो और कहना जिसमें एक बार-बारंबार से कहना और दूसरी बार कदाचित् से कहना। (7) नैरयिक आहार लेने योग्य पुद्गलों में से असंख्यातवें भाग का आहार लेते हैं, तथा अनन्तवां भाग आस्वादते हैं। (8) नैरयिक जिन पुद्गलों का आहार करते हैं, उनका परिशेष रहित सब पुद्गलों का आहार करते हैं। (9) नैरयिक उन पुद्गलों का श्रोत्रेन्द्रिय पणे यावत् स्पर्शेन्द्रिय पणे, अनिष्ट पणे, अकान्तपणे, यावत् दुःखरूप पणे परिणमाते हैं, सुख रूप से नहीं। (10) नैरयिकों ने जिन पुद्गलों का आहार किया है वे परिणत हुए है, आहार किये और आहार करते हुए पुद्गल परिणत हुए है और होवेंगे, आहार नहीं किये और आहार किये जाने वाले परिणत नहीं हुए किन्तु होवेंगे। और आहार नहीं किये और आहार नहीं किये जाने वाले परिणत नहीं हुए और नहीं होवेंगे। (11 से 15) चिण्या, उपचिण्या, उदीरिया, वेद्या और निर्जर्या ये दसवें द्वार के अनुसार कहें। (16) नारकी के नैरयिक कर्म वर्गणा की अपेक्षा से दो प्रकार के-सूक्ष्म और बादर पुद्गलों का भेदन करते हैं। (17) नैरयिक दो प्रकार के आहार द्रव्य वर्गणा से सूक्ष्म और बादर दो प्रकार के पुद्गलों का चय करते हैं। (18) इसी तरह उपचय करते हैं। (19 से 21)-कर्मद्रव्य वर्गणा की अपेक्षा से दो प्रकार के सूक्ष्म और बादर पुद्गलों की उदीरणा, वेदन और निर्जरा करते हैं।

(22-23) नारकी के नैरयिकों ने कर्मों का उद्वर्तन, अपवर्तन, संक्रमण, निधत्त और निकाचित किये हैं, करते हैं, करेंगे 4 x 3 = 12 अलावा हुए।

(34) नैरयिक तैजस कार्मण शरीर पणे पुद्गलों को वर्तमान काल के समय से ग्रहण करते हैं, भूत या आगामी काल से नहीं। (35 से 37) नैरयिकों ने तैजस, कार्मण शरीर पणे जिन पुद्गलों को ग्रहण किया है, उनकी उदीरणा करते हैं, किन्तु वर्त्तमान और भविष्य में किये जाने वाले की उदीरणा नहीं करते हैं। वेदन और निर्जरा का भी कहना। (38) नैरयिक अचलित कर्म बांधते हैं, चलित कर्म नहीं बांधते हैं। (39 से 44) अचलित कर्म की उदीरणा, वेदन, उद्वर्तन अपवर्तन, संक्रमण, निधत्त, निकाचित होती है। (45) नैरयिक चलित कर्म की निर्जरा करते हैं। अचलित की नहीं।

देवता के 13 दण्डक (10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक) पर 45 द्वार-(1)

देवों की स्थिति	जघन्य	उत्कृष्ट
असुर कुमार	10,000 वर्ष	1 सागर झाझेरी
नवनिकाय भवनपति देवों की स्थिति	10,000 वर्ष	दो पल्योपम देशऊणी
वाणव्यंतर देवों की स्थिति	10,000 वर्ष	एक पल्योपम
ज्योतिषी देवों की स्थिति	पल्य का आठवां भाग	1 पल्य 1 लाख वर्ष
पहला देवलोक देवों की स्थिति	एक पल्योपम	2 सागरोपम
दूसरा देवलोक देवों की स्थिति	एक पल्य झाझेरी	2 सागरोपम झाझेरी
तीसरा देवलोक देवों की स्थिति	दो सागरोपम	सात सागरोपम
चौथा देवलोक देवों की स्थिति	दो सागर झाझेरी	सात सागर झाझेरी
पाँचवाँ देवलोक देवों की स्थिति	सात सागरोपम	दस सागरोपम
छठा देवलोक देवों की स्थिति	दस सागरोपम	चौदह सागरोपम
सातवाँ देवलोक देवों की स्थिति	चौदह सागरोपम	सत्रह सागरोपम
आठवाँ देवलोक देवों की स्थिति	सत्रह सागरोपम	अठारह सागरोपम

नवमें देवलोक से बारहवें देवलोक तक एक-एक सागरोपम की वृद्धि होकर बारहवें देवलोक के देवों की जघन्य 21 उत्कृष्ट 22 सागर तथा पहले ग्रैवेयक से नवमें गैवेयक की स्थिति 1-1 सागरोपम बढ़ाकर नवमें गैवेयक की स्थिति जघन्य 30 सागर उत्कृष्ट 31 सागर है। 4 अणुत्तर विमानों की स्थिति जघन्य 31 सागर उत्कृष्ट 33 सागर और सर्वार्थ सिद्ध विमान की नो जघन्य नो उत्कृष्ट 33 सागरोपम की है। (2) असुर कुमार के देव जघन्य 7 स्तोक (एक श्वास-उच्छ्वास का एक प्राण ऐसे 7 प्राण का 1 स्तोक) उत्कृष्ट 1 पक्ष झाझेरे से श्वासोच्छवास लेते हैं, नव निकाय के देव और वाणव्यन्तर जघन्य 7 स्तोक (थोव) उत्कृष्ट प्रत्येक मुहूर्त (2 से 9 तक की संख्या) ज्योतिषी प्रत्येक मुहूर्त्त (जघन्य उत्कृष्ट) से तथा वैमानिक देवों में जितने पल्योपम उतने मुहूर्त्त तथा जितने-जितने सागरोपम उतने-उतने पक्ष से श्वासोच्छवास लेना समझे। (3) 13 दण्डक के देवता आहारट्ठी है। (4) 13 दंडक के देवता दो प्रकार से जानते हुए और नहीं जानते हुए भी आहार लेते है।

अणाभोगणिव्वत्तिए (नहीं जानते हुए) तो विरह रहित निरंतर आहार लेते है और आभोगणिव्वत्तिए असुरकुमार देव एक दिन छोड़ दूसरे दिन जघन्य लेते है उत्कृष्ट 1000 वर्ष झाझेरा से लेते है। नव निकाय, वाणव्यन्तर के देव जघन्य चउत्थभक्त उत्कृष्ट प्रत्येक दिवस (2 से 9 दिन) से, ज्योतिषी जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक दिवस से लेते है। पहले देवलोक से सवार्थसिद्ध तक के देवों के लिए पल्योपम के लिए प्रत्येक दिवस और सागरोपम में 1000 वर्ष कहना। जितना सागरोपम उतने हजार वर्ष। सर्वार्थसिद्ध में 33 हजार वर्ष से आहार ग्रहण कहना। (5) 13 दण्डक के देवता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव यावत् 288 बोलों का नियमा 6 दिशा का प्राय: वर्ण में पीला और सफेद, सुरभिगंध, रस में खट्टा और मीठा, स्पर्श में चार शुभ स्पर्श (कोमल, लघु, उष्ण, स्निग्ध) पुद्गलों का आहार लेते है। पहले के खराब पुद्गलों को अच्छा बनाकर मनोज्ञ पुद्गलों का आहार करते है। (6) सब आत्मप्रदेशों से यावत् 12 बोलों से आहार लेते हैं। (7) आहार लेने योग्य पुद्गलों में असंख्यातवें भाग आहार करते है और अनंतवे भाग आस्वादते हैं। (8) परिशेष रहित सब पुद्गलों का आहार करते हैं। (9) आहार रूप से ग्रहण किये पुद्गलों को श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय पणे परिणमाते है। सुख रूप से परिणमाते है, दु:ख रूप से नहीं। 10 से 45 तक ये 36 द्वार नारकी के नेरियों की तरह कहना।

पाँच स्थावर पर 45 द्वार-

	जघन्य	उत्कृष्ट
पृथ्वीकाय की स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	22000 वर्ष
अप्काय की स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	7000 वर्ष
तेउकाय की स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	3 अहोरात्रि
वायुकाय की स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	3000 वर्ष
वनस्पतिकाय की स्थिति	अन्तर्मुहूर्त	10000 वर्ष

(2) पाँच स्थावर विमात्रा से श्वासोच्छवास लेते है। (3) पाँच स्थावर आहारट्ठी है। (4) निरन्तर आहार लेते है। (5) द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् 288 प्रकार का बोल का व्याघात आसरी 3 दिशा, मध्यम 4 दिशा उत्कृष्ट 5 दिशा का लेते है, निर्व्याघात 6ह दिशा का नियमा लेते है। वर्ण में काला नीला आदि 5 वर्ण, दो गंध, पाँच रस

आठ स्पर्श का आहार लेते है। (6) सभी अल्प प्रदेशों से यावत् 12 बालों से आहार लेते हैं। (7) आहार लेने योग्य में से असंख्यातवें भाग आहार लेते है, और अनन्तवें भाग स्पर्श करते है। (8) सभी पुद्गलों का आहार लेते है। (9) ग्रहण किये पुद्गलों को विविध रूप से स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं।

10 से 45 तक के 36 द्वार नारकी के नैरयिकों की तरह कहना।

तीन विकलेन्द्रियों पर 45 द्वार-(1) तीनों विकलेन्द्रिय की जघन्य स्थिति अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की 12 वर्ष, तेइन्द्रिय की 49 अहोरात्रि, चौइन्द्रिय की 6 महिना की है। (2) विमात्रा से श्वासोच्छवास लेते हैं। (3) आहार की इच्छा करते हैं। (4) अणाभोगणिव्वत्तए निरंतर और आभोगणिव्वत्तए असंख्यात समय के अन्तर्मुहूर्त से आहार लेते हैं। (5) द्रव्य क्षेत्रकाल भाव यावत 288 प्रकार से नियमा 6 दिशा का आहार लेते हैं। (6) सब आत्म प्रदेशों से यावत् 12 बोलों से लेते हैं। (7) असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं, अनन्तवे भाग आस्वाद करते हैं।

(8) विकलेन्द्रिय दो प्रकार (रोम आहार) (रूवों द्वारा समय-समय पर) और कवल आहार (मुंह द्वारा) आहार करते हैं। रोम आहार पणे ग्रहण किये सब पुद्गल खा लेते हैं, कंवल आहार में लेने योग्य पुद्गलों का असंख्यातवां भाग आहार करते हैं और अनेक हजारों भाग बेइन्द्रिय में बिना स्वाद बिना स्पर्श किये नष्ट हो जाता है, तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय में सूंघे बिना, स्वाद लिये बिना, स्पर्श किये बिना नष्ट हो जाते हैं। बेइन्द्रिय में सबसे थोड़ा पुद्गल अस्वाद्या, उससे अस्पर्श्या अनन्तगुणा, तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय में सबसे थोड़ा पुद्गल असूंग्या, उससे अस्वाद्या अनन्तगुणा, उससे अस्पर्श्या अनन्तगुणा। (9) बेइन्द्रिय विमात्रा से रसनेन्द्रिय पणे, स्पर्शेन्द्रियपणे, तेइन्द्रिय में विमात्रा से घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रियपणे, चौइन्द्रिय में विमात्रा से चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं।

10 से 45 तक 36 द्वार नारकी के नैरयिकों की तरह कहना।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य पर 45 द्वार-(1) तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 3 पल्योपम की है। (2) विमात्रा से श्वासोच्छवास लेते हैं। (3) आहार की इच्छा रखते हैं। (4) अणाभोगणिव्वतए तो विरहरहित निरंतर लेते हैं, आभोगणिव्वतए जघन्य अन्तमुहूर्त उत्कृष्ट तिर्यंच पंचेन्द्रिय दो दिन के अंतर से मनुष्य तीन दिन के अंतर से आहार लेते हैं। (5) द्रव्य, क्षेत्र, काल,

भाव यावत् 288 बोलों का नियमा 6 दिशा का आहार लेते हैं, पहले के वर्णादिक गुण मिटा कर नये गुण प्रकट करते हैं। (6) सब आत्म प्रदेशों से यावत् 12 बोलों से आहार लेते हैं। (7) असंख्यातवां भाग आहार लेते हैं, अनन्तवां भाग आस्वाद करते हैं। (8) आणाभोगणिव्वतए निरंतर आहार लेते हैं, आभोगणिव्वतए आहार लेने योग्य पुद्गलों का असंख्यातवां भाग लेते हैं अनेक हजारों भाग सूंघे बिना, स्वाद लिये बिना, स्पर्श किये बिना नष्ट हो जाते हैं। (9) विमात्रा से श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं।

10 से 45 तक 36 द्वार नारकी की तरह कहना।

3. आत्मारंभी परारंभी का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 1) आरंभ यानि सावद्य कार्य, जिससे किसी जीव को कष्ट पहुँचता हो, प्राणों का घात होता हो यानि आश्रव द्वार में प्रवृत्ति करना आरंभ है। आत्मारंभ के दो अर्थ-आश्रव द्वार में आत्मा को प्रवृत्त करना और आत्मा द्वारा स्वयं आरंभ करना यह आत्मारंभी हुआ। दूसरे को आश्रव में प्रवृत्त करना या दूसरे के द्वारा आरंभ करवाना परारंभी कहलाता है। दोनों करने वाला उभयारंभी है। आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी नहीं है वह अनारंभी है। जीव के दो भेद है संसार समापन्न यानि संसारी, असंसार समापन्न यानि सिद्ध। सिद्ध तो अनारंभी है। संसारी के दो भेद-संयति और असंयति। संयति के दो-प्रमादी अप्रमादी। अप्रमादी अनारंभी है। प्रमादी के दो भेद-शुभयोगी, अशुभयोगी। शुभ योगी अनारंभी है। अशुभयोगी आत्मारंभी भी है, परारंभी भी है, तदुभयारंभी भी है किन्तु अनारंभी नहीं। अशुभ योगी की तरह 23 दंडक और असंयति कहना। मनुष्य समुच्चय जीव की तरह कहना किन्तु विशेष यहाँ सिद्ध नहीं कहना। सलेशी समुच्चय की तरह कहना। कृष्ण, नील, कापोत लेश्या वाले 22 दण्डक आत्मारंभी, परारंभी, तदुभयारंभी है, अनारंभी नहीं। समुच्चय जैसा कहना। नवरं प्रमादी, अप्रमादी साधु और सिद्ध नहीं कहना। समुच्चय जीव, तेजो लेशी 18 दण्डक, पद्म लेशी, शुक्ल लेशी तीन-तीन दण्डक मनुष्य की तरह कहना। कृष्ण, नील, कापोत तीन भाव लेश्याओं में साधुपना नहीं होता, यहां जो लेश्याएं कही है वे द्रव्य लेश्याएं समझनी।

4. इहभविएणाणे-परभविएणाणे (भ.श. 1 उ. 1) ज्ञान इस भविक भी है, परभविक है, और तदुभयभविक भी है। दर्शन इहभविकभी है, परभविक भी है, तदुभयभविक भी है। चारित्र इहभविक है, परभविक और तदुभयभविक नहीं है।

5. संवुडा-असंवुडाअणगार का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 1) असंवुडाअणगार (जिसने आश्रवों को नहीं रोका है ऐसा साधु) बोध (केवल ज्ञान) प्राप्त नहीं करता, निर्वाण को प्राप्त नहीं होता यावत सब दु:खों का अंत नहीं करता। कारण कि आयुष्य कर्म को छोड़कर बाकी 7 कर्म की ढीले हो तो गाढ़े (मजबूत) करता है, थोड़े काल की स्थिति हो तो दीर्घकाल की करता है, मंदरस हो तो तीव्ररस करता है, थोड़े प्रदेश वाले कर्मों को बहुत प्रदेश वाले करता है। आयुष्य कर्म कदाचित् बांधता है, कदाचित् नहीं बांधता, असाता वेदनीय बारंबार बांधता है। अनन्त संसार में परिभ्रमण करता है। इस कारण असंवुड़ा अणगार सिद्ध नहीं होता, यावत् सब दु:खों का अंत नहीं करता। संवुडाअणगार-सिद्ध होता है, यावत् सब दु:खों का अंत करता है, क्योंकि संवुडा अणगार आयुष्य कर्म छोड़कर शेष कर्मों को गाढ़े हो तो ढीला करता है, बहुत काल की स्थिति को थोड़े काल की करता है, तीव्ररस हो तो मंद करता है। बहुत प्रदेश काले को थोड़े प्रदेश की करता है, आयुकर्म नहीं बांधता, असातावेदनीय बार-बार नहीं बांधता, अनादि अनंत चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण नहीं करता। इसलिए संवुडा अणगार सिद्ध होता है यावत् सब दु:खों का अंत करता है।

6. 100 बोल का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 2) अपने किये कर्म का दु:ख कोई जीव भोगता है, कोई नहीं भोगता, कारण कि जिस जीव के कर्म उदय में आया है, वह भोगता है, जिसके उदय में नहीं आया वह नहीं भोगता। समुच्चय जीव का 1 और 24 दंडक के 24, यों 25 अलावा हुए। बहुत जीव अपने किये दु:ख को भोगते हैं, कोई नहीं भोगते, कारण कि जिन जीवों के कर्म उदय में आये हैं, वे भोगते हैं, जिनके उदय में नहीं आये वे नहीं भोगते, इसी तरह बहुत जीव आसरी 24 दंडक कहना, यों समुच्चय जीव आसरी एक तथा 24 दंडक, यों 25 अलावा हुए। अपने बांधे हुए आयुष्य कर्म को कोई जीव भोगता है कोई नहीं भोगता कारण कि जिस जीव के आयुष्य कर्म उदय में आया है, वह भोगता है, जिसके उदय में नहीं आया वह नहीं भोगता। ये समुच्चय और 24 दंडक के कुल 25 अलावा हुए। बहुत जीव अपने बांधे आयुष्य कर्म को भोगते है, नहीं भी भोगते हैं, जिन जीवों के आयुष्य कर्म उदय में आया वे भोगते हैं, जिन जीवों के उदय में नहीं आया वे नहीं भोगते, इनके भी समुच्चय और 24 दंडक के 25 अलावा हुए। 25 + 25 + 25 + 25 = 100 अलावा हुए।

7. 1242 अलावों का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 2) 9 द्वार कहे है-(1) आहार द्वार, (2) समशरीर द्वार, (3) श्वासोच्छवास द्वार, (4) कर्म द्वार, (5) वर्ण द्वार, (6) लेश्या द्वार, (7) समवेदना द्वार, (8) समक्रिया द्वार, (9) समआयुष्य द्वार-इन नौ के आगे सम लगाना है (विस्तार प्रज्ञापना थोकड़ा दूसरा भाग 17 पद के पहले उद्देशे में देखें) 1242 अलावों की गिनती इस प्रकार है-समुच्चय के 216, सलेशी 216, कृष्ण नील कापोत लेश्या के 594, तेजो लेश्या के 162, पद्म लेश्या 27, शुक्ल लेश्या 27 ये कुल 1242 अलावा हुए।

8. संसार संचिट्ठणकाल (भ.श. 1 उ. 2) संसार संचिट्ठणकाल (संसार का संस्थान काल) का अर्थ है यह जीव अतीत में किस गति में रहा था यह बतलाता है। चार प्रकार का है-नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और देव संसार संचिट्ठणकाल। नारकी संसार संचिट्ठणकाल तीन प्रकार का है-**(1) शून्य काल**-एक नारकी नैरयिक नरक से निकलकर दूसरी गति में गया वहाँ से फिर पुन: नारकी में उत्पन्न हुआ, वह जितने नैरयिकों को सातों नरकों में छोड़कर गया था, उनमें से एक भी वहाँ न मिले, वहाँ से निकलकर दूसरी गतियों में चले गये हो उसे शून्य काल कहते हैं। **(2) अशून्य काल**-एक नारकी का नैरयिक नरक से निकलकर दूसरी गति में गया, फिर वहाँ से वापिस नरक में उत्पन्न हुआ, वह जितने नैरयिकों को छोड़कर गया था, उनमें से एक भी मरा नहीं, नया उत्पन्न हुआ नहीं वह अशून्य काल है। **(3) मिश्र काल**-नैरयिक के नरक से निकलकर अन्य गति में जन्म लेकर पुन: नरक में आने तक जिन नैरयिकों को छोड़कर गया था उनमें से कुछ निकलकर अन्य गति में चले गये और कुछ नये उत्पन्न हो गये, यहाँ तक कि पहले के नैरयिकों में से एक भी वहाँ मिले, उसे मिश्र काल कहते हैं।

इसी तरह मनुष्य और देवता में भी संसार संचिट्ठणकाल तीन-तीन हैं। तिर्यंच में दो काल-अशून्य काल और मिश्र काल। नारकी में सबसे थोड़ा अशून्य काल, उससे मिश्र काल अनन्त गुणा, उससे शून्य काल अनन्त गुणा। इसी तरह मनुष्य और देवता की अल्पाबहुत्व है। तिर्यंच में सबसे थोड़ा अशून्य काल उससे मिश्र काल अनन्त गुणा है। सबसे थोड़ा मनुष्य संसार संचिट्ठणकाल, उससे नारकी का असंख्यात गुणा, उससे देवता का असंख्यात गुणा, उससे तिर्यंच संसार संचिट्ठणकाल अनन्त गुणा है। (म. ना. दे. ति.)

9. असंयत भव्य द्रव्य देव का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 2) असंयति मरकर जहाँ उत्पन्न होता है-

		जघन्य	उत्कृष्ट
1.	असंयत भव्य द्रव्य देव मरकर	भवनपति	नवमें ग्रैवेयक
2.	अविराधक साधु (आराधक)	पहले देवलोक	सर्वार्थसिद्ध विमान
3.	विराधक साधु मरकर	भवनपति	पहले देवलोक
4.	आराधक श्रावक मरकर	पहले देवलोक	12वें देवलोक
5.	विराधक श्रावक मरकर	भवनपति	ज्योतिषी
6.	असन्नी तिर्यंच मरकर (अकाम निर्जरा वाले)	भवनपति	वाणव्यन्तर
7.	कन्दमूल भक्षण करने वाले तापस मरकर	भवनपति	ज्योतिषी
8.	कान्दर्पिक (हंसी-मजाक) ,, ,,	भवनपति	पहले देवलोक
9.	चरक, परिव्राजक अम्बड़ के सन्यासी मरकर	भवनपति	पाँचवें देवलोक
10.	किल्बिषी (अवर्णवाद करने वाले) साधु मरकर	भवनपति	छठें देवलोक
11.	देश विरति, सम्यग्दृष्टि तिर्यंच सन्नी मरकर	भवनपति	आठवें देवलोक
12.	आजीविक (गोशालक मत) साधु मरकर	भवनपति	12वें देवलोक
13.	आभियोगिक (मंत्रजंत्रादि करने वाले) साधु मरकर	भवनपति	12वें देवलोक
14.	निन्हव मरकर (समकित भ्रष्ट) मरकर	भवनपति	नवमें गैवेयक

10. असन्नी-असंज्ञी आयुष्य (भ.श. 1 उ. 2) जो जीव असंज्ञी अवस्था में अगले भव का आयुष बांधे, उसे यहाँ पर असन्नी-असंज्ञी आयुष्य कहा गया है। असंज्ञी आयुष्य 4 प्रकार का है-नारकी असंज्ञी आयुष्य, तिर्यंच असंज्ञी आयुष्य, मनुष्य असंज्ञी आयुष्य, देव असंज्ञी आयुष्य। नारकी देवता के असंज्ञी आयुष्य की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग। मनुष्य, तिर्यंच की जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग। सबसे थोड़े देवता असंज्ञी आयुष्य, उससे मनुष्य असंज्ञी आयुष्य असंख्यात गुणा, उससे तिर्यंच असंख्यात गुणा उससे नारकी असंज्ञी आयुष्य असंख्यात गुणा। (दे. म. ति. ना.)

11. कंखा मोहनीय का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 3) मोहनीय कर्म के दो भेद दर्शन मोह, चारित्र मोह। यहाँ दर्शन मोहनीय की अपेक्षा से कंखा मोहनीय कहा है। जीव कंखा (कांक्षा, या मिथ्यात्व) मोहनीय कर्म करता है। जीव कंखा मोहनीय

देश से देश नहीं, देश से सर्व नहीं सर्व से देश नहीं, बल्कि सर्व से सर्व यानि जीव के सर्व से कंखा मोहनीय कर्म को सर्व से करता है। इसी तरह नारकी आदि 24 दण्ड कहने। समुच्चय जीव और 24 दण्डक ये 25 अलावा हुए। जीव के प्रदेश जितने आकाश प्रदेश ओघाये हैं, वहाँ रहे कर्म वर्गणा के पुद्गल जो एक समय में लेने योग्य होते हैं, उन सबको जीव लेता है, अत: सव्वेणं सव्वे एक ही भांगा बनता है। तीन काल आसरी-जीव ने कंखा मोहनीय कर्म किया, करता है, करेगा, ये 75 अलावा हुए। 25 (समुच्चय) + 75 तीन काल आसरी ये 100 अलावा हुए। इसी तरह 100 अलावा (चय) (कर्मों के प्रदेश और अनुभाग का एक बार बढ़ना चय, बार-बार बढ़ना उपचय) 100 उपचय उदीरणा (उदय में नहीं आये कर्मों को करण विशेष से उदय में लाना उदीरणा) के, वेदना, निर्जरा इन तीन पदों में समुच्चय के नहीं कहना, सिर्फ तीन काल आसरी कहना इस प्रकार तीन पदों के 75 X 3 = 225 और पूर्व के 300 = 525 अलावा हुए। (1) उदय में आये कर्मों को वेदना (2) उदय में नहीं आये को उपशमाना (3) उदय में आने वाले कर्मों की उदीरणा करना (4) उदय में आये कर्मों को भोगना (5) भोगे कर्मों की निर्जरा करना इन सबमें (1) उत्थान, (2) कर्म, (3) बल, (4) वीर्य, (5) पुरुषाकार पराक्रम इन 4 शक्ति का प्रयोग करना ये 5 X 5 = 25 द्वार हुए ये समुच्चय जीव और 24 दंडक पर कहना 25 × 25 = 625 अलावा। समुच्चय जीव और पंचेन्द्रिय के 16 दण्डक (1 नारकी, 13 देवता, 1 तिर्यंच पंचेन्द्रिय 1 मनुष्य) ये 17 दण्डक मिथ्यात्वी की बातें सुनकर शंका, कंखा, वितिगिच्छा, मतिभेद और कलुष भाव ये 5 बोलों से कंखा मोहनीय (मिथ्यात्व मोहनीय) कर्म वेदते हैं 17 X 5 = 85 अलावा हुए।

5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय ये आठ दण्डक शंका आदि 5 बोलों कंखा मोहनीय अजानते हुए वेदते हैं 8 X 5 = 40 अलावा हुए।

(1) ज्ञान, (2) दर्शन, (3) चारित्र, (4) लिंग, (5) प्रवचन, (6) प्रावचनिक (बहुश्रुत), (7) कल्प (स्थविर कल्प), (8) मार्ग (परम्परा की समाचारी-कायोत्सर्ग करना आदि), (9) मत (आचार्यों का अभिप्राय), (10) भंग (भांगा), (11) नय (नैगम आदि सात नय), (12) नियम (प्रतिज्ञा, अभिग्रह), (13) प्रमाण (प्रत्यक्ष आदि) इन 13 बोलों में परस्पर अन्तर जानकर श्रमण निर्ग्रन्थ कंखा मोहनीय कर्म

को वेदता है। जो भगवान की आज्ञा में शंका नहीं रखते वे आज्ञा के आराधक कहते हैं। (1) अज्ञान (2) संशय (3) मिथ्या ज्ञान (4) राग (5) द्वेष (6) मतिभ्रम (7) धर्म में अनादर (8) अशुभ योग इन 8 प्रमाद से और योग के निमित्त से जीव कंखा मोहनीय कर्म बाँधता है। प्रमाद योग से, योग वीर्य से, वीर्य शरीर से, शरीर जीव से उत्पन्न होता है। इसलिए उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरुषाकार पराक्रम है।

12. श्रमण निर्ग्रंथ 13 कारणों से कंखा मोहनीय कर्म वेदते है-(भ.श. 1 उ. 3) (1) ज्ञानान्तर से-एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान के विषय में शंका जैसे अवधि ज्ञानी 14 रज्जूलोक के परमाणु आदि सब रूपी द्रव्यों को जानता है और मन: पर्यव ज्ञानी अढ़ाई द्वीप के संज्ञी जीव के मन की बात जानता है। तीसरा ज्ञान ज्यादा जानता है, चौथा ज्ञान कम जानता है, इस शंका का समाधान यह है कि अवधि ज्ञान के साथ अवधि दर्शन की सहायता है, मन: पर्यव ज्ञान में दर्शन की सहायता नहीं है इसलिए कम जानता देखता है। **(2) दर्शनान्तर से**-सामान्य ज्ञान को दर्शन कहते हैं फिर चक्षु और अचक्षु दर्शन अलग कैसे? समाधान यह कि अचक्षु दर्शन सामान्य रूप से देखता है, चक्षु दर्शन विशेष रूप से देखता है। समकित के विषय में जैसे उपशम, क्षयोपशम अलग-अलग क्यों कही है? समाधान यह कि क्षयोपशमिक में विपाक का उपशम है, मिथ्यात्व के प्रदेशों का उदय है। उपशम समकित में मिथ्यात्व के प्रदेशों का उदय नहीं है। **(3) चारित्रान्तर से**-सामायिक चरित्र में सर्व सावद्य का त्याग हो गया तो छेदोपस्थापनीय की आवश्यकता कैसे? प्रथम तीर्थंकर के साधु ऋजुजड़, अंतिम तीर्थंकर के वक्रजड़, उनको समझाने के लिए छेदोपस्थापनीय चारित्र दिया जाता है। बीच के 22 तीर्थंकर के साधुओं को ऋजु-प्राज्ञ होने से सामयिक चारित्र ही दिया जाता है।

(4) लिंगान्तर से-प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के साधुओं के श्वेत वस्त्र, बीच के 22 तीर्थंकरों के साधुओं के 5 वर्ण के वस्त्र इसका समाधान वक्रजड़, ऋजुजड़ और ऋजुप्राज्ञ के भेद से समझे।

(5) पवयणंतरेहिं (प्रवचनान्तर से) एक तीर्थंकर से दूसरे तीर्थंकर के प्रवचन में अंतर पड़ने से शंका जैसे प्रथम अंतिम तीर्थंकरों के समय पाँच महाव्रत छठा रत्रि भोजन विरमण व्रत और मध्य 22 के समय चार महाव्रत पाँचवाँ रात्रि भोजन विरमण व्रत में उपरोक्त समझ फेर का उदाहरण है, यहाँ चौथे को पाँचवें में शामिल किया है स्त्री परिग्रह रूप ही है।

(6) पावयणंतरेहिं (प्रावचनिकान्तर से)-बहुश्रुत पुरुष एक इस तरह की प्रवृत्ति करता है, दूसरा दूसरी तरह की प्रवृत्ति करता है, समाधान यह है कि चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम भिन्न-भिन्न होने से उत्सर्ग-अपवाद मार्ग होने से प्रवृत्ति में अंतर होता है। जो प्रवृत्ति आगम से अविरूद्ध है, वही प्रमाण रूप है। (7) कप्पंतरेहिं (कल्पान्तर से) जिनकल्पी नग्न रहते हैं, क्रिया महाकष्टकारी होती है। स्थविरकल्पी वस्त्र पात्र रखते हैं, अल्प कष्टकारी क्रिया करते हैं तो कर्मक्षय में अल्प कष्टकारी कैसे संभव है? दोनों ही भगवान की आज्ञा में है। दोनों कर्मक्षय के कारण हैं। **(8) मयंतरेहिं (मतान्तर से)** आचार्य सिद्धसेन दिवाकर केवल ज्ञान केवल दर्शन को एक साथ मानते हैं, आचार्य जिनभद्रगणि क्षमा श्रमण अलग-अलग समय में मानते हैं। सत्य क्या है? समाधान-जो आगमानुसार है वह सत्य है, आगम में यह कि जिस समय जानता, उस समय देखता नहीं, जिस समय देखता उस समय जानता नहीं।

(9) मग्गंतरेहिं (मार्गान्तर से) कोई दो नमुत्थुणं देते है, कोई आचार्य तीन देते हैं। कोई अधिक कायोत्सर्ग करते हैं कोई आचार्य कम, ठीक क्या है? गीतार्थ जिस समाचारी में प्रवृत्ति करते हैं, वह निषिद्ध नहीं है। निष्पाप है तो प्रमाण युक्त है।

(10) भंगंतरेहिं (भंगान्तर से) हिंसा के 4 भांगे-(1) द्रव्य से हिंसा, भाव से नहीं (2) भाव से हिंसा, द्रव्य से नहीं (3) द्रव्य से भी नहीं, भाव से भी नहीं (4) द्रव्य से भी हिंसा, भाव से भी हिंसा। इनमें से कोई द्विभंगी, कोई त्रिभंगी, कोई चौभंगी बनाते है समाधान यह कि यतनापूर्वक ईर्या समिति से चलते साधु के पाँव के नीचे कीड़ी आदि जीव आकर मर जाते तो द्रव्य हिंसा और बिना उपयोग के चले तो भाव हिंसा। **(11) णयंतरेहिं (नयान्तर से)**-एक ही वस्तु में नित्य-अनित्य दो विरोधी धर्म कैसे? समाधान कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा वस्तु नित्य है, पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा वस्तु अनित्य है, भिन्न-भिन्न अपेक्षा से भिन्न-भिन्न धर्म रह सकते हैं। एक ही पुरुष पुत्र की अपेक्षा पिता है, अपने पिता की अपेक्षा पुत्र है। **(12) णियमंतरेहिं (नियमान्तर से)** कोई साधु अभिग्रह नवकारसी, पौरूसी आदि पच्चक्खाण करता है, जबकि साधु के सर्व सावद्य का त्याग होता है फिर जरूरत क्या? समाधान कि साधु विशेष प्रमाद को टालने के लिए अभिग्रह आदि करते हैं। **(13) पमाणंतरेहिं (प्रमाणान्तर से)** सूर्य सम भूमि से 800 योजन ऊपर चलता है, सूर्य तो प्रतिदिन भूमि से निकलता दिखता है, सच क्या है। चक्षु प्रत्यक्ष सत्य नहीं है, सूर्य पृथ्वी से बहुत दूर है, इसलिए हमारा चक्षु भ्रम है शास्त्र कथन सत्य है।

13. अस्ति नास्ति का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 3) जिस रूप में जो पदार्थ है, उसी रूप में रहना ''अस्तिपना'' है, पर रूप से रहना नास्तिपना है। प्रत्येक वस्तु अपने रूप से सत् (विद्यमान) है, पर रूप से असत् (अविद्यमान) है। मनुष्य-मनुष्य रूप से सर्वकाल सत् है, मनुष्य घोड़े रूप में सर्वकाल असत् है। घट-घट सत् है, पट (कपड़ा रूप असत् है। अस्ति पदार्थ अस्तित्वपणे, नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है। परिणमन दो प्रकार से प्रयोगसा (प्रयोग से), विश्रसा (स्वाभाविक) परिणमता है, इसी तरह गमणिज्ज (गमनीय) के भी दो अलावा कहना।

14. मोहनीय कर्म का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 4) कर्म 8 है (विस्तृत वर्णन प्रज्ञापना पद 23 का पहला उद्देशक) ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय। जीव मोहनीय कर्म के उदय से चार गति में भ्रमण करने की क्रिया करता है, वीर्य से करता है, अवीर्य से नहीं। वीर्य के तीन भेद- बाल वीर्य, पंडित वीर्य, बालपंडित वीर्य, इनमें से बाल वीर्य से करता है, पंडित और बाल पंडित वीर्य से नहीं। मिथ्यात्व मोहनीय कर्म से जीव अपक्रमण करता है ऊँचे गुणस्थान से गिरकर नीचे गुणस्थान में आता है। अपक्रमण भी बाल वीर्य से करता है। (कहीं बाल पंडित वीर्य से भी करना कहा है) किन्तु पंडित वीर्य से अपक्रमण नहीं करता क्योंकि पंडित वीर्य से नीचे के गुण स्थान से ऊँचे के गुणस्थान में जाता है, नीचे नहीं आता। मोहनीय कर्म के उदय के दो आलापक- उपस्थान और अपक्रमण कहे, उसी प्रकार उपशान्त मोहनीय कर्म के भी दो आलापक कहना है किन्तु उपशांत मोहनीय में पंडित वीर्य से उपस्थान करता है और बाल पंडित वीर्य से अपक्रमण करता है। जब दर्शन मोहनीय का उदय होता है तब बाल वीर्य से उवट्ठाण (उपस्थान) करता है। मिथ्यादृष्टि जीव बाल वीर्य द्वारा मिथ्यात्व को ही पुष्ट करता है। अन्य दोनों वीर्यों में उवट्ठाण नहीं होता, परिभ्रमण नहीं होता। जब मिथ्यात्व मोहनीय का उदय होता है तब बाल वीर्य से अपक्रमण करके ऊपर से नीचे गुणस्थानों में आता है। सर्वविरति से देशविरति, समकित से मिथ्यात्व। उदय की अपेक्षा उवट्ठाएजा का अर्थ है-मिथ्यात्व में रहे मिथ्यात्व को पुष्ट करता है चार गतियों में भ्रमण करता है और अवकम्मेजा का मतलब है उदय की अपेक्षा-ऊपर गुणस्थान (4-5-6) से मिथ्यात्व में आकर चार गतिभ्रमण। जब जीव के मोहनीय कर्म उपशांत होता है, तब पंडित वीर्य से उवट्ठाण करता है यानि

उत्तम गुणस्थानों में रहकर उनको पुष्ट करता है (छठे गुणस्थान की अपेक्षा) जब मोहनीय कर्म उपशांत होता है तब बाल पंडित वीर्य द्वारा अपक्रमण करता है नीचे से ऊपर जाता है, मिथ्यात्व से निकलकर समकित, देशविरति, सर्वविरति में जाता है। (पाँचवें गुणस्थान की अपेक्षा) छठे से पंडित वीर्य संभव है। उपशम की अपेक्षा उवट्ठाएजा और अवकम्मेजा का यह अंतर है कि जो जीव उत्तम गुणस्थानों में है, उन्हीं की क्रिया करते हैं यह उपशम की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा है, जो जीव मिथ्यात्व से निकलकर पंडित और बाल पंडित की क्रिया करते हैं, वह उपशम की अपेक्षा अवकम्मेज्जा है। उपशम भाव में संयम में रूचि होती है, संयम में विचरते हुए कदाचित् मिथ्यात्व मोहनीय का उदय आता है तो भ्रष्ट होकर मिथ्यात्वी हो जाता है। जीव ने जो कर्म किये हैं उन्हें आत्मप्रदेशों में निश्चित ही वेदता है, अनुभाग और विपाकों में वेदने की भजना है। बांधे कर्म भोगे बिना छुटकारा नहीं होता। केवली भगवान सब जानते हैं कि यह जीव तपस्या करके कर्मों की उदीरणा करके कर्मों को भोगेगा (वेदेगा) और यह जीव कर्म उदय में आने पर वेदेगा।

15. क्रोधी मानी आदि भांगों का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 5) स्थिति 4, अवगाहना 4, शरीर 5, संघयण 6, संस्थान 6, लेश्या 6, दृष्टि 3, ज्ञान 8, योग 3, उपयोग 2 इन दसद्वारों के 47 बोल है।

रत्नप्रभा यावत् तमःतमा पृथ्वीयां 7 हैं। इनमें 84 लाख नरकावास है, पहली में 30 लाख, दूसरी में 25 लाख, तीसरी में 15 लाख, चौथी में 10 लाख, पाँचवीं में 3 लाख छठी में 5 कम 1 लाख, 7वींमें 5. भवनपतियों के 7,72,00,000 भवन उत्तर दक्षिण में इस प्रकार है-

भवनपतियों के नाम		दक्षिण दिशा में	उत्तर दिशा में
1	असुरकुमार के	34 लाख	30 लाख
2	नागकुमार के	44 लाख	40 लाख
3	सुवर्णकुमार के	38 लाख	34 लाख
4	विद्युत्कुमार के	40 लाख	36 लाख
5	अग्निकुमार के	40 लाख	36 लाख
6	द्वीपकुमार के	40 लाख	36 लाख
7	उदधिकुमार के	40 लाख	36 लाख

8	दिशाकुमार के	40 लाख	36 लाख
9	वायुकुमार के	50 लाख	46 लाख
10	स्तनितकुमार के	40 लाख	36 लाख
कुल आवास 7,72,00,000 हुए		4,06,00,000	3,66,00,000

पृथ्वीकाय के असंख्याता लाख आवास हैं, इसी तरह जाव व्यन्तर (वाण व्यंतर) तक असंख्याता लाख नगरावास है, ज्योतिषियों के असंख्याता लाख विमानावास हैं। देवलोक में इस प्रकार है-

पहला देवलोक दूसरा देवलोक	32 लाख 28 लाख	नवमां देवलोक दसवां देवलोक	400
तीसरा देवलोक चौथा देवलोक	12 लाख 8 लाख	ग्यारहवां देवलोक बारहवां देवलोक	300
पाँचवाँ देवलोक	4 लाख	नवग्रैवेयक निचलीत्रिक	111
छठा देवलोक	50 हजार	नवग्रैवेयक बिचलीत्रिक	107
सातवाँ	40 हजार	नवग्रैवेयक ऊपरीत्रिक	100
आठवाँ	6 हजार	पाँच अणुत्तर विमान में	5
वैमानिक देवों के कुल 84,97,023 विमानावास हुए।			

स्थिति के 4 प्रकार-(1) जघन्य (2) जघन्य से 1 समय अधिक यावत् संख्याता समय अधिक (3) संख्यात समय से एक समय अधिक यावत् असंख्याता समय अधिक उत्कृष्ट से 1 समय कम तक (4) उत्कृष्ट स्थिति। **अवगाहना के 4 प्रकार**-(1) जघन्य अवगाहना (2) जघन्य से 1 आकाश प्रदेश अधिक यावत् संख्याता आकाश प्रदेश तक (3) संख्याता से असंख्याता आकाश प्रदेश अधिक, उत्कृष्ट से एक आकाश प्रदेश कम तक (4) उत्कृष्ट अवगाहना। **शरीर 5**-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण। **संहनन 6** वज्रऋषभ नाराच, ऋषभ नाराच, नाराच, अर्द्ध नाराच, कीलिका, सेवार्त।

संस्थान 6-समचौरस, न्यग्रोधपरिमंडल, सादि, वामन, कुब्ज, हुण्डक। **लेश्या 6**-कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, शुक्ल लेश्या। **दृष्टि 3**-सम, मिथ्या, मिश्र। **ज्ञान के 5**-मति, श्रुति, अवधि, मन:पर्यव, केवलज्ञान। **अज्ञान 3**-मति, श्रुति, विभंग। **योग**

3-मन, वचन, काय, **उपयोग 2**-साकार, उपयोग, अनाकारोपयोग। ये 47 बोल हुए।

नाम	स्थि.	अव.	शरी.	संह.	सं.	ले.	दृष्टि	ज्ञान	अज्ञा.	योग	उप.	कु.भांगा
अशाश्वत् शाश्वत्												
समुच्चय नरक	4	4	3	–	1	3	3	3	3	3	2	= 29
पहली नरक	4	4	3	–	1	1	3	3	3	3	2	= 27
दूसरी नरक	4	4	3	–	1	1	3	3	3	3	2	= 27
तीसरी नरक	4	4	3	–	1	2	3	3	3	3	2	= 28
चौथी नरक	4	4	3	–	1	1	3	3	3	3	2	= 27
पाँचवीं नरक	4	4	3	–	1	2	3	3	3	3	2	= 28
छठी नरक	4	4	3	–	1	2	3	3	3	3	2	= 27
सातवीं नरक	4	4	3	–	1	2	3	3	3	3	2	= 27
भवनपति	4	4	3	–	1	4	3	3	3	3	2	= 30
वाणव्यन्तर	4	4	3	–	1	4	3	3	3	3	2	= 30
ज्योतिषी से 12वें देवलोक	4	4	3	–	1	1	3	3	3	3	2	= 27
नवग्रैवेयक	4	4	3	–	1	1	2	3		3	2	= 26
पाँच अणुत्तर विमान	4	4	3	–	1	1	1	3	3	3	2	= 22
पृथ्वी पानी वनस्पति	4	4	3	1	1	4	1	0	2	1	2	= 23
तेउकाय	4	4	3	1	1	3	1	0	2	1	2	= 22
वायुकाय	4	4	4	1	1	3	1	0	2	1	2	= 23
तीन विकलेन्द्रिय	4	4	3	1	1	3	2	2	2	2	2	= 26
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	4	4	4	6	6	6	3	3	3	3	2	= 44
मनुष्य	4	4	5	6	6	6	3	5	3	3	2	= 47

भांगे-अशाश्वत ठिकाणे में 80 भांगे, शाश्वत ठिकाणे में 27 भांगे पाये जाते है। असंयोगी 8, द्विसंयोगी 24, त्रिसंयोगी 32, चार संयोगी 16, ये 80 भांगे हुए। 27 भांगों में असंयोगी 1, द्विसंयोगी 6, त्रिसंयोगी 12, चार संयोगी 8, ये 27 हुए। पहली नरक में स्थित का दूसरा भेद, अवगाहना का पहला भेद और दूसरा भेद और मिश्रदृष्टि इन 4 बोलों में 80 भांगे बाकी 23 बोलों में (27 में से) 27 भांगे पाते हैं। सभी नरकों में समझना। भवनपति वाणव्यन्तर में पहली नरक की तरह कहना परन्तु इतनी विशेषता

कि नारकी में क्रोधी मानी मायी लोभी कहा यहाँ उल्टा कहना सव्वे वि ताव हुज्जालोभी लोभी मायी मानी क्रोधी कहना इसी तरह 30 बोल में से 4 बोल में 80 और 26 बोलों में 27-27 (उल्टा) कहना। ज्योतिषी, पहले से 12वें देवलोक तक 27 में से 4 बोलों में 80 तथा शेष 23 बोलों में 27 भांगे (भवनपति की तरह) नव ग्रैवेयक में 26 में से 3 बोल में 80 भांगे शेष 19 बोल में 27 भांगे (भवनपति की तरह)। पृथ्वी पानी वनस्पति में तेजोलेश्या में भांगा 80 बाकी 22 बोल में अभंग (नारकी की तरह)। तेउकाय, वायुकाय अभंग। तीन विकलेन्द्रिय में 6 बोलों में (समदृष्टि 1, ज्ञान 2, स्थिति का पहला, अवगाहना का पहला, दूसरा ये 6 बोल) भांगा 80 (नारकी की तरह) बाकी 20 में अभंग। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में चार बोलों में नारकी की तरह 80 भांगा, बाकी 40 बोल अभंग। मनुष्य में 47 में से 6 बोल (स्थिति का पहला-दूसरा, अवगाहना का पहला-दूसरा, आहारक शरीर, मिश्रदृष्टि में 6) में भांगा 80 (नारकी की तरह) बाकी 41 बोलों में भांगा नहीं अभंग।

द्विकसंयोगी भांगों के अंक-11, 13, 31, 33.

त्रिकसंयोगी भांगों के अंक-111, 113, 131, 133, 311, 313, 331, 333.

चार संयोगी भांगों के अंक-1111, 1113, 1131, 1133, 1311, 1313, 1331, 1333, 3111, 3113, 3131, 3133, 3311, 3313, 3331, 3333. जहाँ 1 है वहाँ एक, जहाँ 3 है वहाँ बहुत कहना।

16. रोहा अणगार का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 6)-श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी शिष्य, विनीत भद्र तप संयम से भावित अणगार थे, उन्हें एक समय शंका हुई विनयपूर्वक प्रश्नचर्चा की थी-(1) लोक और अलोक पहले भी है, पीछे भी है दोनों शाश्वत् भाव है, यह अनानुपूर्वी है पहले, पीछे क्रम नहीं है। (2) से (5)-लोक अलोक की तरह-पहले अजीव पीछे जीव का समाधान भी उसी तरह इसी प्रकार भव सिद्धिक-अभव सिद्धिक, सिद्धि और असिद्धि (संसार), सिद्ध और असिद्ध (संसारी) का कहना ये शाश्वत् भाव हैं, अनानुपूर्वी है। पहले पीछे क्रम नहीं। (6) कूकड़ी और अण्डा-कूकड़ी अण्डे से, अण्डा कूकड़ी से पहले भी पीछे भी यह शाश्वत् भाव है। अनानुपूर्वी है। (7) लोकान्त पहले या पीछे अलोकान्त ये दोनों शाश्वत् भाव है। अनानुपूर्वी है। (8) पहले लोकान्त पीछे 7वीं नरक का आकाशान्त है ये दोनों शाश्वत् भाव है अनानुपूर्वी है। (9) लोकान्त और सातवीं नरक का तनुवात (10) लोकान्त और 7वीं नरक की घनवात (11) लोकान्त और

सातवीं नरक का घनोदधि (12) लोकान्त और सातवीं नरक ये आठवें समाधान की तरह। ये सब शाश्वत् भाव है, अनानुपूर्वी है। इसी तरह लोकान्त और छठी नरक के पाँच प्रश्न इसी तरह पहली नरक तक 5-5 प्रश्न समाधान कहना, ये 35 हुए। 7 x 5 = 35 प्रश्न नारकी के (36) द्वीप (37) सागर (38) वर्ष-क्षेत्र (39) नैरयिक आदि जीव (40) अस्तिकाय, (41) समय, (42) कर्म (43) लेश्या (44) दृष्टि (45) दर्शन (46) ज्ञान (47) संज्ञा (48) शरीर (49) योग (50) उपयोग (51) द्रव्य (52) प्रदेश (53) पर्याय (54) अतीतकाल (55) अनागत काल (56) सर्वकाल। इन सबका समाधान लोकान्त से कहना, ये सब शाश्वत् भाव है, अनानुपूर्वी है। इसी तरह सातवीं नारकी के आकाशान्तर से 55 बोल कहना, इस प्रकार अनुक्रम से ऊपर का एक बोल छोड़कर आगे-आगे के बोल कहना।

17. लोक स्थिति का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 6)-(1) लोक की स्थिति 8 प्रकार की है-(1) आकाश के आधार तनुवात, (2) तनुवात के आधार घनवात, (3) घनवात के आधार घनोदधि, घनोदधि के आधार पृथ्वी, (5) पृथ्वी के आधार त्रस स्थावर जीव, (6) जीवों के आधार अजीव, (7) जीव कर्म के आधार, (8) अजीव जीवों द्वारा संग्रहित है और जीव अजीवों द्वारा (कर्मों) संग्रहीत (बद्ध) है। (2) **लोक की स्थिति** समझने के लिए मशक का दृष्टान्त दिया जाता है, चमड़े की मशक को हवा से फुलाकर ऊपर का मुँह बंद कर दें, फिर उसके मध्य में एक डोरा बांधकर ऊपर का मुँह खोल दें, उसकी ऊपरी भाग की हवा निकल जाने पर उसमें पानी भर दें, उसके बाद बीच में बंधा डोरा खोल दें तो, वह पानी हवा के आधार से ऊपर में ही भरा रहता है, इसी तरह लोक की स्थिति है, यावत् जीव कर्मों द्वारा संग्रहीत है।

दूसरा दृष्टान्त-हवा से फूली मशक को कोई व्यक्ति कमर में बांधकर पानी में प्रवेश करे तो वह व्यक्ति पानी में डूबता नहीं है। इसी तरह लोक की स्थिति है, आकाश और वायु इस प्रकार आधाराधेय भाव से रहे हुये हैं।

(3) जीव और पुद्गल परस्पर संबद्ध, परस्पर स्पष्ट, परस्पर अवगाढ़, परस्पर स्नेह प्रतिबद्ध, परस्पर घट्ट (समुदाय रूप) रहते हैं। जैसे कोई तालाब में छिद्रों वाली नाव डाले, उसमें धीरे-धीरे पानी भर जाने से नाव पानी में डूब जाती है, नाव और तालाब एक मेक होकर रहते है उसी तरह प्रतिबद्ध है। (4) सूक्ष्म अप्काय सदाकाल गिरती (बरसती) है। (5) सूक्ष्म अप्काय ऊपर नीचे तिर्च्छी सब जगह

गिरती है। (6) सूक्ष्म अप्काय बादर अप्काय की तरह बहुत काल तक ठहर नहीं सकती, जल्दी ही नष्ट हो जाती है।

18. 16 दण्डक का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 7)-(1) नरक में उत्पन्न हुआ नैरयिक-देश से देश नहीं, देश से सर्व नहीं, सर्व से देश नहीं परन्तु सर्व से सर्व उत्पन्न होता है, यह वैमानिक आदि 24 दंडक में कहना। (2) नैरयिक देश से देश, देश से सर्व, सर्व से देश आहार नहीं करता किन्तु सर्व से सर्व आहार करता है, सभी 24 दंडक में कहना। (3) नरक से उद्वर्तन (निकलना) भी इसी तरह कहना 24 दंडक के जीव भी इसी तरह निकलते हैं (4) नरक से निकलते का आहार संबंधी कथन भी उपरोक्त जैसा है, सभी 24 दंडक में भी कहना। (5) नरक में उत्पन्न हुआ नैरयिक सर्व से सर्व उत्पन्न हुआ ऐसा सभी 24 दंडक में कहना।

(6-7-8) उत्पन्न हुआ आहार लेता है, उद्वर्तता (निकला) आहार लेता है, उर्द्धता हुआ आहार लेता है ये सभी उपरोक्त प्रकार सर्व से सर्व कहना। सभी 24 दंडक में कहना। ये 8 अलापक हुए।

(2) नरक में उत्पन्न होता हुआ नेरिया अद्धेण अद्धे, अद्धेण सव्वे, सव्वेणअद्धे, सव्वेणसव्वे इस प्रकार भांगे कहना यहाँ भी 8 भांगे कहना उपरोक्त अनुसार। ये 16 भांगे 24 दंडक पर 384 भांगे हुए।

19. गर्भ का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 7) देवता अपना च्यवन काल नजदीक जानकर लज्जित होता है, अरति करता है, थोड़े समय आहार नहीं लेता, फिर भूख सहन नहीं होने से आहार करता है शेष आयु पूरी होने पर मनुष्य या तिर्यंच गति में उत्पन्न होता है। (2) गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव इन्द्रियों से (द्रव्य) रहित उत्पन्न होता है क्योंकि इन्द्रियों का संबंध शरीर से है। भावेन्द्रियों की अपेक्षा से इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है। (3) गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव औदारिक, वैक्रिय, आहारक इन तीन शरीरों की अपेक्षा रहित उत्पन्न होता है ये तीनों शरीर जीव के उत्पन्न होने के बाद होते है, तैजस कार्मण शरीर सहित उत्पन्न होता है ये दोनों शरीर परभव में भी साथ रहते है, इनका जीव के साथ अनादि संबंध है। (4) गर्भ में उत्पन्न होता जीव सर्वप्रथम माता के रूधिर और पिता के वीर्य का आहार करता है, फिर माता जैसा आहार करती है, उसका एक देश (भाग) का आहार करता है, क्योंकि माता की नाड़ी का गर्भस्थ जीव की नाड़ी से संबंध है। (5) गर्भस्थ जीव के

मलमूत्र श्लेष्म, वमन, पित्त नहीं होते, गर्भस्थ जीव जो आहार करता है, वह श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रियपने तथा हाड़ मज्जा, केश, नखपणे परिणमता है। गर्भस्थ जीव कवल आहार नहीं करता इसलिए मलमूत्रादि नहीं होते। वह सर्व आहार करता है, सर्व परिणमाता है, सर्व उच्छवास निःशवास लेता है, यावत् बारम्बार उच्छवास निःश्वास लेता है। (6) जीव के माता के (1) मांस, (2) रूधिर, (3) मस्तक तीन अंग है, और हाड, मज्जा, केश, दाढ़ी, रोम, नख ये तीन पिता के अंग हैं। (7) माता-पिता का अंश (प्रथम समय लिया आहार) इस भव धारणीय शरीर रहे तब तक रहता है, समय-समय पर वह क्षीण होता जाता है, यावत् आयुष्य समाप्त होने तक माता-पिता का कुछ न कुछ अंश अवश्य रहता ही है। इसीलिए माता-पिता का बड़ा उपकार है, इसीसे वह जीवित है, यह उपकार कभी भूलना नहीं चाहिए। (8) गर्भ में मरा जीव कोई नरक में उत्पन्न होता है, कोई नहीं होता। (9) गर्भ में मरा जीव कैसे नरक में जाता है-गर्भ में मरा जीव सन्नी, पंचेन्द्रिय, पूर्ण पर्याप्ति, वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि वाला जीव, किसी समय अपने पिता के राज्य पर चढ़ाई करके आये शत्रु को सुनकर वैक्रियलब्धि से अपने आत्मप्रदेशों को गर्भ से बाहर निकालता है, और वैक्रिय समुद्रघात से चतुरंगिणी सेना बनकर शत्रु से लड़ता है, लड़ता हुआ जीव आयुष्य पूर्ण करे तो नरक में जाता है क्योंकि वह जीव राज्य, धन, कामभोगादि का अभिलाषी है अतः वह मरकर (तिर्यंच जघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल, मनुष्य जघन्य पृथकत्व (दो से नो तक) मास वाला) नरक में जाता है। (10) गर्भ का जीव मरकर देव में उत्पन्न हो सकता है। (11) गर्भ में रहा सन्नी, पंचेन्द्रिय, पूर्ण पर्याप्तिवाला, जीव तथारूप श्रमण, माहन के पास एक भी धर्म वचन सुनकर परम संवेग की श्रद्धा और धर्म पर तीव्र प्रेम होने से धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्ष सुखाभिलाषी शुद्ध चित्त, मन, लेश्या, अध्यवसाय में काल करे तो स्वर्ग में उत्पन्न होता है। (12) गर्भ का जीव समचित, पसवाड़े में और अधोमुख भी रहता है। माता सोती है तब गर्भ का जीव भी सोता है, माता जागती है तो जागता है, सुखी रहे तो सुखी और माता दुःखी रहे तो दुःखी रहता है। प्रसव के समय मस्तक या पैरों से बाहर आता है। जो पापी हो तो टेढ़ा होकर योनीद्वार पर आता है इससे मृत्यु को प्राप्त होता है। कदाचित् जीवित रहे तो दुर्वर्ण, दुर्गंध, दुःस्पर्श, दुःरस वाला होता है। अनिष्टकांति, अमनोज्ञ, हीनस्वर, दीनस्वर यावत् अनादेय वचन वाला महान् दुःखों में जीवन जीने वाला

होता है। जिसने पूर्वभव में अशुभ कर्म न किये हो शुभ कर्म बांधे हो वह इष्ट, वल्लभ, प्रिय, सुखकर सुस्वर यावत् आदेय वचन वाला परम् सुख में जीवन व्यतीत करने वाला होता है। इसीलिए जीव को सुकृत करना चाहिए, जिससे तीर्थंकर भगवान की आज्ञा का आराधन करके मोक्ष के अक्षय सुखों को प्राप्त कर सकें। जन्म जरा मरण के दु:खों से व्याप्त इस संसार में न आना पड़े, जन्म न लेना पड़े, गर्भ के दु:खों को न देखना पड़े।

(13) श्री भगवती सूत्र के दूसरे शतक के पाँचवें उद्देशक से-गर्भ की स्थिति बताई है-उदक (पानी) गर्भ की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 6 मास। तिर्यंचणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 8 वर्ष। मनुष्यणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 12 वर्ष, मनुष्यणी के गर्भ की काय स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 24 वर्ष (कोई पापी जीव गर्भ में 12 वर्ष रहकर मर जावे फिर उसी गर्भ या अन्य स्त्री के गर्भ में जावे वहाँ 12 वर्ष रहे यों 24 वर्ष) है। (14) वीर्य तिर्यंचणी के योनि में और मनुष्यणी की योनि में प्रविष्ट हुआ जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 12 मुहूर्त तक सचित्त रहता है। (15) एक जीव के एक भव में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट पृथकत्व (प्रत्येक) सौ पिता हो सकते हैं। (16) एक माता की कुक्षि में एक भवआसरी जघन्य 1-2-3 यावत् उत्कृष्ट प्रत्येक (पृथकत्व) लाख जीव उत्पन्न हो सकते हैं।

(16) मैथुन का पाप-किसी भूंगली की नाल में रूई भरकर गर्म लोहे की सलाई डाली जाय तो वह रूई जलकर भस्म हो जाती है, इस प्रकार का पाप मैथुन सेवन करने से लगता है।

(17) तंदुल वैयालिय पइण्णा से-माता की दक्षिणी (दाहिनी) कुक्षि में पुत्र उत्पन्न होता है, बाईं कुक्षि में पुत्री उत्पन्न होती है, बीच में (सामने) नपुंसक होता है। ओज (रूधिर) अल्प हो और वीर्य ज्यादा हो तो पुत्र तथा ओज ज्यादा वीर्य अल्प हो तो पुत्री और दोनों बराबर हो तो नपुंसक उत्पन्न होता है। यदि स्त्री स्त्री को सेवन करे तो बिम्ब होता है।

20. वीर्य का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 8) (1) जीव के तीन भेद, बाल जीव, पंडित जीव, बाल पंडित जीव (2) एकान्त बाल जीव (मिथ्यात्वी) चारों गति का आयुष्य बांधता है, जिस गति का बांधता है, उसी में उत्पन्न होता है। (3) एकान्त

पंडित में आयुष्य की भजना, आयुष्य बांधे न बांधे, एकान्त पंडित जीव को दो गति है-अगर अन्त क्रिया करे तो मोक्ष और जो अन्त क्रिया नहीं करता तो वैमानिक देव गति का बंधकर के उत्पन्न होता है। (4) बाल पंडित जीव सिर्फ वैमानिक देव का बंधकर उसमें उत्पन्न होता है। नरक, तिर्यंच, मनुष्यायु नहीं बांधता क्योंकि तथा-रूपश्रमण माहन के धर्मवचन सुनकर देशत: त्याग पच्चक्खाण करता है, अत: तीन आयु नहीं बांधता, तीन गतियों में नहीं जाता।

(5) समुच्चय जीव में बाल, पंडित, बाल पंडित तीनों बोल पाये जाते है, मनुष्य में तीनों बोल, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में दो बाल और बाल पंडित तथा शेष 22 दंडक में एक बाल पाया जाता है।

(6) समुच्चय में सबसे थोड़े पंडित, बाल पंडित असंख्याता गुणा, बाल अनन्त गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े पंडित, उनसे बाल पंडित संख्यातागुणा, उनसे बाल असंख्यातागुणा। तिर्यंच में बाल पंडित थोड़े उनसे बाल असंख्यातगुणा। (7) दो पुरुष सरीखी चमड़ी, समान उम्र, समान द्रव्य, समान उपकरण, वे दोनों संग्राम करे उसमें एक जीतता है दूसरा हारता है कारण जो पुरुष सवीर्य है वह जीतता है, अवीर्य हारता है। जिसने वीर्य को बाधाकारी कर्म नहीं बांधे, नहीं स्पर्शे, नहीं किये, यावत् कर्म सम्मुख नहीं आये, उदय भाव में नहीं आये, किन्तु उपशम भाव में है, वह जीतता है दूसरा हारता है। (8) जीव सवीर्य भी है अवीर्य भी है, जीव के दो भेद सिद्ध और संसारी। सिद्ध भगवान तो अवीर्य हैं। संसारी के दो भेद-शैलेषी, अशैलेषी। शैलेषी (14वाँ गुणस्थान) लब्धिवीर्य की अपेक्षा सवीर्य है करण वीर्य की अपेक्षा अवीर्य है। अशैलेषी 13वें गुणस्थान लब्धि से सवीर्य करण से जो जीव उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम इन पाँच शक्ति सहित है, वे सवीर्य जो रहित है वे अवीर्य। मनुष्य के दण्डक को छोड़कर शेष 23 दण्डकों में लब्धि वीर्य से सवीर्य है करण वीर्य की अपेक्षा उत्थान कर्म आदि 5 शक्ति वाले सवीर्य और शक्ति रहित अवीर्य हैं। मनुष्य में समुच्चय जीव की तरह कहना। सिद्ध भगवान का नहीं कहना।

21. अगुरु लघु का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 9) 18 पापों के करने या न करने से जीव पर 4 दशाओं से कहा है। -**1 से 4** अठारह पापों से निवर्तने से जीव हल्का होता है, संसार घटाता है, संसार को ह्रस्व करता है। (स्थिति घटाता है)। संसार

सागर से तिरता है। ये 4 बोल प्रशस्त है। 18 पापों को प्रवर्तने (प्रवृत्ति करने) से जीव भारी होता है, संसार बढ़ाता है, संसार दीर्घ करता है (स्थिति बढ़ाता है) संसार सागर में परिभ्रमण करता है, ये 4 बोल अप्रशस्त है।

22. गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुलघु का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 9) निश्चय नय से दो भांगा गुरु लघु और अगुरु लघु और व्यवहार नय की अपेक्षा 4 भांगे गुरु, लघु, गुरु लघु, अगुरु लघु। भारी को गुरु जैसे पत्थर, हल्के को लघु जैसे धुंआ, भारी और हल्का जैसे वायुकाय, अगुरु लघु जो न भारी न हल्का वह आकाश। 123 बोल बताकर चार भांगों में विभक्त किया है-(1) द्वीप 1 (2) समुद्र 1 (3) वासा-क्षेत्र 1 (4) दण्डक 24 (5) अस्तिकाय 5 (6) समय 1 (7) कर्म 8 (8) लेश्या 12 (6 द्रव्य + 6 भाव) (9) दृष्टि 3 (10) दर्शन 4 (11) ज्ञान 8 (5 ज्ञान + 3 अज्ञान) (12) संज्ञा 4 (13) शरीर 5 (14) योग 3 (15) उपयोग 2 (16) द्रव्य 1 (17) प्रदेश 1 (18) पर्याय 1 (19) अतीत काल 1 (20) अनागत काल 1 (21) सर्वकाल 1 ये सब 88 बोल इनमें 7 नरक, 7 घनोदधि, 7 घनवाय, 7 तनुवाय, 7 आकाशान्तर ये 35 जोड़ने से 123 बोल हुए।

अगुरु लघु-7 नरक के आकाशान्तर, 4 अस्तिकाय (धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकाशस्ति, जीवास्ति) 1 समय, 8 कर्म, 6 भावलेश्या, 1 कार्मण शरीर, 3 दृष्टि, 4 दर्शन, 5 ज्ञान, 3 अज्ञान, 4 संज्ञा, 2 योग (मन, वचन) 2 उपयोग, 3 काल ये 53 बोल।

गुरु लघु-7 तनुवाय, 7 घनवाय, 7 घनोदधि, 7 पृथ्वी, 1 सर्वद्वीप, 1 समुद्र, 1 सर्वक्षेत्र, 4 शरीर (कार्मण छोड़कर), 24 दंडक (जितने अठस्पर्शी पावे उतना उतना कहना, 24 दंडकमें जीव और कार्मण शरीर में चौथा अगुरु लघु भांगा आता है), 6 द्रव्य लेश्या, 1 काय योग ये 66 **गुरु लघु और अगुरु लघु** (तीसरा-चौथा भांगा) पुदगलास्तिकाय, सर्वद्रव्य, सर्वप्रदेश, सर्वपर्याय 4 बोल।

23. निर्ग्रन्थ की लघुता का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 9)-श्रमण निर्ग्रंथों के लिए लघुता, अल्प इच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धिपना, अप्रतिबद्धता, अक्रोधीपना, अमानीपना, अमायीपना, अलोभीपना प्रशस्त है। श्रमण निर्ग्रंथ कंखा प्रदोष अथवा पहले बहुत मोह वाला भी हो परन्तु पीछे संवुड़ा (संवृत-संवर वाला) होकर काल करे तो सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सब दु:खों का अन्त करने वाला होता है।

24. आयुष्य बंध का थोकड़ा (भ.श. 1 उ. 9) जीव एक समय में एक आयुष्य बांधता है। मनुष्य मनुष्य का आयुष्य बांधे उसे इस भव का आयुष्य कहा गया है और अन्य गतियों का बांधे उसे परभव का आयुष्य बांधे कहा गया है, अत: कहा है कि जिस समय इस भव का आयुष्य बांधता है, तो परभव का नहीं बांधता और परभव का बांधता है तो इस भव का नहीं बांधता।

25. कालास्यवेषी पुत्र अणगार (भ.श. 1 उ. 9) 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ संतानीक कालास्यवेषी अणगार एक दिन भगवान महावीर के स्थविर भगवन्तों के पास गये बोले-आप सामायिक, सामायिक का अर्थ, पच्चक्खाण, उसका अर्थ, संयम, उसका अर्थ, संवर, संवर का अर्थ, विवेक, व्युत्सर्ग उनके अर्थ जानते है तो मुझे बताइये-स्थविरों ने कहा हे कालास्यवेषी पुत्र! हमारी आत्मा ही सामायिक और उसका अर्थ यावत् व्युत्सर्ग और उनके अर्थ है। क्रोध, मान, माया, लोभ का त्याग कर उनकी निन्दा संयम के लिए की जाती है। निन्दा गर्हा संयम है। अगर्हा संयम नहीं। गर्हा सब दोषों को नाश करती है। मिथ्यात्व को जानकर गर्हा द्वारा सब दोषों का नाश करती है, इस तरह हमारी आत्मा संयम में स्थापित है, पुष्ट है, उपस्थित है। कालास्यवेषी संबुद्ध हुए और चारयाम से पंचमहाव्रत अंगीकार किया, बहुत वर्षों तक संयम पालकर अन्त में सिद्धबुद्ध मुक्त यावत् सर्वदु:ख रहित हुए।

26. अपच्चक्खाण-आधाकर्मादि (भ.श. 1 उ. 9) एक सेठ, एक दरिद्री, एक कंजूस, एक राजा ये सब एक साथ अपच्चक्खाण की क्रिया अविरति के कारण करते हैं। आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रंथ आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष 7 कर्मों की शिथिल पड़ी कर्म प्रकृतियों को मजबूत करता है, यावत् बारम्बार संसार परिभ्रमण करता है। अपने धर्म का उल्लंघन कर, पृथ्वीकाय से लेकर त्रसकाय के जीवों की घात की परवाह किये बिना और जिन जीवों का उनके शरीर का वह भक्षण करता है, उन पर अनुकम्पा नहीं करता।

(2) प्रासुक और एषणीय आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष 7 कर्म प्रकृतियों को शिथिल करता है, संवुडा अणगार की तरह कहना। आयुष्य कर्म कदाचित बांधता है, कदाचित नहीं बांधता। अंत में संसार सागर से पार हो जाता है। वह श्रमण निर्ग्रंथ अपने धर्म का उल्लंघन नहीं करता पृथ्वीकाय यावत् त्रसकाय जीवों का रक्षण करता है, अनुकंपा करता है, इसलिए संसार सागर तिर जाता है।

27. अन्य तीर्थियों के प्रश्नोत्तर (भ.श. 1 उ.10) (1) अन्य तीर्थिक चलमाणे अचलिये यावत् णिज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे (चलता हुआ नहीं चला, निर्जराता हुआ नहीं निर्जरा) यह उनका मिथ्याकथन है। सत्यकथन यह है कि चलमाणे चलिये, णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे। (2) अन्य तीर्थी का कथन कि दो परमाणु नहीं मिलते स्नेहकाय (चिकनापन) नहीं होता, तीन मिलते है वहाँ चिकनापन है, टूटने पर डेढ़ होते है तीन होंगे तो तीन अलग-अलग होंगे, चार का भी ऐसा ही कथन पाँच परमाणु जीव को दुःखदायी है, दुःख (कर्म) शाश्वत है, चय उपचय (बढ़ना-घटना) होता रहता है। बोलने से पहले भाषा और पीछे भी भाषा के पुद्गल है, क्रिया से पहले और बाद में भी दुःख है, क्रिया करने से नहीं अक्रिय से दुःख है, अस्पर्श दुःख है क्रिया नहीं करने से जीव वेदते हैं। यह सब मिथ्या कथन है-भगवान महावीर ने समाधान फरमाया कि-दो परमाणु परस्पर मिलते है, उनमें स्नेहकाय है, दो टुकड़े होने पर एक-एक होगा। तीन परमाणु इकट्ठे मिलते है दो टुकड़े करने से एक-एक तरफ, दो एक तरफ (डेढ़-डेढ़ नहीं), दो प्रदेशी स्कंध एक तरफ रहेगा। तीन अलग होने या एक-एक-एक परमाणु। इसी तरह चार प्रदेशी के 2-3-4 टुकड़े। पाँच परमाणु परस्पर स्कंध रूप होते हैं। वह स्कंध आशाश्वत है, उपचय (वृद्धि), अपचय (हानि) को प्राप्त होता है। बोलने से पहले अभाषा है, बोलने के बाद भी अभाषा है, बोलते समय भाषा है। क्रिया करने से पहले दुःख हेतु नहीं, करने के बाद भी दुःख हेतु नहीं, करते समय दुःख हेतु। क्रिया करने से दुःख हेतु है, नहीं करने से नहीं। कृत दुःख है, अकृत दुःख नहीं। स्पर्श दुःख है। क्रिया करके प्राण, भूत, जीव सत्व वेदना वेदते हैं। प्राण-विकलेन्द्रिय, भूत-वनस्पतिकाय, जीव-पंचेन्द्रिय, सत्व-पृथ्वी, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय। (3) जीव एक समय में एक ही क्रिया करता है दो नहीं, ईर्यापथिकी अथवा साम्परायिकी दोनों में से एक करता है।

28. उच्छवास निःश्वास (भ.श. 2 उ. 1) (1) बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जीव आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छवास लेते हैं, इसी तरह पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय आभ्यन्तर और बाह्य श्वासोच्छवास लेते हैं। ये द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव यावत् 288 बोलों का नियमा छः दिशा का निर्व्याघात आसरी और व्याघात आसरी कदाचित् तीन, चार, पाँच दिशा का लेते हैं। पन्नवणा

के 28वें आहार पद की तरह। (2) वायुकाय वायुकाय का श्वासोच्छवास लेता है, वायुकाय अनेक लाखों बार मरकर वायुकाय में उत्पन्न होता है, वायुकाय स्पर्श से मरता है (सोपक्रमी आयुष्य आसरी) किन्तु बिना स्पर्श किये नहीं मरता। वायुकाय स्वकाय शस्त्र से भी मरता है और परकाय शस्त्र से भी मरता है। वायुकाय शरीर सहित भी मरता है और शरीर रहित भी मरता है, चार शरीर होते है-औदारिक वैक्रिय तैजस कार्मण। औदारिक-वैक्रियकी अपेक्षा शरीर रहित और तैजस-कार्मण की अपेक्षा शरीर सहित मरता है।

29. मड़ाई निर्ग्रंथ (भ.श. 2 उ. 1) मड़ाई (प्रासुक भोजन करने वाला) निर्ग्रंथ जिसने भव रोका नहीं, भव प्रपंच (संसार) रोका नहीं, संसार, संसार में वेदने योग्य कर्म घटाये नहीं। संसार विच्छेद, संसार में वेदने योग्य कर्म विच्छेद किये नहीं, प्रयोजन सिद्ध नहीं किया, कार्य पूर्ण नहीं किया, ऐसा मड़ाई निर्ग्रंथ मरकर फिर मनुष्य भव आदि को प्राप्त करता है।

(2) ऐसे मड़ाई निर्ग्रंथ को प्राण, भूत, जीव, सत्व, विज्ञ, वेद कहना चाहिए क्योंकि वह बाह्य आभ्यन्तर श्वासोच्छवास लेता है, अतः प्राण। वह भूतकाल में या वर्तमान में है, भविष्य में रहेगा अतः भूत। वह जीता है जीवत्व और आयुष्य कर्म का अनुभव करता है अतः जीव। शुभाशुभ कर्मों से संयुक्त है अतः सत्व। तीखे, कड़वे, कषैले, खट्टे-मीठे रस को जानता है अतः विज्ञ और सुख-दुःख को भोगता है अतः वेद कहलाता है। (3) जिस मड़ाई निर्ग्रंथ ने भव रोक दिया, भव प्रपंच रोक दिया, संसार घटाया, वेदने योग्य कर्म घटाये, संसार और वेदने योग्य कर्म विच्छेद किया, प्रयोजन सिद्ध किया, कार्य पूर्ण कर लिया ऐसा मड़ाई फिर मनुष्य भव आदि को प्राप्त नहीं करता है। (4) ऐसे मड़ाई निर्ग्रंथ को सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, पारगत, परम्परागत, परिनिवृत्त, अन्तकृत और सर्वदुःखों से रहित कहना। (मड़ (मृत) अचित निर्दोष)।

30. खंदकजी (खंदकजी) (भ.श. 2 उ.1) श्रावस्ती नगरी में गर्दभाली परिव्राजक का शिष्य स्कंदक परिव्राजक ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद चार वेद का, इतिहास, निघंटुकोश, वेद के छः अंग-शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्दशास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, गणित शास्त्र का जानकार, स्वमत के शास्त्रों में प्रवीण सारए (शिष्यों को पढ़ाने वाला, भूले को याद दिलाने वाला), वारए (अशुद्ध बोले उसे रोकने वाला), धारए (पढ़ी हुई विद्या को सम्यक प्रकार से धारण करने वाला, शिष्यों को

सम्यक् संयम में प्रवृत्ति कराने वाला), पारए (शास्त्रों का पारगामी, निपुण) था। एक बार श्रमण भगवान महावीर स्वामी का श्रावक पिंगल नाम का नियंठा स्कंदकजी के पास आया, प्रश्न पूछे (1) लोक अन्तसहित है या अन्तरहित (2) जीव अन्तसहित है या अन्तरहित (3) सिद्धि (सिद्धशिला) अन्तसहित है या अन्तरहित (4) सिद्ध भगवान अन्तसहित है या अन्तरहित (5) किस मरण से संसार घटाता और किस मरण से बढ़ाता है। दो-तीन बार पूछे परन्तु स्कंधकजी ने उत्तर नहीं दिया उनके मन में शंका हुई, मैं उत्तर दूँ वह सही है या नहीं, यही उत्तर है या नहीं, प्रश्नकर्त्ता को संतोष होगा या नहीं, मन में क्लेश उत्पन्न हुआ, इस विषय में मैं भी कुछ नहीं जानता हूँ। जब उत्तर नहीं मिला तो पिंगल नियंठा चला गया। एक बार श्रमण भगवान महावीर स्वामी कृतांगला नगरी के बाहर छत्र पलाश उद्यान में पधारे, स्कंदकजी भी शंका का समाधान करने के विचार से, अपने तापसी भंडोपकरण साथ ले, चल दिये। भगवान महावीर ने श्री गौतम स्वामी से कहा- आज तुम अपने पूर्व साथी को देखोगे और पिंगल नियंठा के 5 प्रश्नों के उत्तर लेने आते हुए स्कंदक के बारे में कहा, और समाधान प्राप्त कर दीक्षा प्राप्त करेगा। उसे आते देख गौतम स्वामी शिष्टाचारवत् सामने गये, उनका स्वागत कर लाये, (प्रभु ने उन्हें मित्र बताया था और दीक्षा लेगा ऐसा भी फरमाया था, वैसे भी शिष्टाचार होता है) उन्हें पूछा हे स्कंदक! आप 5 प्रश्नों का समाधान जो पिंगल ने पूछा था उन्हें प्राप्त करने आये हो, यह स्कंदक ने सुन पूछा ऐसे मेरी मन की बात आपने कैसे जान ली कौन महापुरुष है? श्री गौतम स्वामी ने कहा- मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, अरिहन्त, जिन, केवली, श्रमण भगवान महावीर तीनों काल की बात को जानने वाले हैं, उन्होंने कहा, इसलिए मैं जानता हूँ। भगवान को देखकर स्कंदकजी हर्षित, आनंदित हुए, वंदना कर पर्युपासना की, तब प्रभु ने 5 प्रश्नों के बारे में कहा हे स्कंदक! इन प्रश्नों का तुम उत्तर नहीं दे सके, जिसका समाधान प्राप्त करने आये हो? स्कंधक ने कहा- हाँ! यह सत्य है, भगवान ने कहा- हे स्कंधक! (1) मैंने लोक 4 प्रकार का बताया है- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से लोक एक और अन्तसहित है, क्षेत्र से-असंख्यात कोड़ा-कोड़ी योजन का लंबा-चौड़ा 14 रज्जू प्रमाण अन्तसहित है। काल से-लोक भूतकाल में था, वर्तमान में है, भविष्य में रहेगा, लोक ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, अक्षय, अव्यय, अवस्थित, नियत, अन्तरहित है। भाव से-अनन्त वर्ण पर्याय है,

अनंत गंध, रस, स्पर्श पर्याय रूप है, अनन्त गुरुलघु, अनन्त अगुरुलघु पर्याय रूप अनन्त है। (2) जीव के 4 भेद है-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से जीव एक है अन्तसहित है। क्षेत्र से जीव असंख्यात प्रदेश वाला, असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहन किये हुए है, अन्तसहित है। काल से-नित्य है अन्तरहित है। भाव से-जीव के अनन्त ज्ञान पर्याय हैं, अनन्त दर्शन पर्याय, अनन्त चारित्र पर्याय, अनन्त अगुरुलघु पर्याय है, अन्तरहित है। (3) सिद्धि (सिद्धशिला) के 4 भेद-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से सिद्धशिला एक है अन्तसहित है। क्षेत्र से 45 लाख योजन लंबी-चौड़ी 1,42,30,249 योजन झाझेरी परिधि है-अन्तसहित है। काल से-सिद्धि नित्य है, अन्तरहित है। भाव से-अनन्त वर्ण पर्याय, अनन्त गंध, अनन्त रस अनन्त स्पर्श पर्याय वाली है अनन्त गुरुलघु, अनन्त अगुरुलघु पर्याय रूप-अन्तरहित है। द्रव्य क्षेत्र से अन्तसहित कालभाव से अन्तरहित है। सिद्ध अन्तसहित भी है, अन्तरहित भी है। (4) सिद्ध के 4 भेद-द्रव्य क्षेत्र काल भाव। द्रव्य से सिद्ध एक है अन्तसहित है, क्षेत्र से असंख्यात प्रदेश वाले हैं, असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहन किये है-अन्तसहित है। काल से आदि सहित है, अन्तरहित है। भाव से अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्त अगुरुलघु पर्याय वाले है अन्तरहित है। (5) **मरण दो** प्रकार का है-**बालमरण** के 12 भेद है-(1) बलन्मरण (व्रत से भ्रष्ट होकर) (2) वशार्त्तमरण (इन्द्रियवश होकर) (3) अन्तोशल्यमरण (दोषों की आलोचना किये बिना) (4) तद्भवमरण (उसी में पुन: उत्पन्न) (5) गिरिपतन (6) तरूपतन (7) जलप्रवेश (8) ज्वलनप्रवेश (9) विषभक्षण मरण (10) सत्थोवाडण (शस्त्र से) (11) वेहानस (फाँसी) (12) गिद्धपिट्ठ (मरे जानवर के कलेवर में प्रवेश कर) मरण ये 12 बालमरण से जीव मरता हुआ नारकी के अनन्त भव बढ़ाता है तिर्यंच के, मनुष्य के, देवता के अनन्त भव बढ़ाता है। अनन्त काल संसार में परिभ्रमण करता है। **पण्डितमरण के** भेद-पादपोपगमन (वृक्ष की तरह स्थिर) तथा भक्त प्रत्याख्यान (भोजन पानी का त्याग) इन दोनों के दो-दो भेद निहारी (जो संथारा ग्राम नगर बस्ती में किया जाय, जिससे मृत कलेवर को बाहर ले जाकर अग्नि दाहादि संस्कार करना पड़े) अनिहारी (जंगलादि एकांत में जहाँ अग्नि दाहादि न करना पड़े) पंडित मरण से मरता हुआ जीव नारकी के अनन्त भव घटाता है यावत् भव भ्रमण घटाता है अल्प संसारी होता है। भगवान के वचनामृत

सुन स्कंदकजी ने दीक्षा ग्रहण की, भिक्षु की 12 पड़िमा धारण की, गुण रत्न संवत्सर तप और अनेक तपादि करके एक मास का संथारा कर आयुष्य पूर्णकर 12वें देवलोक में उत्पन्न हुए, महाविदेह से मुक्त होंगे।

31. सवणे-णाणे (भ.श. 2 उ. 5) सवणे णाणे विण्णाणे, पच्चक्खाणे य संजमे।
अण्णहये तवे चेव, वोदाणे अकिरिया सिद्धि॥

(1) तथा रूप श्रमण माहण की पर्युपासना करने वाले पुरुष को श्रवण फल (सत्शास्त्रों का सुनना) मिलता है (2) श्रवण का फल जान पणा (ज्ञान) है। (3) ज्ञान का फल विज्ञान (विवेचन पूर्वक) है। (4) विज्ञान का फल पच्चक्खाण है (5) पच्चक्खाण का फल संयम है। (6) संयम का फल अनाश्रव है (7) अनाश्रव का फल तप है (8) तप का फल वोदाण (कर्मों का नाश) है। (9) वोदाण का फल अक्रिया (निष्क्रियता-क्रिया रहित) है, (10) अक्रिया का फल सिद्धि है।

32. पंचास्तिकाय (भ.श. 2 उ.10) अस्तिकाय के 5 भेद-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। (1) **धर्मास्तिकाय**-इसमें वर्ण, गंध, रस स्पर्श नहीं, अरूपी अजीव शाश्वत्, अवस्थित लोक द्रव्य है। इसमें 5 भेद है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण। द्रव्य से-धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्र से-लोक प्रमाण है। काल से-आदि अन्तरहित है भाव से-अरूपी वर्ण गंध रस स्पर्श नहीं। गुण से-चलण (गति) गुण पानी में मछली का दृष्टान्त। (2) **अधर्मास्तिकाय**-इसमें वर्ण, गंध, रस, स्पर्श नहीं। अरूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य है। इसके 5 भेद है-**द्रव्य से**-अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य, **क्षेत्र से**-लोक प्रमाण है, काल से-आदि अन्तरहित, भाव से-अरूपी है, वर्ण गंध रस स्पर्श नहीं, गुण से-स्थिर (थके पथिक को छाया का दृष्टान्त) गुण वाला है। (3) **आकाशास्तिकाय**-वर्ण, गंध, रस, स्पर्श नहीं, अजीव, शाश्वत, अवस्थित, लोकालोक द्रव्य। इसमें 5 भेद-**द्रव्य से**-एक द्रव्य। **क्षेत्र से**-लोकालोक प्रमाण। काल से-आदि अन्तरहित। भाव से-अरूपी, वर्ण गंध रस स्पर्श नहीं, गुण से-अवगाहन (भींत में खूंटी, दूध में पतासे का दृष्टान्त) गुण, आकाश में विकास का गुण। (4) **जीवास्तिकाय**-वर्ण नहीं गंध नहीं रस नहीं स्पर्श नहीं, अरूपी, जीव, शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य इसके 5 भेद है-द्रव्य से-अनन्त जीव द्रव्य। क्षेत्र से लोक प्रमाण। काल से-आदि अन्तरहित। भाव से-अरूपी, वर्ण, गंध रस स्पर्श नहीं। गुण

से-उपयोग गुण, चेतना, लक्षण, चन्द्रमा की कला का दृष्टान्त। (5) **पुद्गलास्तिकाय**-इसमें 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श पाये जाते हैं। रूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य। इसके 5 भेद-द्रव्य से-अनन्त पुद्गल द्रव्य, क्षेत्र से-लोक प्रमाण। काल से-आदि अन्तरहित। भाव से-रूपी, वर्ण है, गंध है, रस है, स्पर्श है। गुण से-पूरण गलन गुण, बिखरे, मिले, गले, बादलों का दृष्टान्त।

(6) धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश दो यावत् 10 प्रदेश संख्यात असंख्यात में से एक प्रदेश भी कम हो उसे धर्मास्तिकाय नहीं कहना। खांडे चक्र को चक्र नहीं पूरे चक्र को चक्र कहा जाता है इसी तरह छत्र, चमर, वस्त्र, दण्ड, शस्त्र, मोदक के लिए कहना। धर्मास्तिकाय के पूरे प्रदेश हो उसे धर्मास्तिकाय कहना। उसी तरह (7) अधर्मास्तिकाय का द्वार कहना। (8) इसी तरह आकाशास्तिकाय कहना विशेष यह कि इसमें अनंत प्रदेश होते हैं, एक प्रदेश भी कम हो तो नहीं कहना (9) जीवास्तिकाय का भी आकाशास्तिकाय की तरह कहना (10) पुद्गलास्तिकाय का इसी तरह कहना। (11) जीव का जीवपना-उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम सहित है। मति ज्ञान के अनन्त पर्याय, श्रुतज्ञान के अनन्त पर्याय, अवधि ज्ञान, मनः पर्यव ज्ञान और केवलज्ञान के अनन्त पर्याय, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान के अनन्त पर्याय, चक्षु दर्शन के, अचक्षु दर्शन के, अवधि दर्शन के, केवल दर्शन के अनन्त पर्याय हैं। उनके उपयोग को धारण करता है, उपयोग लक्षण वाला है। इन कारणों से उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम द्वारा जीव अपना जीवपना बतलाता है। (12) आकाशास्तिकाय के 2 भेद-लोकाकाश और अलोकाकाश। लोकाकाश में जीव है, जीव के देश, प्रदेश हैं, अजीव है, अजीव के देश, प्रदेश है। लोकाकाश में नियमा एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, अनिन्द्रिय भी है, इन छहों के देश भी है प्रदेश भी है। लोकाकाश में अजीव भी है अजीव के रूपी भी है अरूपी भी है। रूपी के 4 भेद-स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु पुद्गल। अरूपी के 5 भेद-धर्मास्तिकाय का स्कंध है, देश नहीं, प्रदेश है। अधर्मास्तिकाय का स्कंध है, देश नहीं, प्रदेश है। अद्धा समय (काल) है। अलोकाकाश में-जीव नहीं, जीव के देश नहीं, जीव के प्रदेश नहीं। अजीव नहीं, अजीव के देश नहीं, अजीव के प्रदेश नहीं। एक अजीव द्रव्य का देश है वह अगुरु लघु है, अनन्त अगुरुलघु गुणों से संयुक्त है, सर्व आकाश के अनंतवाँ भाग ऊणा (कम) है।

(13) धर्मास्तिकाय (कितना बड़ा है)-लोक रूप, लोक मात्र, लोक स्पर्शी और लोक को स्पर्श कर रहा हुआ है। (14) इसी तरह अधर्मास्तिकाय का कथन है। (15) लोकाकाश (16) जीवास्तिकाय (17) पुद्‌गलास्तिकाय का कहना। धर्मास्तिकाय अधोलोक आधा झाझेरा (सात रज्जू से अधिक) स्पर्शा है। धर्मास्तिकाय ऊर्ध्व लोक आधा माठेरा (सात रज्जू से कुछ कम) स्पर्शा है। तिर्च्छा लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग स्पर्शा है। 7 पृथ्वी, 7 घनोदधि, 7 घनवाय, 7 तनुवाय, धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग को स्पर्शा है। 7 नारकी के 7 आकाशान्तरों ने धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग को स्पर्शा है। जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप, लवणसमुद्र आदि असंख्याता समुद्र धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग को स्पर्शा है। 12 देवलोक, 9 गैवेयक, 5 अणुत्तर विमान, ईषत् प्राग्भारापृथ्वी (सिद्धशिला) धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग को स्पर्शा है। ये धर्मास्तिकाय के 67 बोल हुए (तीन लोक, 7 पृथ्वी, 7 घनोदधि, 7 घनवाय, 7 तनुवाय, 7 नारकी के आकाशान्तर, 1 द्वीप, 1 समुद्र, 12 देवलोक, 9 गैवयेक, 5 अणुत्तर, 1 सिद्धशिला) इसी तरह अधर्मास्तिकाय और लोकाकाश के 67 बोल कहना 67 x 3 = 201 और 17 समुच्चय के ये सब 218 बोल हुए।

33. देव देवी वैक्रिय (भ.श. 3 उ.1) श्री अग्निभूति जी और वायुभूति जी ने प्रश्न चर्चा की थी उस बाबत देवता में 5 बोल पाते हैं-इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंशक), लोकपाल, अग्रमहिषी देवियाँ। वाणव्यन्तर और ज्योतिषी में तायत्तीसग और लोकपाल नहीं होते शेष तीन बोल होते हैं। ये सब ऋद्धि परिवार सहित होते हैं। आवश्यकता पड़ने पर वैक्रिय करके देव-देवी के रूप बना सकते हैं। वैक्रिय करने की शक्ति बताई है, वैक्रिय किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं सिर्फ शक्ति दर्शायी है-

चमरेन्द्र (दक्षिण दिशा)	संपूर्ण जम्बूद्वीप भरे	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरे
बलीन्द्र (उत्तर दिशा)	जम्बूद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
इनके सामानिक, तायत्तीसग	अपने इन्द्र के समान	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
लोकपाल अग्रमहिषी	अपने इन्द्र के समान	तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र
नवनिकायदेव, व्यन्तर ज्योतिषी	एक जम्बूद्वीप	तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र
पहले देवलोक के 3 बोल के	दो जम्बूद्वीप	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
पहले देवलोक लोकपाल अग्रमहिषी	दो जम्बूद्वीप	तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र
दूसरे देवलोक 3 बोल के देव	दो जम्बुद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र

दूसरे देवलोक लोकपाल अग्रमहिषी	दो झाझेरा जम्बू.	तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र
तीसरे के देव	चार जम्बूद्वीप	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
चौथे देवलोक के देव	चार जम्बूद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
पाँचवें देवलोक के देव	आठ जम्बूद्वीप	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
छठे देवलोक के देव	आठ जम्बूद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
सातवें देवलोक के देव	सोलह जम्बूद्वीप	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
आठवें देवलोक के देव	सोलह जम्बूद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
नवमें दसवें देवलोक के देव	32 जम्बूद्वीप	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र
ग्यारवें बारहवें देवलोक के देव	32 जम्बूद्वीप झाझेरा	तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र

शक्ति विषय आसरी बताई है, कभी भरे नहीं, भरते नहीं, भरेंगे नहीं। श्रमण भगवान महावीर के शिष्य तिष्यक अणगार 8 वर्ष दीक्षा पाली, बेले-बेले तप करके एक मास संथारा किया, आलोयणा करके काल करके प्रथम देवलोक के तिष्यक विमान में शक्रेन्द्रजी के सामानिक देव, महा ऋद्धिवंत हुआ वैक्रिय शक्ति शक्रेन्द्रजी के समान है।

भगवान महावीर के शिष्य कुरुदत्त अणगार ने छः मास दीक्षा पाली, तेले तेले तपस्या कर सूर्य आतापना ली, 15 दिन संथारा कर आलोयणा कर काल करके दूसरे देवलोक के कुरुदत्त विमान में ईशानेन्द्र के सामानिक देव हुए, वैक्रिय शक्ति ईशानेन्द्रजी के समान है, महा ऋद्धिवंत है। शक्रेन्द्रजी से ईशानेन्द्रजी का विमान हथेली के माफक ऊँचा है, कोई काम हो तो ईशानेन्द्रजी शक्रेन्द्रजी से ईशानेन्द्रजी का विमान हथेली के माफक ऊँचा है, कोई काम हो तो ईशानेन्द्रजी शक्रेन्द्रजी को बुलाते है। बुलाने या न बुलाने पर पहले देवलोक में शक्रेन्द्रजी के पास जाते है, सलाह मशविरा करते हैं। कभी दोनों के बीच कोई विवाद हो जाय तो दोनों इन्द्र विचार करते है कि सनत्कुमारेन्द्र (तीसरे देवलोक के इन्द्र) आवे तो अच्छा हो, इस पर सनत्कुमार का आसन चलायमान होता है वे जानकर आते है और दोनों को समझा देते हैं। सनत्कुमारेन्द्र चारों तीर्थ के बड़े हितकारी, सुखकारी, पथ्यकारी, अनुकम्पक है। निःश्रेयस चाहने वाले है, भवी, समदृष्टि, सुलभबोधी, परित्तसंसारी, आराधक, चरम हैं। सनत्कुमारेन्द्र 7 सागरोपम की स्थिति है, वहाँ से चवकर, महाविदेह में जन्म लेकर मुक्त होवेंगे।

34. चमरेन्द्रजी के उत्पात (भ.श. 3 उ. 2)-असुरकुमार देव रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी (जाड़ी) है उसमें से 1 हजार योजन ऊपर का और

एक हजार योजन नीचे का छोड़कर 1,78,000 योजन पोलार है। इसमें 13 पाथड़े और 12 आंतरे हैं, उन 12 में से ऊपर के दो आंतरे छोड़कर नीचे के 10 आंतरों में दस जाति के भवनपति देव रहते हैं। तीसरे आंतरे में असुरकुमार देव रहते हैं। इनकी शक्ति सातवें नरक तक जाने की है, परन्तु तीसरी नरक बालुका प्रभा तक जाते है, अपने पूर्वभव के बैरी को दुःख देने या मित्र को सुख पहुँचाने जाते हैं। तिरछी दिशा में स्वदिशा में असंख्यात द्वीप समुद्र, परदिशा में नन्दीश्वर द्वीप तक जाते है। वहाँ तीर्थंकर भगवान के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान, मोक्ष इन चार कल्याणकों का महोत्सव करने जाते हैं। ऊँची गति 12वें देवलोक तक जाने की, परन्तु पहले देवलोक तक जाते है वहाँ अपने पूर्वभव के बैरी को दुःख देने, मित्र से मिलने तथा आत्मरक्षक देवों को त्रास देने, वहां से रत्न चुराकर एकान्त में भाग जाते हैं। तब वैमानिक देव असुर कुमार देवों को शारीरिक पीड़ा पहुँचाते हैं। वहाँ की देवियों (पहले देवलोक) के साथ वहाँ पर ये भोग भोगने में समर्थ नहीं हैं। वहाँ से देवियों को लेकर अपने स्थान पर लाकर अगर देवियों की इच्छा हो तो भोगते हैं जबरदस्ती नहीं। अनन्ती अवसर्पिणी अनन्ती उत्सर्पिणी काल बीतता तब कोई असुर कुमार देव पहले देवलोक में जाता है, तब उसे अच्छेरा (आश्चर्य) मानते हैं। केवली तीर्थंकर, छद्मस्थ अरिहन्त, भवितात्मा अणगार इन तीनों में से किसी एक की नेश्राय (शरण) लेकर असुरकुमार देव पहले देवलोक में गये और जाते है, जावेंगे। सब नहीं जाते, मोटी ऋद्धि वाले जाते हैं, वर्तमान के चमरेन्द्रजी गये थे।

चमरेन्द्रजी का जीव पूर्वभव में वेभेल सन्निवेश (जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के विंध्य पर्वत की तलेटी में) में पूरण नामक गाथापति था। ''दानामा'' नाम की प्रव्रज्या ग्रहण की, 12 वर्ष तापस रहकर अंत में संलेखना करके काल करके चमर चंचा राजधानी में चमरेन्द्र बने। अवधिज्ञान से अपने ऊपर शक्रेन्द्र को देखा। श्रमण भगवान महावीर को उस समय दीक्षा लिये 11 वर्ष हुए थे, सुंसुमारपुर के अशोक वन खंड में ध्यानस्थ थे,, चमरेन्द्र भगवान के पास आया, वन्दन नमस्कार कर शरण प्राप्त की। भयंकर काल रूप बना परिघशस्त्र लेकर पहले देवलोक जाकर शक्रेन्द्र को अन्ट-सन्ट कहने लगा अनिष्ट अप्रिय वचन सुनकर शक्रेन्द्र क्रोध में धमधमाते हुए चमरेन्द्र को मारने वज्र फेंका। चमरेन्द्र डरकर भागे, ध्यानस्थ महावीर प्रभु के चरणों के बीच में जाकर बैठ गये। शक्रेन्द्र ने उपयोग लगाया भगवान को देखा,

जाना कि चमरेन्द्र उनकी शरण लेकर आया था, मेरा वज्र उसका पीछा कर रहा है, कहीं मेरे वज्र से भगवान को आशातना न हो ऐसा विचार कर शक्रेन्द्र उतावली गति से भगवान के पास आया, भगवान से चार अंगुल दूरी पर रहते वज्र को पकड़ लिया भगवान को वंदना कर क्षमा माँगी फिर ईशान कोण में गये वहाँ पृथ्वी पर तीन बार डाँवे (बायें) पाँव को पटका और चमरेन्द्र से कहा हे चमर! आज तूं भगवान महावीर के प्रभाव से बच गया है, जा अब मेरे से तुझे कोई डर नहीं है, ऐसा कह शक्रेन्द्र पहले देवलोक वापस चले गये। चमरेन्द्र भी अपनी राजधानी चले गये, फिर अपनी सब ऋद्धि परिवार को साथ लेकर भगवान के पास आये, वंदन नमस्कार कर नाटक बताया वह ऋद्धि शरीर से निकल कूटाकार शाला के दृष्टान्त से वापस शरीर में प्रवेश कर गई। देवता पुद्गल को फेंककर वापस ले सकते है यहाँ यंत्र से समझाया है-

क्षेत्रकाल द्वार का यंत्र-

जाने की मार्गणा	**जितना क्षेत्र जावे**	**जाने में जितना समय लगता है**
(1) शक्रेन्द्रजी को	ऊँचा क्षेत्र जाने में	1 समय लगता है
(2) वज्र को	ऊँचा क्षेत्र जाने में	2 समय लगता है
(3) चमरेन्द्रजी को	ऊँचा क्षेत्र जाने में	3 समय लगता है
(1) चमरेन्द्रजी को	नीचा क्षेत्र जाने में	1 समय लगता है
(2) शक्रेन्द्रजी को	नीचा क्षेत्र जाने में	2 समय लगता है
(3) वज्र को	नीचा क्षेत्र जाने में	3 समय लगता है

(2) एक समय में तीन क्षेत्र में जाने की अल्पाबहुत्व का यंत्र-काल आसरी

मार्गणा	ऊँचा क्षेत्र जावे	तिरछा क्षेत्र जावे	नीचा क्षेत्र जावे	ऊं. भाग	ति. भाग	नीचा भाग
शक्रेन्द्रजी 1 समय में	संख्यात भाग अधिक जावे 3	संख्यात भाग अधिक जावे 2	सबसे थोड़ा जावे 1	24	18	12
वज्र 1 समय में	विशेषाधिक जावे 3	विशेषाधिक जावे 2	सबसे थोड़ा जावे 1	12	10	8
चमरेन्द्र 1 समय में	सबसे थोड़ा जावे 1	संख्यात भाग अधिक जावे 2	संख्यात भाग अधिक जावे 3	8	16	24

(3) जावणकाल की अल्प बहुत्व का यंत्र-

मार्गणा	ऊँचा जाने की	नीचा जाने की
(1) शकेन्द्रजी	थोड़ा काल	संख्यात गुणाकाल
(2) वज्र	थोड़ा काल	विशेषाधिक काल
(3) चमरेन्द्रजी	संख्यात गुणाकाल	थोड़ा काल

(4) सबके गतिकाल की अल्पाबहुत्व का यंत्र-

(1) शकेन्द्रजी ऊँचा चमरेन्द्रजी नीचा	तुल्य काल	सबसे थोड़ा
(2) शक्रेन्द्रजी नीचा वज्र ऊँचा	तुल्य काल	संख्यात गुणा
(3) चमरेन्द्रजी ऊँचा वज्र नीचा	तुल्य काल	विशेषाधिक

पुद्गल फेंकते समय तीव्र पीछे मंदगति हो जाती है, देव की गति पहले पीछे शीघ्र ही रहती है। इसलिए ले सकते हैं। चमरेन्द्र नहीं पकड़ सके क्योंकि चमरेन्द्र की नीचे जाने की गति शीघ्र है, ऊपर जाने की मंद इसी तरह शक्रेन्द्र की नीचे जाने की मंद और ऊँचा जाने की तीव्र इसलिए चमरेन्द्र को नहीं पकड़ सके। चमरेन्द्र की स्थिति 1 सागरोपम है, महाविदेह से मोक्ष प्राप्त करेंगे।

35. अवधिज्ञान की विचित्रता (भ.श. 3 उ. 4) अवधिज्ञानी भवितात्मा अणगार, वैक्रिय समुद्रघात कर विमान में बैठकर आकाश में जाते देव को देखने संबंधी चौभंगी है-(1) कोई देव को देखता है, विमान को नहीं (2) कोई विमान को देखता है, देव को नहीं (3) कोई देव को भी देखता है, विमान को भी देखता है (4) कोई विमान भी नहीं देखता, देव भी नहीं देखता। इसी तरह से देवी के 4, देव देवी के 4, वृक्ष के अंदर और बाहर के भाग से 4, यो चार-चार चौभंगियाँ हुईं। मूल कन्द से 4, मूल स्कंध से 4, मूल त्वचा, मूल शाखा, मूल प्रवाल, मूल पत्र, मूल फूल, मूल फल, मूल बीज से 4-4 ये मूल से 9 चौभंगी, कन्द से 8, स्कंध से 7, त्वचा से 6, शाखा से 5, प्रवाल से 4, पत्र से 3, फूल से 2, फल बीजों से 1 इस तरह 49 चौभंगी हुई। (2) वायुकाय पताका के आकार का वैक्रिय करता है, ऊँची, नीची पताका करके अपने ऋद्धि और कर्म प्रयोग से अनेक योजन तक जाता है, वह वायुकाय है, पताका नहीं। इसी तरह बलाहक (बादल) अनेक स्त्री, पुरुष, घोड़ा, हाथी नाना रूप बनाकर योजनों तक परिद्धि, पर प्रयोग, परकर्म से जाता है, उसे स्त्री पुरुषादि नहीं कहते, बलाहक (बादल) कहते हैं। (3) मरते समय जीव जिस

गति में उत्पन्न होता है, वह उसी लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण कर काल करता है। और उसी लेश्या में उत्पन्न होता है, 24 दंडक में जो-जो लेश्या पावे कहना।
(4) वैक्रिय लब्धिवंत भवितात्मा अणगार बाहर के पुद्गल लेकर ही वैभार पर्वत का उल्लंघ-प्रल्लंघ (बार-बार उलंघना) कर सकते है, पुद्गल लिए बिना नहीं कर सकते। इसी तरह राजगृही में जितने रूप है, उतने वैक्रिय रूप बना सकते है वैभार गिरी पर्वत में प्रवेश कर सम पर्वत को विषम और विषम को सम कर सकते हैं।
(5) प्रमादी साधु वैक्रिय करता है, अप्रमादी नहीं क्योंकि प्रमादी साधु सरस आहार करके वमन करता है, उसके हाड मज्जा बलवान होते हैं, लोही मांस पतले होते हैं। उस आहार के बादर पुद्गल हाड़, मज्जा, केश, श्मश्रु, रोम, नख, लोही, शुक्रादिपने एवं इन्द्रियपने परिणमते हैं, आमायी साधु रूखा-सूखा आहार करता है, वमन नहीं करता, उसके हाड़ मज्जा पतले होते हैं, लोही मांस जाड़े होते हैं, बादर पुद्गल उच्चार पासवण खेल सिंघाणादि पणे परिणमते हैं। इस कारण प्रमादी करते, अप्रमादी नहीं करते हैं। प्रमादी साधु उस कार्य की आलोचना किये बिना काल करता है, इसलिए आराधक नहीं है, अप्रमादी आलोचना करता है इसलिए आराधक है। पहले वैक्रिय रूप किये थे फिर अमायी बना आलोचना की आराधक हुआ।

36. अणगार वैक्रिय (भ.श. 3 उ. 5) लब्धिवंत अणगार बाहर के पुद्गल लेकर अनेक स्त्री, पुरुष, हाथी, घोड़ा, सिंह, व्याघ्र, शिविका, तलवार, ढाल, आकाश में उड़ने आदि रूप बनाने में समर्थ है, विषय आसरी शक्ति से जम्बूद्वीप को भरने की शक्ति है, परन्तु किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं। इसी तरह बाहर के पुद्गल लेकर सिंह, हाथी, घोड़ा, मनुष्य, स्त्री, व्याघ्र आदि अनेक रूप बनाकर अनेकों योजनों तक जाने में समर्थ है, परन्तु उन्हें हाथी, घोड़ा आदि नहीं कहते, अणगार कहेंगे। वे आत्म ऋद्धि, आत्म कर्म, आत्म प्रयोग से जाते हैं, परऋद्धि आदि से नहीं जाते। ऐसी विकुर्वणा प्रमादी करते हैं, अप्रमादी नहीं। प्रमादी उसकी आलोचना किये बिना काल करे तो, आभियोगिक (दास सेवक) देव में उत्पन्न होते हैं। पदवीधारी नहीं। अप्रमादी आलोयणा कर काल करे तो अनाभियोगिक (इन्द्र आदि 5 पदवी) नवग्रैवेयक, अणुत्तर विमानों में उत्पन्न होते हैं।

37. ग्रामादि विकुर्वणा (भ.श. 3 उ.9) राजगृही में रहा हुआ भावितात्मा अणगार मायी मिथ्यादृष्टि वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि, विभंगज्ञानलब्धि से वाणारसी नगर की विकुर्वणा कर उसे राजगृही रूप से देखता-जानता है, उसे तथा रूप नहीं जानकर

अन्यथा भाव से जानते हैं क्योंकि विभंगज्ञान से विपरीत दर्शन होता है, सत्य नहीं समझता, इसी प्रकार वाराणसी में रहा राजगृही वैक्रिय कर वाराणसी समझता है वह इस तरह जानता है कि मैं राजगृही में हूँ बनारस वैक्रिय कर वाणारसी देख रहा हूँ, उल्टा देखता है। राजगृही और वाणारसी के बीच एक नगर की विकुर्वणा कर नगर देखता है वह जानता है कि यह राजगृही है यह वाणारसी है दोनों के बीच बड़ा नगर है, परन्तु वह ऐसा नहीं जानता कि यह तो मैंने ही वैक्रिय किया है। इस प्रकार तीनों आलावों में विपरीत दर्शन से सच्ची बात नहीं जानता, नहीं देखता, किन्तु अन्यथा भाव से जानता, देखता है। (4-5-6) ये तीन अलावा समदृष्टि के हैं, इनमें समदृष्टि अवधिज्ञानी सत्य जैसा है वैसा देखता है।

(7) लब्धिवन्त समदृष्टि अणगार बाहर के पुद्गलों के लिए बिना नगर, ग्राम के रूप वैक्रिय नहीं कर सकते। (8) बाहर के पुद्गल लेकर ऐसा कर सकते हैं, संपूर्ण जम्बूद्वीप को ठसा ठस भर सकता है, परन्तु किया नहीं, करेगा नहीं करता नहीं (विषय आसरी)।

38. शक्रेन्द्र ईशानेन्द्र के लोकपाल, राजधानियाँ (भ.श. 3 उ. 7 एवं 4 उ. 1 से 8)-शक्रेन्द्रजी के 4 लोकपाल है। सोम, यम, वरूण, वैश्रमण। पहले देवलोक के बीच में सौधर्मावतंसक विमान से पूर्वादि दिशाओं में असंख्याता योजन दूर चारों दिशाओं में इन चारों के क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर दिशा में विमान हैं। मेरू पर्वत से दक्षिण दिशा में जितना भी काम होता है वह सब इन 4 लोकपालों की जानकारी में होता है। इनके विमान क्रमशः सन्ध्याप्रभ, वरशिष्ट, सयंजल, वल्गु है इनकी राजधानियाँ क्रमशः सोमा, जमा, वरूणा, वैश्रमण है। इनके विमानों का विस्तार साढ़े बारह लाख योजन है, इन चारों लोकपालों की राजधानियाँ इनके विमानों के ठीक नीचे (अपनी-अपनी दिशा में) तिरछा लोक में है वे सभी एक लाख योजन की लंबी-चौड़ी गोल है। चार प्रासादों की पंक्तियाँ है 341 महल-झूमका रूप है। बीच में 1, चारों तरफ 16, सोलह के चौतरफा 64 चौसठ के चौतरफा 256 = 341 हुए।

सोम लोकपाल-स्वयं के विमानवासी देव और भवनपति में विद्युतकुमार देव-देवी, अग्निकुमार देव-देवी, वायुकुमार देव-देवी, सूर्यचन्द्र ग्रह-नक्षत्र तारा सभी ज्योतिषी देव। पुत्रवत् देवों के नाम अंगारक (मंगल), विकोलिक, लोहिताक्ष, शनिश्चर, चन्द्र, सूर्य, शुक्र, बुध, वृहस्पति, राहु ये ज्योतिषी देव पुत्र स्थानीय माने

गये है। मेरू से दक्षिण में ग्रहों की अनेक स्थितियाँ, अभ्र विकार, गर्जना, बिजली, उल्कापात, गंधर्वनगर, संध्या, दिग्दाह, यक्षोदीप्त, धूंअर, महिका, रजउद्घात, चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, जलकुंडादि, प्रतिचन्द्र, प्रतिसूर्य, इन्द्रधनुष, सभी प्रकार की हवाएँ, ग्रामदाह आदि, प्राणक्षय, धनक्षय, कुलक्षय आदि सभी सोम लोकपाल की जानकारी में होता है। इनकी स्थिति पल्योपम का तीसरा भाग अधिक 1 पल्योपम और पुत्र स्थानीय देवों की एक पल्योपम की स्थिति है।

यम लोकपाल-स्वयं के विमानवासी देव-देवी तथा प्रेतकायिक, व्यंतर देव, असुरकुमार जाति के भवनपति देव-देवी, परमाधामी देव, कान्दर्पिक, आभियोगिक देव। पुत्रवत देवों-अम्ब, अम्बरीष, श्याम, शबल, रूद्र, उवरूद्र, काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष, कुंभ, बालू, वैतरणी, खरस्वर, महाघोष। मेरू से दक्षिण में होने वाले, छोटे-बड़े कलह, युद्ध, संग्राम, विविध रोग, यक्ष-भूत आदि के उपद्रव, महामारी एवं उनसे होने वाले कुलक्षय, ग्रामक्षय, धनक्षय आदि इस यम लोकपाल की जानकारी में होते हैं। पंद्रह परमाधामी देव इनके पुत्र स्थानीय है। इनकी स्थिति सोम लोकपाल के समान है।

वरूण लोकपाल-स्वयं के विमानवासी देव-देवी तथा नागकुमार देव-देवी, उदधिकुमार देव-देवी, स्तनितकुमार देव-देवी, वरूणकायिक, वरूणदेव कायिक आदि अधिनस्थ है तथा पुत्र स्थानीय कर्कोटक, कर्दमक, अंजन, शंखपालक, पुंड्र, पलाश, मोद, जय, दधिमुख, अयंपुल, कातरिक। मेरू से दक्षिण में होने वाले अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सुवृष्टि, कुवृष्टि, झरणा, तालाब, आदि और इनसे होने वाले जनक्षय, धनक्षय आदि वरूण लोकपाल की जानकारी में होता है। इनकी स्थिति देशोन दो पल्योपम है।

वैश्रमण लोकपाल-स्वयं के विमानवासी देव-देवी वैश्रमण कायिक, वैश्रमण देव कायिक तथा सुवर्णकुमार देव-देवी, द्वीपकुमार देव-देवी, दिशाकुमार देव-देवी आदि भवनपति तथा वाण व्यन्तर देव-देवी आदि ये वैश्रमण लोकपाल के अधीन होते है। इनके पुत्र स्थानीय पूर्णभद्र, मणिभद्र, शालिभद्र, सुमनभद्र, चक्ररक्ष, पूर्णरक्ष, सद्वान, सर्वजश, सर्वकाम, समृद्ध, अमोघ, असंग। मेरू से दक्षिण में-सोने-चाँदी आदि अनेक प्रकार की खानें, गड़ा हुआ धन, मालिक रहित धन, धनवृष्टि सोनैया वृष्टि, पुष्पवृष्टि, गंधमाला चूर्ण आदि सुगंधी पदार्थ की वृष्टि, वस्त्र, भाजन, क्षीर की

वृष्टि, सुकाल, दुष्काल, सुभिक्ष दुर्भिक्ष, सस्ताई, महँगाई निधान, श्मशान, पर्वत, गुफा, भवन आदि में रखे धन, मणि, रत्न इत्यादि ये सभी वैश्रमण लोकपाल की जानकारी में होते हैं। इनकी स्थिति दो पल्योपम, इनके पुत्र स्थानीय देवों की एक पल्योपम होती है।

ईशानेन्द्रजी के 4 लोकपाल सोम, यम, वैश्रमण और वरूण है। इन चारों लोकपालों के दूसरे देवलोक के ईशानावतंसक विमान के चारों तरफ पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर में क्रमश: सुमन, सर्वतोभद्र, वल्गु और सुवल्गु विमान है। तिरछा लोक में मेरू से उत्तर दिशा में इन लोकपालों का विषय बनता है। ऐरवत इनका क्षेत्र है। भवनपति और व्यन्तर जाति के उत्तरवर्ती देव इनके अधीन होते हैं। बाकी सारा अधिकार शक्रेन्द्र के लोकपालों जैसा है। सोम और यम की स्थिति तीसरा भाग कम दो पल्योपम। वैश्रमण की दो पल्योपम की। वरूण की तीसरा भाग अधिक दो पल्योपम की है। चारों के पुत्र स्थानीय देवों की स्थिति 1 पल्योपम की है।

39. अधिपति देवों का थोकड़ा (भ.श. 3 उ. 8) असुरकुमार आदि भवनपति देवों में एक-एक जाति में 10-10 अधिपति और दो-दो इन्द्र है। एक इन्द्र के 4 लोकपाल है। व्यन्तर देवों में दो-दो इन्द्र ही होते हैं, ज्योतिषीयों में भी सूर्य-चन्द्र दो इन्द्र हैं, इन दोनों के लोकपाल नहीं होते। वैमानिक देवों में पहले देवलोक से 8वें देवलोक तक 5-5 अधिपति (1 इन्द्र 4 लोकपाल) नवमां-दसवाँ में 5 (दोनों का एक इन्द्र 4 लोकपाल) ग्यारहवाँ-बारहवाँ में 5 यों नव ग्रैवेयक और 5 अणुत्तर विमानों में अधिपति नहीं होते। सभी अहमिन्द्र है। भवनपति के 20 वैमानिक के 10 = 30 x 5=150 अधिपति देव + व्यन्तर और वाणव्यंतर के 8+8=16 होते हैं इनमें 2-2 इन्द्र होने से 16×2=32 इन्द्र + 2 ज्योतिषी इन्द्र= 34+150=184 अधिपति देव है।

40. देवता देवी परिषद् परिवार एवं स्थिति (भ.श. 3 उ.10) भवनपति और वैमानिक देवों की तीन प्रकार की परिषद् है समिया, चण्डा, जाया। समिया आभ्यंतर परिषद् है इन्द्र इनसे सलाह करते, विचार करते हैं। चण्डा मध्यम-इनसे अपना विचार कहते हैं, नक्की करते हैं। जाया बाह्य परिषद्-इनको विचारा काम कहकर आज्ञा देते हैं। आभ्यंतर बुलाने से, मध्यम बुलाने या न बुलाने से, बाह्य बिना बुलाये आती है। वाण व्यंतर के तीन परिषद इसा, तुड़िया, दढ़रया। ज्योतिषी के तुम्बा, तुडिया, पर्वा इनका काम भी उपरोक्त जानना।

संख्या और स्थिति इस प्रकार है-

देवलोक		देवता परिषद्			देवी परिषद्		
देवलोक या इन्द्र का नाम	संख्या- स्थिति-	आभ्यंतर	मध्यम	बाह्य	आभ्यंतर	मध्यम	बाह्य
चमरेन्द्र	संख्या- स्थिति-	24000 2½ पल	28000 2 पल	32000 1½ पल	350 1½ पल	300 1 पल	250 ½ पल
बलीन्द्र	संख्या- स्थिति-	20000 3½ पल	24000 3 पल	28000 2½ पल	450 2½ पल	400 2 पल	350 1½ पल
द. नवनिकाय भवनपति	संख्या- स्थिति-	60000 ½ पल झा.	70000 ½ पल	80000 दे. उ. ½ पल	175 ½ पल दे.उ.	150 ¼ झा.	125 ¼ पल
उ. नवनिकाय भवनपति	संख्या- स्थिति-	50000 1 पल दे.उ.	60000 ½ पल झा.	70000 ½ पल	225 ½ पल	200 ½ पल दे.उ.	175 ¼ पल झा.
वाणव्यंतर ज्योतिषी 32+2 इंद्र	संख्या- स्थिति-	8000 ½ पल	10000 ½ पल दे.उ.	12000 ¼ पल झा.	100 ¼ पल झा.	100 ¼ पल	100 ¼ पल दे.उ.
शक्रेन्द्रजी प. देवलोक	संख्या- स्थिति-	12000 5 पल	14000 4 पल	16000 3 पल	700 3 पल	600 2 पल	500 1 पल
ईशानेन्द्र दूसरा देव	संख्या- स्थिति-	10000 7 पल	12000 6 पल	14000 5 पल	900 5 पल	800 4 पल	700 3 पल
सनत्कुमारेन्द्र तीसरा देव.	संख्या- स्थिति-	8000 4½ सागर 5 पल	10000 4½ सागर 4 पल	12000 4½ सागर 3 पल			
माहेन्द्र इन्द्र चौथा देव.	संख्या- स्थिति-	6000 4½ सागर 7 पल	8000 4½ सागर 6 पल	10000 4½ सागर 5 पल			
ब्रह्म इन्द्र पाँचवाँ देव.	संख्या- स्थिति-	4000 8½ सागर 5 पल	6000 8½ सागर 4 पल	8000 8½ सागर 3 पल			

लांतक इन्द्र छठा देव	संख्या स्थिति	2000 12 सागर 7 पल	4000 12 सागर 6 पल	6000 12 सागर 5 पल				
महाशुक्र इन्द्र सातवाँ देव	संख्या स्थिति	1000 15½ सागर 5 पल	2000 15½ सागर 4 पल	4000 15½ सागर 3 पल				
सहस्त्रार इन्द्र आठवाँ देव	संख्या स्थिति	500 17½ सागर 7 पल	1000 17½ सागर 6 पल	2000 17½ सागर 5 पल				
प्राणत इन्द्र नवमा-दसवाँ देवलोक	संख्या स्थिति	250 19 सागर 5 पल	500 19 सागर 4 पल	1000 19 सागर 3 पल				
अच्युतेन्द्र 11-12 देवलोक	संख्या स्थिति	125 21 सागर 7 पल	250 21 सागर 6 पल	500 21 सागर 5 पल				

41. कम्पमान का थोकड़ा (भ.श. 5 उ. 7) (1) ऐयति वेयति द्वार (2) खड्गधारा द्वार (3) अग्नि शिखा द्वार (4) पुष्करावर्त्त मेघ द्वार (5) सअड्ढे समज्झे सपएसे अथवा अणड्ढे अमज्झे अपएसे द्वार (6) फुसमाण द्वार (7) स्थिति द्वार (8) कम्पमान अकम्पमान का स्थिति (9) वर्ण गंध रस स्पर्श का स्थिति (10) सूक्ष्मबादर का स्थिति (11) शब्द-अशब्दपने परिणमन का स्थिति (12) परमाणु का अन्तर (13) कम्पमान अकम्पमान का अन्तर (14) वर्णादिक का अन्तर (15) सूक्ष्म बादर का अन्तर (16) शब्द अशब्द का अन्तर (17) अल्प बहुत्व द्वार ये 17 द्वार-(1) परमाणु पुद्गल सिय कम्पे विशेष कम्पे यावत् उस-उस रूप में परिणमे, सिय नहीं कम्पे यावत् नहीं परिणमें। परमाणु में भांगा 2 सिय कम्पे, सिय नहीं कम्पे। दो प्रदेशी स्कंध में तीन-सिय कम्पे, सिय नहीं कम्पे, देश कम्पे देश नहीं कम्पे। तीन प्रदेशी में भांगा 5-सिय कम्पे, सिय नहीं कम्पे, सिय एक देश कम्पे, एक देश नहीं कम्पे, सिय एक देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे, सिय बहुत देश कम्पे एक देश

नहीं कम्पे। चार प्रदेशी 6 भांगा (1) सिय कम्पे (2) सिय नहीं कम्पे (3) सिय एक देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे (4) सिय एक देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे (5) सिय बहुत देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे (6) सिय बहुत देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे। इसी तरह चार की तरह 5-6 यावत 10 प्रदेशी, संख्यात, असंख्यात, सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी, बादर अनन्त प्रदेशी स्कंध तक 6-6 भांगा कहना ये सब 76 भांगा हुए। 2+3+5+42 (7x6)+24 (4x6)=76 भांगे। (2) परमाणु पुद्गल तलवार, उस्तरा की धार पर बैठे तो छेदन समर्थ नहीं। यह सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी तक कहना। बादर अनंत प्रदेशी स्कंध तलवार-खुर (उस्तरा) की धार पर सिय छेदन पावे, सिय छेदन नहीं पावे। (3) परमाणु पुद्गल अग्नि शिखा में से निकले तो नहीं जले इसी तरह सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी तक कहना, बादर अनन्त प्रदेशी सिय जले सिय नहीं जले। (4) परमाणु पुद्गल पुष्कर संवर्त मेघ के बीच में से निकले फिर भी भींजे नहीं, गंगा सिंधु महानदियों के प्रवाह में से निकले स्खलना नहीं होवे। यह दो प्रदेशी से सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी तक कहना। बादर अनन्त प्रदेशी स्कंध सिय भींजे सिय स्खलना पावे सिय नहीं पावे। (5) परमाणु पुद्गल अणड्ढे अमज्झे, अपएसे (आधा भाग रहित, मध्यम भाग रहित, अप्रदेशी) है, किन्तु सअड्ढे, समज्झे, सपएसे (आधा भाग सहित, मध्यम भाग सहित, प्रदेश सहित) नहीं है। दो प्रदेशी स्कंध सअड्ढे, अमज्झे, सयएसे है, किन्तु अणड्ढे, समज्झे अपएसे नहीं। तीन प्रदेशी स्कंध अणड्ढे समज्झे, सपएसे है, किन्तु सअड्ढे अमज्झे अपएसे नहीं है। जिस तरह दो प्रदेशी का कहा वैसा 4-6-8-10 आदि समसंख्या (जिसमें 2 का भाग जाए) के स्कंध कहना। जिस तरह तीन प्रदेश का कहा वैसे विषम संख्या 5-7-9-11 (दो का भाग नहीं जाये) कहना। संख्यात प्रदेशी स्कंध सिय सअड्ढे अमज्झे, सपएसे, सिय अणड्ढे, समज्झे, सपएसे नो अपएसे। इसी तरह असंख्यात और अनन्त प्रदेशी स्कंध का कहना।

(9) परमाणु पुद्गल-परमाणु पुद्गल का स्पर्श करता है इसे 9 भांगे से समझाया है, परन्तु भांगा पावे 1 नवमाँ। इस प्रकार-(1) देश से देश स्पर्श (2) एक से बहुत देश (3) एक देश से सर्व को (4) बहुत देश से एक देश (5) बहुत देश से बहुत देश (6) बहुत देश से सर्व (7) सर्व से एक देश (8) सर्व से बहुत देश (9) सर्व से सर्व को स्पर्श करता है। यहाँ नवमां भांगा होता है।

एक परमाणु दो प्रदेशी को स्पर्शे तो भांगा 2 (7-9), एक परमाणु तीन प्रदेशी को स्पर्शे तो (7-8-9) जिस तरह तीन प्रदेशी कहा वैसे चार, पाँच यावत् दस प्रदेशी, संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेशी के 11 बोलों से 33 (11x3) भांगा हुये। इस तरह 1+2+33=36 भांगा हुए। दो प्रदेशी स्कंध परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो 2(3-9) दो प्रदेशी दो प्रदेशी को स्पर्शे तो 4 भांगा (1-3-7-9) तीन प्रदेशी को स्पर्शे तो 6(1-2-3-7-8-9) इसी तरह अनन्त प्रदेशी तक दो प्रदेशी के 72 भांगे। (2+4+66) (11x6)=72। तीन प्रदेशी परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो भांगा 3(3-6-9)। तीन प्रदेशी दो प्रदेशी को स्पर्शे तो भांगा 6(1-3-4-6-7-9) तीन प्रदेशी तीन प्रदेशी को स्पर्शे तो भांगा 9 पावे। इसी तरह अनन्त प्रदेशी तक कहना ये तीन प्रदेशी के 108 भांगा (3+6+99(9x11))=108 भांगा हुए। चार प्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध तक इसी प्रकार 108-108 भांगा कहना। परमाणु के 36, द्विप्रदेशी के 72 तीन प्रदेशी से अनन्त प्रदेशी स्कंध तक 11 बोलों के 11x108=1188 कुल 36+72+1188=1296 भांगे होते हैं।

(7) **स्थितिद्वार**-परमाणु पुद्गल की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल है। यह दो प्रदेशी से अनन्त प्रदेशी स्कंध तक समझना। (8) **कम्पमान अकम्पमान का स्थिति द्वार**-एक आकाश प्रदेश की (ओघाया) कम्पमान की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकम्पमान की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल, इसी तरह दो आकाश प्रदेश ओघाया से असंख्यात आकाश प्रदेश तक कहनी। (9) **वर्णगंध रस स्पर्श स्थिति द्वार**-इनकी स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्य काल है। इसी तरह एक गुणकाला से अनन्त गुणकाला की और जैसे काला की कही वैसे शेष 19 बोलों की कहना। (10) **सूक्ष्म बादर का स्थिति द्वार**-सूक्ष्म बादर पुद्गलों की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल है। (11) **शब्दपणे अशब्दपणे**-शब्दपणे परिणमने की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग, अशब्दपणे परिणमने की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्यात काल की है। (12) **परमाणु का अन्तर**-जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्याता काल, दो प्रदेशी से लेकर अनन्त प्रदेशी का जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अनन्त काल का अन्तर है। (13) **कम्पमान अकम्पमान का अन्तर**-एक आकाश प्रदेश ओघाया यावत असंख्यात आकाश प्रदेश ओघाया

तक कम्पमान का अन्तर जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल अकम्पमान का अन्तर जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है।
(14) **वर्णादिक का अन्तरद्वार**-जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। (15) **सूक्ष्म बादर का अन्तर**-जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल। (16) **शब्दपणे अशब्दपणे का परिणम्या का अन्तर द्वार**-शब्दपणे परिणम्या का अन्तर जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल, अशब्दपणे परिणम्या का अन्तर जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग। (17) **अल्प बहुत्व हार**-क्षेत्र, अवगाहना द्रव्य भाव से समझाया है। क्षेत्र स्थान आयु यानि क्षेत्र का काल सबसे थोड़ा उससे अवगाहना का काल असंख्यात गुणा, उससे द्रव्य का काल असंख्यात गुणा उससे भाव का काल असंख्यात गुणा कल्पना करे 100 प्रदेशी स्कंध एक पाँच प्रदेशी आकाश पर बैठा है, वहाँ से उठकर उसी अवगाहना से दूसरी जगह बैठ गया, जगह बदली अवगाहना वही रही अत: अवगाहना असंख्यात गुणा, वही सौ प्रदेशी पाँच प्रदेश अवगाहना छोड़कर 4 या ज्यादा कम कर ली अवगाहना पल्टी परन्तु द्रव्य वही रहा अत: द्रव्य असंख्यात गुणा, वही सौ प्रदेशी वर्ण से 10 गुण काला था वह पचास प्रदेशी या ज्यादा कम प्रदेशी हो गया परन्तु 10 गुण काला ही रहा तो भाव से असंख्यात गुणा हुआ।

42. सप्रदेशी अप्रदेशी (भ.श. 5 उ. 8)

वस्तु	सप्रदेशी				अप्रदेशी			
	द्रव्य	क्षेत्र	काल	भाव	द्रव्य	क्षेत्र	काल	भाव
द्रव्य से	सप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	अप्रदेशी	अप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.
क्षेत्र से	सप्रदेशी	सप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	अप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.
काल से	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	अप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.
भाव से	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सप्रदेशी	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	सिय स.प्र. सिय अ.प्र.	अप्रदेशी

नियंठिपुत्र अणगार ने नारद पुत्र से सप्रदेशी अप्रदेशी पुद्गल के बारे उपरोक्त समाधान दिया मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सिय सप्रदेशी है, सिय अप्रदेशी है। अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़ा भाव से अप्रदेशी (एक गुण

काला नीला आदि) (2) उससे काल से अप्रदेशी असंख्यात गुणा (एक समय की स्थिति वाले) (3) उससे द्रव्य से अप्रदेशी असंख्यात गुणा (4) उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असंख्यात गुणा (5) उससे क्षेत्र से सप्रदेश असंख्यात गुणा (जैसे दो आकाश प्रदेश तीन यावत् संख्यात असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे) (6) उससे द्रव्य से सप्रदेशी विशेषाधिक (दो प्रदेशी, तीन प्रदेशी यावत् अनन्त प्रदेशी स्कंध) (7) उससे काल से सप्रदेशी विशेषाधिक (जैसे- 2 समय 3 समय यावत् असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्‌गल) (8) उससे भाव सप्रदेशी विशेषाधिक (जैसे-दो गुण काले तीन यावत् अनन्त गुण काले आदि पुद्‌गल)।

43. वर्द्धमान हायमान अवट्ठिया (भ.श. 5 उ. 8) जिस जगह जीव आते-जाते बढ़ते हैं वर्द्धमान। घटते हैं हायमान, सरीखे आते सरीखे जाते अवट्ठिया कहते हैं। तीन भांगे है। समुच्चय जीव में भांगा 1 अवट्ठिया। 24 दंडक में 3 सिद्ध भगवान में 2 (पहला-तीसरा)। जितने जीव है वे सदाकाल रहते हैं। समुच्चय-अवट्ठिया। 19 दंडक (5 स्थावर छोड़कर) भांगा 3 पावे जिसमें हायमान वर्द्धमान की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अपने-अपने विरह काल से दुगुनी है। अवट्ठिया की उत्कृष्ट स्थिति-समुच्चय नरक 24 मुहूर्त, पहली नरक 48 मुहूर्त, दूसरी 14 दिन-रात, तीसरी 1 मास, चौथी 2 मास, पाँचवीं 4 मास, छठी 8 मास, 7वीं नरक 12 मास। समुच्चय-देवता, तिर्यंच, मनुष्य की 24-24 मुहूर्त-भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, पहला-दूसरा देवलोक और सम्मुर्च्छिम मनुष्य की 48 मुहूर्त, तीन विकलेन्द्रिय असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय की 2 मुहूर्त, सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और सन्नी मनुष्य 24 मुहूर्त, तीसरे देवलोक 18 दिन-रात, चौथे देव 24 दिन-रात 20 मुहूर्त, पाँचवें देवलोक 45 दिन-रात, छठे देवलोक 90 दिन-रात, सातवें देवलोक 160 दिन, आठवें देवलोक की 200 दिन-रात, 9-10 देवलोक संख्याता मास, 11-12 देवलोक संख्याता वर्ष, नव गैवेयक में नीचे की त्रिक संख्याता सैंकड़ों वर्ष, बिचली त्रिक संख्याता हजारों वर्ष, ऊपरी त्रिक में संख्याता लाखों वर्ष, चार अणुत्तर विमान की पल के असंख्यातवें भाग की और सर्वार्थ सिद्ध विमान की पल के संख्यातवें भाग की है। पाँच स्थावर में भांगा पावे 3 तीनों ही भांगों की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। सिद्ध भगवान में भांगा 2 उसमें वर्धमान की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 8 समय की, अवट्ठिया की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 6 महीना।

44. सोवचय-सावचय-(भ.श. 5 उ. 8) (1) **सोवचय**-वृद्धि सहित-जितने जीव है उतने रहे और नवीन जीव उत्पत्ति से संख्या बढ़ जाय वह सोवचय है। **सावचय**-हानि सहित-जितने जीव है, उनमें कितने ही जीवों की मृत्यु हो जाय घट जाय वह सावचय है। सोवचय सावचय-वृद्धि हानि सहित जन्मने से बढ़ जाय, मरने से घट जाय या बराबर रहे वह सोवचय सावचय। निरूवचय-निरवचय-वृद्धि-हानि रहित-जीवों की संख्या न बढ़े न घटे अवस्थित रहे, वह निरूवचय निरवचय है। जीव सोवचया नहीं, सावचया नहीं, सोवचया सावचया भी नहीं, किन्तु जीव निरूवचया निरवचया है। नारकी आदि में भांगा 4। पाँच स्थावर में भांगा 1 सोवचया सावचया सिद्ध भगवान में 2 पहला, चौथा। (2) स्थिति आसरी समुच्चय जीव और 5 स्थावर की सव्वद्धा (सर्वकाल)। 19 दंडक में भांगा 4, प्रथम तीन भांगों की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की। चौथे भांगे की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अपने-अपने विरह काल जितनी। सिद्ध भगवान में भांगा 2 पहला चौथा पहले की स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 8 समय और चौथे की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 6 मास की है। (3) वर्द्धमान भांगा 2 पहला तीसरा (सोवचया, सोवचया सावचया) हायमान में भांगा 2 दूसरा तीसरा (सावचया, सोवचया सावचया), अवट्ठिया में भांगा 2 तीसरा चौथा (सोवचया सावचया, निरूवचया निरवचया)। (4) सोवचया में 1 वर्द्धमान, सावचया में 1 हायमान, सोवचया सावचया में तीन वर्द्धमान, हायमान, अवट्ठिया, चौथे में 1 अवट्ठिया।

45. राजगृहनगर (भ.श. 5 उ. 9) (1) राजगृहनगर में पृथ्वी आदि सचित, अचित, मिश्र द्रव्य हैं, जीव अजीव त्रस स्थावर जितनी वस्तुएँ है उनको राजगृहनगर कहना। (2) दिन के शुभ पुद्‌गल है शुभपणे परिणमते है इसलिए दिन में उद्योत होता है, रात्रि में अशुभ पुद्‌गल परिणमते है, इसलिए अंधकार होता है। दंडक के जीव आसरी नरक गति, 5 स्थावर, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय इन 8 दंडक के जीवों के अशुभ पुद्‌गल है अशुभपणे परिणमते है, इसलिए अंधकार है। देवता के 13 दण्डक शुभ पुद्‌गल शुभपणे परिणमते हैं, इसलिए उद्योत है। चौइन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य इन तीन में शुभाशुभ पुद्‌गल है शुभाशुभ परिणमते है, उद्योत अंधकार दोनों है। (3) जीव समय, आवलिका यावत् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी आदि 23 दंडक नहीं जानते (स्व स्थान रहते हुए) मनुष्य का एक दंडक जानता है, क्योंकि समय आदि का मान-प्रमाण मनुष्य लोक में ही है। काल का मान, सूर्य का

उदय अस्त दिन रात मनुष्य क्षेत्र में ही है। (4) 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के शिष्य स्थविरों ने श्रमण भगवान से दिन रात, संबंधी चर्चा की थी। असंख्याता लोक में अनन्त रात्रि दिवस हुए, होते है, होवेंगे। नष्ट हुए, होते, होवेंगे। निश्चित परिमाण वाला रात्रि दिवस उत्पन्न हुए, होते, होवेंगे। नष्ट हुए होते होवेंगे हे आर्यों। पुरूषादानीय प्रभुश्री पार्श्वनाथ ने लोक को शाश्वत्, अनादि, अनन्त कहा है। यह लोक नीचे से चौड़ा, बीच में संकड़ा, ऊपर में विशाल है, असंख्य योजन का लंबा-चौड़ा है, अलोक से आवृत्त (घिरा) है। ऐसे सर्वलोक में अनन्ता (साधारण) परित्ता (प्रत्येक) जीवों ने जन्म-मरण किया, करते, करेंगे। उन जीवों की अपेक्षा असंख्याता लोक में अनन्ता परित्ता रात्रि दिवस उत्पन्न होंगे, नष्ट होंगे। जहाँ तक जीव पुद्गल की गति (गमन) है, वहाँ तक लोक है, जहाँ तक लोक है जीव पुद्गलों की गति है। इन वचनों को सुन स्थविर पंचयाम धर्म में दीक्षित हुए सप्रतिक्रमण यानि बीच के 22 तीर्थंकरों के साधु के दोनों समय नियमा प्रतिक्रमण जरूरी नहीं होता, जब दोष लगे तब प्रतिक्रमण होता है, उठती चौमासी और संवत्सरी का प्रतिक्रमण करना होता है। तप संयम से भावित उनमें से कितनेक मोक्ष गये, कितनेक देवलोक गये।
देवलोक 4 प्रकार के-भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक 2 प्रकार।

46. वेदना निर्जरा (भ.श. 6 उ. 1) (1) जो महावेदना वाला है, वह महानिर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है, वह महावेदना वाला है। (2) महावेदना वाले और अल्प वेदना वालों में जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रेष्ठ है। (3) छठी सातवीं नरक के नेरिये श्रमण-निर्ग्रंथों से महा निर्जरा वाले नहीं होते जैसे 1 वस्त्र कर्दम से कीचड़ से रंगा हुआ है चिकनाई के कारण पक्का रंग लगा है, दूसरा खंजन (काजल) के रंग में रंगा है तो कीचड़ वाला सुखपूर्वक, निर्मलता पूर्वक नहीं धोया जाता, रंग आसानी से नहीं निकलता, कठिनता से दाग छुड़ाये जाते है। खंजन से रंगा आसानी से धोया जा सकता है, आसानी से दाग छुड़ाये जा सकते हैं। इसी तरह नेरियों के कर्म गाठे, चिकने, शिलष्ट, खिलीभूत (निकाचित) किये है, जिन्हें महावेदना कर वेदते हैं, श्रमण निर्ग्रंथों की अपेक्षा महानिर्जरा नहीं कर सकते। खंजन से रंगा सुखपूर्वक धोया जाता है, इसी प्रकार श्रमण निर्ग्रंथों के कर्म तप संयम ध्यानादि से पतले, शिथिल, निर्बल, असार किये होते हैं, जिससे अल्प वेदना वेदते हैं, तो भी महानिर्जरा करते हैं। जैसे सूखे घास को अग्नि में डालने से तुरन्त भस्म हो जाता है, गर्म धग-धगते लोहे के गोले पर जल की बूँद डालते ही बूँद भस्म हो जाती है, इसी प्रकार श्रमण निर्ग्रंथ महानिर्जरा करते हैं।

जीव महावेदना महानिर्जरा करण से करता है। करण 4 प्रकार का है मन, वचन, काय और कर्म (कर्मों के बंधन, संक्रमण आदि में निमित्त भूत जीव का वीर्य कर्म करण कहलाता है) करण। नारकी में 4 अशुभ, इनसे असाता वेदना वेदते हैं। कदाचित् साता वेदना भी वेदते हैं।
देवता में 4 शुभ इससे साता वेदना वेदते है, कदाचित् असाता वेदना भी वेदते हैं। 5 स्थावर में 2 करण-काया और कर्म करण। तीन विकलेन्द्रिय में 3 करण-काया, वचन, कर्म करण। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में 4 करण पावे। इन औदारिक के 10 दंडक में शुभाशुभ करण से विमात्रा (कभी साता कभी आसाता) वेदना वेदते हैं। जीवों के वेदना, निर्जरा के 4 भांगे होते है-(1) महावेदना महानिर्जरा पड़िमाधारी साधु (2) महावेदना अल्प निर्जरा छठी-सातवीं नरक के नारक (3) अल्प वेदना महानिर्जरा शैलेषी प्रतिपन्न (चौदहवें गुणस्थानवर्ती) अणगार है। (4) अल्प वेदना अल्प निर्जरा (अणुत्तर विमानवासी देवता।)

47. कर्मबंध का थोकड़ा (भ:श: 6 उ. 3) (1) महाकर्मी, महाक्रियावंत, महाआश्रवी, महावेदनावंत जीव के सब दिशाओं से कर्म पुद्गल आत्मा के साथ बंधते हैं, निरंतर चय उपचय होते हैं, सदा निरंतर बंधते हैं, उन कर्मों के मेल से आत्मा निरंतर 17 बोल (दुरूपपने, दुर्वर्णपने, दुर्गन्धपने, दुःरसपने, दुःस्पर्शपने, अनिष्टपने, असुंदरपने, अप्रियपने, अशुभपने, अमनोज्ञपने, अमनामपने (मन में स्मरण करते ही अरूचि हो), अनिच्छितपने, जिसे प्राप्त करने का लोभ न हो, भारीपने (जघन्यपने), ऊर्ध्वपने नहीं (लघुपने नहीं), दुःखपने, सुखपने नहीं) मलिनपणे बारम्बार परिणमता है। क्योंकि जैसे नये कपड़े को हमेशा पहनने से, काम में लेते रहने से, वह मलिन हो जाता है इसी तरह 18 पापों आरंभादि में प्रवृत्ति करता जीव कर्मों के मेल से मलिन हो जाता है। (2) अल्पकर्मी अल्प क्रियावन्त, अल्प आश्रवी, अल्प वेदनावन्त जीव के कर्म सदा आत्मा से अलग होते हैं, छेदाते भेदाते क्षय होते हैं। जैसे मलिन वस्त्र को शुद्ध पानी से धोने से मैल कटकर वस्त्र उजला हो जाता है, सुरूप वर्णादि 17 बोल शुभपने परिणमते हैं, इसी तरह जीव तप संयम ध्यानादि से कर्मों को छेदते भेदते क्षय करते हैं।
(3) वस्त्र के पुद्गलों का उपचय प्रयोग और स्वाभाविक रीति से भी होता है। (4) जीव के कर्मों का उपचय प्रयोग से होता है, किन्तु स्वाभाविक रीति से नहीं लगता। प्रयोग तीन प्रकार के है-मन, वचन, काय। इन प्रयोगों से जीव कर्म बंध करता है।

एकेन्द्रिय में एक प्रयोग (काय) विकलेन्द्रिय में दो (काय, वचन प्रयोग) पंचेन्द्रिय में तीनों। (5) कर्म मेल वस्त्र की मेल की 4 स्थितियाँ है। (1) **सादि सान्त**-ईर्यावहिया क्रिया की स्थिति में। (वस्त्र के मेल की स्थिति में द्रव्य वस्त्र सादि सांत है।) आदि अन्तसहित चारों गति के जीव गतागत करते हैं, इसलिए सादिसान्त है। (2) **सादि अनन्त**-आदि सहित अन्तरहित-किसी भी जीव के कर्मों की स्थिति सादि अनन्त नहीं है। सिद्ध गति की अपेक्षा सिद्ध जीव सादि अनन्त है। (3) **अनादि सांत**-आदि रहित अन्तसहित-भव्य जीव (जिनमें मोक्ष जाने की योग्यता होती है) के कर्मों की स्थिति अनादि सांत है। भवसिद्धिक लब्धि की अपेक्षा अनादि सांत है। (4) **अनादि अनन्त**-आदि अन्तरहित-अभवी जीव के कर्मों की स्थिति अनादि अनंत है। अभव सिद्धिक जीव संसार की अपेक्षा अनादि अनंत हैं। जीवों के कर्मों की स्थिति में भांगा 3 पहला तीसरा चौथा।

(6) कर्म 8 है-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय। (7) 8 कर्मों की बंध स्थिति इस प्रकार है-

		स्थिति		**आबाधाकाल**		
	कर्म	जघन्य	उत्कृष्ट स्थिति	जघन्य	उत्कृष्ट	विशेष
1	ज्ञानावरणीय	अन्तर्मुहूर्त	30 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	तीन हजार वर्ष	वेदनीय में साता वेदनीय
2	दर्शनावरणीय	अन्तर्मुहूर्त	30 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	तीन हजार वर्ष	की जघन्य स्थिति 2 समय
3	अन्तराय	अन्तर्मुहूर्त	30 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	तीन हजार वर्ष	उत्कृष्ट 12 मुहूर्त आबाधा
4	वेदनीय	दो समय	30 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	तीन हजार वर्ष	15000 वर्ष। असाता की
5	मोहनीय	अन्तर्मुहूर्त	70 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	7 हजार वर्ष	जघन्य स्थिति 1 सागर उ.7
6	आयुष्य	अन्तर्मुहूर्त	33 सागर, क्रोड़ पूर्व का तीसरा भाग	अन्तर्मुहूर्त	नहीं होता	और पल्प काअसं. भाग कम उत्कृष्ट 30 कोड़ा कोड़ी सागर
7	नाम	8 मुहूर्त	20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	2 हजार वर्ष	आबाधा काल 3000 वर्ष
8	गौत्र	8 मुहूर्त	20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम	अन्तर्मुहूर्त	2 हजार वर्ष	

नोट-जितने क्रोड़ा क्रोड़ी की उत्कृष्ट स्थिति हो उतने हजार वर्ष का आबाधा काल होता है तीस क्रोड़ा क्रोड़ी के 3 हजार वर्ष इसी तरह अन्य समझे। आयुष्य कर्म में आबाधा काल नहीं गिना है, क्योंकि आयुष्य जब अगले भव का बांधता है तो यहाँ उसका आबाधा काल बाकी बची आयु मात्र होगा जैसे अन्तर्मुहूर्त मनुष्यायु शेष रहते किसी ने 33 सागरोपम की आयु का बंध किया तो उसका आबाधा काल अन्तर्मुहूर्त हुआ। क्रोड़ पूर्व वाले ने तीसरे भाग में 10 हजार वर्ष की आयु का बंध किया तो

उसका आबाधा काल क्रोड़ पूर्व का तीसरा भाग होगा, जो अगली आयु से भी कई गुना ज्यादा है। अतः आबाधा काल-आयुष्य में मानने की आवश्यकता नहीं है। आयु बांधने के बाद अगले भव का विपाकोदय शुरू नहीं होता वर्तमान में वर्तमान आयु ही भोगनी होती है। मूल पाठ देखने से यह वास्तविकता समझ में आ जाती है। शास्त्रकार ने आयुष्य कर्म में भिन्नता रखी है वहाँ अबाहुणिया कम्मठिई कम्मणिसेगो नहीं कहकर कम्मठिई कम्मणिसेगो कहा है। विपाकोदय अगले भव से चालू होता है उदओ विवाग वेयणो विपाक से कर्म वेदन ही उदय की गिनती में है।

48. 50 बोलों की बंधी (भ.श. 63.3)

	द्वार	50 बोल	कर्मबंध
1	वेद द्वार	4-स्त्री, पुरुष, नपुंसक, अवेदी	तीन में 7 की नियमा आयु की भजना, अवेदी 7 की भजना आयु अबंध
2	संजत	4-संजति, असंजति, संजता संजति, नो सं.नो.असं.	संयति 8 की भजना, दो तीन में 7 की नियमा आयु भजना, चौथे में अबंध
3	दृष्टि	3-सम, मिथ्या, मिश्र	सम 8 की भजना, मिथ्या 7 की नियमा आयु भजना, मिश्र 7 नियमा आयु अबंध
4	संज्ञी	3-संज्ञी, असंज्ञी, नो सं.-नो असंज्ञी	संज्ञी 7 की भजना वेद नियमा, असंज्ञी 7 नियमा आयु भजना, तीसरे में वेदनीय भजना 7 अबंध
5	भवी	3-भवी, अभवी, नो भवी-नो अभवी	भवी 8 भजना, अभवी 7 नियमा आयु भजना, तीसरे में 8 अबंध
6	दर्शन	4-चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल	तीन में 7 की भजना वेदनीय नियमा, केवल में वेदनीय भजना 7 अबंध
7	पर्याप्त	3-पर्याप्त, अपर्याप्त, नो पर्याप्ता-नो अपर्याप्त	पर्या. 8 की भजना, अपर्या. 7 की नियमा आयु भजना, तीसरे में अबंध
8	भाषक	2-भाषक, अभाषक.	भा. 7 की भजना वेदनीय नियमा, अभाषक 8 की भजना
9	परित्त	3-परित्त, अपरित्त, नो परित्त-नो अपरित्त	परित्त 8 भजना, अपरित्त 7 नियमा आयु भजना, अंत में 8 अबंध
10	ज्ञान	8-ज्ञान 5, अज्ञान 3	4 ज्ञान 7 भजना वेद. नियमा, केवल में वेद. भजना 7 अबंध। अज्ञान 7 नियमा आयु भजना
11	योग	4-मन, वचन, काय, अयोगी	तीन योग 7 भजना वेदनीय नियमा, अयोगी 8 अबंध
12	उपयोग	2-साकार, अनाकार	आठों की भजना
13	आहारक	2 आहारक, अनाहारक	आहा. 7 भजना वेदनीय नियमा। अना. 7 की भजना आयु अबंध
14	सूक्ष्म	3-सूक्ष्म, बादर, नो सूक्ष्म नो बादर	सूक्ष्म 7 नियमा आयु भजना। बादर 8 भजना। नोसू. नो बादर अबंध
15	चरम	2-चरम अचरम	7 कर्मों की भजना
	योग	**50**	

जिन जीवों में जितने बोल पाये जाते है समुच्चय (धड़ा) रूप से कहे जाते हैं-

नाम	बोल	नाम	बोल
पहली नारकी	34	पाँच स्थावर	23
दूसरी से सातवीं नारकी	33	बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय	27-27
भवनपति व्यन्तर	35	चौइन्द्रिय, अ.ति. पंचेन्द्रिय	28-28
ज्योतिषी पहला दूसरा देव.	34	सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय	36
तीसरे से बारहवां देव.	33	असन्नी मनुष्य	22
नव गैवेयक	32	सन्नी मनुष्य	45
पाँच अणुत्तर विमान	26	समुच्चय जीव	50

49. कालादेश (भ.श. 6 उ. 4) (1) **सप्रदेश द्वार**-जिसे उत्पन्न हुये 2-3 या ज्यादा समय हो गया उसे सप्रदेशी, जिसे 1 समय हुआ अप्रदेशी। शाश्वते बोल में 3 भांगे आश्वते बोल में 6 भांगे। (1) सिय सप्रदेशी (2) सिय अप्रदेशी (3) सप्रदेशी एक अप्रदेशी एक (4) सप्रदेशी एक अप्रदेशी बहुत (5) सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक (6) सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत (घणा)। समुच्चय काल आसरी एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी। 24 दंडक के जीव, सिद्ध भगवान काल आसरी- एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी-एकेन्द्रिय में 1 भांगा (तीसरा सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत) शेष तीन भांगे (1) सब सप्रदेशी (2) सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक (3) सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत। एकेन्द्रिय में भांगा 1 तीसरा पावे। (2) **आहारक द्वार**-आहारक में समुच्चय जीव, 24 दंडक-एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी-एकेन्द्रिय में भांगा एक तीसरा सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत। बहुत जीव तीन भांगा। अनाहारक में समुच्चय जीव 24 दंडक आहारक जैसा और बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय छोड़ छ भांगे एकेन्द्रिय में 1 तीसरा। सिद्ध भगवान में एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे। (3) **भवी द्वार**-भवी और अभवी एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी। 24 दंडक के भवी अभवी एक जीव आसरी सिय प्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव एकेन्द्रिय को छोड़ तीन भांगे एकेन्द्रिय में तीसरा। नोभवी नो. अभवी जीव सिद्ध एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी तीन भांगे। (4) **संज्ञा द्वार**-संज्ञी समुच्चय जीव 16 दंडक एक जीव आसरी सिय प्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी जीव और 16 दंडक में तीन-

तीन भांगे असंज्ञी समुच्चय 22 दंडक-एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी समुच्चय जीव तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा 3 पावे। एकेन्द्रिय में तीसरा। नारकी देवता मनुष्य में भांगा 6, नोसंज्ञी नोअसंज्ञी जीव, मनुष्य, सिद्ध एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी जीव, मनुष्य, सिद्ध में तीन-तीन भांगे। (5) **लेश्या द्वार**-सलेशी में समुच्चय जीवों में एक जीव बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। 24 दंडक और सिद्ध भगवान में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ तीन भांगा एकेन्द्रिय में तीसरा। कृष्ण, नील, कापोत समुच्चय जीव 22 दंडक में एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव में एकेन्द्रिय 1 भांगा तीसरा बाकी 3-3। तेजो लेश्या समुच्चय जीव 18 दंडक एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव-आसरी समुच्चय जीव और 15 दंडक में तीन-तीन। पद्मलेशी शुक्ल लेशी समुच्चय जीव तीन दंडक में एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी 3 अलेशी जीव मनुष्य सिद्ध में 1 जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी 3, मनुष्य में 6 भांगे होते हैं।

आगे इस कालादेश से इसी प्रकार बताया है इसे चार्ट्स से समझें। सप्रदेशी अप्रदेशी का निरूपण है-

(1)	जीव-	24 दंडक, समुच्चय जीव, सिद्ध	26
(2)	आहारक-	आहारक, अनाहारक	2
(3)	भवी-	भवी, अभवी, नोभवी नो अभवी	3
(4)	सन्नी-	सन्नी, असन्नी, नोसन्नी नोअसन्नी	3
(5)	लेश्या-	छलेश्या, अलेशी, सलेशी	8
(6)	दृष्टि-	सम, मिथ्या, मिश्र	3
(7)	संयत-	संयत, असंयत, संयता संयत, नोसंयत नोअसंयत	4
(8)	कषाय-	चार कषाय, सकषायी, अकषायी	6
(9)	ज्ञान-	5 ज्ञान, 3 ज्ञान, सज्ञानी, अज्ञानी	10
(10)	योग-	3 योग, सयोगी, अयोगी	5
(11)	उपयोग-	साकारोपयोग, अनाकारोपयोग	2
(12)	वेद-	3 वेद, सवेदी, अवेदी	5
(13)	शरीर-	5 शरीर, अशरीरी, सशरीरी	7
(14)	पर्याप्ति-	6 अपर्याप्ति, 6 पर्याप्ति	12
		14 द्वारों पर कुल बोल	96

समुच्चय जीवों में जीवत्व भाव से सभी जीव अनादि है, अत: सभी सप्रदेशी हैं। ये 96 बोलों में एक जीव की अपेक्षा सप्रदेशी अप्रदेशी में से कोई एक होता है। अनेक जीवों की पृच्छा में एकेन्द्रिय में पाने वाले बोलों में 1 भंग (अभंग) शेष 19 दंडक में पाने वाले बोलों में शाश्वत् मिलने वाले बोलों में 3 भंग और अशाश्वत् में 6 भंग होते है। (1) सभी सप्रदेशी (2) सभी अप्रदेशी (3) सप्रदेशी एक अप्रदेशी एक (4) सप्रदेशी अनेक अप्रदेशी एक (5) सप्रदेशी एक अप्रदेशी अनेक (6) सप्रदेशी अनेक अप्रदेशी अनेक। यह ऊपर भी दर्शाया है। समुच्चय जीव में सकषायी आसरी तीन भांगे कहे और क्रोध, मान, माया, लोभ आसरी एक भांगा ही कहा उसका कारण यह कि सकषायी में अकषायीपने से आया हुआ एक जीव भी पाया जा सकता है। इसका कारण से तीन भांगे बनते हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ में एकेन्द्रिय आसरी अनन्ता ही जीव क्रोध कषायी के मान और मान के माया आदि रूप से बदलकर अदल-बदल होते रहते हैं। एक जीव इस कारण क्रोधी, मानी, मायी, लोभ, कषायी नहीं पाया जाता, इसलिए तीसरा भांगा ही पाया जाता है। इतनी जगह समुच्चय जीव में एकेन्द्रिय साथ में होते हुए भी तीन-तीन भांगे है (1) असंज्ञी में (2) मिथ्यादृष्टि (3) असंयति (4) सकषायी में (5) समुच्चय अज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुत अज्ञानी में (6) सवेदी नपुंसक वेद में (7) काय योगी में।

50. पच्चक्खाण (भ.श. 6 उ. 4) (1) जीव पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी, पच्चक्खाणा पच्चक्खाणी तीनों है। नारकी, देवता, पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय ये 22 दंडक अपच्चक्खाणी है। तिर्यंच पंचेन्द्रिय 2 भांगा-अपच्चक्खाणी, पच्चक्खाणा पच्चक्खाणी। मनुष्य में तीनों भांगा है। समुच्चय जीव की तरह। (2) 16 दंडक के जीव देवता, नारकी, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य ये जीव समदृष्टि पंचेन्द्रिय जीव तीनों भांगों को जानते हैं, शेष 8 दंडक पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तीनों ही भांगों को नहीं जानते। (3) समुच्चय जीव, मनुष्य तीनों भांगों को करता है, तिर्यंच पंचेन्द्रिय 2 भांगा (अपच्चक्खाण, पच्चक्खाणा पच्चक्खाण) करता है, शेष 22 दंडक के जीव सिर्फ अपच्चक्खाण भांगा करते हैं। (4) समुच्चय जीव और वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाले जीव पच्चक्खाण आदि तीनों भांगों में आयुष्य बांधते हैं क्योंकि वैमानिक आयुष्य तीनों निवर्तित होता है। शेष 23 दंडक के जीव अपच्चक्खाण में आयुष्य बांधते है, वहाँ अपच्चक्खाण निवर्तित आयुष्य है। पच्चक्खाण गति वैमानिक ही है।

51. तमस्काय (भ.श. 6 उ. 5) तमस्काय पानी का परिणाम है, पानी से बनी है पानी के कई रूप है-(1) बादलों से बरसता (2) धूंअर का (3) हिमपात (4) ओस (5) लवण शिखा (6) पाताल कलशों का (7) आकाश से बरसने वाला (8) झरने का (9) महो तपोप गर्म जल (10) घनोदधिरूप (11) तमस्काय। इसी सिलसिले में यह धूंअर रूप ऊपर उठा हुआ तमस्काय रूप पानी है। इस जम्बूद्वीप से बाहर असंख्याता द्वीप समुद्र आगे अरूणवर द्वीप से बाहर 42 हजार योजन अरूणोदक समुद्र में जाने पर जल के ऊपरी भाग से तमस्काय उठी है संख्याता योजन जाडी असंख्य योजन के परिमंडलाकार की एक अप्कायमय धूंअर जैसी जलभित्ति समुद्री जल की ऊपरी सतह से एक समान प्रदेश वाली श्रेणी रूप चौतरफ समान विस्तार वाली परिमंडलाकार गोलाई में उठी जो 1721 योजन ऊँचाई तक सरीखी चौड़ाई वाली भित्ति है, उसके बाद उल्टे घड़े के आकार जैसी तिरछी विस्तृत होती है, घड़े की ठीकरी संख्यात से असंख्यात योजन जाड़ाई वाली होती है जो पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा देवलोक को ढ़ककर पाँचवे देवलोक (ब्रह्म) के तीसरे रिष्ट पाथड़े तक चली गई वहाँ इसका अंत है। संपूर्ण तमस्काय उल्टे रखे घड़े के आकार में है, परन्तु पाँचवे देवलोक के पास कुक्कड़ पंजर के ऊपरी भाग के आकार जैसा है। यानि घड़े जैसा गोलाई नहीं समतल है यह सदा एक सरीखी इसी आकार में अनादि काल से रही हुई है। लोक स्वभाव से है। अपने यहाँ दिखने वाले धूंअर से भी प्रगाढ़ अंधकार इसमें होता है। कोई महर्द्धिक देव तीन चुटकी में जम्बूद्वीप की 21 परिक्रमा करे, ऐसी शीघ्र गति से छ मास चले तो संख्याता योजन तमस्काय का पार पावे, असंख्याता योजन का पार नहीं पावे इतनी जाड़ी है। यह घर, दुकान, ग्रामादि नहीं है। तमस्काय में गाज, बीज, बादल, बरसात है ये देव असुरकुमार, नागकुमार देव करते हैं। इसमें बादर पृथ्वीकाय, बादर अग्निकाय के जीव नहीं परन्तु विग्रह गति के जीव हो सकते है। इसका वर्ण काला भयंकर डरावना है, कितनेक देव इसे देख क्षोभपाते है अगर कोई देवता इसमें प्रवेश करे तो शरीर और मन की चंचलता से जल्दी से पार करता है। वैमानिक ज्योतिषी देवों को जम्बूद्वीप में आना हो तो तमस्काय पार करना पड़ता है। देवों को अपना वस्त्रादि प्रकाश भी इसमें हतप्रभ होता है। 900 योजन तक की ऊँचाई में ज्योतिषी देव इससे बाहर है, भीतर नहीं किनारे पर हैं, उनकी प्रभा तमस्काय में थोड़ी जाकर अंधकार

से निष्प्रभ हो जाती है। इसके 13 नाम दिये हैं-तम, तमस्काय, अंधकार, लोक अंधकार, महा अंधकार, लोक तमिस्त्र, देव अंधकार, देव तमिस्त्र, देव अरण्य, देवव्यूह, देवपरिध, देवप्रति क्षोभ, (13) अरूणोदक समुद्र। यहाँ 13 नाम अरूणोदक समुद्र यह पानी रूप नाम है यह कोई अलग चीज नहीं अरूणोदक समुद्र का ही विचित्र अंश है। यह पानी, जीव और पुद्गल का परिणाम है (पृथ्वी का नहीं)। सब प्राणी, भूत, जीव, सत्व अनेक बार अथवा अनन्त बार तमस्काय में पृथ्वीकायपणे यावत त्रसकायपणे उत्पन्न हुए है, परन्तु बादर पृथ्वीकायपणे और बादर तेउकायपणे नहीं। बादर तेउकाय अढ़ाई द्वीप बाहर नहीं है।

52. आठ कृष्णराजि और लोकान्तिक देव (भ.श. 6 उ. 5) (1) कृष्णराजियां 8 हैं (2) पाँचवे देवलोक के तीसरे रिष्ट पाथड़े की सीमा के किनारे लोकान्त के निकट आठ पृथ्वी शिलाएँ हैं। चारों दिशाओं में 2-2 कृष्णराजियां हैं। अंदर की कृष्णराजियां चारों तरफ से घिरी हुई हैं। बाहर की चार भी पहले घेरे के चोतरफ घेरी हुई है। दो घेरे में 8 कृष्णराजियां है भीतरी चारों समचतुष्कोण और बाहर में दो उत्तर दक्षिण की त्रिकोण, पूर्व पश्चिम की षट्कोण है। एक दिशा की भीतरी कृष्णराजी अगली दिशा की बाहर की कृष्णराजी को स्पर्श करती है। (1) दक्षिण की आभ्यंतर-पश्चिम की बाह्य कृष्णराजी को। (2) पश्चिम की आभ्यंतर-उत्तर की बाह्य कृष्णराजी को (3) उत्तर की आभ्यंतर-पूर्व की बाह्य को और (4) पूर्व की आभ्यंतर-दक्षिण की बाह्य को। (3) ये संख्याता योजन की चौड़ी असंख्याता योजन की लंबी है। रेखा जैसी है। असंख्यात योजन परिधि है। (4 से 7) कोई महर्द्धिक देव 3 चुटकी में जम्बूद्वीप की 21 परिक्रमा करे ऐसी तीव्र गति वाला, 15 दिन तक जावे तो किसी का पार पाता है, किसी का नहीं ऐसी कृष्णराजियां मोटी है। घर दुकान ग्रामादि नहीं। गाजबीज बरसात होती है। (8) बरसात वैमानिक देव करता है। (9) बादर, अप्काय, बादर अग्निकाय, बादर वनस्पतिकाय नहीं है। विग्रह गति समापन्न जीव सिवाय नहीं है। (10-11) सूर्य चन्द्र तारा आदि नहीं है, इनकी आभा नहीं है। (12) इनका रंग काला हैं, भयंकर काला, देवता भी देखकर भयभीत हो ऐसा है। वहाँ से निकलते देव बादल, गर्जन बिजली आदि कर सकते हैं। (13) इनके आठ नाम है-(1) कृष्णराजि (2) मेघराजि (3) मघा (4) माघवती (5) वातपरिघा (6) वातपरिखोभा (7) देवपरिघा (8) देवपरिखोभा । (14) कृष्णराजियां पानी का नहीं, परन्तु पृथ्वी

का, जीव का और पुद्गल का परिणाम है। (15) यहाँ सभी जीव, सब प्राणी, भूत, जीव, सत्व, अनेकों अथवा अनन्ती बार उत्पन्न हुए हैं। पृथ्वी रूप से बीच में वायु रूप से परन्तु बादर अप्काय, बादर अग्नि, बादर वनस्पति रूप से नहीं।

(16) लोकान्तिक देवों के विमान-कृष्णराजियों के 8 अन्तरों में 8 विमान है, एक मध्य में है। यो 9 लोकान्तिक देवों के नौ विमान है। चार्ट से देखें-

	दिशा	विमान	लोकान्तिक देव	परिवार	कृष्णराजि के पास
1	ईशानकोण	अर्चि	सारस्वत	7 देव 700 देवों का परिवार	8 और 1 के स्पर्श का खुणा
2	पूर्व	अर्चिमाली	आदित्य	7 देव 700 देवों का परिवार	2 का मध्य
3	अग्निकोण	वैरोचन	वन्हि	14 देव स्वामी 14000 देव परिवार	2 और 3 के स्पर्श खुणा
4	दक्षिण	प्रभंकर	वरूण	14 देव स्वामी 14000 देव परिवार	4 का मध्य
5	नैऋत्यकोण	चंद्राभ	गर्दतोय	7 देव स्वामी 7000 देव परिवार	4 और 5 के स्पर्श का खुणा
6	पश्चिम	सूर्याभ	तुषित	7 देव स्वामी 7000 देव परिवार	6 का मध्य
7	वायव्यकोण	शुक्राभ	अव्याबाध	9 देव स्वामी 900 देव परिवार	6 और 7 के स्पर्श का खुणा
8	उत्तर	सुप्रतिष्ठाभ	मरूत (आग्नेय)	9 देव स्वामी 900 देव परिवार	8 का मध्य
9	बीच में	रिष्टाभ	रिष्ट	9 देव स्वामी 900 देव परिवार	बीच मैदान में

सब प्राणी भूत जीव सत्व अनेक या अनन्ती बार यहाँ लोकान्तिक देवपने (देवीपने नहीं) उत्पन्न हुए है। इनकी 8 सागरोपम की स्थिति है। यहाँ से लोकान्त असंख्यात हजार योजन दूर है।

53. मारणान्तिक समुद्घात करके मरना उपजना (भ.श. 6 उ. 6) (1) 7 पृथ्वीयां है रत्नप्रभा यावत् तम:तमाप्रभा (2) नरक में नरकावासा यावत् अणुत्तर विमान में विमानावास है। कई जीव मारणान्तिक समुद्घात करते हैं, कई जीव प्रथम बार में ही आयुष्य पूर्ण होने पर मरकर (आगम शब्दों में मरण समुद्घात) आगामी जन्म स्थान में पहुँचकर आहार परिणमन आदि करते हैं। वर्तमान भव के अन्तर्मुहूर्त आयु शेष रहने पर करते हैं।

(3) इस अन्तर्मुहूर्त से पहले जीव ने कभी भी आगामी भव का आयुष्य बांध लिया हो, तभी मारणान्तिक समुद्घात से, अपने निज शरीर को छोड़े बिना कुछ आत्म प्रदेशों को आगामी जन्म स्थान तक फैलता है और आयुष्य कर्म की उदीरणा कर पुनः शरीरस्थ होकर फिर आयुष्य को पूर्ण करके (मरने रूप) समुद्घात करके यानि मरकर (दूसरी बार नहीं करता क्योंकि फिर कोई प्रयोजन नहीं रहता है) उत्पत्ति स्थान में जाता है, वहाँ आहार उसका परिणमन शरीर निर्माण आदि करता

है। वर्तमान भव का आयु रहता है, तब आगामी जन्म स्थान में गये आत्मप्रदेश वहाँ आहारादि ग्रहण परिणमन आदि नहीं करते हैं, क्योंकि यहीं वर्तमान भव के शरीर में चालू रहते हैं। रत्नप्रभा में उत्पन्न होने वाला जीव मरकर जाता है तो वहाँ आहारादि करते यावत् शरीर बांधते हैं, परन्तु जो जीव वहाँ जाकर वापस अपने शरीर में आ जाते हैं, फिर दूसरी बार मरकर जाकर वहाँ आहारादि यावत् शरीर बांधते हैं। इसी तरह सभी नरक का और 18 दंडक (13 देवता 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य) का भी कहना। 5 स्थावर मेरू पर्वत से छ दिशाओं में अंगुल के असंख्यातवें भाग से असंख्यात हजार योजन लोकान्त तक एक प्रदेशी श्रेणी (विदिशा) को छोड़कर चाहे जहाँ उत्पन्न होते हैं, इनमें पूर्वोक्त दो-दो अलावा कहना। 5 स्थावर के 6 दिशा आसरी 60 अलावा। 19 दंडकों के 38 अलावा ये 98 अलावा हुए। ठिकाणा आसरी अनेक अलावा होते हैं। सभी अलावों में दो प्रकार से (1) देश से समुद्घात इलिका गति से (2) सर्व से देड़का (मेंढ़क) गति से है। स्थावर छ दिशाओं में लोकान्त तक उत्पन्न होते हैं। त्रस जीव छ दिशाओं में त्रस नाड़ी में अपने-अपने उत्पत्ति योग्य स्थलों तक उत्पन्न होते हैं।

54. काल विशेषण (भ.श. 6 उ. 7) (1) वनस्पति के 10 विभाग मूल से बीज तक होते हैं उनमें से 9 विभाग तो सूखने पर अचित होते हैं किन्तु 10वाँ बीज विभाग सूखने पर भी वर्षों तक सचित रह सकता हैं। कोठा में, खाई में बंद किये छांदन दिये धान की योनि (अंकुर उत्पन्न करने की शक्ति) जघन्य अन्तर्मुहूर्त सचित रहती है, फिर अचित हो जाती है। उत्कृष्ट शालि (कलमी आदि अनेक जाति के चावल), ब्रीहि (सामान्य जाति के चावल) गेहूँ, जव, जवार आदि उत्कृष्ट 3 वर्ष तक योनि सचित रहती है। कलाय (मटर), मसूर, तिल, मूँग, उड़द, चवला, कुलथ, तूर, चना आदि द्विदल की योनि उत्कृष्ट 5 वर्ष तक सचित रहती है। अलसी, कुसुम्भ, कोद्रव, कांगणी, वरटी, राल, सण, सरसों, राई, मैथी आदि अन्य शेष बीज उत्कृष्ट 7 वर्ष तक सचित रहती है। उसके बाद अचित हो जाती है। सचितता की अपेक्षा फिर बाद में वह बीज नहीं रहता। (2) एक अन्तर्मुहूर्त में 3773 श्वासोच्छवास होते हैं। एक समय से लेकर शीर्ष प्रहेलिका तक गणित है समय, आवलिका, श्वासोच्छवास, स्तोक, लव, मुहूर्त, दिन-रात, मास, अयन, वर्ष, 84 लाख वर्ष का पूर्वांग, 84 लाख पूर्वांग का पूर्व (एक करोड़ पूर्व प्रसिद्ध है),

उसके बाद 84 लाख से गुणा करते जाने पर त्रुटितांग, त्रुटित आदि अंतिम गणना संख्या शीर्ष प्रहेलिकांग, शीर्ष प्रहेलिका होती है, वह 194 अंकों से बनती है इसमें 54 अंक और 140 बिन्दियाँ होती हैं। इतने वर्षों की शीर्ष प्रहेलिका तक गणना शास्त्र में की जाती है, उसके बाद पल्य की उपमा से पल्योपम की गणना बताई जाती है-**पल्य**-एक योजन लंबे-चौड़े गहरे पल्य की कल्पना की गई है, उसमें देवकुरु उतरकुरु के मनुष्यों के 7 दिन के जन्मे बालक के बालाग्रों के असंख्य खंड करके ठूँसठूँस कर भरा जाय फिर उसमें से एक-एक खंड 100-100 वर्षों से निकालने पर जब वह पल्य (कुँआ) खाली हो जाय उतने वर्षों को पल्योपम कहा जाता है। ऐसे 10 क्रोड़ाक्रोड़ पल्योपम का एक सागरोपम होता है। यह उपमा काल पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, कालचक्र आदि रूप है। (3) इस अवसर्पिणी काल के सुषुम सुषमा आरा में जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में भूमि भाग बहुत समरमणीय था यावत् देवकुरु उत्तरकुरु के युगलियों की तरह उत्कृष्ट सुख वाले 6 प्रकार मनुष्य रहते थे-पद्म समान गंध वाले, कस्तूरी समान गंध वाले, ममत्व रहित, तेजस्वी, रूपवंत, सहनशील, उतावल रहित गंभीर गति से चलने वाले मनुष्य बसते थे।

55. पृथ्वी (भ.श. 6 उ. 8) आठ पृथ्वीयां है, 7 नरक 1 ईषत्प्राग्भारा (सिद्धशिला), 7 नरक, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर विमान, सिद्धशिला इन 22 स्थानों पर घर, मकान ग्रामादि नहीं है। नारकी और देवलोकों के नीचे गाज, बीज, मेघ, बादल, बरसात, पहली दूसरी नारकी के नीचे देव, असुरकुमार नागकुमार ये तीन करते हैं। तीसरी नरक पहला दूसरा देवलोक के नीचे देव और असुरकुमार करते हैं। शेष 4 नरक, तीसरे से 12वें देवलोक-14 जगहों के नीचे वैमानिक देव करते हैं। नवग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर, सिद्धशिला में कोई नहीं करते। 7 नरकों के नीचे बादर अग्निकाय नहीं है, परन्तु विग्रह गति के जीव होते हैं। देवलोकों से सिद्धशिला-15 ठिकानों में बादर पृथ्वीकाय, बादर अग्निकाय नहीं है परन्तु विग्रह गति के जीव है। नवमें देवलोक से सिद्धशिला तक 9 ठिकानों में नीचे अप्काय (बादर) नहीं है विग्रह गति के जीव है, 22 ही ठिकानों में सूर्य चन्द्र आदि नहीं है। सूर्य चन्द्र की प्रभा नहीं है। वाणव्यंतर नीचे प्रथम नरक तक, नवनिकाय के भवनपति दूसरी नरक तक, असुरकुमार तीसरी नरक तक, ऊपर प्रथम द्वितीय देवलोक तक असुरकुमार और वैमानिक देव तथा आगे के

देवलोकों में केवल वैमानिक देव जा सकते हैं। व्यंतर देवों की उत्कृष्ट स्थिति 1 पल्य, नव निकायों की उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम, असुरकुमारों की 1 सागरोपम साधिक वैमानिक में गमन करने वालों की उत्कृष्ट स्थिति 22 सागरोपम होती है। देवों की वैक्रिय शक्ति, ऋद्धि उनकी स्थिति के अनुसार हीनाधिक होती है। ऊपर नीचे जाने की क्षमता शक्ति रिद्धि के अनुसार होती है, अल्पर्धिक महर्द्धिक के अनुसार। असुरकुमारों का नीचे तीसरी नरक तक जाना कहा है वह उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वालों की अपेक्षा से हैं। वैमानिक देवों का 7वीं नरक तक जाना कहा है वह स्थिति के अनुसार, पहले दूसरे के देव तीसरी नरक तक जाते हैं। आगे क्रमश: ऊपर-ऊपर के देव अगली-अगली नरक समझना। इससे यह समझा जा सकता है कि परमाधामी को तीसरी नरक तक जाना कहा है यह परंपरा से कथन है, पकड़े नहीं रखना है, रिद्धि स्थिति क्षमता के अनुसार जा सकते हैं। प्रथम नरक तक। एक पल्य प्रथम नरक तक, अनेक पल्योपम दूसरी तक एक-दो सागरोपम-तीसरी नरक तक यो वैमानिक में भी स्थिति के अनुपात से 4-5-6 नरक जाना समझें। नरक पृथ्वी पिंडों में बादर पृथ्वीकाय होती है। अंदर की भूमि कुंभियां भी बादर पृथ्वीकाय जीव मय होती है। घनोदधि में वलयों में बादर अप्काय के जीव होते हैं। पृथ्वी पिंड के नीचे घनवाय, तनुवाय और चौतरफ के इन वलयों में वायुकाय के जीव होते हैं। भवनपति और नरक पृथ्वी के पोलारों में आकाशान्तरों में वायुकाय के जीव होते हैं। जहाँ अप्काय कहा है वहाँ बादर वनस्पतिकाय भी अनंतकाय की अपेक्षा समझना। प्रत्येक वनस्पति नरक क्षेत्र में नहीं होती, बादर अग्नि जीव भी नहीं होते। नरक वर्णन में जहाँ भी ये वर्णन मिले देवकृत अचित समझना। रत्नप्रभा पृथ्वी का ऊपरी छत 1000 योजन का है, इसमें समुद्री जल तथा वर्षा का जल भूमि में जाता है, भूमि में पानी की सेजें चलती है जिनका पानी, बोरिंग, पाताल तोड़ कुआँ से आता है वह सभी अप्काय जीवमय है। तिरछा लोक में बादर पृथ्वीकाय आदि 5 स्थावर यथास्थान होते हैं, युगलिक भूमि 30+56=86 में बादर अग्निकाय नहीं होती। बाकी अपने-अपने योग्य स्थलों पर पाँच स्थावर जीव होते हैं। ऊँचे लोक में, देवलोकों के नीचे घनोदधि में तमस्काय में, देवलोकों की बावड़ियों में बादर अप्काय के जीव होते हैं। देवलोकों के पृथ्वीपिंड, विमान, शय्या आदि पृथ्वीकायमय होते हैं। कृष्णराजियां भी पृथ्वीकायमय होती है। बादर अग्निकाय ऊँचे देवलोकों में नहीं होते। वायुकाय के जीव सर्वत्र पोलार

में घनवाय में होते हैं। प्रत्येक वनस्पति देवलोकों में नहीं होती। वनस्पति के अनन्तकाय जीव पानी के स्थानों में होते हैं। वहाँ की बावड़ियों में जो कमल आदि होते हैं, वे पृथ्वीकायमय होते हैं। त्रस, विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य देवलोक में नहीं होते। भ्रमर आदि का वर्णन मिलता है वे पृथ्वीकाय के यंत्रमय समझना। पहले दूसरे देवलोक घनोदधि के आधार, तीसरे चौथे पाँचवे के नीचे घनवायु सघन वायु है। छठे सातवें आठवें देवलोक घनोदधि घनवाय दोनों के आधार, उनके अनन्तर घनोदधि है, उनके नीचे घनवाय है।

56. आयुष्य बंध (भ.श. 6 उ. 8) आयुष्य बंध 6 प्रकार का है (1) जाति नाम निधत्तायु, (2) गति नाम निधत्तायु (3) स्थिति नाम निधित्तायु (4) अवगाहना नाम निधत्तायु (5) प्रदेश नाम निधत्तायु (6) अनुभाग नाम निधत्तायु। आयुष्य कर्म के बंध के समय नामकर्म और गौत्रकर्म की अनेक प्रकृत्तियों का आयुष्य के योग्य संयोजना रूप बंध होता है उसे निधत्त और नियुक्त क्रिया के साथ कहा है। निधत्त=संयोजना रूप बंध, नियुक्त=निकाचित बंध। ये 6 बंध निधत्त और निकाचित रूप से दो प्रकार से होने से 6x2=12 एक जीव आसरी हुए और 12 बहुत जीव आसरी ये 24 हुए। इनके समुच्चय के 24 और नीच गौत्र तथा उच्च गौत्र के आसरी 24-24 साथ बंधने वाले 72 हुए, इनको समुच्चय जीव और 24 दंडक इन 25 से गुणा करने से 1800 अलावा हुए।

57. जीव के सुख-दुःखादि (भ.श. 6 उ. 10) (1) संपूर्ण लोक के जीवों के सुख-दु:खों को बाहर निकालकर हाथ में लेकर दिखाने में कोई समर्थ नहीं है। तीन चुटकी बजावे उतने में जम्बूद्वीप की 21 परिक्रमा करे ऐसा शक्तिशाली देव जम्बूद्वीप में व्याप्त होवे ऐसा गंध का डिब्बा खोलकर 21 परिक्रमा करे उतने में गंध उड़कर जीवों के नाक में प्रवेश करे, उस गंध को अलग निकालकर बताने में कोई समर्थ नहीं है। इसी तरह जीवों के सुख-दु:ख को बाहर निकालकर बताने में कोई समर्थ नहीं है। (2) चैतन्य है सो जीव है, जीव है सो चैतन्य है, जीव और चैतन्य एक ही है, नारकी का नैरयिक नियमा जीव है, और जीव है सो नैरयिक अनैरयिक दोनों ही है, यह 24 दंडक में कहना। (3) जो प्राण धारण करता है सो जीव है नियमा है, परन्तु जीव प्राण धारण करता भी है, नहीं भी करता है, जैसे सिद्ध भगवान द्रव्य प्राण धारण नहीं करते। नारकी का नैरयिक नियमा प्राणधारी है, प्राणधारी है सो नैरयिक

अनैरयिक दोनों ही है। इतनी तरह 24 दंडक में कहना। (4) भव सिद्धिक नैरयिक अनैरयिक दोनों ही होता है। इस तरह नैरयिक भी भव सिद्धिक, अभव सिद्धिक दोनों होता है। इस तरह 24 दंडक में है।

(5) सब प्राणी, भूत, जीव, सत्व एकान्त दु:ख रूप वेदते यह अन्य तीर्थिकों का कथन मिथ्या है। नारकी का नेरिया एकान्त दु:ख रूप वेदना वेदता है। कदाचित् सुख रूप वेदना भी वेदते है। चारों ही जाति के देवता एकान्त सुख रूप वेदना भी वेदते हैं, कदाचित् दु:ख रूप भी वेदते हैं। औदारिक के 10 दंडक विविध प्रकार (विमाया से) से वेदना वेदते हैं। कदाचित् सुख, कदाचित् दु:ख वेदते हैं। (6) नारकी का नैरयिक आत्म शरीर क्षेत्रावगाढ़ (स्वशरीर क्षेत्र ओघाया) पुद्‌गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण कर आहार करता है। अनन्तर क्षेत्रावगाढ़ या परम्पर क्षेत्रावगाढ़ पुद्‌गलों को नहीं ग्रहण करता। इसी तरह 24 दंडक में कहना।

(7) केवली महाराज इन्द्रियों से नहीं जानते देखते हैं। छहों दिशाओं में द्रव्य क्षेत्र काल भाव मित (मर्यादा सहित) भी जानते देखते हैं और अमित (मर्यादा रहित) भी जानते देखते हैं। केवली भगवान का दर्शन अनावरण (आवरण रहित) है।

58. आहार (भ.श. 7 उ.1) ऋजु गति से जन्म स्थान में एक समय में पहुँच जाते हैं, वे अनाहारक नहीं होते। वक्रगति (मोड़ वाली) से जाने वाले वे एक, दो, तीन समय तक अनाहारक हो सकते हैं, चौथे समय में नियमा आहारक होते हैं। समुच्चय जीव और एकेन्द्रिय में पहले, दूसरे, तीसरे समय आहार की भजना है, चौथे समय नियमा है, शेष 19 दंडकों में पहले, दूसरे समय भजना है, तीसरे समय आहार की नियमा है। (2) उत्पन्न होते समय प्रथम समय और मरते समय अंतिम समय में जीव अल्पाहारी होता है। प्रथम समय में छोटी अवगाहना, अंतिम (चरम) समय में शरीर में शिथिलता से। (3) लोक का संस्थान सरावला (सुप्रतिष्ठ) आकार का है नीचे चौड़ा, बीच में संकड़ा ऊपर पतला, ऐसे लोक शाश्वत, लोक में केवलज्ञान दर्शन के धारक अरिहन्त जिन केवली जीवों को अजीवों को जानते देखते हैं, फिर सिद्ध होकर यावत् सब दु:खों को अंत करते हैं। (4) उपाश्रय में रहकर सामायिक करने वाले श्रावक को ईर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती, क्योंकि वह सकषायी है अत: साम्परायिकी क्रिया लगती हैं।

(5) किसी श्रावक के त्रस जीवों को मारने का त्याग है, वह पृथ्वी खोदे उस वक्त त्रस जीव आकर मर जाये तो उसे व्रतभंग नहीं होता। इसी तरह वनस्पति छेदन का

त्याग हो, पृथ्वी खोदते समय कंद-मूलादि छेदन हो जाय तो व्रत भंग नहीं होता। (6) तथारूप श्रमण माहण को प्रासुक एषणीय आहार पानी बहरावे तो वह जीव समाधि प्राप्त करता है। बोध बीज समकित प्राप्त कर अनुक्रम से मोक्ष जाता है। (7) कर्मरहित जीव की गति, तूम्बी, फली, धूआँ, बाण के दृष्टान्त से ऊर्ध्व (ऊँची) होती है। (8) दु:खी जीव दु:ख से व्याप्त होता है, परन्तु अदु:खी दु:खी नहीं होता। (1) दु:खी जीव दु:ख से व्याप्त होता है (2) दु:ख को ग्रहण करता है (3) दु:ख की उदीरणा करता है (4) दु:ख को वेदता है (5) दु:ख की निर्जरा करता है। ये 5 बोल समुच्चय और 24 दंडक से कहने पर 125 अलावा हुए।

(9) बिना उपयोग से गमन करते, खड़े रहते, बैठे सोते, वस्त्र पात्रादि लेते अणगार को साम्परायिक क्रिया लगती है, अयतना से सर्व प्रवृत्तियाँ करता है, जीवरक्षा का लक्ष्य न होने से संयम का लक्ष्य न होने से उसकी सूत्र विपरीत प्रवृत्ति है। अत: उसे साम्परायिक क्रिया लगती है। उपयोग सहित वीतराग भाव प्राप्त कर आगे बढ़े अप्रभत्त भावों के अनुसार आचरण होने से उसके कषाय क्षीण हो जाते हैं तब वीतराग दशा प्राप्त हो जाती है और साम्परायिक क्रिया बंद हो जाती है और ईर्यापथिक लगती है (11 से 13 गुणस्थान)। (10) **इंगाल दोष**-प्रासुक एषणीय आहार पानी लाकर उसमें मूर्च्छित, गृद्ध आसक्त होकर आहार करे वह इंगाल दोष। **धूमदोष**-उसी आहार को माथा धुनते हुए करे। **संयोजना दोष**-एषणीय प्रासुक आहार पानी लाकर स्वाद के लिए एक दूसरे का संयोग मिलाये। (11) **खेत्ता इक्कंते**-सूर्योदय से पहले आहार पानी लाकर सूर्योदय से पीछे भोगे। **कालाइक्कंते**-प्रथम प्रहर में लाये अंतिम प्रहर में भोगे। **मग्गाइक्कंते**-दो कोस (गाऊ) उपरान्त ले जाकर आहार पानी भोगे। **पमाणाइक्कंते**-प्रमाण से अधिक आहार करे। (12) शस्त्रातीत शस्त्र परिणत-अच्छी तरह से परिणत होकर अचित हो गया हो वह आहार पानी। साधु को ऐसा आहार पानी लेना।

59. सुपच्चक्खाण-दुपच्चक्खाण (पच्चक्खाणा पच्चक्खाणी) (भ.श. 7 उ.2) कोई यह कहे कि मुझे सर्वप्राण, भूत, जीव सत्व को मारने का पच्चक्खाण है, यह कथन मिथ्या है अत: सुपच्चक्खाण नहीं, क्योंकि उसे जानपणा नहीं है कि ये जीव है, ये अजीव है, त्रस या स्थावर है। यदि वह यह कहते कि-मुझे सर्वप्राण, भूत, जीव, सत्व को मारने (हनने) का त्याग है तो उसके दुपच्चक्खाण है वह

असत्यवादी है, तीन करण से असंयति है, अविरति है, पाप कर्म नहीं पच्चक्खे है, आश्रव सहित है, संवर रहित है असंवुडा, छकाया का दंडी है, एकान्त बाल अज्ञानी है उसके दु:पच्चक्खाण है। जिसको ऐसा जानपणा हो (ज्ञान) कि ये जीव है, अजीव है, त्रस, स्थावर है यह कहे कि मुझे इनका हनन का त्याग है तो वह सत्यवादी, संयति, विरति, पापकर्म का पच्चक्खाण किया है, अक्रिय, संवुडा, छकायाकारक्षक, एकान्त पंडित ज्ञानी है, उसके पच्चक्खाण सुपच्चक्खाण है। जिसने जीव-अजीव के स्वरूप को समझ लिया है, समझकर सर्व प्राणियों की हिंसा का त्याग करता है, हिंसा का त्यागी कहता मानता तो यह सत्य है, इसी प्रकार असत्य, कुशील, चोरी परिग्रह आदि का यथार्थ स्वरूप समझकर जो इन पापों का त्याग करता है तो उसका प्रत्याख्यान यथार्थ है। (2) प्रत्याख्यान 2 प्रकार के मूलगुण, उत्तरगुण। मूलगुण के दो भेद-सर्वमूल गुण ये पाँच सर्व प्रकार से हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह का त्याग। पाँच महाव्रतों का पालन करना। देशमूल गुण में-स्थूल हिसा से स्थूल परिग्रह तक त्याग यानि पाँच अणुव्रत पालन करना। उत्तरगुण पच्चक्खाण के दो भेद-सर्व उत्तर गुण इसके 10 भेद-अणागयं (आगामी तप को पहले कर लेवे), अइक्कंतं (तप पहले करना हो उसे कारणवश पीछे करे), कोडीसहियं (पहले दिन, पीछे दिन बीच में भी नाना प्रकार से करे), नियंट्टियं (नियमित दिन विघ्न आने पर भी विचारा हुआ अवश्य करे), सागारं (आगार सहित करे), अणागारं (आगार रहित तप करे), परिमाणकडं (दत्ति, घर, चीज आदि का परिमाण करे) निरवसेसं (चारों प्रकार के आहार का त्याग करे, संथारा करे), संकेयं (मुष्टि आदि संकेतपूर्वक तप करे) (10) अद्धा (अद्धातप 10 भेद नवकारसी, पोरिसी, दो पोरिसी, एकासन, एकलठाण, आयंबिल, नीवि, उपवास, अभिग्रह, चरम दिवस) काल का परिणाम) तप करे। देश उत्तर गुण पच्चक्खाण के 7 भेद तीन गुणव्रत (दिशाव्रत, उपभोग परिभोग परिमाणव्रत, अनर्थदंड विरमणव्रत) चार शिक्षा व्रत (सामायिक, देशावकाशिक, पौषधोपवास, अतिथि संविभाग व्रत और संलेखना)। (3) समुच्चय में मूलगुण पच्चक्खाणी, उत्तरगुण पच्चक्खाणी, और अपच्चक्खाणी ये तीनों भांगा पाते हैं। मनुष्य और तिर्यंच में 3-3 शेष 22 दंडक अपच्चक्खाणी है। **अल्पबहुत्व**-सबसे थोड़े सर्व मूल गुण पच्चक्खाणी, उससे देशमूल गुण पच्चक्खाणी असंख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्त गुणा। तिर्यंच (पंचेन्द्रिय) में सबसे थोड़े देश मूल

गुण पच्चक्खाणी उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े सर्व मूल गुण पच्चक्खाणी उससे देशमूल गुण पच्चक्खाणी संख्यात गुणा उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा। (5) जीवों के सर्व उत्तर गुण पच्चक्खाणी, देश उत्तर गुण पच्चक्खाणी और अपच्चक्खाणी के तीन भांगे, समुच्चय में तीन भांगा, मनुष्य तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 3-3 बाकी 22 दंडक में भांगा 1-अपच्चक्खाणी। **अल्प बहुत्व**-सबसे थोड़े सर्व उत्तर गुण पच्चक्खाणी, उससे देश उत्तर गुण पच्चक्खाणी असंख्याता गुणा उससे अपच्चक्खाणी अनन्त गुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रियों सबसे थोड़े सर्व उत्तर गुण पच्चक्खाणी, उससे देश उत्तर गुण पच्चक्खाणी असंख्याता गुणा, अपच्चक्खाणी असंख्याता गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े सर्व उत्तर गुण पच्चक्खाणी उससे देश उत्तर गुण पच्चक्खाणी संख्याता गुणा उससे अपच्चक्खाणी असंख्याता गुणा। (6) जीव के संयति, असंयति, संयता-संयति तीन भांगों में समुच्चय में तीन, मनुष्य में 3, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 2 (असंयति, संयतासंयति), बाकी 22 दंडक में 1 असंयति। सबसे थोड़े संयत, उससे संयतासंयति असंख्याता गुणा, उससे असंयति अनन्त गुणा। तिर्यंच में (पंचे.) सबसे थोड़े संयतासंयति उससे असंयति असंख्याता गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े संयति उससे संयतासंयति संख्याता गुणा, उससे असंयति असंख्यात गुणा। (7) जीव के पच्चक्खाणी, पच्चक्खाणापच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी में तीन भांगे समुच्चय और मनुष्य में तीन-तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 2 बाकी 22 दंडक में 1 अपच्चक्खाणी। 24 दंडक में से 22 अपच्चक्खाणी, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में-अप्रत्याखानी, देशमूलगुण, देशउत्तरगुण प्रत्याख्यानी होते हैं।

मनुष्य में-अप्रत्याख्यानी, देशमूलगुण, देशउत्तरगुण, सर्वमूलगुण, सर्वउत्तरगुण प्रत्याख्यानी ये पाँचों प्रकार होते हैं। सबसे थोड़े प्रत्याख्यानी, उससे पच्चक्खाणा-पच्चक्खाणी असंख्याता गुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्त गुणा ये 24 दंडक सर्व जीव के। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सबसे थोड़े पच्चक्खाणा-पच्चक्खाणी उससे अपच्चक्खाणी अनंत गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े पच्चक्खाणी (सर्व मूल गुण श्रमण) उससे पच्चक्खाणा पच्चक्खाणी (देशमूलगुण श्रावक) संख्यात गुणा, उससे अप्रत्या ख्यानी (संमुच्छिम मनुष्य) असंख्याता गुणा इसी तरह उत्तर प्रत्याख्यानी का भी जानना। मनुष्य में प्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी, अप्रत्याख्यानी तीनों भांगे। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 2 भांगे प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी, अप्रत्याख्यानी होते हैं। उसमें संयत और

प्रत्याख्यानी ये दो (सर्व की अपेक्षा) नहीं होते। (8) जीव-द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत् है, पर्याय की अपेक्षा अशाश्वत् है इसी तरह 24 दंडक का कथन है।

60. वनस्पति के आहार आदि (भ.श. 7 उ. 3) वनस्पति श्रावण भादवा (पावस) आसोज काती (वर्षा) में महाआहारी होती है। शरद् ऋतु (मिगसर पौष) हेमन्त ऋतु (माघ फाल्गुन) बसन्त ऋतु (चैत्र वैसाख) में क्रम से अल्पाहारी होती है। यावत् ग्रीष्म (जेठ आषाढ़) में सबसे अल्पाहारी होती है। (2) ग्रीष्म ऋतु में बहुत सी वनस्पतियों में उष्णयोनिया जीव उत्पन्न होते हैं जिससे ग्रीष्म में भी पान फूल फल होते हैं। (3) वनस्पति के मूल कन्द यावत् बीज तक 10 विभाग है मूल मूल के जीव से यावत् बीज बीज के जीव से व्याप्त है। (4) वनस्पति का मूल पृथ्वी से जुड़ा है, उससे वनस्पति आहार लेती है मूल पृथ्वी से आहार ग्रहण करता है कन्द मूल से यावत् बीज के जीव फल से आहार ग्रहण करते हैं। 10 अलावा है। (5) आलू मूला आदि वनस्पतियाँ अनन्त जीव वाली और भिन्न-भिन्न जीव वाली है। (6) कृष्णलेशी, महाकर्मी और नीललेशी आदि क्रमशः उनसे अल्पकर्मी माना है, फिर भी स्थिति की अपेक्षा जिस नैरयिक का काल ज्यादा बीत चुका है, वह नीललेशी की अपेक्षा अल्पकर्मी हो सकता है। नीललेशी से कापोतलेशी भी महाकर्मी हो सकता है। ज्योतिषी देवों में सिर्फ 1 तेजो लेश्या पाई जाती है अतः उन्हें छोड़कर 23 दंडकों में जिसमें जितनी लेश्या पावे उतनी लेश्या से अल्पकर्मी और महाकर्मी कहना। तात्पर्य यह कि कोई भी लेश्या वाले अल्पकर्मी या महाकर्मी हो सकते है, 23 दंडक में एकांत नहीं मानकर अनेकांत विकल्प समझना। (7) वेदना और निर्जरा दोनों एक नहीं है, वेदना-उदय में आये कर्मों को भोगना वेदना है इसलिए वेदना को कर्म कहा है। और जो कर्म भोगकर क्षय कर दिया वह निर्जरा है, निर्जरा नोकर्म है। वेदना का समय पहले है, निर्जरा का अनन्तर है वेदना आत्मा में लगे कर्मों की होती है, वेदने के बाद कर्म नोकर्म बन जाता है, उस नोकर्म स्वरूप को निर्जरा कहते हैं। जिस समय वेदता है, निर्जरता नहीं, निर्जरता है तब वेदता नहीं। इस तरह 24 दंडक पर 120 अलावा कहना। (8) 24 दंडक अनेक जीवों की अपेक्षा शाश्वत् है, एक जीव की अपेक्षा एवं पर्याय की अपेक्षा अशाश्वत् है, क्योंकि एक जीव अधिकतम 33 सागरोपम नरक या देव में रहता है यो 24 दंडक में प्रत्येक जीव की स्थिति मर्यादित ही होती है।

61. जीव का थोकड़ा (भ.श. 7 उ.4) (1) जीव के छ भेद है-पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय। (2) **पृथ्वीकाय**-के 6 भेद-सण्हा, शुद्ध, बालुका, मणोशिला (मनःशिला, शर्करा, खर) (3) सण्हा पृथ्वी-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 1000 वर्ष, शुद्ध पृथ्वी 12000 वर्ष, बालुका पृथ्वी 14000 वर्ष, मणोसिला पृथ्वी (मेन सिल) 16000 वर्ष, शर्करा पृथ्वी 18000 वर्ष, खर पृथ्वी की 22000 वर्ष की है। (4) नारकी देवता की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागरोपम। तिर्यंच और मनुष्य की जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 3 पल्योपम है। यह भवस्थिति के अनुसार स्थिति है। (5) जीव सदा काल जीवपने रहता है। (6) वर्तमान समय में तत्काल उत्पन्न हुए पृथ्वीकाय के जीवों को प्रति समय एक-एक अपहरे (निकाले) तो जघन्य पद में असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल में उत्कृष्ट पद में भी असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल में निर्लेप होवे। जघन्य से उत्कृष्ट पद असंख्याता गुणा काल ज्यादा समझे। इसी तरह अप्काय, तेउकाय, वायुकाय का भी कहना। वनस्पति अनन्तानन्त होने से कभी निर्लेप नहीं होती। त्रसकाय जघन्य प्रत्येक सौ सागर में उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर में निर्लेप होती है यहाँ जघन्य में उत्कृष्ट पद विशेषाधिक समझे। (7) अवधिज्ञानी अणगार के लेश्या आसरी 12 अलावा-

(1) अविशुद्ध लेशी अणगार समुद्घात रहित अविशुद्ध लेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता

(2) अविशुद्ध लेशी अणगार समुद्घात रहित विशुद्ध लेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता

(3) अविशुद्ध लेशी अणगार समुद्घात सहित अविशुद्ध लेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता

(4) अविशुद्ध लेशी अणगार समुद्घात सहित विशुद्ध लेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता

(5-6) अविशुद्ध लेशी अणगार समुद्घात असमुद्घात शामिल के दो अलावा

7 से 12 उपरोक्त अविशुद्ध लेश्या की तरह विशुद्ध लेश्या के उपरोक्त 6 अलावा ये 12 हुए।

(8) अन्य तीर्थि का यह कथन मिथ्या है कि एक जीव एक समय में सम्यक्त्व और

मिथ्यात्व की दो क्रिया करता है। एक जीव एक समय में एक ही क्रिया कर सकता है, दो नहीं कर सकता।

62. खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय की योनि (भ.श. 7 उ.5) खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय के तीन योनि है-(1) अण्डज-अण्डे से उत्पन्न होने वाले कबूतर, मोर आदि (2) पोतज-जो जन्म के समय चर्म से आवृत्त होकर कोथली सहित उत्पन्न होते है-हाथी, चमगादड़ आदि। (3) सम्मुर्च्छिम-देव और नारकी के सिवाय जो जीव माता-पिता के संयोग बिना उत्पन्न होते हैं, जैसे-कीड़ी, कुंथुआ, पतंगा आदि। अण्डज और पोतज के 3-3 भेद है-स्त्री, पुरुष, नपुंसक। सम्मुर्च्छिम जीव सब नपुंसक होते हैं। इनमें लेश्या 6, दृष्टि 3, ज्ञान 3, अज्ञान 3 (भजना), योग 3, उपयोग 2। असंख्याता वर्ष की आयु वाले युगलिया मनुष्य और तिर्यंचों को छोड़कर शेष यावत् 8वें देवलोक तक के जीव आकर खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उपजते हैं। स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातावें भाग की है। समुद्घात 5 (पहले की) समोहया असमोहया दोनों मरण मरते हैं। पहले से तीसरी नरक, भवनपति से आठवें देवलोक और मनुष्य तिर्यंच सब ठिकानों में उत्पन्न होते हैं। खेचर की 12 लाख कुल कोड़ी है।

इसी तरह जलचर, स्थलचर, उरपुर, भुजपुर का अधिकार भी कहना, स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट-

नाम	स्थिति-योनि	कुलकोड़ी	गति
जलचर	करोड़ पूर्व (तीन योनि)	साढ़े बारह लाख	सातवीं नरक
स्थलचर	3 पल्य (योनि 2)	दस लाख	चौथी नरक
खेचर	पल्योपम के असंख्यातवें भाग	12 लाख	तीसरी नरक, 8वें देव., ति., म.
उरपुर	करोड़ पूर्व योनि 3	दस लाख	पाँचवीं नरक
भुजपुर	करोड़ पूर्व योनि 3	नव लाख	दूसरी नरक
बेइन्द्रिय		सात लाख	
तेइन्द्रिय		आठ लाख	
चौइन्द्रिय		नव लाख	

(3) गंध के 7 प्रकार-और उनके 700 प्रकार है-(1) मूल-मोच वनस्पति आदि (2) त्वचा-छाल (3) काष्ठ-चंदन (4) निर्यासवृक्षका रस-कपूर आदि (5) पत्र (6) पुष्प-फूल, प्रियंगु-वृक्ष के फूल (7) फल, इलायची, लौंग आदि इन 7 को 5 वर्ण से गुणा करके 5 रस से और स्पर्श (व्यवहार दृष्टि से सुगंध में 4 स्पर्श माने हैं

कोमल, हल्का ठंडा, गर्म) से गुणा करने से 700 प्रकार हुए। (4) फूल की 16 लाख कुलकोड़ी है, जल से स्थल से उत्पन्न होने वाले महावृक्ष के, महागुल्म के इन 4 जाति के 4-4 लाख कुल कोड़ी है।

(5) 4 वल्ली के 400, आठ लता के 800, 3 हरितकाय के 300 भेद हैं।

(6) जम्बूद्वीप में सर्वोत्कृष्ट दिन में $47263\frac{20}{60}$ योजन दूर से सूर्य दिखता है, उसके दुगने प्रमाण को $94526\frac{42}{60}$ योजन को एक आन्तरा कहते हैं। आकाश आंतरा जितना एक पाउंडा (कदम) भरे और इस शीघ्र गति वाला देव चले तो इन विमानों में से किसी का पार पावे किसी का नहीं पावे लगातार छः माह तक चले तो भी, इनमें से किसी का पार पावे, किसी का नहीं पावे। स्वस्तिक आदि 11 विमानों का विस्तार 3 आकाश आन्तरा का कदम भरे तो भी आन्तरा प्रमाण $283580\frac{6}{60}$ योजन का 1 कदम भरे तो भी किसी का पार पावे किसी विमान का पार नहीं पावे एक-एक विमान का इतना-इतना विस्तार है। (7) अर्चि आदि 11 विमानों का 5 आकाश आन्तरा (472633 ½ योजन) का एक कदम भरे तो भी 6 महीने तक चलने पर भी किसी का पार पावे किसी विमान का पार नहीं पावे। (8) काम आदि 11 विमानों का 7 अन्तरा प्रमाण ($661686\frac{54}{60}$ योजन) का एक कदम भरे तो भी किसी विमान का पार पावे किसी का नहीं पावे। (9) विजय वैजयंत जयंत अपराजित इन 4 विमानों के पार के लिए 9 आकाश आन्तरा ($8,50,740\frac{18}{60}$ योजन) का एक कदम भरे तो भी 6 महीने तक चलने पर भी किसी विमान का पार पावे, किसी का नहीं पावे। इतना 4 विमानों का विस्तार है।

63. आयुष्य बंध (भ.श. 7 उ.6) (1) नारकी में उत्पन्न होने वाला जीव इस भव में आयु बांधता है, नरक में उत्पन्न होते या उत्पन्न होने के बाद नहीं बांधता। पहले भांगे में बांधता है दूसरे तीसरे में नहीं। इसी तरह 24 दंडक में कहना। (2) नरक का आयुष्य इस भव में नहीं वेदता, वहाँ उत्पन्न होते वक्त वेदता है, और उत्पन्न होने के बाद वेदता है। दूसरे-तीसरे भांगे में वेदता है, पहले में नहीं। यह 24 दंडक में कहना (3) नरक में उत्पन्न होने वाला जीव इस भव में कदाचित् महावेदना वाला, कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है, उत्पन्न होते वक्त कदाचित् महावेदना कदाचित् अल्प वेदना, उत्पन्न होने के बाद एकान्त दु:ख वेदना कदाचित् सुख वेदना वेदता है। देवता में पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महावेदना कदाचित् अल्प वेदना परन्तु देवता में उत्पन्न होने के बाद एकान्त

(सुख) साता वेदना किन्तु कदाचित् असाता वेदना भी वेदता है। 10 दण्डक औदारिक के जीव पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महावेदना कदाचित् अल्पवेदना उत्पन्न होने के बाद विमात्रा से वेदना वेदते हैं।

(4) जीव अनाभोग (अजाणपणा) से आयुष्य बांधता है, इस तरह 24 दंडक में कहना।

(5) जीव कर्कश (दु:ख से) वेदनीय कर्म बांधता है क्योंकि 18 पाप करने से बांधता है, 24 दंडक में कहना।

(6) जीव अकर्कश (सुखपूर्वक) वेदनीय कर्म 18 पापों का त्याग करने से बांधता है, 24 दंडक में कहना।

(7) जीव साता वेदनीय का बंध 10 कारणों से बांधता है 1 से 4 प्राण भूत जीव सत्व पर अनुकंपा करने से (5) इन्हें दु:ख नहीं देने से (6 से 10) उन्हें शोक, खेद, वेदना, नहीं मारने परिताप नहीं पहुँचाने से, 24 दंडक में कहना। (8) जीव असाता वेदनीय कर्म 12 कारणों से बांधता है (1 से 6) दूसरे जीवों को दु:ख देने, शोक उपजाने, खेद उपजाने, पीड़ा पहुँचाने, मारने, परिताप देने से (7 से 12) बहुत प्राण, भूत, जीव, सत्व को उपरोक्त छ: करने से जीव असाता वेदनीय कर्म बांधता है यह 24 दंडक में कहना।

(9) इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में छठा आरा मनुष्य पशु-पक्षियों के दु:ख जनित हा-हाकार से व्याप्त होगा। इस आरे के प्रारंभ में धूलि युक्त भयंकर आँधी चलेगी, फिर संवर्त्तक हवा चलेगी, दिशाएँ धूल से भर जायेंगी, प्रकाश रहित होंगी, अरस, विरस, क्षार, खात, अग्नि, बिजली मिश्रित वर्षा होगी। वनस्पतियाँ, मनुष्य, पशु-पक्षी, पर्वत, नगर, नदियाँ सभी नष्ट हो जावेंगे, केवल शाश्वत गंगा-सिंधु नदी और वैताढ्य पर्वत रहेंगे। सूर्य खूब तपेगा, चन्द्र अत्यन्त शीतल रहेगा, भूमि अंगार, भोभर, राख तथा तपे हुये तवे के समान होगी। गंगा सिंधु नदियों का पट रथ के चीले जितना चौड़ा रहेगा। रथ की धूरी प्रमाण गहरा पानी रहेगा, उसमें मच्छ-कच्छ जलचर जीव बहुत होंगे। दोनों महा नदियों के पूर्व और पश्चिम में 72 बिल है, वैताढ्य पर्वत से दक्षिण भारत में, 9 बिल पूर्व में, 9 बिल पश्चिम में, इसी तरह 18 बिल उत्तर भरत में गंगा तट पर इसी तरह सिंधु तट पर भी 36 बिल है ये सभी वैताढ्य पर्वत के पास हैं इन 72 में से 63 में मनुष्य-मनुष्यणी और 6 बिलों में चौपद

पशु रहेंगे और 3 बिल में पक्षी रहेंगे। मनुष्य कच्छ मच्छ का आहार करेंगे, पशु-पक्षी उनके मृत कलेवर (कच्छादि के) चाटेंगे। मनुष्यों के शरीर में घड़े के पींदा जैसा सिर, जौ के शालू जैसे बाल, कड़ाई के पेंदे जैसा ललाट, चिड़ी की आँखों जैसे भांपण, बकरे के नाक जैसी नाक, ऊँट की नौल जैसे होंठ, सीप शंखोलिया जैसे नख, उदई जैसा शरीर नाक कान सब द्वार बहते रहेंगे, माता-पिता की लज्जा से रहित होंगे। उनकी अवगाहना शुरू में एक हाथ, उतरते आरे मुण्ड हाथ (हाथ से कुछ कम) प्रमाण होगी। आयु लगते आरे 20 वर्ष, उतरते आरे 16 वर्ष होगी। वे अधिक संतान वाले, वर्ण गंध रस स्पर्श संस्थान से अत्यन्त हीन अशुभ होंगे। बहुत रोगी, क्रोधी, मानी, मायी, लोभी होंगे। सुबह शाम बिलों से बाहर आयेंगे और गंगा सिंधु नदियों में से कच्छ मच्छ बाहर निकालकर जमीन (रेती) में गाड़ देंगे, सुबह गाड़े को शाम को, शाम को गाड़े को सुबह निकालकर खायेंगे। उस समय बादर अग्नि नहीं होगी। व्रत, नियम, पच्चक्खाण से रहित मांसाहारी, संक्लिष्ट परिणामी वे जीव मरकर नरक, तिर्यंच गति में जावेंगे, पशु पक्षी भी नरक तिर्यंच में जावेंगे। इक्कीस हजार वर्ष का छठा आरा होगा।

64. कामभोगादि (भ.श. 7 उ. 7) (1) अकषायी संवुडा (संवरयुक्त) सूत्र प्रमाणे उपयोग सहित गमनागमन करे, चले तो उसे ईर्यावहिया क्रिया लगती है और कषाय सहित उत्सूत्र चले तो अणगार को साम्परायिक क्रिया लगती है। (2) (3) काम दो प्रकार का-शब्द और रूप। भोग-तीन प्रकार का-गंध, रस, स्पर्श। काम और भोग रूपी है, अरूपी नहीं। काम-भोग सचित भी है, अचित भी है। काम-भोग जीव भी है, अजीव भी है। काम और भोग जीवों के होते है, अजीवों के नहीं। (4) कान और आँख के विषय-शब्द और रूप, श्रोत्रेन्द्रिय चक्षु इन्द्रिय कामी है। नाक, जिह्वा और शरीर के विषय-गंध, रस और स्पर्श को भोग कहा है। घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय ये तीन इन्द्रियाँ भोगी हैं। काम से केवल इच्छा-मन की तृप्ति होती है, भोग से प्राप्त पुद्गलों से शरीर की भी तुष्टि-पुष्टि होती है। काम भोग की वृत्ति प्रवृत्ति जीवों को ही होती है। किन्तु काम भोग के पदार्थ अर्थात् इन्द्रिय विषय रूप पदार्थ सजीव-अजीव दोनों प्रकार के हो सकते हैं। नारकी के नैरयिक-कामी भी है, भोगी भी है। इसी तरह भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य इन 15 दंडकों में कहना। चौइन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय आसरी कामी है, एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय भोगी हैं। चौइन्द्रिय पंचेन्द्रिय कामी भोगी दोनों हो सकते

हैं। सबसे थोड़े कामी भोगी, उससे नो कामी नो भोगी अनंतगुणा उनसे भोगी अनंतगुणा होते हैं। स्वेच्छा से एवं उपलब्ध भोगों का त्याग करने से महानिर्जरा होती है, कर्मों का क्षय कर देव गति या मोक्ष जाते हैं।

65. अणगार क्रिया (भ.श. 7 उ. 7) (1) किसी भी देवलोक में उत्पन्न होने वाला क्षीण भोगी दुर्बल शरीर वाला मनुष्य (छद्स्थ) उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम द्वारा विपुल भोग (शब्दादि मनोज्ञ) भोगने में समर्थ नहीं होता यह णो इणट्ठेसमट्ठे (यह अर्थ ठीक नहीं है) यहाँ आशय यह है कि जो भोग भोगने में समर्थ नहीं वह अभोगी है, किन्तु अभोगी होने से त्यागी नहीं हो सकता, त्याग करने से त्यागी होता है। त्याग से ही निर्जरा होती है। वह उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम से भोग भोगने में समर्थ है, इसलिए वह भोगी पुरुष भोगों का त्याग पच्चक्खाण करने से महानिर्जरा, महापर्यवसान (महाफल) वाला होता है। (2) छद्मस्थ की तरह अधो अवधिज्ञानी (नियत क्षेत्र का) का भी कहना (3) उसी भव में सिद्ध होने वाले क्षीण भोगी (दुर्बल शरीर) परम अवधिज्ञानी मनुष्य उत्थानादि से भोग भोगने में समर्थ है, भोगों का त्याग प्रत्याख्यान करने से महानिर्जरा महा पर्यवसन वाला होता है।

(4) इसी तरह केवलज्ञानी का कहना। (5) असंज्ञी त्रस और स्थावर अज्ञानी अज्ञान अंधकार में डूबे हुए अज्ञानरूपी मोह जाल में फँसे अकाम निकरण (अनिच्छा से) वेदना वेदते हैं। (6) संज्ञी जीव भी अकाम निकरण वेदना वेदते हैं कारण कि जैसे-अंधकार में दीपक बिना आँखों से नहीं देखा जाता, छहों दिशाओं में दृष्टि फैलाकर देखे बिना रूप नहीं देखा जाता इस कारण से अकाम निकरण वेदते हैं। (7) संज्ञी जीव प्रकाम (तीव्र इच्छापूर्वक) वेदते हैं, वे समुद्र पार नहीं जा सकते, वहाँ के रूपों को नहीं देख सकते, देवलोक के रूपों को नहीं देख सकते इसलिए प्रकाम (तीव्र इच्छापूर्वक) वेदना वेदते हैं। जो जीव असंज्ञी है मन नहीं होने से इच्छा शक्ति और ज्ञान शक्ति के अभाव में अनिच्छापूर्वक वेदना वेदते हैं। जो संज्ञी इच्छा शक्ति युक्त है, वे भी अज्ञानपूर्वक अनिच्छापूर्वक वेदना वेदते हैं, ज्ञान शक्ति के होते हुए भी शक्ति की प्रवृत्ति के अभाव में तीव्र अभिलाषा के कारण अनिच्छापूर्वक वेदते हैं। जो संज्ञी समर्थ और इच्छा शक्ति होते हुए भी प्राप्त करने की शक्ति के अभाव में सिर्फ तीव्र अभिलाषा से सुख-दुःख वेदते हैं।

66. छद्मस्थ अवधिज्ञानी (भ.श. 7 उ. 8) (1) छद्मस्थ मनुष्य सिर्फ तप संयम संवर ब्रह्मचर्य और आठ प्रवचन माता से सिद्धबुद्ध नहीं हुआ, गत अनन्तकाल में जो सिद्धबुद्ध मुक्त हुए है वे सब केवलज्ञान केवलदर्शन के धारक अरिहंत जिनकेवली होकर सिद्धबुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे। छद्मस्थ की तरह, अधो अवधिज्ञानी, परम अवधिज्ञानी का भी कहना। (2) गत अनन्तकाल में केवली मनुष्य सिद्धबुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे। (3) गत काल, वर्तमान काल और भविष्य काल में सिद्धबुद्ध मुक्त सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक, अरिहंत जिन केवली हुए हैं, होते हैं, होवेंगे। (4) उन्हें अलमस्तु (पूर्ण) कहना चाहिए। (5) हाथी और कुंथुआ का जीव समान है, सिर्फ शरीर का फर्क है। सभी आत्माओं के आत्मप्रदेश असंख्य होते हैं दीपक के प्रकाश को कमरे, कोठी, छोटी डिब्बी में रखने पर उसमें समा जाता है ऐसे आत्मप्रदेशों का संकोच विस्तार हो जाता है। अप्रत्याख्यान क्रिया हाथी और कीड़ी-कुंथुए को एक समान ही लगती है अविरति-की अपेक्षा दोनों ही समान है। (6) नारकी के नैरयिक यावत् वैमानिक देव 24 ही दंडक पापकर्म किये, करते या करेंगे वे दुःख रूप है, और जो निर्जरा करते हैं, वे सुखरूप है। (7) संज्ञा 10 प्रकार की है-(1) आहार संज्ञा (2) भय (3) मैथुन (4) परिग्रह (5) क्रोध (6) मान (7) माया (8) लोभ (9) ओघ संज्ञा (मति ज्ञानावरणादि के क्षयोपशम से शब्द और अर्थ के सामान्य ज्ञान को ओघ संज्ञा) (10) लोक संज्ञा (सामान्य रूप से जानी बात को विशेष रूप से जानना लोक संज्ञा) यानि दर्शनोपयोग ओघ और ज्ञानोपयोग लोक संज्ञा है। कोई ज्ञानोपयोग को ओघ और दर्शनोपयोग को लोक, कोई सामान्य प्रवृत्ति को ओघ और लोकदृष्टि को लोक संज्ञा कहते हैं। 24 दंडक में 10 संज्ञा पाई जाती है।

(8) नारकी के नैरयिक 10 प्रकार की क्षेत्र वेदना वेदते हैं-शीत, उष्ण, भूख, प्यास, खाज-खुजली, परतंत्रता, ज्वर, दाह, भय, शोक। (9) हाथी और कुंथुआ के अपच्चक्खाण क्रिया समान होती है। (10) आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रंथ आयुष्य कर्म को छोड़कर सात कर्म प्रकृतियों को शिथिल से मजबूत करता है, यावत् बारम्बार संसार परिभ्रमण करता है। वह अपने धर्म का उल्लंघन करता है। पृथ्वीकाय से लेकर त्रसकाय के जीवों की घात की परवाह नहीं करता। जिन जीवों के शरीर का भक्षण करता है, उन पर अनुकम्पा नहीं करता।

(11) प्रासुक एषणीय आहारादि का सेवन करने वाला आयुष्य कर्म छोड़ शेष कर्मों के बंधन शिथिल करता है, संबुडा अणगार के समान कहना (पहले वर्णन आया है) इतनी विशेषता कि कदाचित् आयुष्य बांधता है, नहीं भी बांधता संसार सागर लांघ जाता है। क्योंकि वह अपने धर्म का उल्लंघन नहीं करता, छः काय के जीवों की रक्षा करता है। उन पर अनुकम्पा करता है, संसार सागर तिर जाता है। (12) अस्थिर पदार्थ बदल जाता है, टूट जाता है, स्थिर नहीं बदलता नहीं टूटता। (13) बालक शाश्वत् है, बालकपना अशाश्वत् है, पंडित शाश्वत् है, पंडितपना अशाश्वत् है।

67. असंबुडा अणगार (भ.श. 7 उ.9) (1) वैक्रिय लब्धिवन्त असंबुडा अणगार (प्रमादी साधु) बाहर के पुद्गलों को ग्रहण कर वैक्रिय करता है (1) एक वर्ण एक रूप (2) एक वर्ण अनेक रूप (3) अनेक वर्ण एक रूप (4) अनेक वर्ण अनेक रूप वैक्रिय कर सकता है। (2) वह बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना काले को नीला, नीला का काला नहीं परिणमा सकता, इसी तरह वर्ण के 10, गंध का 1, रस का 10, स्पर्श के 4, ये 25 भांगा और पूर्व के 4 ये 29 भांगा हुए।

(3) कोणिक राजा और चेड़ा राजा में हार और हाथी के लिए युद्ध हुआ, दस दिन में कोणिक के 10 भाई चेड़ा राजा के हाथों मारे गये। ग्यारहवें दिन कोणिक की बारी थी उसने तीन दिन युद्ध स्थगित रखा, तेला करके शक्रेन्द्र और चमरेन्द्र (दोनों पूर्व भव के मित्र थे) का आह्वान किया, दोनों युद्ध में शामिल हुए, पहले दिन शक्रेन्द्र की मदद से महाशिला कंटक संग्राम हुआ जिसमें कोणिक का सैनिक तृण, पत्थर, कंकर कुछ भी फेंके चेड़ा के सैनिकों पर शिला पड़े ऐसा होवे। एक दिन के युद्ध में 84 लाख सैनिक संहार हुआ। प्रथम दिन चमरेन्द्र सिर्फ दर्शक बना। वे सब नरक तिर्यंच में गये। दूसरे दिन चमरेन्द्र की मदद से रथमूसल संग्राम हुआ, इसमें यांत्रिक रथ (बिना सैनिक के) चलता था, इसमें आगे मूसल लगा था वह घूमता था, जिधर रथ जाता मूसल के द्वारा जनसंहार होता था, देवनामी रथ स्वयं चलता था बड़ी तेजी से दिन भर चलते रहने से उस दिन 96 लाख का जनसंहार हुआ, उनमें से एक वरूण नाग नत्तुआ का जीव सौधर्म देवलोक में गया और एक उसका मित्र बालमित्र का जीव उत्तम मनुष्य कुल में उत्पन्न हुआ, बाकी सब जीव नरक तिर्यंच में गये उनमें से दस हजार जीव एक मछली के पेट में गये। वरूण नाग नत्तुआ और उसका बाल मित्र महाविदेह में जन्म लेकर मोक्ष जावेंगे। दोनों दिन चेड़ा राजा की हार हुई।

चेड़ा राजा ने युद्ध बंद कर दिया, नगररोध कर दिया, चमरेन्द्र शक्रेन्द्र दोनों चले गये, कुल 1 करोड़ 80 लाख (1 लाख 80 हजार) का घमासान हो गया। शक्रेन्द्र ने वज्रमय अमोघ कवच की विकुर्वणा की और कोणिक के आगे रहकर उसकी सुरक्षा की, इस प्रकार दोनों ही दिन शक्रेन्द्र की सुरक्षा के कारण कोणिक पर चेड़ा का अचूक बाण (अमोघ बाण) नहीं लग सका। बाण लगाने का अवसर नहीं मिला। चमरेन्द्र और शक्रेन्द्र सम्यक्त्वी देव थे, फिर भी संसार का पूर्वभव का मित्र था, और भगवान की सेवा में कभी वचनबद्ध हो चुके थे, अतः वचनबद्धता के कारण सम्मत होना पड़ा, राजनीति के भ्रष्टता के आगे धर्म नीति नष्ट हो जाती है। यों तो चेड़ा, कोणिक सभी महावीर के भक्त थे, परन्तु कषायों की तीव्रता में धर्मगुरु या तीर्थंकर कुछ भी नहीं दिखते हैं, वहाँ बिना इच्छा भी कर्तव्य निभाना पड़ता है। द्रौपदी का हरण भी मित्र देवता ने बिना इच्छा के वचनबद्धता के कारण किया था। महाभारत में भी भीष्म पितामह द्रोणाचार्य ने अर्जुन के प्रतिपक्ष में सत्य जानते हुए भी युद्ध किया था। होनहार बलवान् होता है। युद्ध में वीरगति शाब्दिक कथन रहा है, बाकी तीव्र क्रोध, हिंसा, रौद्र भावों में मरने पर दुर्गति ही होती है। नागनत्तुआ ने सागारी संथारा लिया था, उसके मित्र ने नकल की थी इसलिए सुगति हुई। बाकी लड़ाई में लड्डू नहीं बंटते। नागनत्तुआ श्रावक था, बेले-बेले पारणा करता था, जिस दिन युद्ध में आया उसने तेला किया था, उसकी छाती में बाण लगा, उसने मृत्यु समय नजदीक जानकर रथ मोड़ा, एकान्त में जाकर, आजीवन संथारा कर बाण निकाला, बाण निकलते ही घोर वेदना के साथ आयुष्य समाप्त हो गया। वह देवलोक में उत्पन्न हुआ इस पंडित मरण पर देवों ने पुष्पवृष्टि की दिव्य गीत ध्वनि की, यह देख लोगों ने समझा युद्ध में वीरगति सुगति होती है। देवलोक में चार पल्योपम का आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह से मुक्त होगा। इसी प्रकार उसके बाल मित्र का भी वर्णन है, वह धर्म समझता नहीं था, फिर भी संक्षिप्त में प्रत्याख्यान किया जो मेरे मित्र ने किया वैसा मैं भी धारण करता हूँ उसे भी बाण लगा था, वह भी आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य बना, वहाँ से महाविदेह से जन्म लेकर मोक्ष जावेगा।

68. अन्यतीर्थी (भ.श. 7 उ.10) राजगृही के बाहर बहुत अन्यतीर्थी रहते थे, कालोदायी, शैलोदायी, शैवालोदायी, उदय, नामोदय, नर्मोदय, अन्यपालक, शैलपालक, शंखपालक, सुहस्ती, गृहपति आदि। उनमें से कालोदायी ने सुना कि भगवान महावीर पंचास्तिकाय बताते हैं। उनमें से रूपी एक, अरूपी चार एवं एक

जीव, चार अजीव है, इत्यादि, तो कैसे माना जा सकता है। संयोग से भगवान महावीर राजगृह के गुणशील उद्यान में पधारे, गौतम स्वामी बेले के पारणे का आहार लेकर आ रहे थे, सन्यासियों ने रोका और शंका रख दी, गौतम स्वामी ने विषय लंबा नहीं करके कहा कि हम अस्तिभाव को अस्तिभाव और नास्तिभाव को नास्तिभाव कहते हैं। विपरीत कथन नहीं करते हैं, आप लोग स्वयं इसका ज्ञान से विचार करें। कालोदायी की जिज्ञासा बढ़ गई वह भगवान के समवसरण में पहुँचा, जिज्ञासा प्रकट की, भगवान ने फरमाया- हे कालोदायी! पाँच अस्तिकाय है- धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, इनमें से जीवास्तिकाय जीव, बाकी 4 अजीव हैं। इनमें से पुद्गलास्तिकाय रूपी है, बाकी चार अरूपी हैं। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय ये अजीव अरूपी है, इन पर खड़ा रहने, सोने, बैठने में कोई समर्थ नहीं है। पुद्गलास्तिकाय अजीव रूपी है, इस पर कोई भी खड़ा रह सकता है, बैठ सकता है, सो सकता है। कालोदायी ने पुनः प्रश्न किया-

(1) अजीवकाय को पापकर्म लगता है? हे कालोदायी-अजीवकाय को पापकर्म नहीं लगता है, किन्तु जीवास्तिकाय को पापकर्म लगता है। भगवान् से प्रश्नोत्तर से कालोदायी को बोध हुआ और खंदकजी की तरह भद्रपरिणामी ने सरलता के साथ उपदेश सुना संयम स्वीकार किया, 11 अंगों का अध्ययन किया, संयम पालन करते कालोदायी ने और भी कई प्रश्न किये उनके समाधान इस प्रकार है-

जीवों को पापकर्म अशुभ फल विपाक सहित होते हैं, जैसे- विष मिश्रित भोजन करते समय तो मीठा लगता है, परन्तु पीछे परिणमते समय दुःख रूप दुर्वर्णादि रूप होता है। इसी तरह 18 पाप करते जीव को अच्छा लगता है, परन्तु फल भोगते समय जीव दुःखी होता है। जीवों के शुभ कर्म शुभ फल वाले होते हैं, जैसे कड़वी औषध मिश्रित भोजन खाते समय तो अच्छा नहीं लगता किन्तु परिणमते समय शरीर में सुखदायी होता है। इसी तरह 18 पाप त्यागते समय अच्छा नहीं लगता परन्तु शुभ कल्याणकारी पुण्य फल उदय में आता है, तब वह जीव सुख पाता है। शुभगति या मोक्षगति प्रदान करने वाला होता है।

एक व्यक्ति अग्नि जलाता है वह महाकर्मी, महाक्रिया, महाआश्रवी महावेदना वाला होता है, क्योंकि अग्नि जलाने में पृथ्वीकायादि त्रसकाय पर्यंत का अधिक आरंभ होता है। एक व्यक्ति अग्नि बुझाता है वह अल्पकर्मी यावत् अल्पवेदना वाला होता

है। अग्नि बुझाने में अन्य कार्यों का आरंभ अल्प या नहीं भी होता है। एक तेउकाय का महा आरंभी है। इसलिए अल्पकर्मी यावत् अल्पवेदना वाला है। अचित पुद्गल अवभास करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं। कोपायमान तेजो लेशी लब्धिवंत अणगार की तेजो लेश्या जहाँ जाकर गिरती है वहाँ वे अचित पुद्गल अवभास यावत् प्रकाश करते हैं। कालास्यवेशी अणगार के समान कालोदायी अणगार भी उपवास बेला तेला आदि तपस्या करते हुए केवलज्ञान केवलदर्शन उपार्जन कर सिद्धबुद्ध यावत् मुक्त हुए।

69. 9 दंडक (भ.श. 8 उ.1) 9 द्वार (1) नाम द्वार (2) भेद द्वार (3) शरीर द्वार (4) इन्द्रिय द्वार (5) शरीर की इन्द्रिय द्वार (6) वर्णादिक द्वार (7) शरीर का वर्णादिक द्वार (8) इन्द्रियों का वर्णादिक द्वार (9) शरीर की इन्द्रियों का वर्णादिक द्वार।

पुद्गल तीन प्रकार के परिणमन की अपेक्षा से (1) **पओगसा** (प्रयोग परिणत) मन वचन कायादि 15 प्रयोगों (योगों) से जीव द्वारा ग्रहण किये हुए पुद्गल, जैसे- जीव सहित शरीर आदि।

(2) मिस्सा-मिश्रसा (मिश्र परिणत)-प्रयोग (योग) और स्वभाव दोनों के संबंध से परिणमें हुए पुद्गल, जैसे-जीव का मृत कलेवर, कपड़ा, लक्कड़ आदि। (3) विस्रसा (विश्रसा) परिणत-जीव के प्रयोग बिना, स्वभाव से पुद्गल परिणमन, वर्णादि परिणमन, सड़न, गलन, विध्वंसन, स्कंधों का बनना, बिखरना, धूप, छांव, बादल वगैरह ये सभी जीव के प्रयोग बिना परिणत होते हैं। ये सभी विश्रसा परिणत पुद्गल हुए।

जीव से ग्रहीत परिणामित होने से जीव के भेद के अनुसार प्रयोग परिणत के भेद होंगे।

(1) प्रथम द्वार नाम द्वार में जीव के 81 भेद की विवक्षा की है, अतः प्रयोग परिणत के 81 भेद होते हैं। (1) स्थावर (पाँच एकेन्द्रिय) के सूक्ष्म बादर 10 भेद, तीन विकलेन्द्रिय, 7 नारकी, 5 संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, 5 असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, 1 गर्भज मनुष्य, 1 सम्मुर्च्छिम मनुष्य, देवता के 49 (10+8+5+12+9+5) ये कुल 81 हुए। (2) भेद द्वार में जीव के 161 भेद-पूर्व के 81 में से समुर्च्छिम मनुष्य निकालकर 80 के पर्याप्ता अपर्याप्ता 160+समुर्च्छिम मनुष्य=161 भेद। (3) शरीर

द्वार में 161 जीव के भेदों के 491 शरीर। ऊपर 161 भेदों में सभी के कम से कम तीन शरीर से 161x3=483 एवं वायुकाय में एक बढ़ा (4 शरीर) पाँच सन्नी तिर्यंच में 4 शरीर में पाँच बढ़े, सन्नी मनुष्य में 5 शरीर (2 बढ़े) यों 483+1+5+2=491 शरीर हुए। अन्य तरीके से गिने तो 161 में से 154 के तीन शरीर x 3=462+वायुकाय 4+गर्भज तिर्यंच के 4x5=20 एवं गर्भज मनुष्य के 5=491 शरीर हुए।

(4) 161 जीवों के इन्द्रियों की प्रयोग परिणत अपेक्षा से 713 भेद। 161 में से (एकेन्द्रिय 20 विकलेन्द्रिय की 6=26 कम) 135 के प्रत्येक 5=675+एकेन्द्रिय की 20+विकलेन्द्रिय के 18=713 हुए।

(5) पाँचवे द्वार में 491 शरीर की इन्द्रियाँ अलग-अलग गिनने से, शरीर की इन्द्रियों के प्रयोग परिणत पुद्‌गल 2175 इन्द्रियाँ। 20 एकेन्द्रिय के 61 इन्द्रियाँ (10 एकेन्द्रिय x 2 पर्याप्ता अपर्याप्ता= 20 x 3 शरीर = 60+1 वायुकाय पर्याप्ता) तीन विकलेन्द्रिय के 54 (बेइन्द्रिय 2x3x2=12, तेइन्द्रिय के 2x3x3=18, चौइन्द्रिय 2x3x4=24) = 61+54=115 इन्द्रियाँ 79 शरीर की हुई। पंचेन्द्रिय के 491-79=412 शरीर की 412x5=2060+115=2175 इन्द्रियाँ हुईं।

(6) वर्णादिक द्वार में 161 जीवों के भेदों के 25 (5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श, 5 संस्थान) से 4025 वर्णादि हुए।

(7) शरीर के वर्णादिक 491 शरीर के 25 बोल की अपेक्षा 12275 भेद होते हैं। कार्मण शरीर में 4 स्पर्श कम होने से (चौस्पर्शी है) 161x4=644 कम करने से 11631 वर्णादि हुए। प्रयोग परिणत पुद्‌गल होते हैं। (8) इन्द्रियों के वर्णादि 25 बोल की अपेक्षा 713 इन्द्रियों के 713x25=17825 इन्द्रिय के वर्णादि हुए। (9) नवमें बोले शरीर की इन्द्रियों में वर्णादि 25 बोल की अपेक्षा। शरीर की इन्द्रिया 2175x25=54375 इनमें से 161 कार्मण शरीर चौस्पर्शी है। इनकी 713 इन्द्रियाँ को 4 से गुणा करने पर 713x4=2852 कम करने से 54375-2852=51523 शरीर की इन्द्रियों के वर्णादि हुए। सब मिलाकर 88625 प्रयोगसा, 88625 मिश्रसा, 530 विससा परिणम्मा पुद्‌गल हुए कुल मिलाकर 177780 भेद हुए। इस प्रकार 9 द्वारों से 9 अपेक्षा से प्रयोग परिणत पुद्‌गल के भेद कहे, संक्षिप्त में प्रथम द्वार के अनुसार 81 जीवों की अपेक्षा 81 प्रकार के प्रयोग परिणत पुद्‌गल होते हैं। मिश्र परिणत पुद्‌गल में जीव का प्रयोग अवशेष होता है, अतः प्रयोग परिणत के भेद-प्रभेद जैसे

ही मिश्र परिणत के भेद होते हैं। विश्रसा परिणत में रूपी अजीव के 530 भेद की अपेक्षा भेद 530 प्रकार कहे है। जिसमें 5 वर्ण के 100, दो गंध के 46, पाँच रस के 100 आठ स्पर्श के 23x8=184 भेद जोड़ने से 530 भेद हुए। सबसे थोड़े प्रयोगसा परिणम्या पुद्‌गल, उससे मिश्रसा परिणम्या पुद्‌गल अनन्तगुणा, उससे विससा परिणम्या पुद्‌गल अनंतागुणा।

जीवग्रह्याते पओगसा, मिस्सा जीवा रहित। विससा हाथ आवे नहीं जिनवर वाणी तहत्त॥

70. भांगों का थोकड़ा (भ.श. 8 उ. 1) परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कंध तक प्रयोगसा, मिश्रसा, और विश्रसा पुद्‌गलपणे परिणमते हैं। उनके संख्याते, असंख्याते, अनन्त भांगे होते हैं। परमाणु में असंयोगी, द्विप्रदेशी में असंयोगी, द्विसंयोगी दो भांगे, इसी तरह तीन प्रदेशी चार प्रदेशी आदि जितने-जितने प्रदेश, जितने-जितने घर होवे, उतने-उतने संजोग तक भांगे बनाना (गांगेय अणगार की तरह आगे शतक 8 उ. 32 में देखें) इसके मूल घर 3 है, प्रयोग सा, मिश्रसा, विश्रसा। प्रयोग सा तीन भेद-मन वचन काया, मिश्रसा इसी तरह, विश्रसा के वर्णादि 5 भेद नीचे चार्ट में देखें।

पुद्‌गल	मन	वचन	काया	वर्ण	गंध	रस	स्पर्श	संस्थान	कुल
प्रयोगसा	24	24	426	-	-	-	-	-	474
मिश्रसा	24	24	426	-	-	-	-	-	474
विश्रसा	-	-	-	100	46	100	184	100	530

मन के-4 भेद सत्यमन, असत्यमन, मिश्रमन, व्यवहारमन इनके आरंभ, अनारंभ, सारंभ, असारंभ, समारंभ, असमारंभ इन छ भेदों से 6x4=24 भेद हुए।

वचन-के इसी तरह सत्य, असत्य, मिश्र व्यवहार वचन इनके छ भेदों से 6x4=24 भेद हुए।

काया-7 भेद **औदारिक के 49** (तिर्यंच 46, मनुष्य के 3), औदारिक मिश्र के 32 (तिर्यंच अपर्याप्ता 23, वायुकाय पर्याप्ता 1, सन्नी तिर्यंच पर्याप्ता 5, मनुष्य के 3 पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सम्मुर्च्छिम मनुष्य ये 32 हुए)।

वैक्रिय 119 भेद (7 नारकी, 10 भवनपति, 8 वाणव्यंतर, 5 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 9 नव ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान इन 56 के पर्याप्ता अपर्याप्ता=112 तथा सन्नी तिर्यंच

5, वायुकाय 1 का पर्याप्ता, मनुष्य का पर्याप्ता 1 ये 119), **वैक्रिय मिश्र के 63** (7 नारकी के अपर्याप्ता, 49 देव के अपर्याप्ता, यहाँ नारकी देवों के पर्याप्ता नहीं लिये क्योंकि कार्मण और औदारिक के साथ होने से मिश्र बनता है, वैक्रिय से वैक्रिय मिश्र नहीं बनता, 5 सन्नी तिर्यंच के पर्याप्ता, 1 वायुकाय पर्याप्ता, 1 मनुष्य पर्याप्ता ये 63 हुए)। **आहारक 1 आहारक मिश्र 1**, कार्मण के 161 भेद (7 नारकी, 49 देवता, एकेन्द्रिय 10 (5 सूक्ष्म 5 बादर), 3 विकेलिन्द्रिय, 10 तिर्यंच (5 सन्नी, 5 असन्नी) 1 सन्नी मनुष्य इन 80 के पर्याप्ता अपर्याप्ता 160+1 सम्मुर्च्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता ये 161)। (नवदंडक थोकड़े के दूसरे द्वार के अनुसार)

विश्रसा में 530–वर्ण के 5, गंध के 2, रस के 5, स्पर्श के 8, संस्थान के 5, ये कुल 25 उत्तर भेद, इन पाँचों को अरस परस गुणा करने से जैसे 5 वर्णxशेष 20=100, गंध के 2x23=46, इस प्रकार के 100 रस के 5+2+5+6+5=23 स्पर्श 46x4=184 संस्थान के 100=530 अजीव रूपी के हुए।

71. भांगों का थोकड़ा (भ.श. 7 उ.1) एक से लेकर अनन्ता जीव या एक से लेकर अनन्ता द्रव्य के विकल्प–

द्रव्य	विकल्प	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	6 संयोगी	7 संयोगी	8 संयोगी	9 संयोगी	10 संयोगी
1 द्रव्य	1	1									
2 द्रव्य	2	1	1								
3 द्रव्य	4	1	2	1							
4 द्रव्य	8	1	3	3	1						
5 द्रव्य	16	1	4	6	4	1					
6 द्रव्य	32	1	5	10	10	5	1				
7 द्रव्य	64	1	6	15	20	15	6	1			
8 द्रव्य	128	1	7	21	35	35	21	7	1		
9 द्रव्य	256	1	8	28	56	70	56	28	8	1	
10 द्रव्य	512	1	9	36	84	126	126	84	36	9	1
सं. द्रव्य	10–10 बढ़ाना	1	11	21	31	41	51	61	71	81	91
असं. द्रव्य	11–11 बढ़ाना	1	12	23	34	45	56	67	78	89	100
अनंता द्रव्य	12–12 बढ़ाना	1	13	25	37	49	61	73	85	97	109

विशेष–द्रव्य के विकल्प निकालने हो तो ठाम दुगुना करना। द्रव्य के कहे जीव के भी कहना हो तो द्रव्य के स्थान पर जीव लगाये। संख्याता में 10–10, असंख्याता में 11–11, अनन्ता में 12–12 विकल्प बढ़ाते रहना। अब आगे विकल्प को पद से

गुणा करने से भांगे निकल जाते हैं। जितने संजोगी हो उतने को उतने से गुणा करना। (संजोगी से) **पद निकालने की विधि**–दुगुना करके 1 बढ़ाते रहना, जैसे–1 ठिकाने का 1 पद, दो का 1x2=2+1=3, तीन का 3x2=6+1=7, चार का 7x2=14+1= 15, देखें (चार्ट में)

ठिकाना	पद	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	6 संयोगी	7 संयोगी
1 ठिकाना	1	1						
2 ठिकाना	3	1	2					
3 ठिकाना	7	3	3	1				
4 ठिकाना	15	4	6	4	1			
5 ठिकाना	31	5	10	10	5	1		
6 ठिकाना	63	6	15	20	15	6	1	
7 ठिकाना	127	7	21	35	35	21	7	1

नोट–ठिकानों का पद निकालने की विधि–7 ठिकानों का पद निकालना हो असंयोगी 7, दो संयोगी 7 को 6 से गुणा 42 हुए, दो का भाग दो 21 पद हुए। 21 को 5 से गुणा को 105 इसमें 3 का भाग देने से तीन संयोगी 35 हुए। अब 35 को 4 से गुणा करो 140 हुए इसमें 4 का भाग दो 35 चार संजोगी हुए। 35 को 3 से गुणा करो 105 हुए इसमें 5 का भाग दो 21 हुए पाँच संयोगी। 21 को 2 से गुणा 42 में 6 का भाग दो 7 हुए 6 संयोगी। 7 में 7 का भाग दो (एक से गुणा करके) 1 हुआ (7x1=7÷7=1) 7 संयोगी 1 पद हुआ।

दूसरी विधि से–तीन ठिकाने 1 प्रयोगसा, 2 मिश्रसा, 3 विश्रसा। तीन ठिकानों के दो द्रव्य के भांगे निकालने हो तो एक द्रव्य के तीन भांगे, उसमें 1 बढ़ाना 4 हुए चार को x 3=12 (क्योंकि एक द्रव्य में 3 है इसलिए गुणा किया। 12 में 2 का भाग दो (दो द्रव्य का भांगा निकालना है इसलिए)=6 भांगे। तीन द्रव्य के निकालने हो तो 4+1=5 पाँच को 6 से (2 द्रव्यों के 6 भांगे) गुणा करने पर 30÷3 (3 द्रव्य का निकालना है) 10 हुए। 4 द्रव्य का निकालना हो तो 5 में + 1 = 6 इनको तीन द्रव्य के 10 भांगों से गुणा करो 60 हुए इनमें 4 का (4 द्रव्य का निकालना) भाग दो 15 भांगे। इसी तरह 1–1 गुणा करके उस अंक में बढ़ाते जाना और एक–एक भाग देवे उस अंक में बढ़ाते जाना, इस तरह चाहे जितने द्रव्य तक भांगे निकाले जा सकते हैं।

3 ठिकाने द्रव्य जावे	भांगे	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	(तीन ठिकाने प्रयोगसा मिश्रसा विश्रसा) पद 7 असंयोगी 3, दो संयोगी 3, तीन संयोगी 1,
1 द्रव्य जाने के	3	3			
2 द्रव्य जाने के	6	3	3		
3 द्रव्य जाने के	10	3	6	1	
4 द्रव्य जाने के	15	3	9	3	
5 द्रव्य जाने के	21	3	12	6	
6 द्रव्य जाने के	28	3	15	10	
7 द्रव्य जाने के	36	3	18	15	
8 द्रव्य जाने के	45	3	21	21	
9 द्रव्य जाने के	55	3	24	28	
10 द्रव्य जाने के	66	3	27	36	
संख्याता द्रव्य जाने के	57	3	33	21	
असंख्याता द्रव्य जाने के	62	3	36	23	
अनन्ता द्रव्य जाने के	67	3	39	25	

चार ठिकाने-सत्यमन, असत्यमन, मिश्रमन, व्यवहारमन। 4 ठिकाने के 15 पद असंयोगी 4, दो संयोगी 6, तीन संयोगी 4, चार संयोगी 1-

4 ठिकाने द्रव्य जावे	भांगे	असंयोगी	दो संयोगी	तीन संयोगी	चार संयोगी
4 ठि. 1 द्रव्य जावे	4	4			
4 ठि. 2 द्रव्य जावे	10	4	6		
4 ठि. 3 द्रव्य जावे	20	4	12	4	
4 ठि. 4 द्रव्य जावे	35	4	18	12	1
4 ठि. 5 द्रव्य जावे	56	4	24	24	4
4 ठि. 6 द्रव्य जावे	84	4	30	40	10
4 ठि. 7 द्रव्य जावे	120	4	36	60	20
4 ठि. 8 द्रव्य जावे	165	4	42	84	35
4 ठि. 9 द्रव्य जावे	220	4	48	112	56
4 ठि. 10 द्रव्य जावे	286	4	54	144	84
4 ठि. संख्याता द्रव्य जावे	185	4	66	84	31
4 ठि. असंख्याता द्रव्य जावे	202	4	72	92	34
4 ठि. अनन्ता द्रव्य जावे	219	4	78	100	37

5 ठिकानों के पद 31-पाँच ठिकाणे जावे एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय। 5 ठिकानों के पद 31-असंयोगी 5, द्विसंयोगी 10, तीन संयोगी 10, चार संयोगी 5, पाँच संयोगी 1-

पाँच ठिकाने-द्रव्य जावे	भांगा	असंयोगी	दो संयोगी	तीन संयोगी	चार संयोगी	पाँच संयोगी
पाँच ठिकाने 1 द्रव्य जावे	5	5				
पाँच ठिकाने 2 द्रव्य जावे	15	5	10			
पाँच ठिकाने 3 द्रव्य जावे	35	5	20	10		
पाँच ठिकाने 4 द्रव्य जावे	70	5	30	30	5	
पाँच ठिकाने 5 द्रव्य जावे	126	5	40	60	20	1
पाँच ठिकाने 6 द्रव्य जावे	210	5	50	100	50	5
पाँच ठिकाने 7 द्रव्य जावे	330	5	60	150	100	15
पाँच ठिकाने 8 द्रव्य जावे	495	5	70	210	175	35
पाँच ठिकाने 9 द्रव्य जावे	715	5	80	280	280	70
पाँच ठिकाने 10 द्रव्य जावे	1001	5	90	360	420	126
पाँच ठिकाने संख्याता द्रव्य जावे	521	5	110	210	155	41
पाँच ठिकाने असंख्याता द्रव्य जावे	570	5	120	230	170	45
पाँच ठिकाने अनन्ता द्रव्य जावे	619	5	130	250	185	49

छ ठिकाने जावे-1 आरंभ, 2 अनारंभ, 3 सारंभ, 4 असारंभ, 5 समारंभ, 6 असमारंभ। ठिकाने 6 के पद 63 असंयोगी 6, दो संयोगी 15, तीन संयोगी 20, चार संयोगी 15, पाँच संयोगी 6, छह संयोगी 1=63 पद हुए-

छ ठिकाने-द्रव्य जावे	भांगा	असंयोगी	दो संयोगी	तीन संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	6 संयोगी
छ ठिकाने 1 द्रव्य जावे	6	6					
छ ठिकाने 2 द्रव्य जावे	21	6	15				
छ ठिकाने 3 द्रव्य जावे	56	6	30	20			
छ ठिकाने 4 द्रव्य जावे	126	6	45	60	15		
छ ठिकाने 5 द्रव्य जावे	252	6	60	120	60	6	
छ ठिकाने 6 द्रव्य जावे	462	6	75	200	150	30	1
छ ठिकाने 7 द्रव्य जावे	792	6	90	300	300	90	6
छ ठिकाने 8 द्रव्य जावे	1287	6	105	420	525	210	21
छ ठिकाने 9 द्रव्य जावे	2002	6	120	560	840	420	56
छ ठिकाने 10 द्रव्य जावे	3003	6	135	720	1260	756	126
छ ठिकाने संख्याता द्रव्य जावे	1353	6	165	420	465	246	51
छ ठिकाने असंख्याता द्रव्य जावे	1482	6	180	460	510	270	56
छ ठिकाने अनन्ता द्रव्य जावे	1611	6	195	500	555	294	61

सात ठिकाने जावे (1) औदारिक (2) औदारिक मिश्र (3) वैक्रिय (4) वैक्रिय मिश्र (5) आहारक (6) आहारक मिश्र (7) कार्मण योग। सात ठिकाने के पद 127-असंयोगी 7, दो संयोगी 21, तीन संयोगी 35, चार संयोगी 35, पाँच संयोगी

21, छह संयोगी 7, सात संयोगी 1=127 पद हुए। निम्न प्रकार से-चार्ट से-

सात ठिकाने-द्रव्य जावे	भांगे	असंयोगी	2संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5संयोगी	6 संयोगी	7 संयोगी
सात ठिकाने 1 द्रव्य जावे	7	7						
सात ठिकाने 2 द्रव्य जावे	28	7	21					
सात ठिकाने 3 द्रव्य जावे	84	7	42	35				
सात ठिकाने 4 द्रव्य जावे	210	7	63	105	35			
सात ठिकाने 5 द्रव्य जावे	462	7	84	210	140	21		
सात ठिकाने 6 द्रव्य जावे	924	7	105	350	350	105	7	
सात ठिकाने 7 द्रव्य जावे	1716	7	126	525	700	315	42	1
सात ठिकाने 8 द्रव्य जावे	3003	7	147	735	1225	735	147	7
सात ठिकाने 9 द्रव्य जावे	5005	7	168	980	1960	1470	392	28
सात ठिकाने 10 द्रव्य जावे	8008	7	189	1260	2940	2646	882	84
सात ठिकाने संख्याता द्रव्य जावे	3337	7	231	735	1085	861	357	61
सात ठिकाने असंख्याता द्रव्य जावे	3658	7	252	805	1190	954	392	67
सात ठिकाने अनन्ता द्रव्य जावे	3979	7	273	875	1295	1029	427	73

एक से लेकर 13 द्रव्यों के भांगे-

द्रव्य संख्या	ठिकाणा 3	ठिकाणा 4	ठिकाणा 5	ठिकाणा 6	ठिकाणा 7
	प्रयोगसा	सत्यमन	एकेन्द्रिय	पृथ्वीकाय	औदारिक
	मिश्रसा	असत्यमन	बेइन्द्रिय	अप्काय	औदारिक मिश्र
	विश्रसा	मिश्रमन	तेइन्द्रिय	तेउकाय	वैक्रिय
		व्यवहारमन	चौइन्द्रिय	वायुकाय	वैक्रिय मिश्र
			पंचेन्द्रिय	वनस्पतिकाय	आहारक
				त्रसकाय	आहारक मिश्र
					कार्मण योग
द्रव्य संख्या	भांगा	भांगा	भांगा	भांगा	भांगा
1	3	4	5	6	7
2	6	10	15	21	28
3	10	20	35	56	84
4	15	35	70	126	210
5	21	56	126	252	462

6	28	84	210	462	924
7	36	120	330	792	1716
8	45	165	495	1287	3003
9	55	220	715	2002	5005
10	66	286	1001	3003	8008
11	78	364	1365	4368	12376
12	91	455	1820	6188	18564
13	105	560	2380	8568	27132

72. आशीविष (भ.श. 8 उ.2) (1) आशीविष दो प्रकार का है जाति आशीविष, कर्मआशीविष

(2) जाति आशीविष-4 प्रकार-वृश्चिक (बिच्छु), मण्डूक (मेंढ़क), उरग (साँप), मनुष्य।

(3) वृश्चिक जाति आशीविष का विषय-अर्द्ध भरत प्रमाण, यह इनका विषय है कभी किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं।

मण्डूक जाति आशीविष का विषय भरत क्षेत्र प्रमाण यह इनका विषय है कभी किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं।

उरग आशीविष का विषय जम्बू द्वीप प्रमाण यह इनका विषय है कभी किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं।

मनुष्य आशीविष का विषय अढ़ाई द्वीप प्रमाण यह इनका विषय है कभी किया नहीं, करते नहीं, करेंगे नहीं।

(4) कर्म जाति आशीविष 3 प्रकार-मनुष्य, तिर्यंच, देवता। 15 कर्मभूमि मनुष्य और सन्नी तिर्यंच इन 20 बोलों में पर्याप्ता में और भवनपति से लेकर आठवें देवलोक के देवता के अपर्याप्ता में कर्म आशीविष होता है।

जिन जीवों के दाढ़ में विष होता है, उन्हें आशीविष कहते हैं। जाति विष वाले जन्म से ही आशीविष वाले होते हैं इसलिए जाति और जो कर्म द्वारा यानि श्राप द्वारा प्राणियों का नाश करते हैं, उनको कर्म आशीविष कहते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और

मनुष्य (पर्याप्ता) को तपस्या से या अन्य दूसरे कारण से आशीविष लब्धि उत्पन्न हो जाती है वे शाप से दूसरों का नाश करने की शक्ति प्राप्त कर लेते हैं, देवों में आठवें देव. से आगे ऐसा नहीं होता। वेदेव अपर्याप्त अवस्था तक कर्म आशीविष रहते हैं। क्षेत्र प्रमाण जो दिया है उसे असत् कल्पना से समझना कि जैसे-किसी मनुष्य ने अर्द्धभरत प्रमाण शरीर बनाया हो उसे पाँव में बिच्छु डंक मारे, उसका जहर मस्तक तक चढ़ जाता है, इस तरह चारों का समझना। नारकी, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और 9 से ऊपर के देवों में आशीविष नहीं होता, भवनपति से आठवें में भी अपर्याप्त अवस्था तक ही होता है, पर्याप्त होने पर नहीं होता। मनुष्य या तिर्यंच काल करके वहाँ कही भी उत्पन्न हो तो उसकी यह लब्धि अगले भव की अपर्याप्त अवस्था तक ही रहती है।

(5) केवलज्ञानी के सिवाय छद्मस्थ गिने है यहाँ पर, छद्मस्थों का ज्ञान सीमित होता है, 10 बातों को सर्व भाव से नहीं जानते नहीं देखते (1) धर्मास्तिकाय (2) अधर्मास्तिकाय (3) आकाशास्तिकाय (4) अशरीरी जीव-ये चारों अरूपी है। (5) परमाणु पुद्गल (6) शब्द (7) गंध (8) वायु-ये 4 रूपी है, परन्तु अत्यंत सूक्ष्म होने से छद्मस्थ नहीं जानते (9) यह जीव जिन, तीर्थंकर, केवली बनेगा या नहीं (10) यह जीव सिद्ध होगा या नहीं। छद्मस्थावस्था में नहीं देख सकते, ये केवली भगवान् इन सबको सर्वभाव से (साक्षात्) जानते देखते हैं। छद्मस्थ सुनकर जान सकते हैं।

73. पाँच ज्ञान (भ.श. 8 उ.2) ज्ञान के 5 भेद है मति (आभिनिबोधिक) ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान। संक्षेप में दो प्रकार प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष कहा है। प्रत्यक्ष ज्ञान-इन्द्रिय प्रत्यक्ष, नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष। इन्द्रिय प्रत्यक्ष के 5 भेद-स्पर्शनेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय प्रत्यक्ष। नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष के तीन भेद-अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान।

अवधिज्ञान के 2 भेद-पड़िवाई (प्रतिपाती) अपड़िवाई (अप्रतिपाती)

मन:पर्यवज्ञान के 2 भेद-ऋजुमति, विपुलमति। मनुष्य, गर्भज, कर्मभूमिज, संख्याता वर्षायु वाला, पर्याप्ता, समदृष्टि, संयति, अप्रमादी, लब्धिवन्त इन नौ बोल वालों को मन:पर्यवज्ञान होता है।

केवलज्ञान के 3 भेद-सयोगी, अयोगी, सिद्ध। सयोगी को यानि तेहरवें गुणस्थान वाले जीव को होता है, अयोगी यानि 14वें गुणस्थान वाले जीव को होता है। सिद्ध केवल ज्ञान के 2 भेद-अनन्तर सिद्ध केवल ज्ञान, परम्पर सिद्ध। **अनन्तर सिद्ध 15 प्रकार के**-तीर्थ सिद्ध, अतीर्थ सिद्ध, तीर्थंकर सिद्ध, अतीर्थंकर सिद्ध, स्वयंबुद्ध, प्रत्येक बुद्ध सिद्ध, बुद्ध बोधित सिद्ध, स्त्रीलिंग सिद्ध, पुरुष लिंग सिद्ध, नपुंसक लिंग सिद्ध, स्वलिंग सिद्ध, अन्य लिंग सिद्ध, गृहस्थ लिंग सिद्ध, एक सिद्ध, अनेक सिद्ध। **परम्पर सिद्ध के 13 भेद**-अपढ़म समय (2) द्विसमय (3) तिसमय (4) चतु:समय (5) पंचसमय (6) षट्समय (7) सप्तसमय (8) अष्टसमय (9) नवसमय (10) दससमय सिद्ध (11) संख्यात समय (12) असंख्यात समय (13) अनन्त समय सिद्ध।

परोक्ष ज्ञान-2 भेद मतिज्ञान, श्रुतज्ञान। मतिज्ञान के 360 भेद। मतिज्ञान के 2 भेद-श्रुत निश्रित, अश्रुत निश्रित। **अश्रुत निश्रित**-4 भेद-4 बुद्धियाँ (1) जो बुद्धि बिना देखे सुने और बिना सोचे पदार्थों को सहसा ग्रहण करके कार्य को सिद्ध कर देती है उसे औत्पातिया औत्पातिकी बुद्धि कहते हैं। जैसे नटपुत्र रोहक की थी। (2) वैनियिकी-गुरु महाराज की सेवा सुश्रुषा करते-करते बुद्धि प्राप्त होती है जैसे नैमित्तिक सिद्ध पुत्र के शिष्यों की थी। (3) कम्मिया (कर्मजा) कार्य करते-करते जो बुद्धि प्राप्त हो वह कर्मजा, जैसे-सुनार, किसान आदि। (4) परिणामिया (परिणामिकी) बहुत काल तक संसार के अनुभव से जो बुद्धि हो वह पारिणामिकी है। श्रुतनिश्रित के 4 भेद-अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा। अवग्रह के 2 भेद-अर्थावग्रह, व्यन्जनावग्रह। अर्थावग्रह-5 इन्द्रियाँ और छठे मन से होता है। व्यंजनावग्रह 4 इन्द्रियों (श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय) से होता है। अर्थावग्रह की तरह ईहा, अवाय, धारणा के ये 6-6 भेद इस तरह 28 (व्यंजनावग्रह के 4, अर्थावग्रह के 6, ईहा के 6, अवाय के 6, धारणा के 6=28) भेद। इन 28 को बहु, अबहु (अल्प), बहुविध, अबहुविध (अल्पविध) क्षिप्र, अक्षिप्र, निश्रित, अनिश्रित, संदिग्ध, असंदिग्ध, ध्रुव, अध्रुव इन 12 से गुणा करने से 28x12=336 भेद+4 अश्रुत निश्रित के ये 340 भेद हुए। एगट्ठिया के 20 भेद मिलाने से 360 भेद होते हैं। **मतिज्ञान** के 9 नाम है-ईहा, अपोह, विमर्श-विचार, मार्गणा-विचारणा, गवेषणा-खोज, संज्ञा-बुद्धि संकेत,

स्मृति-स्मरण, मति-बुद्धि, प्रज्ञा-विशिष्ट बुद्धि। निर्मल-सम्यगमति (बुद्धि) को मतिज्ञान कहते हैं। इससे विपरीत उल्टी बुद्धि को मति अज्ञान कहते हैं। एगट्ठिया के 20 भेद छोड़ने से मति अज्ञान के 340 भेद होते हैं।

श्रुतज्ञान-सम्यक् प्रकार सुनने को श्रुतज्ञान कहते हैं-मिथ्यासूत्र-मिथ्यात्वी से असम्यक्पणे सुनना श्रुत अज्ञान है। श्रुतज्ञान के 14 भेद-अक्षरश्रुत, अनक्षरश्रुत, संज्ञीश्रुत, असंज्ञीश्रुत, समश्रुत, मिथ्याश्रुत, सादिश्रुत, अनादिश्रुत, सपर्यवसितश्रुत, अपर्यवसितश्रुत, गमिकश्रुत, अगमिकश्रुत, अंगप्रविष्ट, अनंगप्रविष्ट। श्रुतज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाले शास्त्रों के ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं। चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग, द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग से सारी बातें श्रुतज्ञान में आ जाती है।

अवधिज्ञान से विपरीत होवे उसे विभंगज्ञान कहते हैं। विभंगज्ञान के 7 भेद और अनेक संठाण है। विभंगज्ञान अनेक आकार वाला हो सकता है जिसे जितना मात्र लघु विभंगज्ञान हो, उसे वे आकार या अंश मात्र दिखते हैं, परोक्ष में रही ये वस्तुएँ विभंगज्ञानी के ज्ञान में दिखती है, किन्तु वह कुछ भी समझ पावे या नहीं भी समझ पावे कि यह मुझे क्या दिख रहा है? क्यों दिख रहा है? यह निर्णय भी कर पावे या नहीं कर पावे अज्ञान के कारण नहीं कर पावे।

74. ज्ञानलब्धि (भ.श. 8 उ.2) जीव को कभी 5 ज्ञान में से 2 ज्ञान (मति श्रुत) 3 ज्ञान (मति श्रुत अवधि) कभी 4 ज्ञान (मति श्रुत अवधि मन:पर्यव) कभी मात्र 1 ज्ञान (केवलज्ञान) होता है। जघन्य रूप से 2 ज्ञान (मतिश्रुत) या 2 अज्ञान (मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान) अवश्य होते हैं तीन अज्ञान हो तो (मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान) होता है। जब जीव को केवलज्ञान होता है तब शेष चारों ज्ञान नहीं रहते है। उनका केवलज्ञान में समावेश हो जाता है। तीन अज्ञान भी नहीं रहते। अत: उसमें उस समय 1 ज्ञान केवलज्ञान ही रहता है। जीव में ज्ञान अज्ञान की नियमा भजना 21 द्वारों से समझायी है-21 द्वार (1) जीव द्वार (2) गति द्वार (3) इन्द्रिय द्वार (4) काय द्वार (5) सूक्ष्म बादर द्वार (6) पर्याप्ति द्वार (7) भवत्थ द्वार (8) भवसिद्धि द्वार (9) संज्ञी द्वार (10) लब्धि द्वार (11) उपयोग द्वार (12) योग द्वार (13) लेश्या द्वार (14) कषाय द्वार (15) वेद द्वार (16) आहार द्वार (17) ज्ञान गोचर द्वार (18) काल द्वार (19) अन्तर द्वार (20) अल्प बहुत्व द्वार (21) पर्याय की अल्प बहुत्व द्वार।

संख्या	1-बोल जाति द्वार के	भजना		नियमा	
		ज्ञान	अज्ञान	ज्ञान	अज्ञान
1	समुच्चय जीव में	5	3		
2 से 20	पहली नरक, भवनपति, वाणव्यंतर देवता		3	3	
21 से 52	6 नरक, ज्योतिषी से नव ग्रैवेयक			3	3
53 से 57	पाँच अणुत्तर विमान			3	
58 से 63	पाँच स्थावर असंज्ञी मनुष्य				2
64 से 67	तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय			2	2
68	संज्ञी तिर्यंच	3	3		
69	मनुष्य	5	3		
70	सिद्ध भगवान			1	

2. गति द्वार	संख्या	बोल	भजना		नियमा	
			ज्ञान	अज्ञान	ज्ञान	अज्ञान
		नरकगतिक, देवगतिक	-	3	3	-
		तिर्यंच गति में	-	-	2	2
		मनुष्य गतिक में	3	-	-	2
		सिद्ध गतिक में	-	-	1	-

नोट-प्रथम नरक, भवनपति, व्यंतर देवों में से जन्म समय किसी में (असन्नी से आने वालों में) 2 अज्ञान होते हैं। किसी में सन्नी से आने वालों में तीन अज्ञान प्रारंभ से होते हैं। अत: इनमें तीन अज्ञान की भजना और ज्ञान तो इनमें सभी में जन्म से तीन ही होते हैं अत: अज्ञान की नियमा होती है। **वाटेवहता जीव**-नरक गतिक, देव गतिक, जन्म के पूर्व-मार्ग में चलते जीव में 3 अज्ञान की भजना (असन्नी से आने की अपेक्षा) ही होंगे। और तीन ज्ञान की नियमा अर्थात् दोनों के वाटेवहता में ज्ञान होंगे तो तीन ही होंगे। तिर्यंच गतिक वाटे वहता में 2 ज्ञान या 2 अज्ञान नियमा होते हैं, कोई भी तीन ज्ञान या 3 अज्ञान लेकर नहीं आता। मनुष्य गति में वाटेवहता में 3 ज्ञान की भजना दो अज्ञान की नियमा यानि मनुष्य वाटेवहता में ज्ञान 2 या तीन हो सकते हैं, अवधिज्ञान लेकर आ सकता है, किन्तु विभंग ज्ञान उत्पत्ति समय नहीं होता। इसी तरह आगे 14 द्वारों से ज्ञान अज्ञान की नियमा भजना बताई है-इस प्रकार 122 भेदों से समझाया है इसमें लब्धि द्वार के 68 भेद दिये है-चार्ट-

द्वार का नाम	संख्या	बोल	भजना		नियमा	
			ज्ञान	अज्ञान	ज्ञान	अज्ञान
3. इन्द्रिय द्वार 7	1-2	सइन्द्रिय पंचेन्द्रिय में	4	3	–	–
	3	एकेन्द्रिय में	–	–	–	2
	4 से 6	विकलेन्द्रिय में	–	–	2	2
	7	अनिन्द्रिय में	–	–	1	–
4. काय द्वार 8	8-9	सकाय-त्रसकाय में	5	3	–	–
	10 से 14	पृथ्वीकाय आदि पाँच स्थावर में	–	–	–	2
	15	अकाय में	–	–	1	–
5. सूक्ष्म बादर द्वार 3	16	सूक्ष्म में	–	–	–	2
	17	बादर में	5	3	–	–
	18	नो सूक्ष्म नो बादर में	–	–	1	–
6. पर्याप्ति द्वार 2	19	पर्याप्त में समुच्चय, मनुष्य	5	3	–	–
		पहली नरक से 9 ग्रैवेयक में	–	–	3	3
		पांच अणुत्तर में	–	–	3	–
		5 स्थावर, 3 विकले., अ. तिर्यंच	–	2	–	–
		सन्नी तिर्यंच	3	3	–	–
	20	अपर्याप्त में समुच्चय	3	3	–	–
		पहली नरक, भवन., वाण व्यंतर	–	3	3	–
		2 से 6 नरक, ज्यो. से नव ग्रै. तक	–	–	3	3
		सातवीं नरक	–	–	–	3
		5 अणुत्तर	–	–	3	–
		5 स्थावर, अ. मनुष्य	–	–	–	2
		3 विक., अ.ति., स. ति.	–	–	2	2
		सन्नी मनुष्य	3	–	–	2
		नो पर्या. नो अपर्या.	–	–	1	–
7. भवस्थ द्वार	21	भवस्थ में मनुष्य	5	3	–	–
8.भवसिद्धिक द्वार2	22	भवी में	5	3	–	–
	23	अभवी में नो भवी नो अभवी	–	3	–	–
9. संज्ञी द्वार 3	24	सन्नी में	4	3	–	–
	25	असन्नी में	–	–	2	2
	26	नो सन्नी नो असन्नी में	–	–	1	–
12. योग द्वार 5	27 से 30	संयोगी, तीन योग में	5	3	–	–
	31	अयोगी में	–	–	1	–
13. लेश्या द्वार 8	32-33	सलेशी-शुक्ललेशी में	5	3	–	–
	34 से 38	पाँच लेश्या में	4	3	–	–
	39	अलेशी में	–	–	1	–

14. कषाय द्वार 6	40 से 44	सकषायी, चार कषायी में	4	3	–	–
	45	अकषायी में	5	–	–	–
15. वेद द्वार 5	46 से 49	सवेदी, तीन वेद में	4	3	–	–
	50	अवेदी में	5	–	–	–
16. आहार द्वार 2	51	आहारक में	5	3	–	–
	52	अनाहारक में	4	3	–	–
11. उपयोग द्वार 2	53-54	साकार-अनाकार दोनों उपयोग में	5	3	–	–
	55 से 58	चार ज्ञान में	4	–	–	–
	59	केवल ज्ञान में	–	–	1	–
	60-61	दो अज्ञान में, समु. अज्ञान	–	3	–	–
	62	विभंग ज्ञान में	–	–	–	3
	63-64	चक्षु-अचक्षु दर्शन में	4	3	–	–
	65	अवधि दर्शन में, मतिश्रुत में	4	–	–	3
	66	केवल दर्शन में	–	–	1	–
10. लब्धि द्वार 68 भेद	67-68	मति श्रुतज्ञान के अभाव में	–	3	1	–
	69	अवधि ज्ञान के अभाव में	4	3	–	–
	70	मन: पयर्व ज्ञान के अभाव में	4	3	–	–
	71	केवल ज्ञान के अभाव में	4	3	–	–
	72-73	समु. अज्ञान मति श्रुत अज्ञान के अभाव में	5	–	–	–
	74	विभंग ज्ञान के अभाव में	5	–	–	2
	75	समुच्चय दर्शन में	5	3	–	–
	76	समुच्चय दर्शन के अभाव में	–	–	–	–
	77	सम्यग् दर्शन में, समुच्चय ज्ञान	5	–	–	–
	78	सम्यग् दर्शन के समु. ज्ञान अभाव में	–	3	–	–
	79	मिथ्या दर्शन में, मिश्र दर्शन	–	3	–	–
	80	मिश्र दर्शन मिथ्या दर्शन के अभाव में	5	3	–	–
	81	चारित्रा चारित्र में	–	3	–	–
	82	चारित्रा चारित्र के अभाव में	5	3	–	–
	83	समुच्चय चारित्र में	5	–	–	–
	84	चारित्र के अभाव में	4	3	–	–
	85 से 88	सामायिक आदि 4 में	4	–	–	–
	89 से 92	सामायिक आदि 4 के अभाव में	5	3	–	–
	93	यथा ख्यात में	5	–	–	–
	94	यथा ख्यात के अभाव में	5	3	–	–
	95 से 99	दानादि 5 लब्धि में	5	3	–	–
	100 से 104	दानादि 5 लब्धि के अभाव में	–	–	1	–
	105	बालवीर्य में	3	3	–	–

	106	बालवीर्य के अभाव में	5	–	–	–
	107	बाल पंडित वीर्य में	3	–	–	–
	108	बाल पंडित वीर्य के अभाव में	5	3	–	–
	109	पंडित वीर्य में	5	–	–	–
	110	पंडित वीर्य के अभाव में	4	3	–	–
	111–112	सइन्द्रिय, स्पर्शेइन्द्रिय में	4	3	–	–
	113–114	सइन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय के अभाव में	–	–	1	–
	115	रसनेइन्द्रिय में	4	3	–	–
	116	रसनेन्द्रिय के अभाव में	–	–	1	2
	117–119	त्रण इन्द्रिय में (श्रो.च.घ्रा.)	4	3	–	–
	120–122	त्रण इन्द्रिय के अभाव में	–	–	2+1	2

नोट : क्र.सं. 55 से 66 तक के भेद उपयोग द्वार एवं लब्धिद्वार दोनों में पाते हैं।

जहाँ 1 वहाँ केवलज्ञान, 2 वहाँ मतिश्रुत (ज्ञान का, अज्ञान का) 3 वहाँ मतिश्रुत अवधि (अज्ञान मतिश्रुत विभंग) 4 मतिश्रुत अवधि मन:पर्यव, 5 वहाँ पाँचों ज्ञान। ऊपर में 1 से 16 (जाति द्वार से आहार द्वार) द्वार तक विश्लेषण किया है अब आगे 17 से 21 द्वार तक–**17 ज्ञान गोचर द्वार**–प्रत्येक ज्ञान का 4 प्रकार का विषय द्रव्य क्षेत्र काल भाव से बताया है। **मतिज्ञान** श्रुतनिश्रित और अश्रुतनिश्रित से दो प्रकार का बताया है, मतिज्ञानी द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सामान्य प्रकार से सर्व द्रव्य क्षेत्रकाल भाव जानता, देखता है। उपाय और धारणा ज्ञान रूप है तथा अवग्रह, ईहा दर्शन रूप है अत: जानना देखना कहा है ''अवायधारणे ज्ञानम् अवग्रहे दर्शनम्।'' जाति स्मरण मतिज्ञान के अंतर्गत है मतिज्ञान परोक्ष ज्ञान है। **श्रुतज्ञान** के 14 भेद बताये हैं, श्रुत ज्ञानी उपयोग सहित सर्वद्रव्य क्षेत्र कालभाव को जानता है। **अवधिज्ञान** के 6 भेद (1) अनुगामी (2) अननुगामी (3) वर्द्धमान (4) हीयमान (5) प्रतिपाती (6) अप्रतिपाती। **मन: पर्यव ज्ञान** के 2 भेद–ऋजु मति, विपलमति। **केवलज्ञान** के 2 भेद–भवस्थ केवलज्ञान, सिद्ध केवलज्ञान पाँचों ज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भाव से–

ज्ञान	द्रव्य से	क्षेत्र से	काल से	भाव से
(1) मतिज्ञान	आदेश से–सर्व द्रव्यों को जानता है, देखता (नहीं)	आदेश से सभी क्षेत्रों को जानता है, देखता (नहीं)	आदेश से समस्त कालों को जानते है देखते (नहीं)	आदेश से सभी भावों को जानते है, देखते (नहीं)
(2) श्रुतज्ञान	उपयोग से–सर्वद्रव्यों को जानते है, देखते है। प्रत्यक्ष देख रहे हों, इस प्रकार देखते है।	उपयोग से–सभी क्षेत्रों को जानते है, देखते है।	उपयोग से समस्त कालों को जानते है, देखते है	सभी पर्यायों को जानते है, देखते है।
(3) अवधिज्ञान	**जघन्य**–अनन्तरूपी द्रव्यों को जानते देखते हैं। उत्कृष्ट–सभी रूपी द्रव्यों को जानते देखते हैं।	**जघन्य**–अंगुल का असंख्यातवाँ भाग जानते देखते है।	**जघन्य**–आवलिका का असंख्यातवाँ भाग जानते देखते हैं।	**जघन्य**–अनन्त भावों को जानते देखे हैं। उत्कृष्ट–अनंत भावों को जानते देखते हैं।

		उत्कृष्ट–संपूर्ण लोक देखते है, अलोक में लोक जितने असंख्य खंड क्षेत्र जानते देखते है।	**उत्कृष्ट**–असंख्य उत्सपिर्णयाँ और अवसर्पिणियाँ बीती हुई, बीतने वाली जानते देखते हैं।	
(4) मन:पर्यव-ज्ञान–ऋजुमति	ऋजुमति **जघन्य** उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्रदेशी स्कंध को जानता देखता है	ऋजुमति **जघन्य** अंगुल के असंख्यातवें भाग **उत्कृष्ट–अधोदिशा** में रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के और नीचे के क्षुल्लक (छोटे)प्रतरों को देखता है। **ऊँची दिशा में**–ज्योतिषी के ऊपरी तल तक तिरछी–अढ़ाई अंगुल कम अढ़ाई द्वीप में (2 समुद्र, 15 कर्म, 30 अकर्म, 56 अन्तर्द्वीपा) रहे संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त के मनोगत भावों को जानता देखता है।	ऋजुमति **जघन्य** उत्कृष्ट पल के संख्यातवें भाग गया काल (बीता हुआ) और आगामी काल संबंधी जानता देखता है।	ऋजुमति **जघन्य उत्कृष्ट**–अनन्त भावों को जानते देखते हैं, सब भावों के अनन्तवें भाग को जानते, देखते हैं।
विपुलमति	ऋजुमति जितना जानते है, उससे अधिकतर, विपुलतर, विशुद्धतर, निर्मल, अधिक स्पष्ट जानते देखते हैं।	**विपुलमति**–संपूर्ण अढ़ाई द्वीप को जानता देखता है।	विपुलमति उसी को अधिक तर, विपुलतर, विशुद्धतर, निर्मल अधिक स्पष्ट जानता देखता है।	विपुलमति–उसी को अधिकतर, विपुलतर, विशुद्धतर, निर्मल, अधिक स्पष्ट जानता देखता है।
(5) केवलज्ञान (भवस्थ और सिद्ध केवलज्ञान)	सभी द्रव्यों को जानते देखते हैं।	सभी क्षेत्रों को (लोक-अलोक को) देखते जानते हैं।	सभी कालों को (लोक-अलोक को) जानते देखते हैं।	सभी भावों को (औदायिक आदि को) जानते देखते हैं।
(1)मति अज्ञान	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।
(2)श्रुत अज्ञान	ग्रहण किये पुद्गलों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है।
(3)विभंग ज्ञानी	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।	ग्रहण किये पुद्गलों को जानता देखता है।

18 कालद्वार–ज्ञानी के ज्ञान की स्थिति की मर्यादा को काल कहा है, ज्ञान में दो स्थिति भांगा सादि सपर्यवसित, सादि अपर्यवसित अज्ञान में तीन भांगे–अनादि अपर्यवसित (अनादि अनन्त) (2) अनादि सपर्यवसित (अनादि अन्तसहित) (3) सदि सपर्यवसित (सादि शांत)। अज्ञान में पहला भांगा अभवी, दूसरा भवी, तीसरा पड़िवाईभवी का है। स्थिति इस प्रकार है–

ज्ञानादि	भांगा स्थिति	जघन्य काल	उत्कृष्ट काल स्थिति
समुच्चय ज्ञान	दो भांगा सादि सपर्यवसित,	अन्तर्मुहूर्त	66 सागर झाझेरी
	सादि अपर्यवसित	स्थिति नहीं	स्थिति नहीं
मतिज्ञान श्रुतज्ञान		अन्तर्मुहूर्त	66 सागर झाझेरी
अवधि ज्ञान		1 समय	66 सागरोपम झाझेरी
मन:पर्यव ज्ञान		1 समय	देशोन करोड़ पूर्व (कुछ कम)
केवलज्ञान	सादि अपर्यवसित	स्थिति नहीं	स्थिति नहीं कभी नष्ट नहीं होता
समुच्चय अज्ञान	तीन भांगा अनादि अनंत (अभवी) अनादि सांत (भवी में) सादि सांत (पड़िवाई भवी)		
समु. अज्ञान मति श्रुत अज्ञान	तीसरा भांगा सादिसांत	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन
विभंग ज्ञान		1 समय	33 सागर देशोन क्रोड़पूर्व अधिक

19 अन्तर द्वार–एक बार उत्पन्न होकर नष्ट होने के समय से लगा कर दूसरी बार उत्पन्न होने के समय तक बीच में जो व्यवधान (आन्तरा) रहता है, वह अन्तर द्वार है–

ज्ञान/अज्ञान	भांगा	जघन्य अन्तर	उत्कृष्ट अन्तर
समुच्चय ज्ञान	2 भांगा सादि अपर्यवसित	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं
	सादि सपर्यवसित	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन
4 ज्ञान	सादि सपर्यवसित	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन
केवलज्ञान	सादि अपर्यवसित	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं
समुच्चय अज्ञान	भांगे तीन पहले दूसरे भांगे में	अन्तर नहीं	
मति अज्ञान श्रुत अज्ञान	भांगे तीन तीसरे भांगे में	अन्तर्मुहूर्त	66 सागरोपम झाझेरी
विभंग ज्ञान		अन्तर्मुहूर्त	अनन्तकाल (वनस्पति काल जितना)

20 अल्प बहुत्व द्वार–सबसे थोड़ा मन:पर्यवज्ञानी, उससे अवधिज्ञानी असंख्यातगुणा, उससे मति–श्रुतज्ञानी आपस में तुल्य विशेषाधिक, उससे केवलज्ञानी अनन्तगुणा, उससे समुच्चय ज्ञानी विशेषाधिक। तीन अज्ञान में सबसे थोड़ा विभंगज्ञानी, उससे मतिश्रुत अज्ञानी आपस में तुल्य अनन्तगुणा उससे समुच्चय अज्ञानी विशेषाधिक।
ज्ञान अज्ञान दोनों की शामिल अल्पाबोध–सबसे थोड़े मन:पर्यवज्ञानी, उससे अवधिज्ञानी असंख्यातगुणा, उससे मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी आपस में तुल्य विशेषाधिक, उससे विभंगज्ञानी असंख्यातगुणा, उससे केवलज्ञानी अनन्तगुणा, उससे समुच्चय ज्ञानी विशेषाधिक उससे मतिअज्ञानी श्रुतअज्ञानी आपस में तुल्य अनन्तगुणा उससे समुच्चय अज्ञानी विशेषाधिक।

21 पर्याय की अल्प बहुत्व द्वार–एक–एक ज्ञान के अनन्तानन्त पर्याय हैं। (1) सबसे थोड़े मन:पर्यवज्ञान के पर्याय, (2) उससे अवधिज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा, (3) उससे श्रुतज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (4) उससे मतिज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (5) उससे केवलज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा। तीन अज्ञान के अनन्तानन्त पर्याय हैं। (1) सबसे थोड़े विभंगज्ञान के पर्याय (2) उससे श्रुतअज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा उससे मति अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा।
ज्ञान अज्ञान दोनों की शामिल अल्पाबोध–(1) सबसे थोड़ा मन:पर्यवज्ञान के पर्याय (2) उससे विभंगज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (3) उससे अवधिज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (4) उससे श्रुतअज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (5) उससे श्रुतज्ञान के पर्याय विशेषाधिक (6) उससे मति अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा (7) उससे मतिज्ञान के पर्याय विशेषाधिक (8) उससे केवलज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा।
75. वृक्ष (भ.श. 8 उ.3) (1) वृक्षों के तीन प्रकार संख्यातजीवी, असंख्यातजीवी, अनन्तजीवी **संख्यातजीवी**–ताल, तमाल, तक्कली, तेतली, नारियल आदि। **असंख्यातजीवी**–असंख्यात जीव वाले–इसके दो भेद एगट्ठिया और बहुबीजा। जिसमें एक गुठली होती है–नीम, आम, जामुन, बहुबीजा–(एक फल में बहुत बीज) बड़, पीपल, उंबर आदि। **अनन्तजीवी** (अनंत जीव वाले) आलू मूला, आदि जमीकन्द है। (2) कछुए, कछुए की श्रेणी, गोह, गोह की श्रेणी, गाय, गाय की श्रेणी, मनुष्य, मनुष्य की श्रेणी, भेंसा भेंसे की श्रेणी इन सबके दो, तीन यावत्, संख्याता खंड किये हों तो उनके बीच में जीव के प्रदेश फरसते हैं। (3) उन पर प्रहार, अग्नि ताप आदि से उन प्रदेशों को बाधा पीड़ा नहीं पहुँचती। (4) पृथ्वीयाँ 8 है रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तम:प्रभा, तम:तमाप्रभा और ईषत् प्राग्भारा पृथ्वी (सिद्धशिला)।
मनुष्य या पशु आदि किसी भी प्राणी के शरीर का कोई अंग या अवयव कटकर दूर गिर जाय तो भी उस समय गिरे हुए में आत्मप्रदेश संलग्न रहते हैं, बीच की दूरी वाली जगह में भी आत्मप्रदेश रहते हैं, उन सभी आत्मप्रदेशों में अग्नि या शस्त्र से बाधा पीड़ा नहीं होती, वे आत्मप्रदेश टूटते भी नहीं, बाद में वे मूल में वापस आ जाते हैं, फिर वह चाहे मरे या जीवित रहे।
76. आजीविक (भ.श. 8 उ.5) श्रावक सामायिक पौषध आदि व्रत करके उपाश्रय में बैठा है, घर की सभी वस्तुओं का त्याग किया है, उस समय कोई चोर वस्तुएँ चुरा

ले। बाद में श्रावक अपनी सामायिक, पौषध कर उसकी (वस्तुओं की) खोज करे तो वे वस्तुएँ उसकी ही है, क्योंकि उसके सामायिक आदि के समय घर, परिवार, स्त्री उपकरणों का त्याग होता है और ये भाव होते है कि ये पदार्थ मेरे नहीं है, परन्तु ये भाव सामायिक, पौषध आदि के समय ही होते हैं, आजीवन त्याग नहीं होता, उसका उन पदार्थों से संबंध विच्छेद नहीं होता, सामायिकादि का समय पूर्ण होने के बाद उसके हैं, वह उन वस्तुओं को प्राप्त करने का प्रयत्न करे, वे वस्तुएँ उसी की है, कोई सामग्री को चुरावे या उसकी स्त्री को अपना बनाये, भोग भोगे तो उस श्रावक की जाया (पत्नी) को भोगता है, क्योंकि उसका प्रेम बंध छूटा नहीं है। सार यह कि श्रावक सापेक्ष बुद्धि से सामायिकादि की समय मर्यादा तक ही त्यागी होता है, उस समयावधि के बाद ममत्व, परिग्रह का त्यागी नहीं होता। श्रावक से श्रमण बन जाय या श्रावक आजीवन संथारा पच्चक्ख ले तो उसका अधिकार, ममत्व नहीं होता है।

श्रावक त्याग पच्चक्खाण के व्रत को धारण करता है, तब पूर्वकृत पाप की निन्दा करता है, वर्तमान का संवर करता है, भविष्य के लिए उस पाप का प्रत्याख्यान करता है। हिंसादि का त्याग श्रावक को तीन करण (करना, कराना, अनुमोदना) तीन योग (मन, वचन, काय) में इच्छित कितने ही करण योग से हो सकता है। न्यूनतम एक करण एक योग से होता है और अधिकतम तीन करण-तीन योग से हो सकता है। इन इच्छित एक, दो, तीन करण या एक, दो तीन, योग के करने के 9 विकल्प 49 भांगे है। (1) एक करण एक योग के 9 भांगे (2) एक करण दो योग के 9 भांगे। (3) एक करण तीन योग के 3 भांगे। (4) दो करण एक योग के 9 भांगे (5) दो करण दो योग के 9 भांगे (6) दो करण तीन योग 3 भांगे (7) तीन करण एक योग 3 भांगे (8) तीन करण दो योग 3 भांगे, (9) तीन करण तीन योग 1 भांगा ये 49 भांगा हुए। तीन काल आसरी 49x3=147 भांगा। पाँच अणुव्रत आसरी 147x5=735 मूल भांगे और 49x49=2401 उत्तर भांगे होते हैं।

यहाँ गौशालक पंथी श्रावकों को आजीवक कहा है, आजीविक का सिद्धांत है इस संसार में जीव-जीव के भक्षी है, सभी प्राणी सचित-सजीव का आहार करते हैं, या सजीव का छेदन, भेदन, हनन, लुंपन, विलुपंन आदि करके उन पदार्थों का आहार करते हैं। गोशालक के 12 प्रमुख श्रावक है-(1) ताल, (2) ताल प्रलम्ब, (3) उद्विध, (4) संविध, (5) अवविध, (6) उदय, (7) नामोदय, (8) नर्मोदय,

(9) अनुपालक, (10) शंखपालक, (11) अयंबुल, (12) कातर। ये गोशालक को देव मानते हैं। माता-पिता की भक्तिपूर्वक सेवा सुश्रुषा करते हैं। पाँच प्रकार के बहुजीवी फलों का त्याग प्रत्याख्यान करते हैं (1) उंबर फल (2) बड़ का फल (3) बोर (4) शहतूत (5) पीपल का फल। वे लहसुन, प्याज आदि कंद-मूल के त्यागी होते हैं। बैलों को नपुंसक नहीं बनाते, नाक नहीं बींधते एवं त्रस प्राणियों की हिंसा रहित व्यापार से आजीविका चलाते हैं। श्रमण भगवान महावीर स्वामी फरमाते है कि जब ये गोशालक पंथी भी इस प्रकार हिंसा से दूर रहते हैं, हिंसा का व्यापार नहीं करते हैं तो श्रमणोपासकों को 15 कर्मादान रूप हिंसा का व्यापार कभी नहीं करना चाहिए। ये 15 कर्मादान (1) इंगालकम्मे (2) वणकम्मे (3) साड़ीकम्मे (4) भाड़ीकम्मे (5) फोड़ीकम्मे (6) दंतवणिज्जे (7) लक्खवाणिज्जे (8) केसवाणिज्जे (9) रसवाणिज्जे (10) विसवाणिज्जे (11) जंतपीलणकम्मे (12) निल्लंछणकम्मे (13) दवग्गिदावणिया (14) सरदहतलाय सोसणया (15) असईजणपोसणया। इन 15 कर्मादानों रूप व्यापार स्वयं करना, कराना, अनुमोदना श्रमणोपासकों को नहीं कल्पता है। इस प्रकार जानकर 15 कर्मादानों का त्याग कर, अन्य व्रतों को पालने, त्याग पच्चक्खाण का निर्मल पालन करके अपनी आत्मा को पवित्र, परम पवित्र बनाकर देवलोक के अधिकारी बनते हैं। देवलोक 4 प्रकार के है-भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी और वैमानिक। भगवान ने 12 आजीविकोपासकों के त्याग प्रत्याख्यान बताये, ये सभी उन उपासकों में हो यह जरूरी नहीं है भगवान महावीर के 10 प्रमुख श्रावक आनंद आदि तो संपूर्ण गृहस्थ जीवन से निवृत्त होकर साधना करने वाले थे, पड़िमाधारी श्रावक बने थे, संपूर्ण सावद्य के त्यागी बने थे।

77. प्रासुक अप्रासुक आहार (भ.श. 8 उ.6) (1) तथा रूप यानि श्रमण निर्ग्रंथों को, उत्तम साधु को प्रासुक (एषणीय) निर्दोष अशन (रोटी, दाल, भात आदि जिससे भूख शांत हो), पान (धोवन आदि जिसके पीने से तृषा शांत हो), खादिम (दूध, छाछ, मेवा, मिष्ठान्न जिससे भूख और प्यास दोनों शांत हो), स्वादिम (जिससे न भूख शांत हो न प्यास, मुख साफ करने के लिए भोजनादि के बाद खाने लायक, जैसे-लोंग, इलायची, चूर्ण, गोली, सुपारी आदि) देवे, बहरावे तो उस श्रावक को एकान्त निर्जरा होती है, किञ्चित मात्र पापकर्म नहीं लगता।

(2) श्रमण निर्ग्रंथ को (उत्तम साधु को) कोई श्रावक सचित, अनेषणीय (संघट्टादिक) दोष वाला, शंकादि सूक्ष्म दोष सहित आहार पानी देवे तो बहुत निर्जरा अल्प पाप

होता है, जैसे- कोई साधु आये, पानी में बीज पड़ा था, निकाला और बहरा दिया। औषध उपचार या किसी संकट की परिस्थिति में या कभी अविवेक, अज्ञान से, भक्ति के अतिरेक से, श्रमण निर्ग्रंथ के साता भावना से सदोष आहार वहोराने पर बहुत निर्जरा, एवं दोषित आहार बहराने से विराधना या समाचारी भंग से अल्प पाप भी होता है। बहुत निर्जरा का आशय यह कि दाता द्रव्य से सूझता होने के कारण द्रव्य शुद्ध है, संयम साधना में सहायक होने से शुभ भाव हैं, अत: वह भाव से शुद्ध है, लेने वाला पात्र श्रमण निर्ग्रंथ भी शुद्ध है, मात्र ''दोषित'' वस्तु होने से यहाँ अल्प पाप कहा है।

(3) असंयति, अविरति, मिथ्यादृष्टि मिथ्यामत साधु को कोई श्रावक प्रासुक या अप्रासुक, एषणीय या अनेषणीय अशनादि देवे तो एकान्त पाप होता है, किंचित भी निर्जरा नहीं होती। मिथ्यावी जोगी बाबा आदि को गुरुबुद्धि से देने से मिथ्यात्व रूपी पाप लगता है। यहाँ तथारूप श्रमण से पड़िलाभे पाठ आता है। मंगते, भिखारी को देने में दलयइ या दलेज्जा पाठ आता है। मिथ्यात्व भावित व्यक्ति मोक्ष हेतुक सकाम निर्जरा नहीं कर सकता दान लेने वाला असंयत और दाता उसे गुरुबुद्धि से देता हो तो उसकी भी मान्यता खोटी हुई दाता भी अशुद्ध है। तब वस्तु सदोष-निर्दोष कोई भी महत्व नहीं रखती। इन तीनों प्रकार के दान में पुण्य बंध तो सर्वत्र है क्योंकि भावना में उदारता है, अनुकम्पा है, लेने वाले को सुख पहुँचाता है, परन्तु प्रश्न एकान्त पाप और निर्जरा से है। यहाँ पुण्य प्रसंग नहीं लिया है।

प्रश्नोत्तर मय विधान मोक्षार्थ दान की अपेक्षा से हैं, बाकी जिनेश्वरों ने अनुकम्पा दान का कहीं निषेध नहीं किया। कोई साधु गृहस्थ के घर गोचरी गया, उन्हें दो लड्डू बहराकर कहे हे श्रमण! एक आप खाना, एक स्थविरों को देना, तो वह साधु एक स्वयं खाये, एक स्थविरों को दे, अगर वे विहार कर अन्यत्र गये हो तो उन्हें खोजकर यदि मिल जाये तो दे, दूसरों को न दे, किन्तु न मिलने पर प्रासुक भूमि देखकर पूंजकर परठ देवे, इसी तरह 2 से 10 वस्तुओं का कहना ये आहार संबंधी 9 आलापक इसी तरह, पातरा, पूंजणी, ओघा, चोलपट्टा, कम्बल, दण्ड, संस्तारक के 9-9 अलावा ये 9x8=72 पहले के 3 कुल 75 अलावा दान आसरी हुए। **आलोयणा** के 48 अलावा कोई साधु (1) गोचरी (2) शोचादि (3) विहार करते अनाचार सेवन कर लिया, फिर उसे अनाचार की आलोचना निन्दा गर्हा प्रतिक्रमण की इच्छा हुई, पहले मैं स्वयं करू फिर स्थविरों के पास जाकर निवेदन कर प्रायश्चित्त दण्ड

लूँगा आलोयणा कर वह चला, पहुँचने से पूर्व (1) स्थविर की जुबान (वाचा) बंद हो गई (2) खुद की वाचा बंद हो गई (3) स्थविर काल कर गये (4) स्वयं काल कर गया ये चार अलावा मार्ग के, इसी तरह 4 अलावा उपाश्रय पहुँचने के, इन 8 को गोचरी आदि 3 से गुणा करने पर 24, साधु-साध्वी के दो से गुणा करने पर 48 हुए। इस तरह आलोचना प्रायश्चित्त करने में अन्तराय आ जाये तो, उसके संकल्पादि की तत्परता से आलोचना का फल हो जाता है, जिस तरह अग्नि में डाला तंतु जला, रंग में डाला रंगा हुआ कहा जाता है चलमाणे चलिये आदि इसी तरह वह भी आराधक कहा जाता है।

(4) (5) जलते हुए दीपक में अग्नि जलती है दीपक नहीं जलता, जलते घर को देख घर जलता कहते हैं परन्तु यह व्यवहार से कथन है, निश्चय से अग्नि जलती है।

(6) औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण इन पाँच शरीर की अपेक्षा कायिकी, अधिकरणीकी, प्राद्वेषिकी, परितापनिकी, प्राणातिपातिकी ये पाँच क्रियाओं में से 24 दंडक के जीवों को जब तक वे अव्रती या सकषायी है, तीन क्रियाएँ लगती ही है-कायिकी अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी। इसके सिवाय औदारिक दंडकों में कभी तीन, कभी चार, कभी पाँच क्रियाएँ भी लगती हैं। कष्ट पहुँचाये तो 4 और मारे तो 5 क्रियाएँ लगती है। वैक्रिय आदि 4 शरीर वालों के तीन या 4 क्रियाएँ, अक्रिय भी। उनसे प्राणातिपातिकी क्रिया नहीं लगती क्योंकि अपूर्ण आयुष्य में नहीं मरते। निरूपक्रमी आयु वाले होते हैं। शेष 23 दंडक के जीव आसरी तीन, चार, पाँचों क्रिया लगती है। समुच्चय जीव और मनुष्य अक्रिय भी होते हैं 11 से 14 गुणस्थानों में इन पाँच में से 1 भी नहीं लगती। आहारक तैजस कार्मण शरीर से क्रिया किसी को 3, किसी को 4 लगती है, पाँचवीं नहीं लगती। एक जीव को एक जीव आसरी, एक जीव को बहुत जीव आसरी, बहुत को एक जीव आसरी, बहुत जीवों को बहुत जीव आसरी 4 अलावों में समुच्चय जीव और 24 दंडक 25 से गुणा करने से 100 को पाँच शरीर आसरी गुणा करने से 500 अलावा हुए। औदारिक शरीर को छोड़कर बाकी शरीर मारने से नहीं मरते। मनुष्य को छोड़ बाकी कोई (23 दंडक) अक्रिय नहीं होते।

78. अदत्त (भ.श. 8 उ.7) कुछ अन्य तीर्थी श्रमण भगवान महावीर के श्रमणों के पास आये ऐसा कई बार होता था, उन्हें जैन धर्म या जैन श्रमणों पर कई प्रश्न हो जाते थे, जिससे वे अपनी जिज्ञासा शांत करने हेतु श्रमणों, स्थविरों, गौतम स्वामी यहाँ तक कि श्रमण भगवान महावीर तक भी पहुँच जाते थे। कुतुहल शांत करते थे।

(1) प्रथम आक्षेप–भगवान महावीर के श्रमणों के पास अन्य तीर्थी आये कहने लगे–तुम असंयति हो, अविरत यावत् बाल अज्ञानी हो क्योंकि तुम अदत्त ग्रहण करते हो। गृहस्थ द्वारा दी गई भिक्षा जब तक तुम्हारे पात्र में पड़े, तब तक तुम अपनी नहीं मानते, यानि देना शुरू किया को 'अदत्त' मानते हो, बीच में ही कोई ले जाय तो वह गृहस्थ की मानते हो, अदत्त मानते हो, तो वह बीच में रहा हुआ ही तुम्हारे पात्र में पड़ता है तो तुम्हें अदत्त लगता है, इसलिए असंयत और बाल हो। तब स्थविरों ने कहा– हे आर्यो! हमारे मत में दिज्जमणे दिन्ने दिया जाने वाला दिया, देना शुरू किया, दिया, यह हमारा सिद्धांत है, अतः हम अदत्त ग्रहण नहीं करते हैं, बीच में गया हमारा गया ऐसा हम मानते हैं, हम दत्त लेते हैं, अदत्त का भोजन नहीं करते हैं। हम त्रिविधि त्रिविधि (तीन करण तीन योग) से संयति, विरत, यावत् एकान्त पंडित है, किन्तु तुम्हारी उपरोक्त मान्यता है अतः तुम बाल हो अज्ञानी हो। तुमको अदत्त लगता है।

(2) दूसरा आक्षेप–निरूत्तर हुए अन्य तीर्थियों ने दूसरा आक्षेप लगाया तुम लोग इधर–उधर फिरते ही रहते हो विहार, गोचरी, स्थंडिल जाते पृथ्वीकाय के जीवों को मारते हो इसलिए तुम असंयति, अविरति यावत् एकान्त बाल अज्ञानी हो। स्थविरों ने कहा हम शरीर की आवश्यक क्रियाओं से जब भी गमना गमन करते हैं, हम काया (शरीर) को (ग्लान आदि की सेवा) और सत्य (जीव रक्षा रूप संयम) को आश्रय रखकर एक स्थान से दूसरे स्थान यतनापूर्वक जाते हैं। पृथ्वीकाय के जीवों को दबाते नहीं मारते नहीं, पूर्ण यतना के साथ संयमपूर्वक चलते हैं, अतः हम असंयत आदि नहीं है। तुम जीवों के स्वरूप को नहीं समझते हो, अतः असंयति यावत् बाल हो।

(3) तीसरा आक्षेप–फिर वे अन्य तीर्थिक नासमझी से असत्याक्षेप लगा कहने लगे–तुम्हारी मान्यता गम्यमान अगत यानि राजगृह जाने वाला राजगृह नहीं गया कहते हो इसलिए तुम कभी गंतव्य पर नहीं पहुँचोगे, तब स्थविरों ने कहा हमारी मान्यता तो चलमाणे चलिए अतः राजगृह के लिए निकला व्यक्ति राजगृह गया ऐसा ही कहते हैं, क्योंकि वह निरंतर राजगृह पहुँच रहा है। वह तुम्हारी खोटी मान्यता है, अतः तुम कभी नहीं पहुँचोगे। ऐसा कह उनको निरूत्तर किया। गति प्रपात अध्ययन कहा। गति प्रपात के 5 भेद है। प्रयोगगति, ततगति, बंधनछेदनगति, उपपातगति, विहायोगति।

79. प्रत्यनीक (भ.श. 8 उ.8) (1) तीन प्रकार के प्रत्यनीक है (1) आचार्य का (2) उपाध्याय का (3) स्थविर का प्रत्यनीक द्वेषी, विरोधी, निन्दा करने वाले को प्रत्यनीक कहा है। ये तीन गुरु आसरी प्रत्यनीक हैं।

(2) गति अपेक्षा प्रत्यनीक–(1) इहलोक (इन्द्रियादि से प्रतिकूल अज्ञान के नष्ट होने वाला) (2) परलोक (इन्द्रिय भोग विषयों में तल्लीन रहने वाला) (3) उभय लोक प्रत्यनीक (चोरी आदि द्वारा इन्द्रियों के विषय भोगों में तल्लीन रहने वाला)

(3) समूह आसरी–(1) कु ल (एक गुरु के शिष्य) का प्रत्यनीक (2) गण का (बहुत गुरुओं का शिष्य) (3) संघ का (साधु–साध्वी श्रावक–श्राविका) का प्रत्यनीक।

(4) अनुकम्पा आसरी–(1) तपस्वी का प्रत्यनीक (2) ग्लान (बीमार साधु) का प्रत्यनीक (3) शैक्ष (नव दीक्षित साधु) का प्रत्यनीक।

(5) श्रुत आसरी–(1) सूत्र का प्रत्यनीक (2) अर्थ का प्रत्यनीक (3) तदुभय (सूत्र अर्थ दोनों का) प्रत्यनीक।

(6) भाव आसरी–(1) ज्ञान का प्रत्यनीक (2) दर्शन प्रत्यनीक (3) चारित्र प्रत्यनीक।

80. व्यवहार (भ.श. 8 उ.8) मोक्षाभिलाषी जीवों की प्रवृत्ति, निवृत्ति तथा प्रवृत्ति निवृत्ति के ज्ञान को व्यवहार कहते हैं। आगम व्यवहार, श्रुत व्यवहार, आज्ञा, धारणा, जीत व्यवहार।

(1) आगम व्यवहार–केवलज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, अवधिज्ञान, 14 पूर्व और दस पूर्व का ज्ञान आगम, और ज्ञान से चलाई प्रवृत्ति निवृत्ति को आगम व्यवहार कहते हैं।

(2) श्रुत व्यवहार–आचार कल्प आदि श्रुतज्ञान, श्रुतज्ञान से चलाई प्रवृत्ति निवृत्ति को श्रुत व्यवहार कहते हैं।

(3) आज्ञा व्यवहार–अतिचारों की आलोचना करने हेतु किसी गीतार्थ साधु ने अपने अगीतार्थ शिष्य के साथ दूसरे देश में रहे गीतार्थ साधु के पास गूढ़ अर्थ वाले पद भेजे, उन पदों को समझकर उस गीतार्थ साधु ने वापस गूढ़ अर्थो वाले पदों में अतिचारों की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त भेजा इसको आज्ञा व्यवहार कहते हैं।

(4) धारणा व्यवहार–द्रव्य क्षेत्र काल भाव का विचार करके गीतार्थ साधु ने जिस अपराध में जो प्रायश्चित्त दिया हो, उसकी धारणा से वैसे ही अपराध में उसी प्रकार

का प्रायश्चित्त देना धारणा व्यवहार, अथवा कोई साधु सब छेद सूत्र नहीं सीखता हो, उसे गुरु महाराज जो प्रायश्चित्त पद सिखावें, उन्हें धारण करना धारणा है।

(5) जीत व्यवहार-द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा शारीरिक बल धैर्य आदि की हानि विचार कर जो प्रायश्चित्त दिया जाता है, वह जीत व्यवहार, अथवा गीतार्थ साधु मिलकर जो मर्यादा बांधते है, वह जीत व्यवहार है। इन पाँच में से जिसके पास आगम व्यवहार हो वहाँ आगम व्यवहार से काम चलावे शेष की 4 की जरूरत नहीं। जिसके पास आगम व्यवहार न हो वह श्रुत व्यवहार से शेष तीन की जरूरत नहीं। जिसके पास श्रुत नहीं हो वह आज्ञा व्यवहार से वहाँ शेष 2 की जरूरत नहीं। आज्ञा व्यवहार से न हो तो धारणा से और धारणा व्यवहार न हो तो जीत व्यवहार से व्यवहार चलाना चाहिए। इन पाँच व्यवहारों से उचित प्रवृत्ति और पाप से निवृत्ति करता और कराता हुआ साधु भगवान् की आज्ञा का आराधक होता है।

81. ईरियावही का बंध (भ.श. 8 उ.8) बंध दो प्रकार का है, ईरियावही और साम्परायिक। यहाँ ईरियावही बंध की पृच्छा है, अत: ईरियावही का कथन है-(2) दसवें गुणस्थान को पार करने के बाद, जब समस्त कर्मों का बंध रूक जाता है, तब 11वें, 12वें तेरहवें गुणस्थान में ईरियावही का बंध होता है। ईरियावही का बंध नारकी, तिर्यंच-तिर्यंचणी, मनुष्य-मनुष्यणी, देव-देवांगना इनमें से मनुष्य मनुष्यणी भी वे जो पूर्व प्रतिपन्न आसरी है बांधते है बाकी 5 नहीं बांधते। जिसने पहले ईरियावही कर्म का बंधन किया हो उसे पूर्व प्रतिपन्न कहते हैं यानि जो ईयापथिक कर्म बंधन के दूसरे तीसरे आदि समय में वर्तमान में हो ऐसे बहुत स्त्री-पुरुष होते हैं इसके लिए भांगा नहीं बनता, क्योंकि पुरुष केवली स्त्री केवली दोनों प्रकार के केवली सदा होते हैं। ईर्यापथिक कर्म के बंधक वीतराग उपशान्त, क्षीणमोह, और सयोगी केवली गुणस्थान (11-12-13) में रहे जीव होते हैं। ईरियावही के साता वेदनीय कर्म में समावेश होता है। यह बंध 2 समय की स्थिति का होता है प्रथम समय में बंध, दूसरे में वेदन, तीसरे समय में क्षय हो जाता है। मोहनीय कर्म के संपूर्ण क्षय हो जाने के बाद वीतराग (कषाय रहित जीवों) के यह ईरियावही बंध नाम मात्र का बंध होता है। शैलेषीकरण की पूर्णता के साथ 14वाँ गुणस्थान प्रारंभ होता है तब यह बंध 14वें गुणस्थान में नहीं होता वे जीव अबंधक होते हैं। कर्मबंध नहींवत् होते हुए भी 11 से 13 गुणस्थान के जीव देशोन क्रोड़ पूर्व जीवित रहते हैं। वे अपने पूर्वबद्ध आयुष्य, नाम, गौत्र तथा वेदनीय इन 4 कर्मों के उदय से संसार

काल व्यतीत करते हैं। नया बंध नहीं होने पर भी पुराने स्टोक के कर्म इतने समय तक उत्कृष्ट चलते हैं अर्थात् यह ईरियावही बंध एक जीव की अपेक्षा देशोन क्रोड़ पूर्व वर्ष तक बंधता रह सकता है। इस संबंध में 1 भांगा सादि सांत ही होता है ईरियावही का बंध 4 गति 24 दंडक की अपेक्षा 3 गति 23 दंडक के जीव नहीं बांधते, मनुष्य गति मनुष्य दंडक में भी 10वें गुणस्थानवर्ती जीव नहीं बांधते। प्रति पद्यमान (जो जीव ईरियावही बंध के प्रथम समयवर्ती) जीव प्रथम समय के बंधक अर्थात् 11वें 12वें गुणस्थान के प्रथम समयवर्ती मनुष्य-मनुष्यणी बांधते है, वे कभी होते हैं, कभी नहीं भी होते, श्रेणी का विरह काल हो तो नहीं होते। इनके 4 असंयोगी, 4 द्विसंयोगी=8 भांगा होते हैं। (1) मनुष्य एक (2) मनुष्यणी एक (3) मनुष्य बहुत (4) मनुष्यणी बहुत (5) मनुष्य एक, मनुष्यणी एक (6) मनुष्य एक, मनुष्यणी बहुत (7) मनुष्य बहुत, मनुष्यणी एक (8) मनुष्य बहुत, मनुष्यणी बहुत।

(3) ईरियावही बंध-स्त्री बांधती है, पुरुष बांधता है, नपुंसक बांधता है, बहुत स्त्री, बहुत पुरुष, बहुत नपुंसक नो स्त्री नो पुरुष नो नपुंसक इनमें से स्त्री पुरुष नपुंसक नहीं बांधते ये बहुत भी नहीं बांधते सिर्फ नो स्त्री नो पुरुष नो नपुंसक बांधता है। वेद की अपेक्षा ईरियावही बंध नहीं होता वेद तो 9वें गुणस्थान में उदय समाप्त हो जाता है। पूर्व भाव की अपेक्षा स्त्री, पुरुष नपुंसक तीनों ही लिंगी ईरियावही बंध करते हैं। पूर्व प्रतिपन्न आसरी वेद रहित अवेदी बांधते है। वर्त्तमान प्रतिपन्न वेद रहित एक जीव तथा बहुत जीव बांधते है इसके 26 भांगे है असंयोगी दो संयोगी तीन संयोगी। पच्छाकड़ा का अर्थ पूर्व भाव की अपेक्षा पहले स्त्री था वेद रहित स्त्री पच्छाकड़ा यों तीनों में समझना।

असंयोगी 6 भांगे (1) स्त्री पच्छाकड़ा एक (2) पुरुष पच्छाकड़ा एक (3) नपुंसक पच्छाकड़ा एक (4) स्त्री पच्छाकड़ा बहुत (5) पुरुष पच्छाकड़ा बहुत (6) नपुंसक पच्छाकड़ा बहुत।

दो संयोगी 12 भांगे-(1) स्त्री पच्छाकड़ा एक, पुरुष पच्छाकड़ा एक (2) स्त्री पच्छाकड़ा एक, पुरुष पच्छाकड़ा बहुत (3) स्त्री पच्छाकड़ा बहुत, पुरुष पच्छाकड़ा एक (3) (4) स्त्री पच्छाकड़ा बहुत, पुरुष पच्छाकड़ा बहुत (33) इसी तरह 5 से 12 स्त्री पुरुष की तरह स्त्री-नपुंसक के 4 और पुरुष-नपुंसक के 4 और कहे ये 12 भांगे तीन संयोगी में 8 भांगे आंक 111, 113, 131, 133, 311, 313, 331, 333 कहना। ये सभी भांगे प्रथम समयवर्ती की अपेक्षा से बनते हैं।

(4) काल की अपेक्षा से दो प्रकार से कथन है (1) एक भव की अपेक्षा ग्रहणाकर्ष से (2) अनेक भव की अपेक्षा से तीन काल की अपेक्षा से ईरियावही बंध संबंधी 8 विकल्प इस प्रकार है-

(1) बांधा, बांधता है, बांधेगा-13वें गुणस्थान के द्विचरम समय तक

(2) बांधा, बांधता है, नहीं बांधेगा-13वें गुणस्थान के चरम समय में

(3) बांधा, नहीं बांधता है, बांधेगा-11वें गुणस्थान से गिरे हुए

(4) बांधा, नहीं बांधता, नहीं बांधेगा-14 गुणस्थानवर्ती

(5) नहीं बाधा, बांधता है, बांधेगा-11वें 12वें गुणस्थान के प्रारंभ में

(6) नहीं बांधा, बांधता है, नहीं बांधेगा-यह अनेक भव की अपेक्षा है,

(7) नहीं बांधा, नहीं बांधता है, बांधेगा-10वें गुणस्थान के चरम समयवर्ती

(8) नहीं बांधा, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा-अभवी में

एक भव आसरी भांगा पावे 7 छठा टला, **बहुत भव आसरी** भांगा पावे 8। **बहुत भव आसरी** पहला भांगा उस जीव में पाया जाता है, जिसने गत (पूर्व भव) काल में उपशम श्रेणी की थी, वर्तमान में उपशम श्रेणी में बांधता है, और आगामी भव में श्रेणी करेगा उसमें बांधेगा। दूसरा भांगा उस जीव में पाया जाता है जिसने पूर्व भव में उपशम श्रेणी की थी उससे बांधा, वर्तमान में क्षपक श्रेणी में बांधता है, फिर मोक्ष चला जायेगा नहीं बांधेगा।

छठा भांगा शून्य कहीं नहीं पाया जाता। ग्रहणाकर्ष में पृच्छा के एक समय की अपेक्षा होती है, इसलिए छठा भांगा-पहले पूर्व में नहीं बांधा व वर्तमान समय में 11वें गुणस्थान के प्रथम में बांधता है, फिर द्वितीय समय से नहीं बांधेगा ऐसा नहीं होता है। इसलिए एक भव यह ग्रहणाकर्ष का भंग नहीं होता, एक भवाकर्ष में होता है। यथा-पूर्व भवों में नहीं बांधा वर्तमान भव में क्षपक श्रेणी में बांधता है, फिर भविष्य में मोक्ष चला जायेगा नहीं बांधेगा। इस प्रकार अनेक भव की अपेक्षा यह भंग होता है और ग्रहणाकर्ष में एक भव, प्रथम समय या पृच्छा समय की अपेक्षा यह छठा भंग नहीं होता। ईरियावही का बंध में जीव अपने सर्व आत्म प्रदेशों से ग्रहण किये सर्व कर्म वर्गणा पुद्‌गलों को बांधता है सर्व से सर्व का बंध करता है।

5 (1) अनादि अनन्त जीव ईरियावही का बंध नहीं करता

(2) अनादि सांत जीव ईरियावही का बंध नहीं करता

(3) सादि अनन्त जीव ईरियावही का बंध नहीं करता

(4) सादि सांत जीव ईरियावही का बंध करता है।

6 ईरियावही का बंध देश से देश नहीं, देश से सर्व नहीं, सर्व से देश नहीं। सर्व आत्म प्रदेशों से सर्व ईरियावही कर्म का बंध होता है। सर्व से सर्व का बंध होता हैं।

82. सम्पराय बंध (भ.श. 8 उ.8) दसवें गुणस्थानवर्ती तक के सकषायी जीव जो भी कर्म बंध करते हैं, उसे सम्पराय बंध कहते हैं। यह बंध 4 गति 24 दंडक में शाश्वत होता है।

(1) सम्पराय कर्म नारक, तिर्यंच, तिर्यंचाणी, मनुष्य, मनुष्याणी, देवता, देवी बंध करते हैं।

(2) सम्पराय बंध स्त्री पुरुष नपुंसक तीनों वेद में होता है, अवेदी में भी 9वें 10वें गुणस्थान में बंधता है। एक जीव भी बांधता है बहुत जीव भी बांधते हैं। वैसे सभी सकषायी जीव बांधते हैं एक वचन पूछने वाले की अपेक्षा से।

(3) अवेदी के पूर्व भाव की अपेक्षा तीनों लिंगों स्त्री पुरुष नपुंसक यह सम्पराय कर्म 9वें 10वें गुणस्थान में बांधते हैं। विरह की अपेक्षा श्रेणी अशाश्वत होने के कारण ये तीनों अशाश्वत होने से पच्छाकड़ा की अपेक्षा पूर्ववत् (ईरियावही की तरह) 26 भांगों के बंध के अनुसार कहना।

(4) तीन काल की अपेक्षा सम्पराय कर्म में 4 भांगे (1) बांधा है, बांधता है, बांधेगा-अभवी जीव की अपेक्षा।

(2) बांधा है, बांधता है, नहीं बांधेगा-भवी जीव की अपेक्षा।

(3) बांधा है, नहीं बांधता है, बांधेगा-उपशम श्रेणी की अपेक्षा।

(4) बांधा है, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा-क्षपक श्रेणी की अपेक्षा।

5 (1) अनादि अनन्त-अभवी की अपेक्षा सम्परायिक बंध करता है।

(2) अनादि सान्त-भवी की अपेक्षा सम्परायिक बंध करता है।

(3) आदि सांत-श्रेणी से पड़िवाई की अपेक्षा सम्परायिक बंध करता है।

(4) सादि अनन्त-यह भंग नहीं होता।

6 सम्पराय बंध भी-देश से देश नहीं, देश से सर्व नहीं, सर्व से देश नहीं, सर्व से सर्व का बंध होता है। तीन भांगे नहीं।

83. कर्म और परिषह (भ.श. 8 उ.8) (1) कर्म प्रकृतियाँ 8 है 1 ज्ञानावरणीय 2 दर्शनावरणीय 3 वेदनीय 4 मोहनीय 5 आयु 6 नाम 7 गोत्र 8 अन्तराय।

(2) परिषह 22 है-क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, अचेल, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, जल्ल, सत्कार-पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, दर्शन परिषह।

(3) ज्ञानावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, अन्तराय इन 4 कर्मों के उदय से 22 परिषह आते है-

कर्मोदय	परिषह
1. ज्ञानावरणीय से	2 परिषह-(1) प्रज्ञा परिषह (मतिश्रुत ज्ञानावरणीय के उदय से), (2) अज्ञान परिषह-अवधि, मन:पर्यव, केवलज्ञान के आवरण से उदय से। बात समझ में नहीं आना प्रज्ञा, विशिष्ट ज्ञान न होना अज्ञान।
2. वेदनीय कर्म से	11 परिषह-(1) भूख, (2) प्यास, (3) शीत, (4) उष्ण, (5) दंशमशक, (6) चर्या, (7) शय्या, (8) वध, (9) रोग, (10) तृणस्पर्श, (11) जल्लमेल परिषह, ये सभी असाता वेदनीय के उदय से।
3. मोहनीय कर्म से	8 परिषह-दर्शन मोहनीय के उदय से (1) दर्शन परिषह, चारित्र मोहनीय के उदय से 7 परिषह (1) अचेल (2) अरति (3) स्त्री (4) निसिहिया (निषद्या) (5) आक्रोश (6) याचना (7) सत्कार-पुरस्कार। जुगुप्सा मोह से अचेल, अरति मोह से-अरति, वेद मोह से स्त्री, भय मोह से-निषद्या, मान मोहनीय से तीन शेष (आक्रोश, याचना, सत्कार-पुरस्कार)।
4. अन्तराय कर्म से	1 परिषह-अलाभ परिषह

गुणस्थान	परिषह	कर्मबंधक
1 से 7 गुणस्थान	22 परिषह	7 कर्म बंधक (3, 8, 9 गुण) 8 कर्म बंधक (4, 5, 6, 7 गुण स्थान के 22)
8वें गुणस्थान	21 परिषह (दर्शन परिषह नहीं)	20 परिषह वेदेगा शीत, उष्ण दो में से 1 तथा चर्या निषद्या में से एक (7 या 8 के बंधक)
9वें गुणस्थान	18 परिषह (अरति, अचेल, निषद्या नहीं)	7 या 8 के बंधक
10वें गुणस्थान में	14 परिषह स्त्री, आक्रोश, याचना	6 कर्म के बंधक (आयुष्य, मोह वर्जकर) 10वें गुणस्थान में
(10-11-12 गुण में)	सत्कार-पुरस्कार नहीं	11वें 12 गुणस्थान में 1 कर्म का बंधक (वेदनीय) वीतरागी छद्मस्थ
	(मोहनीय के 8 कम हो गये)	किन्तु एक साथ 14 में से 12 परिषह वेदते हैं।
13वें 14वें गुणस्थान में	11 परिषह-वेदनीय के	11 में से 9 वेदते है एक साथ (शीत-उष्ण, चर्या-निषद्या में से एक-एक) चौदहवां गुण. अबंध
सिद्ध भगवान	अव्याबाध सुख होने से परिषह नहीं	

84. बंध (प्रयोग बंध-विश्रसा बंध) (भ.श. 8 उ.9) (1) बंध के दो प्रकार (1) प्रयोग बंध, (2) विश्रसा बंध

(2) विस्रसा बंध के दो भेद और प्रभेद आदि-मन वचन काया के योग से प्रयोग बंध, स्वाभाविक बंधे विस्रसा बंध (1) सादि विस्रसा बंध, (2) अनादि विस्रसा बंध

(3) अनादि विस्रसा बंध के तीन भेद-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय अन्योन्य अनादि विस्रसा बंध इनका बंध अनन्त काल तक का रहने का है। ये तीनों देश बंध है, सर्वबंध नहीं।

(4) सादि विस्रसा बंध के तीन भेद-(1) **बंधन प्रत्ययिक**-स्निग्धता आदि गुणों से परमाणुओं का जो बंध होता है वह बंधन प्रत्ययिक बंध एक परमाणु से लेकर अनन्त परमाणु तक स्निग्धता एवं रूक्षता की विमात्रा से जो भी बंध होता है जघन्य गुण वर्जकर स्निग्ध-स्निग्ध का विषम बंध होता है, सम-बंध नहीं। रूक्ष रूक्ष का जघन्य गुण वर्जकर-विषम बंध होता है। एक गुण वर्जकर स्निग्ध रूक्ष का समबंध और विषम बंध होते हैं। सम्मिलित बड़ा स्कंध बनता है, यह बंधन प्रत्ययिक विस्रसा सादि बंध है, ये बंध स्वत: पुद्गलों की योग्यता से संयोग से होते रहते हैं। समय जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्यात काल तक रहता है।

(2) भाजन प्रत्ययिक बंध-गुड़ आदि पदार्थ किसी बर्तन में रखे हो कुछ समय बाद उसका स्वत: बंध हो जाता है, यह भाजन प्रत्यायिक विस्रसा सादि बंध है जघन्य अन्तमुहुर्त उत्कृष्ट संख्यात काल तक रहता है। (3) परिणाम-प्रत्ययिक विस्रसा बंध-बादल, इन्द्रधनुष वगैरह के बंध होते हैं, वे स्वत: परिणमन से होते है। उन्हें पारिणामिक प्रत्ययिक बंध कहते हैं इनकी स्थिति जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 6 मास की होती है।

(6) प्रयोग बंध के तीन भेद-(1) अनादि अपर्यवसित (अनादि अनन्त) (2) सादि अपर्यवसित (सादि अनंत) (3) सादि सपर्यवसित (सादि सांत)। **अनादि अनंत**-जीव के आठ मध्य प्रदेशों का बंध है उसमें भी तीन-तीन प्रदेशों (जोड़ों का) बंध अनादि अनन्त है वे आठों भी सदा साथ में ही रहते हैं। शेष इधर-उधर होते रहते हैं।

सादि अनन्त-सिद्ध भगवान के असंख्य आत्मप्रदेशों का जो बंध है वह सादि अनन्तकाल का है।

सादि सांत-के 4 प्रकार हैं। (1) **आलापन बंध**-घास, लकड़ी आदि का भारा रस्सी से बंधा जाता है, वह बांधना आलापन (अलावण) बंध है। (2) **अलियावण बंध**-यह 4 प्रकार का है-(1) लेसणा (श्लेषणा) बंध चूना, मिट्टी, लाख, श्लेष आदि से किसी वस्तु को चिपकाना।

(2) उच्चय बंध-किसी वस्तु को ढ़ेर करके उसको बाहर से बंधकर दिया जाता है। (3) समुच्चय बंध-मकान, तालाब, कुँआ, बावड़ी, नगरकोट, खाई, मंदिर आदि का सघन बंध निर्माण समुच्चय बंध है। (4) संहनन बंध-गाड़ी, रथ, शिविका, कड़ाई, कुर्सी, पलंग आदि के बीच में जोड़ रूप बंधन होता है वह देश संहनन बंध और दूध और पानी का एकमेक होना सर्व संहनन बंध है। आलापन और आलीन (अलियावण) बंध की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्याता काल की है।

(3) शरीर बंध-इसके दो भेद (1) पूर्व प्रयोग प्रत्ययिक-नरकादि संसारी जीव वेदनीय कषायादि समुद्घात द्वारा तैजस कार्मण शरीर के प्रदेशों को लंबा-चौड़ा विस्तृत कर पीछा संकोचे बांधे यह पूर्व प्रयोग शरीर बंध है। केवली भगवान के केवली समुद्घात में तीसरे चौथे पाँचवें समय में सर्वलोक व्यापी तैजस कार्मण का जो बंध है वह वर्तमान प्रत्ययिक (प्रत्युपन्न-प्रयोग प्रत्ययिक) शरीर बंध है क्योंकि केवली समुद्घात भूतकाल में कभी नहीं हुई इसलिए उसे वर्तमान प्रत्ययिक कहा है।

(4) शरीर प्रयोग बंध-वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से एवं औदारिक आदि नामकर्म के उदय से जीव शरीर योग्य पुद्गल ग्रहण करके जो बंध करता है, वह प्रयोग बंध है। इसमें जीव का पाँचों शरीर के बंध में प्रयत्न होने से शरीर प्रयोग बंध कहा है (1) औदारिक शरीर प्रयोग बंध (2) वैक्रिय शरीर प्रयोग बंध (3) आहारक शरीर प्रयोग बंध (4) तैजस शरीर प्रयोग बंध (5) कार्मण शरीर प्रयोग बंध।

बंध के प्रकार				
प्रयोग बंध			विश्रसा बंध	
अनादिअनंत	सादिअनंत	सादिसांत	अनादि विश्रसा	सादि विश्रसा
जीव के आठ प्रदेश	सिद्ध के प्रदेश		(1) धर्मास्तिकाय वि.बं. (2) अधर्मास्तिकाय वि.बं. (3) आकाशास्तिकाय वि.बं.	(1) बंधन प्रत्ययिक (2) भाजन प्रत्ययिक (3) पारिणामिक प्रत्ययिक

आलापन	अलियावण	शरीरबंध	शरीर प्रयोग बंध
गठ्ठादि बांधना	(1) श्लेषणा	(1) पूर्व प्रयोग	(1) औदारिक
	(2) उच्चय	(2) वर्तमान प्रयोग	(2) वैक्रिय
	(3) समुच्चय	(केवली)	(3) आहारक
	(4) संहनन		(4) तैजस
			(5) कार्मण

85. देशबंध सर्वबंध (भ.श. 8 उ.9) (1) शरीर प्रयोग बंध औदारिक शरीर 8 बोलों से बंधता है (1) वीर्य (2) सयोग (मन आदि) (3) द्रव्य (पुद्गल) (4) द्रव्य (5) कर्म (6) योग (कायादि) (7) भव (8) आयुष्य।

पाँचों शरीरों का प्रथम समयवर्ती प्रयोग बंध ''सर्वबंध'' कहलाता है और शेष सभी समयों में प्रयोग ''देशबंध'' कहलाता है। वैक्रिय या आहारिक लब्धि वाले जब शरीर बनाते है तो भी प्रथम समय सर्वबंध और बाद के समयों में देशबंध होता है। जो प्रथम समय (उत्पन्न होते हुए) आहार ग्रहण कर शरीर बनाता है वह सर्वबंध है, शेष पूरे जीवन (वैक्रियादि लब्धि प्रयोग के प्रथम समय को छोड़कर) देशबंध होता है। वाटेवहता के दो समय अनाहारक अवस्था में तीन शरीर की अपेक्षा देशबंध सर्वबंध दोनों नहीं होते। (2) औदारिक शरीर 12 ठिकाणे पाया जाता है समुच्चय जीव, समुच्चय एकेन्द्रिय, पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य।

(3-4) सर्वबंध की स्थिति देशबंध बोल	जघन्य उत्कृष्ट 1 समय है जघन्य स्थिति	देशबंध की स्थिति इस प्रकार है-उत्कृष्ट स्थिति
1 से 3 जीव, तिर्यंच, मनुष्य	1 समय	तीन पल्योपम में एक समय कम
4-5 एकेन्द्रिय, वायुकाय	1 समय	अपनी-अपनी स्थिति से एक समय कम
6 से 12-चार स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय	3 समय कम एक क्षुल्लक भव व	अपनी-अपनी स्थिति से 1 समय कम

एक अन्तर्मुहूर्त में 65536 क्षुल्लक भव होते हैं, एक श्वासोच्छवास में 17 झाझेरा खुड्डाग भव होते हैं।

(5) समुच्चय जीव के **सर्वबंध** का अंतर एक क्षुल्लक भव में तीन समय कम का अन्तर उत्कृष्ट 33 सागर क्रोड़ पूर्व से एक समय अधिक। पहला समय सर्वबंध का एक समय कम क्रोड़ पूर्व देशबंध में और 33 सागर देवता में रहा, देवभव से चवकर वापस आते दो समय वाटेवहता इस प्रकार सर्वबंधक का अन्तर हुआ।

(6) समुच्चय जीव के **देशबंध** का जघन्य अन्तर 1 समय उत्कृष्ट 33 सागर से तीन समय अधिक। तेतीस सागर देवता में रहा, दो समय वाटेवहता में, 1 समय सर्वबंध में लगा इस तरह उत्कृष्ट अन्तर 3 समय और 33 सागर का हुआ।

(7) **स्वकाय अन्तर**-एकेन्द्रिय मरकर एकेन्द्रिय में उत्पन्न होवे उसे स्वकाय कहते हैं। सर्वबंध में जघन्य एक खुड्डुग भव (क्षुल्लक) में तीन समय कम उत्कृष्ट अपनी-अपनी स्थिति से एक समय अधिक। देशबंध का अन्तर-4 बोलों में (समुच्चय एकेन्द्रिय, वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त। 7 बोलों में (4 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में) जघन्य 1 समय उत्कृष्ट तीन समय

परकाय अन्तर-11 बोलों (समुच्चय एकेन्द्रिय, पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य)

सर्वबंध/देशबंध	बोल	जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति
सर्वबंध का	समुच्चय एकेन्द्रिय	2 क्षुल्लक भव में तीन समय कम	2000 सागरोपम झाझेरा
	वनस्पतिकाय	2 क्षुल्लक भव में तीन समय कम	पृथ्वीकाल
	शेष 9 बोलों का	2 क्षुल्लक भव में तीन समय कम	अनन्त वनस्पति काल
देशबंध का	समुच्चय एकेन्द्रिय	1 समय अधिक 1 क्षुल्लक भव	2000 सागर झाझेरा
	वनस्पतिकाय	1 समय अधिक 1 क्षुल्लक भव	पृथ्वीकाल
	शेष 9 बोलों का	1 समय अधिक 1 क्षुल्लक भव	वनस्पति काल अनन्त काल

(8) सबसे थोड़े औदारिक शरीर के सर्वबंधक उससे अबंधक विशेषाधिक उससे देशबंधक असंख्यात गुणा।

(9) वैक्रिय शरीर 9 बोलों से बंधता है आठ पूर्ववत् नवमा बोल वैक्रिय लब्धि।

(10) वैक्रिय शरीर 6 ठिकाणे पाया जाता है (1) समुच्चय जीव (2) नारकी (3) देवता (4) वायुकाय (5) तिर्यंच पंचेन्द्रिय (6) मनुष्य।

(11) वैक्रिय शरीर की सर्वबंध की स्थिति सर्वत्र 1 समय होती है। समुच्चय जीव में 2 समय भी होती है।

(12) देशबंध (वैक्रिय शरीर) स्थिति	जघन्य	उत्कृष्ट
(1) समुच्चय जीव	एक समय	33 सागर में 1 समय कम
(2) वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य	एक समय	अन्तर्मुहूर्त
(3) नारकी, देवता	10000 वर्ष में तीन समय कम	33 सागर में 1 समय कम

(13) वैक्रिय शरीर में सर्वबंध, देशबंध का अन्तर-

बोल	सर्वबंध		देशबंध	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
समुच्चय जीव	एक समय	वनस्पति काल	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान
वायुकाय स्वकाय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल (क्षेत्र पल का असंख्यांश)	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान

वायकाय परकाय	अन्तर्मुहूर्त	वनस्पति काल	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान
ति.पं. मनुष्य स्वकाय	अन्तर्मुहूर्त	प्रत्येक करोड़ पूर्व	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान
ति.पं. मनुष्य परकाय	अन्तर्मुहूर्त	वनस्पति काल	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान
नारकी देवता स्वकाय	अन्तर नहीं	वनस्पति काल	सर्वबंध के समान	सर्वबंध के समान
नारकी से 8वें देव परकाय	अपनी-अपनी स्थिति से अन्तर्मुहूर्त अधिक	वनस्पति काल (साधिक एक भव)	अन्तर्मुहूर्त	वनस्पति काल
9 देव से नवग्रैवेयक परकाय का	अपनी-अपनी स्थिति से प्रत्येक वर्ष अधिक	वनस्पति काल (साधिक एक भव)	प्रत्येक वर्ष	वनस्पति काल
चार अणुत्तर विमान	अपनी-अपनी स्थिति से प्रत्येक वर्ष अधिक	संख्याता सागरोपम	प्रत्येक वर्ष	संख्याता सागरोपम (साधिक 1 भव)
सर्वार्थ सिद्ध	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं

(14) सबसे थोड़े वैक्रिय शरीर के सर्वबंध, उससे देशबंधक असंख्यात गुणा उससे अबंधक अनन्तगुणा है।

(15) आहारक शरीर 9 बोलों से बंधता है-8 बोल औदारिक जैसे नवमां बोल आहारक लब्धि है।

(16) आहारक शरीर दो ठिकाणे पाया जाता है-समुच्चय जीव और मनुष्य में

(17) आहारक शरीर के सर्वबंध की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट-एक समय, देशबंध की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

(18) देशबंध सर्वबंध का अन्तर-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश ऊणा अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल का।

(19) सबसे थोड़े आहारक शरीर के सर्वबंधक उससे देशबंधक संख्यातगुणा उससे अबंधक अनन्तगुणा।

20 से 25 तैजस कार्मण शरीर 8 बोलों से बंधता है (1) द्रव्य (पुद्गल) (2) वीर्य (ग्रहण करता है) (3) संयोग (मन के परिणाम) (4) योग (काया की प्रवृत्ति) (5) कर्म (शुभाशुभ) (6) आयुष्य (लम्बा) (7) भव (औदारिक के लिए तिर्यंच मनुष्य का) (8) काल (आरों के समय अनुसार शरीर की अवगाहना)। तैजस कार्मण शरीर 24 दंडक में पाया जाता है। सर्वबंध नहीं है, देशबंध होता है। तैजस कार्मण शरीर के स्थिति के 2 भांगे (1) अनादि अनन्त (अभवी) (2) अनादि सांत (भवी)। तैजस कार्मण शरीर में कोई अन्तर नहीं होता। सबसे थोड़े तैजस कार्मण शरीर के अबंधक उससे देशबंधक अनन्तगुणा।

(26) पाँचों शरीरों की शामिल अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़े आहारक शरीर के सर्वबंधक (2) आहारक शरीर के देशबंधक संख्यातगुणा उससे (3) वैक्रिय शरीर के सर्वबंधक असंख्यात गुणा (4) उससे वैक्रिय शरीर के देशबंधक असंख्यातगुणा (5) उससे तैजस कार्मण शरीर के अबंधक अनन्तगुणा (6) उससे औदारिक शरीर के सर्वबंधक विशेषाधिक (7) उससे औदारिक शरीर के अबंधक विशेषाधिक (8) उससे औदारिक शरीर के देशबंधक असंख्यातगुणा (9) उससे तैजस कार्मण शरीर के देशबंधक विशेषाधिक (10) उससे वैक्रिय शरीर के अबंधक विशेषाधिक (11) उससे आहारक शरीर के अबंधक विशेषाधिक।

86. आराधना पद (भ.श. 8 उ.10) आराधना के तीन प्रकार-ज्ञान, दर्शन, चारित्र आराधना।

ज्ञान आराधना आदि तीनों का उत्कृष्ट-मध्यम-जघन्य से पुन: तीन-तीन भेद किये 3×3=9 भेद है।

उत्कृष्ट-ज्ञानाराधना के उत्कृष्ट पद में 14 पूर्व का ज्ञान, मध्यम ज्ञानाराधना में 11 अंग का, जघन्य में 8 प्रवचन (दया) माता का ज्ञान है। **उत्कृष्ट दर्शन आराधना में**-क्षायिक समकित, मध्यम दर्शनाराधना में उत्कृष्ट क्षयोपशिक समकित और जघन्य में जघन्य क्षायोपशमिक समकित है। **उत्कृष्ट चारित्र आराधना में**-यथाख्यात चारित्र, मध्य में सूक्ष्म सम्पराय चारित्र-परिहार विशुद्धि चारित्र और जघन्य चारित्राराधना में छेदोपस्थापनीय और सामायिक चारित्र पाया जाता है।

उत्कृष्ट ज्ञानाराधना में-दर्शनाराधना 2-उत्कृष्ट और मध्यम दर्शनाराधना। चारित्राराधना 2-उत्कृष्ट, मध्यम।

उत्कृष्ट दर्शनाराधना में-ज्ञानाराधना 3, चारित्राराधना 3

उत्कृष्ट चारित्राराधना में-ज्ञानाराधना 3, उत्कृष्ट दर्शन आराधना की नियमा।

तीनों आराधना उत्कृष्ट करे तो-जघन्य उसी भव, उत्कृष्ट दो भव से मोक्ष जाता है।

तीनों आराधना मध्यम करे तो-जघन्य दो भव से (मनुष्य के दो या तीन) उत्कृष्ट 3 भव से

तीनों आराधना जघन्य करे तो-जघन्य 3 भव से उत्कृष्ट 7-8 भव से मोक्ष जाता है।

श्रुत आचार की चौभंगी-(1) श्रुत सम्पन्न हो और आचार संपन्न नहीं हो-देश विराधक (2) श्रुत संपन्न नहीं हो आचार संपन्न हो-देश आराधक (3) दोनों से संपन्न हो-सर्व आराधक (4) दोनों से रहित-सर्व विराधक।

87. पुद्‌गल परिणाम तथा कर्मों का (भ.श. 8 उ.10) (1) पुद्‌गल परिणाम 5 प्रकार के हैं (1) वर्ण-1 से 5 भेद काला, नीला, लाल, पीला, सफेद। (2) गंध-2 भेद सुरभिगंध, दुरभिगंध। (3) रस-5 भेद तीखा, कड़वा, कसैला, खट्टा, मीठा। (4) स्पर्श के 8 भेद-खुरदरा, सुंहाला, हल्का, भारी, ठंडा, गरम, लूखा, चिकना। (5) संठाण के 5 भेद-परिमंडल, वृत्त, तिकोना, चोकोर (चतुरस्त्र), आयत। इस तरह पुद्‌गल परिणाम के 25 भेद है।

(2) पुद्‌गलास्तिकाय के 8 भांगे (एक प्रदेशी से यावत् अनन्तप्रदेशी तक) (1) द्रव्य एक (2) द्रव्य देश एक (3) द्रव्य बहुत (4) द्रव्य देश बहुत (5) द्रव्य एक, द्रव्य देश एक (6) द्रव्य एक, द्रव्य देश बहुत (7) द्रव्य बहुत, द्रव्य देश एक (8) द्रव्य बहुत, द्रव्य देश बहुत।

इन आठ भांगों में से-(1) परमाणु में-दो भांगा पावे (1) कदाचित् द्रव्य, (2) कदाचित् द्रव्य देश।

(2) दो प्रदेशी में 5 भांगा-(1) कदाचित् द्रव्य, (2) कदाचित् द्रव्य देश, (3) कदाचित् द्रव्य बहुत, (4) कदाचित् बहुत द्रव्य देश, (5) कदाचित् द्रव्य एक कदाचित् द्रव्य देश एक।

(3) तीन प्रदेशी में 7 भांगा-(1) द्रव्य एक (2) द्रव्य देश एक (3) द्रव्य बहुत (4) द्रव्य देश बहुत (5) द्रव्य एक, द्रव्य देश एक (6) द्रव्य एक द्रव्य देश बहुत (7) द्रव्य बहुत, द्रव्य देश बहुत।

(4) चार प्रदेशी से यावत् अनन्त प्रदेशी तक 10 बोल में भांगा पावे 8-(1) द्रव्य एक, (2) द्रव्य देश एक (3) द्रव्य बहुत (4) द्रव्य देश बहुत। (5) द्रव्य एक, द्रव्य देश एक (6) द्रव्य एक, द्रव्य देश बहुत (7) द्रव्य बहुत, द्रव्य देश एक (8) द्रव्य बहुत, द्रव्य देश बहुत। ये सब मिलाकर 94 अलावा हुये।

(3-4) लोकाकाश के असंख्याता प्रदेश है। जितने लोकाकाश के प्रदेश है, उतने ही जीव के प्रदेश हैं।

(5) ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गौत्र अन्तराय ये 8 कर्म हैं।

(6) ज्ञानावरणीय के अनन्त अविभाग परिच्छेद है केवलज्ञानी भी जिनके विभाग की कल्पना न कर सके ऐसे सूक्ष्म अंश को अविभाग परिच्छेद कहते हैं। ये कर्म परमाणुओं की अपेक्षा अथवा ज्ञान के जितने अविभाग परिच्छेद को ढ़ककर रखा है

उनकी अपेक्षा से अनन्त है। इसी तरह शेष 7 कर्मों के भी अनन्त अविभाग परिच्छेद हैं। 24 ही दंडक के जीवों के 8 कर्म के अनन्त-अनन्त अविभाग परिच्छेद हैं।

(7) समुच्चय जीव में एक-एक जीव प्रदेश अनंत अविभाग परिच्छेदों से सिय आवेढ़िय परिपेढ़िय है, सिय नो आवेढ़िय परिवेढ़िय है (केवलज्ञानी के ज्ञानावरण कर्म नहीं होता उनके आवेढ़िय परिवेढ़िय नहीं होते। मनुष्य में 4 घाती कर्मों की भजना और 4 अघाती कर्मों की नियमा।

23 दंडक में-आठों कर्मों की नियमा

सिद्ध में-कर्म नहीं होते।

आठ कर्मों की नियमा भजना के 28 भांगे-ज्ञानावरणीय से 7, दर्शनावरणीय से 6, वेदनीय से 5, मोहनीय से 4, आयुष्य से तीन नाम से 2 गौत्र से 1 ये 28 भांगा नीचे चार्ट-

कर्म का नाम	ज्ञानावरण		दर्शनावरण		वेदनीय		मोहनीय		आयु		नाम		गौत्र		अन्तराय	
	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.	नि.	भ.
1 ज्ञानावरण	–	–	+	0	+	0	+	0	+	0	+	0	+	0	+	0
2 दर्शनावरण	+	0	–	–	+	0	+	0	+	0	+	0	+	0	+	0
3 वेदनीय	0	+	0	+	–	–	0	+	+	0	+	0	+	0	0	+
4 मोहनीय	+	0	+	0	+	0	–	–	+	0	+	0	+	0	+	0
5 आयु	0	+	0	+	+	0	0	+	–	–	+	0	+	0	0	+
6 नाम	0	+	0	+	+	0	0	+	+	0	–	–	+	0	0	+
7 गौत्र	0	+	0	+	+	0	0	+	+	0	+	0	–	–	0	+
8 अन्तराय	+	0	+	0	+	0	0	+	+	0	+	0	+	0	–	–

(0=भजना+नियमा) उपरोक्त कर्मों में इस प्रकार 28 भांगों में नियमा भजना होती है।

(8-9) जीव पुद्गल भी और पुद्गली भी। पुद्गलों के कर्मों को धारण किये होने से जीव पुद्गलवान् पुद्गली कहा जाता है, इसी प्रकार जीव श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा पोद्गली है और जीव की पुद्गल है। पुद्गल यानि पदार्थ नव पदार्थ, नव तत्वों में जीव भी एक पदार्थ होने से पर्यायवाची शब्द की अपेक्षा पुद्गल है (पुद्गली नहीं) इसलिए सिद्ध पुद्गल है, पुद्गली नहीं। 24 दंडक में जीव पुद्गली भी है पुद्गल भी है। आत्मा के असंख्य प्रदेश लोकाकाश

के प्रदेश जितने हैं, केवली समुद्घात के समय एक-एक आकाश प्रदेश पर एक-एक आत्मप्रदेश व्याप्त होकर सर्वलोक व्यापी होता है, ऐसा मात्र केवली समुद्घात के चौथे समय में ही होता है।

सूर्य का प्रकाश-सूर्य सदा एक सा चमकता है, सुबह-शाम हमसे अत्यंत दूर होने से लेश्या प्रतिघात होने से उसका प्रकाश मंद-मंदतम पहुँचता है, दोपहर के समय भरत क्षेत्र के ऊपर सीध में आने से लेश्याभिताप के प्रकाश तीव्र-तीव्रतम होने से दूर एवं ऊँचा दिखता है। सुबह-शाम नजदीक मंद ताप के कारण दिखता है। सूर्य का प्रकाश सदा एक सा रहता है, ऊँचाई भी सदा 800 योजन रहती है। तिरछी दूरी घटती-बढ़ती रहती है क्योंकि निरंतर 5251 योजन की प्रति मुहूर्त गति से अपने नियोजित मार्ग से आकाश में आगे बढ़ते ही रहता है, रूकता नहीं है। दूरी घटने-बढ़ने से परिवर्तन हमें दिखता है। सूर्य सदा 100 योजन ऊपर 1800 योजन नीचे और तिरछे प्रथम मंडल में 47263 योजन तपता है 5251 योजन 48 मिनट की चाल से परिक्रमा लगाता है सूर्योदय सूर्यास्त के समय गर्मी में हमारे यहाँ से 47263 योजन दूर होता है। सबसे बड़ा दिन तब होता है। सर्दी में दिन छोटे-छोटे होते हैं, जब सुबह-शाम की दूरी कम होती जाती है न्यूनतम 31831 योजन दूरी सबसे छोटे दिन में हो जाती है। तब सूर्य सबसे अंतिम मंडल में होता है। 5305 योजन प्रतिमुहूर्त चलता है, इस प्रकार सूर्य सदा वर्तमान क्षेत्र को अर्थात् जिस क्षेत्र से जब गुजरता है उसे अपने ताप क्षेत्र से प्रकाशित करता है। नीचे 1800 योजन तपने का सलिलावती और वप्रा विजय की अपेक्षा कहा है। ये दोनों विजय 1000 योजन समभूमि से नीचे है। सूर्य का ताप उस विजय तक बराबर पहुँचता है। जब सूर्य उसकी सीमा वाले आकाश से आकाश मंडल में चलता है।

88. 56 अन्तरद्वीपा (भ.श. 9 उ.3 से 30) (भ.श. 10 उ.1 से 28) जम्बूद्वीप में दक्षिण दिशा में चुल्ल हिमवान पर्वत है। पूर्व और पश्चिम में लवण समुद्र के जल से इस पर्वत का स्पर्श होता है वहाँ इस पर्वत से दोनों तरफ चारों दिशाओं में गजदंताकार दो-दो दाढ़ाओं के आकार में (दाढ़ाए नहीं है दाढ़ाओं की कल्पना की है) द्वीपों की श्रेणियाँ निकली है एक-एक दाढ़ा पर 7-7 अन्तरद्वीप है, यों चारों पर 28 अन्तरद्वीप है, इसी तरह उत्तर दिशा में शिखरी पर्वत पर भी 28 अन्तरद्वीप है ये वास्तव में समुद्र में आये हुए द्वीपमात्र है, प्रत्येक द्वीप के बीच में समुद्र का जल है,

परन्तु इनकी अवस्था ऐसी लगती है जो लाइनसर दाढ़ा जैसी महसूस होती है। सातों (एक दाढ़ पर) अन्तद्वीपों में प्रत्येक में सौ-सौ योजन का विस्तार बढ़ गया है, और जगती से दूरी भी इसी अनुपात से बढ़ी है जैसे 300 योजन का द्वीप जगती से दूरी 300 योजन, आगे 400 योजन का द्वीप जगती से दूरी भी 400 योजन, यों 900 योजन तक समझें। अन्तरद्वीपों के चारों तरफ पद्मवर वेदिका और पद्मवर वेदिका वनखंड से शोभित है। इन अन्तद्वीपों में युगलिया निवास करते हैं। इनके वज्र ऋषभ नाराच संहनन और समचतुस्र संस्थान होता है, इनकी अवगाहना 800 धनुष, आयु पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। 64 पसलियाँ होती हैं। 10 कल्पवृक्ष (मतंगा, भृंगा, तुडियंगा, दीवंगा, जोइयंगा, चित्तंगा, चित्तरसा, मणियंगा, गेहगारा, अणियणा) होते है, ये इच्छित वस्तु की प्राप्ति करते हैं। वहाँ असिमसि कृषि का व्यापार नहीं होता। राजा, राणी, नोकर, चाकर, ठाकर, मेला, महोत्सव, विवाह, सगाई, रथपालकी, डांस, मच्छर, संग्राम, रोग, शोक, कांटा, खीला, कंकर, अशुचि, दुर्गंध, सुकाल, दुष्काल, वृष्टि आदि नहीं होते। हाथी, घोड़ा होते हैं पर सवारी नहीं करते, गाय भैंसे होती है युगलियों के काम नहीं आती, सिंह सर्पादि है पर दुःख नहीं देते। गृद्धिपणा नहीं होता। युगल जन्मते हैं तब 79 दिन संतान का पालन करते हैं, अपनी आयु का छ महीना शेष रहने पर एक युगल संतान को जन्म देते हैं वे अल्प कषायी सरलमना संतोषी होते हैं। आयु पूर्ण कर देवलोक में उत्पन्न होते हैं। एकान्तरे आहार करते हैं, छींक उबासी लेते ही काल कर जाते हैं भवनपति वाणव्यंतर देवों में उत्पन्न होते हैं। 28 अन्तरद्वीपों के नाम इस प्रकार हैं इन्हीं नाम से दोनों पर्वतों पर 28-28 कुल 56 अन्तरद्वीप है प्रत्येक द्वीप समुद्र जल से आधा योजन ऊपर है।

ईशान कोण	आग्नेय कोण	नैऋत्य कोण	वायव्य कोण	जगती से दूरी योजन	लंबाई-चौड़ाई योजन	परिधि योजन
1. एकोरूक	आभासिक	वैषाणिक	नांगोलिक	300	300	949
2. हयकर्ण	गजकर्ण	गोकर्ण	शुष्कलीकर्ण	400	400	1265
3. आदर्शमुख	मेंढमुख	अयोमुख	गोमुख	500	500	1581
4. अश्वमुख	हस्तिमुख	सिंहमुख	व्याघ्रमुख	600	600	1897
5. अश्वकर्ण	हरिकर्ण	अकर्ण	कर्णप्रावरण	700	700	2213
6. उल्कामुख	मेघमुख	विद्युतमुख	विद्युदन्त	800	800	2529
7. घनदन्त	लष्टदन्त	गूढ़दन्त	शुद्धदन्त	900	900	2845

89. असोच्चा केवली (भ.श. 9 उ.31) किसी से वीतराग धर्म का श्रवण करके बोध को प्राप्त होकर, साधना, आराधना द्वारा केवलज्ञान प्राप्त करने वाले **सोच्चाकेवली**, और किसी से सुने बिना स्वतः अनुप्रेक्षा से विभंग, अवधि या जाति स्मरण आदि ज्ञान के द्वारा धर्मबोध को प्राप्त कर संयोग अनुसार परिणामों की विशुद्धि से श्रेणी में आगे बढ़ते हुए केवली बन जाने वाले असोच्चा केवली है। (1) कोई जीव केवली, केवली के श्रावक, केवली की श्राविका, केवली के उपासक, केवली की उपासिका, केवली के पाक्षिक (स्वयंबुद्ध), स्वयंबुद्ध के श्रावक, श्राविका, उपासक, उपासिका से सुने बिना ही केवली प्ररूपित श्रुतधर्म का लाभ प्राप्त करता है कोई जीव नहीं करता। क्योंकि जिसने (जीव ने) ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी केवली प्ररूपित श्रुतधर्म का लाभ प्राप्त करता है और जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया वह श्रुतधर्म का लाभ प्राप्त नहीं करता।

(2) कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना शुद्ध सम्यग् दर्शन प्राप्त कर सकता है, और कोई जीव इनसे सुने बिना शुद्ध सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं कर सकता। जिस जीव ने दर्शनावरण यानि दर्शन मोहनीय कर्म का क्षयोपशम किया है, वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है, और जिस जीव ने दर्शनावरण यानि दर्शन मोहनीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया वह शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं करता।

(3) कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना गृहवास छोड़कर मुंड होकर शुद्ध अणगारपन की प्रव्रज्या स्वीकार करता है, और कोई जीव नहीं करता। जिस जीव ने धर्मान्तराय यानि वीर्यान्तराय तथा चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी गृहवास छोड़ मुंड होकर शुद्ध अणगारपन की प्रव्रज्या स्वीकार करता है, जिस जीव ने वीर्यान्तराय तथा चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम नहीं किया है, वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना गृहवास छोड़ मुंड होकर शुद्ध अणगारपन की प्रव्रज्या स्वीकार नहीं करता।

(4) कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना शुद्ध ब्रह्मचर्यावास धारण करता है, कोई जीव सुने बिना नहीं करता क्योंकि जिस जीव ने चारित्रावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया वे केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी

शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करते है जो जीव चारित्रावरणीय कर्मों का क्षयोपशम नहीं किया वह धारण नहीं कर सकता।

(5) कोई जीव इन 10 के पास केवली प्ररूपित धर्म को सुने बिना शुद्ध संयम के द्वारा संयम यतना (संयम को स्वीकार कर उसके दोष को त्याग करने का प्रयत्न करना संयम यतना है) करता है और कोई नहीं करता। जिस जीव के यतनावरणीय (चारित्र में प्रवृत्ति करना यतना है, उसको आच्छादित करने वाला कर्म यतनावरणीय (वीर्यान्तराय) है। चारित्रावरणीय और वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम को यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहते है) कर्म का क्षयोपशम हुआ है, वह शुद्ध संयम के द्वारा संयम यतना करता है और जिसके क्षयोपशम नहीं हुआ वह नहीं करता।

(6) इन 10 के पास से सुने बिना कोई जीव शुद्ध संवर के द्वारा आश्रवों को रोकता है, कोई नहीं रोकता जिस जीव के अध्यवसानाकरणीय (भाव चारित्रावरणीय) कर्म का क्षयोपशम हुआ हो वह जीव शुद्ध संवर के आश्रवों को रोकता है, जिसके क्षयोपशम नहीं हुआ वह नहीं रोकता।

(7) इन 10 से केवली प्ररूपित धर्म सुने बिना कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिक (मतिज्ञान) ज्ञान उत्पन्न करता है, कोई जीव नहीं करता। जिस जीव के आभिनिबोधिक ज्ञानवरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ हो वह शुद्ध आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करता है, जिस जीव के क्षयोपशम नहीं हुआ वह नहीं करता है।

(8 से 10) इसी तरह श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान का भी कहना उस-उस ज्ञान में उस-उसके आवरण का क्षयोपशम कहना। (श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, मनःपर्यवज्ञानावरणीय) (11) इन 10 से सुने बिना कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न कर सकता है, कोई जीव नहीं करता। जिस जीव के केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हुआ है वह उत्पन्न कर सकता है, जिसने क्षय नहीं किया उत्पन्न नहीं कर सकता।

90. असोच्चा केवली (भ.श. 9 उ. 31) (1) केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका इन 10 से सुने बिना किसी जीव को केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान होता है, किसी को नहीं होता। जिस जीव के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ हो, यावत् केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हुआ हो उसको केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान होता है और जिस जीव के ज्ञानावरणीय

कर्म का क्षयोपशम और केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं हुआ हो उसे केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान नहीं होता।

(2) उस जीव को केवलज्ञान कैसे उत्पन्न होता है-कोई बाल तपस्वी निरंतर बेले-बेले पारणा कर, हाथ ऊँचा कर सूर्य की आतापना लेवे, उसे प्रकृति की भद्रता, उपशान्तता, प्रकृति (स्वभाव) से क्रोध, मान, माया, लोभ पतले होने से, प्रकृति की कोमलता और नम्रता से, कामभोगों से आसक्ति न होने से, भद्रता, विनीतता से किसी दिन शुभ अध्यवसाय से, परिणामों से, विशुद्ध लेश्या से, विभंगज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से, ईहा, अपोह, मार्गणा, गवेषणा करते हुए विभंग ज्ञान पैदा होता है, जिससे जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को जानता है, उत्कृष्ट असंख्यात हजार योजन जानता देखता है, जीवों को, अजीवों को, पाखंडी, आरंभवाले, परिग्रहवाले, संक्लेश को प्राप्त हुए जीवों को जानता है और विशुद्ध जीवों को भी जानता है। इसके बाद वह समकित को प्राप्त करता है, फिर श्रमण धर्म पर रूचि करता है, फिर लिंग स्वीकार करता है। मिथ्यात्व के परिणाम घटते-घटते, सम्यग्दर्शन के परिणाम बढ़ते-बढ़ते वह विभंग ज्ञान सम्यक्त्व युक्त होकर अवधिज्ञान में परिणमता है।

(3) उस अवधिज्ञानी में तीन लेश्याएं होती है-तेजो लेश्या, पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या, इन तीन विशुद्ध लेश्या में होते हैं।

(4-5) उस अवधिज्ञानी में तीन ज्ञान मति, श्रुत, अवधिज्ञान तीनों ज्ञान होते हैं। उनके मन वचन काया तीनों योग होते हैं।

(6) वे अवधिज्ञानी साकार (ज्ञान) उपयोग और अनाकार (दर्शन) उपयोग दोनों उपयोग वाले होते हैं।

(7-8) वे अवधिज्ञानी वज्रऋषभ नाराच संहनन वाले होते हैं, छ संस्थानों में से किसी एक संस्थान में होते हैं।

(9) वे अवधिज्ञानी जघन्य सात हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष की ऊँचाई वाले होते हैं।

(10) वे जघन्य आठ वर्ष से कुछ अधिक और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की आयुष्य वाले होते हैं।

(11-12) वे वेद सहित होते हैं, वेद रहित नहीं होते, स्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी नहीं होते, पुरुषवेदी या नपुंसकवेदी होते हैं। (पुरूषनपुंसक)

(13-14) वे सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं, उनमें संज्वलन के क्रोध मान माया लोभ ये 4 कषाय होती है।

(15-16) उनके असंख्याता अध्यवसाय होते हैं, उनके अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं, अप्रशस्त नहीं होते। फिर बढ़ते हुए अध्यवसायों से वे नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति के अनन्त भवों से अपनी आत्मा को मुक्त करते हैं। क्रमशः अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी संज्वलन कषायों का क्षय करते हैं। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय और मोहनीय का क्षय करते हैं। जिससे उनको अनन्त, अणुत्तर, व्याघात रहित, आवरण रहित, सर्व पदार्थों को ग्रहण करने वाला प्रतिपूर्ण श्रेष्ठ, केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न होता है। उम्र अधिक हो तो अन्य लिंगी से स्वलिंग धारण करते हैं। लिंग धारण किये बिना उपदेश नहीं देते।

(17) वे केवली भगवान केवली प्ररूपित धर्म का उपदेश नहीं देते (णो इणट्ठे समट्ठे) यावत् प्ररूपणा नहीं करते। किन्तु एक न्याय (उदाहरण) अथवा एक प्रश्न का उत्तर के सिवाय वे धर्म का उपदेश नहीं देते।

(18) वे केवली भगवान किसी को प्रव्रज्या नहीं देते, मुण्डित नहीं करते, अमुक के पास दीक्षा लो यह उपदेश करते हैं।

(19) वे केवली भगवान उसी भव में सिद्धबुद्ध मुक्त होकर सब दुःखों का अंत करते हैं।

(20) वे केवली भगवान **ऊर्ध्वलोक** में शब्दापाती, विकटापाती, गंधापाती और माल्यवन्त नामक गोल वैताढ्य पर्वत पर होते हैं, संहरण आसरी मेरू पर्वत के सौमनसवन और पांडुक वन में होते हैं। अधोलोक में भी होते हैं अधोलोक ग्रामादि विजय में या गुफा में होते हैं, संहरण आसरी पाताल में तथा भवनपतियों के भवनों में होते हैं। तिर्च्छा लोक में भी होते हैं-पन्द्रह कर्मभूमि में होते हैं, संहरण आसरी अढ़ाई द्वीप समुद्रों के एक भाग में होते हैं।

(21) केवली का यह वर्णन अन्य लिंगी की अपेक्षा होने से एक समय में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट 10 होते हैं।

91. सोच्चा केवली (भ.श. 9 उ.31) (1) केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका इन 10 से केवली प्ररूपित धर्म सुनकर किसी जीव को धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान उत्पन्न होता है, किसी जीव को नहीं। यहाँ सारा वर्णन असोच्चा की तरह 11 ही बोल में यहाँ असोच्चा की जगह सुनकर कहना है। जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया उसे धर्म का बोध और यावत् जिस जीव ने केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया उसे केवलज्ञान होता है।

कोई साधु निरंतर तेले तेले पारणा करता हुआ आत्मा को भावित करता हुआ विचरता है। प्रकृति की भद्रता, विनीतता आदि गुणों से यावत् अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से उसे अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है, वह उस अवधिज्ञान से जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को उत्कृष्ट अलोक में लोक प्रमाण असंख्यात खंडों को जानता देखता है।

(2) वे अवधिज्ञानी छः लेश्याओं (कृष्ण यावत् शुक्ल) में होते है, यहाँ जो छः लेश्या कही है यह द्रव्य लेश्या के हिसाब से कही है या लम्बी उम्र के कारण क्योंकि भाव लेश्या की अपेक्षा तीन प्रशस्त भाव लेश्या ही होती है, क्योंकि अवधिज्ञान प्रशस्त भाव लेश्याओं में ही होता है।

(3) वे मति, श्रुत, अवधि इन तीन या मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव इन चार ज्ञानों में होते हैं।

(4) सयोगी होते हैं, योग की तरह उपयोग, संहनन, संस्थान, ऊँचाई और आयुष्य असोच्चा में कहा उसी तरह यहाँ सोच्चा में भी कहना।

(5) सवेदी होते हैं अथवा अवेदी होते हैं, सवेदी हो तो स्त्री, पुरुष, नपुंसक और अवेदी हो तो क्षीणवेदी होते हैं, उपशांतवेदी नहीं होते।

(6) सषायी भी होते हैं, अकषायी भी होते हैं, सकषायी में संज्वलन का चोंक, त्रिक में मान माया लोभ, द्विक माया लोभ, एक में लोभ। अकषायी हो तो क्षीण कषाय होते हैं, उपशान्तकषायी नहीं होते।

(7) उनके असंख्यात प्रशस्त अध्यवसाय होते हैं, उनके बढ़ने से यावत् केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न हो जाते हैं।

(8) सोच्चा केवली भगवान केवली प्ररूपित धर्म का उपदेश करते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं।

(9-10) केवली भगवान प्रव्रज्या देते हैं, मुण्डित करते हैं। उनके शिष्य, प्रशिष्य भी प्रव्रज्या देते हैं, मुंडित करते हैं।

(11-12) केवली उसी भव में सिद्धबुद्ध मुक्त होकर सब दुःखों का अंत करते हैं। उनके शिष्य, प्रशिष्य भी मुक्त होते हैं।

(13) ऊर्ध्वलोक में भी, अधोलोक में भी, तिर्च्छालोक में भी होते हैं, सारा वर्णन असोच्चा केवली जैसा कहना।

(14) वे केवली भगवान एक समय में जघन्य में 1-2-3 यावत् उत्कृष्ट 108 सिद्ध होते हैं।

92. गांगेय अणगार के भांगा (भ.श. 9 उ.32) गांगेय नामक अणगार बहुश्रुत भगवान पार्श्वनाथ के शासन में विचरने वाले अणगार थे। उस समय भगवान महावीर और गोशालक यों दो तीर्थंकरों का विचरण विख्यात था। अनन्तकाल की परंपरा है कि तेवीसवें तीर्थंकर के शासन में विचरने वाले संत, 24वें तीर्थंकर को केवलज्ञान होने के बाद धीरे-धीरे विचरण एवं मिलन संयोग होते ही उनके शासन में स्वत: ही सरलता से मिल जाते हैं। अगले तीर्थंकर भगवान के शासन को समर्पित सरलता से हो जाते हैं। यहाँ दो तीर्थंकर की स्थिति गोशालक ने खड़ी कर दी थी, तपोबल से, देवी सहाय से एवं भगवान के पास करीब 6 वर्ष के अनुभव से खुद के तीर्थंकर जैसा बर्ताव जमा कर रखा था, ज्योतिष ज्ञान से तीन काल की बातें भी बता देता था, उनमें कुछ सत्य भी हो जाती थी, उसके प्रपंच में कई पूर्वधर ज्ञानी भी फँस चुके थे, गहरी सोच या शंका नहीं होने से चक्कर में फँस गये थे, गोशालक का शासन कर चुके थे, पूर्वधारी बहुश्रुतों के ज्ञान बल से भी गोशालक की क्षमता में वृद्धि हो गई थी। ऐसी परिस्थिति में कई बुद्धिशाली साधक तात्विक उलझन युक्त या चक्करदार प्रश्न पूछकर छद्मस्थ और केवली का निर्णय करते थे, ऐसे अनेक प्रसंग श्री भगवतीसूत्र में है, उसी में बहु विख्यात भंगजाल मय तात्विक गणित प्रश्न वाला यह गांगेय अणगार थे, अन्तत: सही निर्णय कर भगवान महावीर के शासन में समर्पित हुए और उसी भव में मोक्ष गये। उनके प्रश्नों का समाधान इस प्रकार है-

(1) नारकी के नैरयिक सान्तर भी उपजते हैं, और निरंतर भी, इसी तरह 5 स्थावर छोड़ 18 दंडकों में कहना।

(2) पाँच स्थावर के जीव सान्तर नहीं निरंतर उपजते हैं। (समय का व्यवधान हो अंतर हो वह सान्तर)।

(3) नारकी के नेरिये सान्तर भी उवटते हैं (निकलते) और निरंतर भी। 5 स्थावर छोड़ 18 दंडक में कहना। किन्तु ज्योतिषी और वैमानिक देवों में चवना कहना।

(4) पाँच स्थावर के जीव सान्तर नहीं निरंतर उवटते हैं।

(5) प्रवेशनक (एक गति से दूसरी गति में उत्पन्न होना) चार प्रकार-नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव प्रवेशनक।

(6) नैरयिक प्रवेशनक के 7 भेद-रत्नप्रभा पृथ्वी यावत् तम: तमाप्रभा पृथ्वी प्रवेशनक। तिर्यंच योनि प्रवेशनक के 5 भेद-एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय मनुष्य प्रवेशनक-2 भेद-संमुर्च्छिम और गर्भज।

देव प्रवेशनक-4 भेद-भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक

एकादि जीव जिस गति में प्रवेश करते हैं, उनके पद विकल्प भांगा संक्षेप में-

जीव	स्थान के पद	12 देवलोक संजोगी पद	7 नरक संजोगी पद	तिर्यंच संजोगी पद	मनुष्य संजोगी पद	देव संजोगी
1	1	12	7	5	2	4
2	3	66	21	10	1	6
3	7	220	35	10		4
4	15	495	35	5		1
5	31	792	21	1		
6	63	924	7			
7	127	792	1			
8	255	495				
9	511	220				
10	1023	66				
11	2047	12				
12	4095	1				

नरक में 10 जीव जावे उनके संजोगी विकल्प 466 होते हैं, रीति यह है-10 जीवों के विकल्प करने हो तो ऊपर 1 लिखना, नीचे नौ का अंक लिखना इस तरह दो संयोगी 9 विकल्प हुए। नौ को 8 से गुणा करके 2 का भाग दो तो तीन संजोगी 36 विकल्प हुए। 36 को 7 से गुणा करके 3 का भाग दो तो 4 संयोगी 84 विकल्प। 84 को 6 से गुणा कर 4 का भाग दो पाँच संयोगी 126 विकल्प। 126 को 5 से गुणा कर पाँच से भाग दो 126 विकल्प छ संयोगी। 126 को 4 से गुणा कर छ का भाग दो सात संयोगी 84 विकल्प फिर पद को विकल्प के साथ गुणा करने पर जो संख्या आवे वह भांगा, इस तरह सब जगह जान लेना।

स्थान के पद बनाने की रीति-सात नारकी के असंजोगी 7 पद। इन 7 को 6 से गुणा कर दो का भाग दो तो दो संजोगी 21 पद हुए। 21 को पाँच से गुणा कर तीन का भाग दो तीन संजोगी 35 पद। 35 को 4 से गुणा कर 4 का भाग दो चार संजोगी 35। 35 को 3 से गुणा कर पाँच का भाग दो पाँच संयोगी 21 पद। 21 को 2 से गुणा कर

6 का भाग दो छ संजोगी 7 पद 7 को 1 से गुणा कर 7 का भाग दो तो सात संयोगी 1 पद।

चार गति में एकादि जीवों के भांगों का यंत्र–

जीव	नरक के भांगे	तिर्यंच के भांगे	मनुष्य के भांगे	देवता के भांगे
1	7	5	2	4
2	28	15	3	10
3	84	35	4	20
4	210	70	5	35
5	462	126	6	56
6	924	210	7	
7	1716		8	
8	3003		9	
9	5005		10	
10	8008		11	
संख्याता	3337			
असंख्याता	3658			
उत्कृष्ट	64			

जैसे–सात नारकी में 1 जीव जावे तो 7 भांगा, 2 जीव जावे तो 28 भांगा, 3 जीव जावे तो 84 भांगा, 4 जीव जावे तो 210 भांगा, यावत् 10 जीव जावे तो 8008 भांगा, संख्याता जीव जावे तो 3337 भांगा, असंख्याता जीव जावे तो 3658 भांगा, उत्कृष्ट जीव जावे तो 64 भांगा।

नारकी के पद 127 होते हैं। असंजोगी 7, दो संयोगी 21, तीन संयोगी 35, चार संयोगी 35, पाँच संयोगी 21, छ संयोगी 7, सात संयोगी 1, यों कुल 7+21+35+35+21+7+1=127 पद हुए।

जैसे कोई **जीव एक** पहली नरक में, दूसरी नरक में या तीसरी नरक में यो एक–एक बढ़ते वह जीव 7वीं नरक में उत्पन्न होगा इस तरह एक जीव के नरक प्रवेशनक 7 भांगे हुए।

दो जीव नरक में–दोनों प्रथम नरक, दोनों दूसरी नरक यो दोनों सातवीं में ये 7 विकल्प हुए। दोनों अलग–अलग जाये तो 1 को प्रथम में कायम करके दूसरे को 1–2, 1–3, 1–4, 1–5, 1–6, 1–7, एक पहली में एक सातवीं में। फिर पहला को दूसरी में दूसरे को तीसरी में 2–3, 2–4, 2–5, 2–6, 2–7 पहले को तीसरी में रखकर 4 विकल्प 3–4, 3–5, 3–6, 3–7। पहले को चौथे में रखकर तीन विकल्प

4–5, 4–6, 4–7। एक को पाँचवीं में दूसरे को 5–6, 5–7 दो विकल्प। फिर 1 विकल्प 1 छठी में एक सातवीं में, ये कुल 6+5+4+3+2+1=21 विकल्प हुए यों 21+7=28 दो प्रवेशनक के हुए।

तीन जीव–(1) तीन जीव एक साथ जाने पर सात विकल्प। (2) तीनों दो नरक में जावे तो पूर्ववत् 21 विकल्प। यो पहली में दो दूसरी आदि में एक जाने के 21 विकल्प हुए ये 21+21=42 विकल्प द्विसंयोगी के (3) तीनों जीव अलग–अलग जाने के तीन संयोगी 35 विकल्प जैसे 1–2–3, 1–2–4, 1–2–5, 1–2–6 ऐसे 7+42+35=84 विकल्प तीन जीवों के। यो नीचे स्पष्टता दी गई है–

असंयोगी 7 पद–1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 ये 7 पद। 1 से 7 नरक के अंक समझना।

द्विसंयोगी 21 पद–	12, 13, 14, 15, 16, 17	= 6 पद
	23, 24, 25, 26, 27	= 5 पद
	34, 35, 36, 37	= 4 पद
	45, 46, 47	= 3 पद
	56, 57	= 2 पद
	67	= 1 पद कुल 21 पद
तीन संयोगी 35 पद–	123, 124, 125, 126, 127, 134, 135, 136, 137,	
	145, 146, 147, 156, 157, 167	= 15 पद
	234, 235, 236, 237, 245, 246, 247, 256, 257, 267	= 10 पद
	345, 346, 347, 356, 357, 367	= 6 पद
	456, 457, 467	= 3 पद
	467	= 1 पद
		35 पद
चार संयोगी 35 पद–	1234, 1235, 1236, 1237, 1245, 1246, 1247	
	1256, 1257, 1267, 1345, 1346, 1347, 1356	
	1357, 1367, 1456, 1457, 1467, 1567	= 20 पद
	2345, 2346, 2347, 2356, 2357, 2367	
	2456, 2457, 2467, 2567	= 10 पद
	3456, 3457, 3467, 3567	= 4 पद
	4567	= 1 पद = 35 पद
पाँच संयोगी 21 पद–	12345, 12346, 12347, 12356, 12357,	
	12367, 12456, 12457, 12467, 12567,	
	13456, 13457, 13467, 13567, 14567	= 15 पद
	23456, 23457, 23467, 23567, 24567	= 5 पद
	34567	= 1 पद = 21 पद

छ संयोगी 7 पद–	123456, 123457, 123467, 123567 124567, 134567 234567	 = 6 पद = 1 पद = 7 पद
सात संयोगी 1 पद–	1234567	= 1 पद, ये कुल 127 पद हुए।
	7+21+35+35+21+7+1=127 पद	

इस रीति से अपने-अपने ठिकाने के पद समझना।

सात नारकी में 7 जीव जाते हैं उनके 64 विकल्प–

असंयोगी 1 विकल्प	सातों एक साथ जावे	= 1 विकल्प
दो संयोगी 6 विकल्प	16, 25, 34, 43, 52, 61	= 6 विकल्प
तीन संयोगी 15 विकल्प–	115, 124, 214 133, 223, 313, 142, 232, 322, 412, 151, 241, 331, 421, 511	= 1 विकल्प = 2 विकल्प = 3 विकल्प = 4 विकल्प = 5 विकल्प = 15 विकल्प
चार संयोगी=20 विकल्प–	1114 1123, 1213, 2113 1132, 1222, 2122, 1312, 2212, 3112 1141, 1231, 2131, 1321, 2221, 3121 1411, 2311, 3211, 4111	1 विकल्प 3 विकल्प = 12 विकल्प = 4 विकल्प = 20 विकल्प
पाँच संयोगी=15 विकल्प–	11113, 11122, 11212, 12112, 21112, 11131, 11221, 12121, 21121 11311, 12211, 21211, 13111 22111, 31111,	= 1 विकल्प = 4 विकल्प = 10 विकल्प = 15 विकल्प
छ संयोगी 6 विकल्प–	111112 111121, 111211, 112111, 121111, 211111	= 1 विकल्प = 5 विकल्प = 6 विकल्प
7 संयोगी 1 विकल्प–	1111111	= 1 विकल्प = 64 विकल्प

सात जीव 7 नारकी में जावे तो असंजोगी 7 भांगे बनते हैं, जैसे-7 जीव पहली नारकी में जाते हैं, यावत् 7 नारकी में 7 जीव जाते हैं, यों 7 भांगे हुए।

सात जीव सात नारकी में दो संयोगी होकर जावे एक जीव पहली नरक में 6 जीव दूसरी में, 1 जीव पहली में 6 जीव तीसरी में यो 1 जीव पहली में 6 जीव 7वीं में जाये इस तरह 6 विकल्प हुए। दो जीव पहली में 5 जीव दूसरी में, दो जीव पहली में 5 जीव तीसरी में, ऐसे 2 पहली में 5 सातवीं में के ये दो संयोगी 6 भांगे हुए। इस

तरह दो संयोगी 6 विकल्प में पहली नारकी से 36 भांगे हुए। दूसरी नारकी से 30, तीसरी नारकी से 24, चौथी नारकी से 18, पाँचवीं नारकी से 12, छठी नारकी सातवीं नारकी से 6 इस तरह दो संयोगी 126 भांगे हुए। इसी तरह तीन संयोगी के 525 भांगे हुए। चार संयोगी के 700, पाँच संयोगी के 315, छः संयोगी के 42, सात संयोगी का 1, ये सब मिलाकर 7+126+525+700+315+42+1=1716 भांगे हुए। सात जीव 7 नारकी में जाते हैं उनके पद 127, जीवों के विकल्प 64 और भांगे 1716 होते हैं।

नरक एकादि जीवों का असंजोगादि भांगो का यंत्र–

जीव	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	6 संयोगी	7 संयोगी	भांगों का योग
1	7	–	–	–	–	–	–	7
2	7	21	–	–	–	–	–	28
3	7	42	35	–	–	–	–	84
4	7	63	105	35	–	–	–	210
5	7	84	210	140	21	–	–	462
6	7	105	350	350	105	7	–	924
7	7	126	525	700	315	42	1	1716
8	7	147	735	1225	735	147	7	3003
9	7	168	980	1960	1470	392	28	5005
10	7	189	1260	2940	2646	882	84	8008
संख्याता	7	231	735	1085	861	357	61	3337
असंख्याता	7	252	805	1190	945	392	67	3658
उत्कृष्ट	1	6	15	20	15	6	1	64

इसी तरह अपने-अपने ठिकाने के संजोगी भांगे समझना।

एक जीव नरक में जावे उसके 7 भांगे। 7 को 8 से गुणा करके दो का भाग देने से दो जीवों के 28 भांगे हुए। 28 को 9 से गुणा करके तीन का भाग देने से तीन जीवों के 84 भांगे। इसी तरह आगे-आगे में एक-एक अंक बढ़ाकर गुणा करना और एक अंक बढ़ाकर भाग देना संख्या निकल आयेगी इसी तरह सब भांगे समझना।

जिस तरह नरक के भांगे, पद, विकल्प कहे उसी तरह से बाकी तीन प्रवेशनक (तिर्यंच, मनुष्य, देवता) के भी भांगे, पद, विकल्प कर लेना। उत्कृष्ट जीव प्रवेशनक नरक में जावे तो पहली नरक में जावे, तिर्यंच में जावे तो एकेन्द्रिय में जावे, मनुष्य में जावे तो सम्मुर्च्छिम में जावे, देव में जावे तो ज्योतिषी में।

नरक प्रवेशक की अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़ा 7वीं नरक, उससे छठी नरक प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे पाँचवीं नरक प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे चौथी नरक प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे तीसरी के प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे दूसरी के प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे पहली नरक के प्रवेशनक असंख्यातगुणा।

तिर्यंच प्रवेशनक की अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़ा पंचेन्द्रिय तिर्यंच प्रवेशनक, उससे चौइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाधिक, उससे तेइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाधिक, उससे बेइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाधिक, उससे एकेन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाधिक।

मनुष्य प्रवेशनक की अल्प बहुत्व-सबसे थोड़े गर्भज मनुष्य प्रवेशनक, उससे सम्मुर्च्छिम मनुष्य प्रवेशनक असंख्यातगुणा।

देव प्रवेशनक की अल्प बहुत्व-सबसे थोड़े वैमानिक देव प्रवेशनक, उससे भवनपति देव प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे वाणव्यंतर देव प्रवेशनक असंख्यातगुणा, उससे ज्योतिषी देव प्रवेशनक संख्यातगुणा।

चारों गतियों की शामिल अल्प बहुत्व-सबसे थोड़े मनुष्य प्रवेशनक, उससे नरक प्रवेशनक असंख्यातगुणा उससे देव प्रवेशनक असंख्यातगुणा उससे तिर्यंच प्रवेशनक असंख्यातगुणा।

लोक शाश्वत है, नरकादि 24 दंडक के जीव स्वयमेव उत्पन्न होते हैं। श्रमण भगवान् महावीर केवलज्ञान से जानते हैं। नरक के जीव अशुभ कर्मोदय से, देव के शुभ कर्मोदय से, मनुष्य तिर्यंच शुभाशुभ कर्मोदय से स्वयमेव उन गतियों में उत्पन्न होते हैं। यह सब सुन गांगेय अणगार ने चातुर्याम धर्म से पाँच महाव्रत स्वीकार किये, मोक्ष पधारें।

तिर्यंच के एकादि जीवों के असंजोगादि भांगे

जीव संख्या	असंयोगी	2 संयोगी	3 संयोगी	4 संयोगी	5 संयोगी	कुल भंग
1	5	–	–	–	–	5
2	5	10	–	–	–	15
3	5	20	10	–	–	35
4	5	30	30	5	–	70
5	5	40	60	20	1	126
6	5	50	100	50	5	210
7	5	60	150	100	15	330
8	5	70	210	175	35	495
9	5	80	280	280	70	715

10	5	90	360	420	126	1001
संख्यात	5	110	210	155	41	521
असंख्यात	5	120	230	170	45	570
उत्कृष्ट	1	4	6	4	1	16

मनुष्य के संपूर्ण भंग

जीव संख्या	असंयोगी	दो संयोगी	कुल
1	2	–	2
2	2	1	3
3	2	2	4
4	2	3	5
5	2	4	6
6	2	5	7
7	2	6	8
8	2	7	9
9	2	8	10
10	2	9	11
संख्यात	2	11	13
असंख्यात	1	11	12
उत्कृष्ट	1	1	2

चार जाति के देवों के प्रवेशनक भंग

जीव जसंख्या	असंयोगी	दो संयोगी	तीन संयोगी	चार संयोगी	कुल भंग
1	4	–	–	–	4
2	4	6	–	–	10
3	4	12	4	–	20
4	4	18	12	1	35
5	4	24	24	4	56
6	4	30	40	10	84
7	4	36	60	20	120
8	4	42	84	35	165
9	4	48	112	56	220

10	4	54	144	84	286
संख्याता	4	66	84	31	185
असंख्याता	4	72	92	34	202
उत्कृष्ट	1	3	3	1	8

उत्कृष्ट के भांगों का ज्ञान

1 प्रवेशनक का 1 भंग

2 प्रवेशनक का 2 भंग

3 प्रवेशनक का 4 भंग

4 प्रवेशनक का 8 भंग

5 प्रवेशनक के 16 भंग

6 प्रवेशनक के 32 भंग

7 प्रवेशनक के 64 भंग

इस तरह आगे से आगे दुगुने करते रहना।

गांगेय अणगार ने विकट परिस्थिति की उलझन समाप्त करने हेतु प्रश्न पूछते गये सातों ही नरक में एक जीव से लेकर 10 तक संख्याता, असंख्याता, उत्कृष्ट तक जीव प्रवेशनक के विकल्प आदि बिना विश्राम किये पूछते रहे, उन्हें केवलज्ञान की कसौटी करनी थी, प्रभु महावीर के मोहनीय नहीं था अत: मान क्रोधादि था ही नहीं। ज्ञानावरणीय नहीं था अत: सोचना समझना भी नहीं था, तीर्थंकर नामकर्म का उदय था अत: बोलने की अद्‌भुत क्षमता थी। गांगेय ने नरक के बाद एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के 13 प्रश्न फिर मनुष्य के संबंधी 13 प्रश्न पूछे फिर देवता के प्रवेशनक के 13 प्रश्न पूछे, अंत में जब पूर्ण आश्वस्त हो गये कि ये ही 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर है, तब उन्होंने चातुर्याम धर्म छोड़कर पंच महाव्रत ग्रहण कर दीक्षा ली और शासन को समर्पित हुए। और सर्वकर्म क्षय कर तद्‌भव मोक्षगामी हुए।

अन्य विषय–भगवान महावीर का जीव दसवें स्वर्ग से चवकर सर्वप्रथम देवानंदा ब्राह्मणी के गर्भ में आया था, यहाँ ऋषभदत्त ब्राह्मण और देवानंदा ब्राह्मणी का माता-पिता के रूप में वर्णन है, और 83वीं रात्रि में देवता ने संहरण करके (तीर्थंकर जैसे महापुरुष के गर्भ का संहरण होना आश्चर्य 10 अछेरे में है) त्रिशला राणी के गर्भ में रखा था इसकी जानकारी जनमानस को नहीं थी। लोक प्रसिद्ध माता-पिता सिद्धार्थ

राजा और त्रिशला रानी क्षत्रियाणी थे, दोनों ने श्रावक व्रत की आराधना और संलेखणा संथारा कर 12वें देवलोक में गये। ऋषभदत्त ब्राह्मण चारों वेदों का ज्ञाता पंडित थे, श्रमणोपासक भी थे, भगवान महावीर एक बार कुंडग्राम पधारे, देशना सुनने परिषद् आई थी, देशना सुनने ऋषभदत्त और देवानंदा भी आये, देशना प्रारंभ नहीं हुई थी, देवानंद वंदन कर खड़ी हुई और एक टकटकी लगाकर श्रमण भगवान महावीर को देखने लगी, सहज रूप से मातृत्व भाव प्रकट हुआ और हर्ष से अंग-प्रत्यंग विकसित होने लगे, यहाँ तक कि स्तनों से दुग्ध धारा प्रस्फुटित हो गई। गौतम स्वामी की नजर देवानंद पर पड़ी, देवानंदा का यह दृश्य देखकर गौतम स्वामी ने प्रभु महावीर से पूछा-हे प्रभु! यह क्या हो रहा है? भगवान महावीर ने रहस्योद्‌घाटन करते फरमाया-'एवं खलु गोयमा! देवानंदा माहणी मम अम्मगा, अहं णं देवाणंदाए माहणीअे अत्तए।' उसके बाद भगवान ने धर्म देशना दी। भगवान के माता-पिता (ऋषभदत्त, देवानंदा) दीक्षित हुए (वहीं समवसरण में)। 11 अंगों का अध्ययन, विविध तपस्यायें की, दोनों ने अनेक वर्ष संयम पाला और एक मास संथारे से उसी भव में मोक्ष गये।

92.''अ'' जमाली–क्षत्रिय कुंडनगर का निवासी (भगवान की जन्मभूमि) था, योवन में 8 कन्याओं से पाणिग्रहण हुआ। वह ऐश्वर्यशाली ऋद्धि संपन्न था। एक बार भगवान महावीर माहण कुंडपुर पधारे, जमाली भी गया, विरक्त हुआ, माता-पिता की आज्ञा प्राप्त कर 500 क्षत्रिय कुमारों के साथ दीक्षा ली, 11 अंगों का अध्ययन किया, बहुश्रुत बना। एक बार उसे अलग विचरने की इच्छा हुई, भगवान से पूछा, भगवान उसके भावी मिथ्यात्वोदय को देख रहे थे अत: मौन रहे, भगवान के अलग विचरण की स्वीकृति नहीं देने के बावजूद विहार कर अलग चल दिया। विचरण करते-करते उसका शरीर रूग्ण हो गया, अशाता वेदनीय और दर्शन मोहनीय का तीव्रोदय होने लगा। आखिर समकित का वमन कर मिथ्यात्व भावित बनकर असत् प्ररूपणा करने लगा। भगवान और गौतम स्वामी ने समझाया परन्तु नहीं समझा, बुद्धि कुंठित हो गई थी। जीवन भर असत् प्ररूपणा करता हुआ, स्वयं को, औरों को मिथ्यात्व में भावित करता हुआ, तप संयम और शुभ लेश्या के प्रभाव से किल्विषी देवों में छठे देवलोक में 13 सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न हुआ। अनेक वर्षों की संयमपर्याय एवं विशिष्ट तप साधना के साथ 15 दिन के संलेखना संथारा से आयु पूर्ण कर देवगति प्राप्त की।

जमाली को भगवान का दामाद (जमाई) होना परिचय मिलता है। भगवान की दोहित्री यशोमति का आचारांगसूत्र में कौशिक गौत्र बताया है इस अपेक्षा से जमाली का भी कौशिक गौत्र होना संभावित है। जमाली की 8 पत्नियाँ थी पर नाम नहीं मिलते। भगवान की प्रियदर्शना नामक पुत्री की जमाली से शादी हुई थी। जमाली महापुण्यवंत राजकुमार था, 500 व्यक्ति उसके पुण्य प्रभाव तथा मित्रभाव से दीक्षित हुए थे। दीक्षा की आज्ञा लेते माता-पुत्र का संवाद बड़ा रोचक और मार्मिक है, माता-पिता के इकलौते पुत्र थे। उनकी दीक्षा अति भव्य रूप से हुई वे एक उत्कृष्ट वैरागी थे, इसमें कोई शंका नहीं है।

जमाली में मिथ्यात्व का आक्रमण-भगवद् निरूपित तत्वों में "चलमाणे चलिए, कज्जमाणे कड़े" ऐसा एक सूक्ष्म तात्विक सिद्धांत है, जो व्यवहारोचित्त भी है, कि किया गया कार्य प्रतिक्षण कुछ न कुछ होता ही है, वह अपने नय से सत्य है, किन्तु एकांत पूर्णता के दुराग्रह में व्यक्ति शंकित, मोहाभिभूत, मिथ्या दुराग्रही बन सकता है, किन्तु भगवदाज्ञा में सिद्धांत में तो सापेक्ष नय संगत सत्य ही हैं। एक बार स्वतंत्र विचरण में जमाली रूग्ण हो गये, शरीर अशक्त हो गया था, सोने के लिए आतुर था, उसकी रूग्ण योग्य घास आदि का संथारा व्यवस्थित करने वाले का विलंब सहन नहीं कर पा रहा था, बार-बार शिष्यों को पूछ रहा था कि बिछौना अभी तक हुआ या नहीं, शिष्य नम्रता से सही उत्तर दिये जा रहे थे कि बिछौना बिछाया जा रहा है, अभी बिछा नहीं है। इस अधैर्य की मानसिकता में बिछाने का कार्य चलते हुए भी बिछौना हुआ नहीं ये शब्द उसके उल्टी विचारधारा में कारणभूत हो गये, मिथ्यात्व का उदय जोर पकड़ा, भगवान को भी खोटा मानने लग गया, अत्यंत दुराग्रह मानस वाला बन गया। रूग्णता और अधैर्य उसमें निमित्त बन गये, अंत में भगवान से और गौतम स्वामी से भी नहीं माना। वास्तव में मिथ्यात्व हावी हो चुका था, जीवन भर यों ही चला। 15 दिन के संथारे के बाद काल करने के समाचार मिलने पर गौतम स्वामी ने भविष्य के बारे पूछा तो भगवान ने फरमाया- यह मेरा अन्तेवासी कुशिष्य जमाली देवलोक से निकलकर तिर्यंच मनुष्य-देव के 4-5 भव करके मोक्ष जायेगा। तात्पर्य है कि किल्विषी देवों में से कई देव 4-5 भव चारों गति में से कहीं भी करके मोक्ष जावेंगे, कई अनादि अनंत संसार परिभ्रमण करेंगे। जमाली नरक छोड़कर तीन गति से कहीं भी कुल 4-5 भव करके मोक्ष जावेंगे।

93. दस दिशा (भ.श. 10 उ.1) (1) दिशाएँ 10 है (1) पूर्व (2) पूर्व-दक्षिण (अग्निकोण) (3) दक्षिण (4) दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य कोण) (5) पश्चिम (6) पश्चिम-उत्तर (वायव्य कोण) (7) उत्तर (8) उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) (9) ऊर्ध्व दिशा (10) अधो दिशा।

(2) दस दिशाओं के नाम (1) इंदा-ऐन्द्री (पूर्व) (2) अग्गेयी-आग्नेयी (अग्निकोण) (3) जमा-याम्या (दक्षिण) (4) नेरई-नैरत्री नैऋती (नैऋत्य कोण), (5) वारूणी (पश्चिम) (6) वायव्या-वायव्य (वायव्य कोण) (7) सोमा (उत्तर) (8) ईसाणी-ऐशानी (ईशान कोण) (9) विमला (ऊर्ध्व) (10) तमा (अधो दिशा)।

(3) 1800 योजन तिर्च्छा लोक के बीच में मेरूपर्वत के भी ठीक बीच मध्य भाग में 8 रूचक प्रदेश हैं, चार ऊपर और चार नीचे की तरफ है। यहाँ से 10 दिशाएँ निकली हैं। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण ये 4 दिशाएँ दो-दो प्रदेशी निकली हैं और आगे 2-2 प्रदेशों की और वृद्धि होती हुई लोकान्त तक या अलोक में चली गई है। लोक में असंख्यात प्रदेश वृद्धि हुई है और अलोक में अनन्त प्रदेश वृद्धि हुई है। इनका आकार गाड़ी के ओढ़ण (झूसण) या अंगुली के बेडुक के समान है। अग्निकोण, नैऋत्य कोण, वायव्य कोण, ईशान कोण ये 4 विदिशाएँ एक-एक प्रदेशी निकली है और लोकान्त तक चली गई है, इनका आकार मोतियों की लड़ के समान है। ऊर्ध्व और अधो दिशा चार-चार प्रदेशी निकली है जो लोकान्त तक या अलोक में चली गई है।

(4) पूर्व दिशा में जीव है, जीव का देश है, जीव का प्रदेश है। अजीव है, अजीव का देश है, प्रदेश है। जीव में एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय है, अनिन्द्रिय भी है। इनके देश भी है, प्रदेश भी है ये जीव संबंधी 18 भांगे हुए। अजीव है, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के एक-एक देश है, बहुत-बहुत प्रदेश है। ये 6 भांगे और सातवाँ अद्धासमय ये 7 भांगे अरूपी अजीव के हुए। स्कंध, देश, प्रदेश और परमाणु ये रूपी पुद्गल के 4 भांगे, ये अजीव के 11 भांगे हुए। जीव के 18, अजीव के 11, ये सभी 29 भांगे हुए। चारों ही दिशा में 29-29 भांगे कहना। जिस तरह पूर्व में 29 भांगे कहे वैसे चारों दिशा में 29-29 भांगे कहे, वैसे समुच्चय लोक, अधोलोक और तिर्च्छा लोक में भी कहना, ऊर्ध्व लोक में 28 भांगे (काल को छोड़कर) कहना। समुच्चय लोक में धर्मास्तिकाय आदि के देश की जगह स्कंध कहना।

4 विदिशाओं में 38-38 भांगे-(1) बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत देश और एक बेइन्द्रिय का एक देश (2) बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत देश और एक बेइन्द्रिय जीव के बहुत देश (3) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश और बहुत बेइन्द्रियों के बहुत देश। इस प्रकार तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय के तीन-तीन भांगे ये देश संबंधी 16 भांगे हुए। एक प्रदेशी विदिशा में कभी मात्र एकेन्द्रियों के देश ही होते है (यह नियमा है)।

प्रदेश संबंधी 11 भांगे-(1) बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत प्रदेश और एक बेइन्द्रिय के बहुत प्रदेश (2) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत प्रदेश बहुत बेइन्द्रियों के बहुत प्रदेश ये 2 भांगे इसी तरह तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय में 2-2 भांगों से 10+1 बहुत एकेन्द्रियों के बहुत प्रदेश ये 11 भांगे हुए। देश संबंधी 16 प्रदेश संबंधी 11 ये सब जीव के 27 भांगे हुए।

अजीव के 11 भांगे दिशा में कहे वे 11 भांगे यहाँ भी कहना ये 27+11=38 भांगे हुए। चारों विदिशा में और ऊर्ध्व दिशा में भी 38 भांगे कहना और अधो दिशा में 37 (अद्धासमय छोड़कर) कहना।

भगवती सूत्रशतक 11 उ. 10 में-तीन लोक में 4 प्रदेशों के भांगे इस प्रकार पूर्व दिशा में 29 भांगे इसी तरह समुच्चय लोक, अधोलोक, तिर्च्छा लोक में 29-29 परन्तु ऊर्ध्व लोक में अद्धासमय (काल) छोड़कर 28 भांगे हैं।

समुच्चय लोक के 1 आकाश प्रदेश पर 32 भांगा (11 देश, 12 प्रदेश, 9 अजीव) (1) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश, बहुत बेइन्द्रिय का एक देश (2) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश, बहुत बेइन्द्रियों के बहुत देश, इसी तरह तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, अनिन्द्रिय के 10+1 बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश ये 11, **प्रदेश के 12** (1) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत प्रदेश। (1) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत प्रदेश, एक बेइन्द्रिय के बहुत प्रदेश (2) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत प्रदेश, बहुत बेइन्द्रियों के बहुत प्रदेश, इसी तरह तेइन्द्रिय-चौइन्द्रिय-पंचेन्द्रिय के 2-2 अनिन्द्रिय के 3 भांगे- बहुत एकेन्द्रियों के बहुत, एक अनिन्द्रिय का एक प्रदेश (2) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत, एक अनिन्द्रिय के बहुत प्रदेश (3) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत, बहुत अनिन्द्रियों के बहुत प्रदेश ये प्रदेश संबंधी 12 भांगे।

अजीव के 9-धर्मास्तिकाय का स्कंध नहीं, देश है प्रदेश है। अधर्मास्तिकाय के भी देश है, प्रदेश है, ये 4 और अद्धासमय- 5 भेद हुए, ये अरूपी के और स्कंध, देश,

प्रदेश, परमाणु ये 4 भेद रूपी के, कुल 9 भेद अजीव के हुए। कुल 11+12+9=32 भांगे। समुच्चय लोक की तरह आकाश प्रदेश में हुए इसी तरह अधोलोक के आकाश प्रदेश में, तिर्च्छा लोक के आकाश प्रदेश में 32-32 और ऊर्ध्व लोक के आकाश प्रदेशों में 31 भांगे (अद्धासमय छोड़कर) ये 127 भांगे हुए।

श्री भगवतीसूत्र के 16वें शतक के 8वें उद्देशे में-210 चरमान्त के भांगे बताये है- 7 नारकी, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान, 1 ईषत्प्राग्भार पृथ्वी, 1 लोक, ये 35 इनके ऊपर का चरमान्त, नीचे का चरमान्त, चारों दिशाओं का चरमान्त को 6 से गुणा करने पर 210 है।

7 नारकी-रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के चरमान्त में भांगा 38 (विदिशा में कहे अनुसार), शेष 6 नारकी के ऊपर के चरमान्त में, 7 नारकी के नीचे के चरमान्त में, **12 देवलोकों** के ऊपर और नीचे के चरमान्तों में (6+7+24) इन 37 बोलों में भांगा 33-33, (12 देश के 11 प्रदेश के 10 अजीव के) देश संबंधी 12 भांगा (एकेन्द्रिय का 1, बेइन्द्रिय 2, तेइन्द्रिय 2, चौइन्द्रिय का 2, पंचेन्द्रिय के 3, अनिन्द्रिय के 2 ये 12 भांगा देश के) प्रदेश के 11 भांगा (एकेन्द्रिय का 1, बेइन्द्रिय से अनिन्द्रिय तक के 2x5=10 कुल 11) अजीव के 10 (पूर्व दिशा के कहे अनुसार) ये 33 भांगे हुए।

9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर, 1 ईषत्प्राग्भारापृथ्वी इन 15 के ऊपर का और नीचे का चरमान्त ये 30 बोल और **1 लोक** के नीचे का चरमान्त ये 31 बोल में भांगा 32-32 पावे, देश संबंधी 11, प्रदेश के 11, अजीव के 10- ये 32 भांगा। जैसे ऊपर के 37 बोलों में 33 भांगे कहे वैसे कहना, परन्तु पंचेन्द्रिय के बहुत देश वाला भांगा नहीं कहना। ऊर्ध्व लोक के चरमान्त में भांगा 28 (9 देश के, 9 प्रदेश के, 10 अजीव के) देश के 9 भांगे- (1) एकेन्द्रिय के बहुत (1) बहुत एकेन्द्रिय बहुत अनिन्द्रिय के बहुत, एक बेइन्द्रिय के एक (2) बहुत एकेन्द्रिय बहुत, बहुत अनिन्द्रिय के बहुत, बहुत बेइन्द्रिय के बहुत। इसी तरह तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय के 2x4=8+1=9 भांगा। प्रदेश के 9 भी इसी तरह प्रदेश लगाकर कहने और अजीव के 10 ऊपर 31 बोलों की तरह के कहने, ये 28 भांगे हुए। 35 बोलों के 4 दिशा के चरमान्त के 35x4=140 बोल में भांगा पावे 36-36, रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के चरमान्त में 38 भांगा कहे उनमें से काल का एक भांगा और अनिन्द्रिय के एक देश का एक भांगा- ये 2 कम कर छत्तीस कहना।

35 बोल के ऊपर का चरमान्त और नीचे का चरमान्त ये 70 बोल और 10 दिशा, 3 लोक, इन 83 बोलों में धर्मास्तिकाय का एक देश, बहुत देश कहना।

प्रदेशों के 4 बोलों में धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय का एक देश और एक प्रदेश कहना। 140 बोल (4 दिशा में 35 बोल) में धर्मास्तिकाय के बहुत देश, बहुत प्रदेश कहना।

नोट-भगवतीसूत्र शतक 10 का पहला, 11वाँ का 10वाँ और 16वाँ का आठवाँ उद्देशा इन तीनों का एक थोकड़ा करने का उद्देश्य सीखने वालों की सुगमता की दृष्टि से है, ये तीनों प्राय: एक समान है।

94. विस्मय (भ.श. 10 उ. 3) (1) देवता अपनी ऋद्धि से (मूल रूप से) चार-पाँच आवासों (आवास, भवन, नगर, विमानों) तक आ जा सकते है, इससे अधिक आगे जाना हो तो पराई ऋद्धि (उत्तर वैक्रिय शरीर बनाकर) से कहीं भी आ जा सकते हैं।

(2) अल्पऋद्धिक देव महर्द्धिक के बीचोंबीच होकर नहीं जा सकता है।

(3) समान ऋद्धि वाला समऋद्धि के बीच में से नहीं जा सकता परन्तु प्रमाद में हो तो चला जाता है।

(4) वह देवता सामने वाला देव प्रमाद या अन्य ध्यान में हो तो उसे विस्मय (आश्चर्य) उपजा कर चला जाता है, धूंवर, अंधकार आदि करके सामाने वाले देव को विस्मय में डाल देता है, फिर उसके बिना देखे चला जाता है, विस्मय उपजाये बिना नहीं जाता। शक्ति नहीं है।

(5) वह सामने वालों के पहले विस्मय उपजाता है, जाकर विस्मय में नहीं डालता।

(6) महाऋद्धि वाला देव अल्पर्द्धिक देव के बीच में से जाता है, विस्मय उपजा कर भी जाता है, बिना विस्मय उपजाये भी जाता है। जाने वाले देवता की जैसी इच्छा हो पहले विस्मय उपजा कर जाये या जाने के बाद विस्मय उपजाये महर्द्धिक देव अपनी इच्छानुसार करता है।

इस तरह 13 दंडक देवता और समुच्चय देव ये 14 अलावा हुए।

(7) अल्पर्द्धिक देव महर्द्धिक देव के बीच में से होकर नहीं जाता है। समुच्चय देव और 13 देवलोक दंडक ये 14 अलावा हुए इनमें तीन-तीन अलावा (अल्पर्द्धिक के साथ महर्द्धिक, समऋद्धि के साथ समऋद्धि और महर्द्धिक के साथ अल्पर्द्धिक करने

से 14x3=42) अलावा देवता के, 42 देवी के और 42-42 देवी का देवता के साथ, देवता का देवी के साथ यों 42x4=168 अलावा हुए।

95. उत्पल-कमल (भ.श. 11 उ. 1) कोई भी वनस्पति जब अंकुरित होती है तो एक पत्रक रूप उत्पन्न होती है, इस प्रथम अवस्था में मूल में एक जीव उत्पन्न होता है एक मुख्य जीव अकेला उत्पन्न होता है यहाँ उत्पल कमल का 33 द्वारों से कथन है-उपपात, परिमाण, अपहार, अवगाहना, बंध, वेद, उदय, उदीरणा, लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, योग, उपयोग, वर्ण, रसादि, उच्छवास, आहार, विरति, क्रिया, बंधक, संज्ञा, कषाय, स्त्रीवेदादि, बंध, संज्ञी, इन्द्रिय, अनुबंध, संवेध, आहार, स्थिति, समुद्घात, च्यवन, सब जीवों का मूलादि में उपपात जन्म ये 33 द्वारों कथन इस प्रकार है-

(1) उपपात-उत्पल कमल के मूल में एक जीव है, और मूल की नेश्राय में अनेक जीव हैं, ये जीव 74 ठिकानों से (तीन गति में से) तिर्यंच के 46, मनुष्य के 3, देवता के 25 (भवनपति 10, व्यंतर 8, ज्योतिषी 5 और पहला-दूसरा देवलोक) आकर (नरक गति छोड़कर) उत्पन्न होते हैं।

(2) परिमाण द्वार-एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् उत्कृष्ट संख्याता असंख्याता उपजते हैं।

(3) अपहार-एक-एक समय एक-एक जीव निकाले तो असंख्याता अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल लगे। (किसी ने निकाला नहीं निकालेंगे भी नहीं) कल्पना है। असंख्य अवसर्पिणी उत्सर्पिणी के समय तुल्य असंख्याता होते हैं।

(4) अवगाहना-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट 1000 योजन झाझेरी (कमल नाल की अपेक्षा)।

(5) बंध-सात कर्मों का बंध होता है अबंधक नहीं होते एकवचन बहुवचन से 14 भांगे और आयुष्य के 8 भंग बंधक भी होते हैं अबंधक भी होते हैं असंजोगी 4 (बंधक एक, अबंधक एक, बंधक बहुत, अबंधक बहुत) दो संयोगी 4 (बंधक एक अबंधक एक, बंधक एक अबंधक बहुत, बंधक बहुत अबंधक एक, बंधक बहुत, अबंधक बहुत) ये कुल 14+8=22 भांगे हुए।

(6) वेदक द्वार-ज्ञानावरणीय कर्म के वेदक एक, वेदक बहुत, ये 2 भांगे इसी तरह 7 कर्म से और कहना वेदनीय में साता असाता 8 भांगे कहना कुल 24 भांगे हुए।

(7) उदय द्वार-आठों कर्मों का उदय होता है अनुदय नहीं होता एकवचन बहुवचन से 16 भांगे।

(8) उदीरणा द्वार-ज्ञानावरणियादि 6 कर्मों के उदीरक होते हैं एकवचन बहुवचन से 12 भांगे। आयु और वेदनीय के उदीरक-अनुदीरक दोनों होते हैं भांगा 8-8 यों 12+8+8=28 भांगे हुए।

(9) लेश्या द्वार-कृष्णादि 4 लेश्याएँ होती है जिनके 80 भांगे होते हैं। क्योंकि कोई कृष्ण लेश्या, कोई नील लेश्या, कोई कापोत, कोई तेजो लेश्या में होता है इन चारों प्रकार के कभी एक, कभी अनेक होते हैं। इसलिए असंयोगी 8, दो संयोगी 24 तीन संयोगी 32 चार संयोगी 16) ये 80 भांगे होते हैं। नीचे स्पष्टीकरण दिया है 4 लेश्या कृष्ण (क) नील (नी) कापोत (का) और तेजो (ते) इन 4 अक्षरों में एकवचन का 1 और बहुवचन को 3 बताया है।

असंयोगी भांगा 8	क1, नी1 का1 ते1, क3 नी3 का3 ते3	= 8 भांगे
दो संयोगी भांगा 24	क1 नी1, क1 नी3, क3 नी1, क3 नी3 क1 का1, क1 का 3, क3 का1, क3 का3 क1 ते1, क1 ते3, क3 ते1, क3 ते3 नी1 का1, नी1 का3, नी3 का1, नी3 का3 नी1 ते1, नी1 ते3, नी3 ते1, नी3 ते3 का1 ते1, का1 ते3, का3 ते1, का3 ते3	अंक 11, 13, 31, 33 = 24 भांगे
तीन संयोगी भांगा 32-	क1 नी1 का1, क1 नी1 का3, क1 नी3 का1, क1 नी3 का3, क3 नी1 का1, क3 नी1 का3, क3 नी3 का1, क3 नी3 का3, क1 नी1 ते1, क1 नी1 ते3, क1 नी3 ते1, क1 नी3 ते3 क3 नी1 ते1, क3 नी1 ते3, क3 नी3 ते1, क3 नी3 ते3 क1 का1 ते1, क1 का1 ते3, क1 का3 ते1, क1 का3 ते3 क3 का1 ते1, क3 का1 ते3, क3 का3 ते1, क3 का3 ते3 नी1 का1 ते1, नी1 का1 ते3, नी1 का3 ते1, नी1 का3 ते3 नी3 का1 ते1, नी3 का1 ते3, नी3 का3 ते1, नी3 का3 ते3 अंक 111, 113, 131, 133-311, 313, 331, 333	= 32 भांगे
चार संयोगी भांगा 16-	क1 नी1 का1 ते1, क1 नी1 का1 ते3 क1 नी1 का3 ते1, क1 नी1 का3 ते3 क1 नी3 का1 ते1, क1 नी3 का1 ते3 क1 नी3 का3 ते1, क1 नी3 का3 ते3 क3 नी1 का1 ते1, क3 नी1 का1 ते3	

	क3 नी1 का3 ते1, क3 नी1 का3 ते3 क3 नी3 का1 ते1, क3 नी3 का1 ते3 क3 नी3 का3 ते1, क3 नी3 का3 ते3	
	अंक-1111, 1113, 1131, 1133, 1311, 1313, 1331, 1333,	= 16 भांगा
	3111, 3113, 3131, 3133, 3311, 3313, 3331, 3333	कुल 80 भांगा

(10) दृष्टि द्वार-मिथ्या दृष्टि एकवचन बहुवचन भंग 2

(11) ज्ञान-ज्ञानी नहीं अज्ञानी है, भंग 2

(12) योग-काययोगी (मन वचन योग नहीं होते), भंग 2

(13) उपयोग-दोनों, भंग 8-असंयोगी 4, दो संयोगी 4

(14) वर्ण-जीव आसरी वर्णादि नहीं, शरीर आसरी तेजस में 5 वर्ण 2 गंध 5 रस 8 स्पर्श, कार्मण में 5 वर्ण 2 गंध, 5 रस 4 स्पर्श होते है। भंग 2-2

(15) उच्छवास निश्वास द्वार-कमल के जीव उच्छवासक है, नि:श्वासक है और उच्छवासक नि:श्वासक भी है। तीनों हैं। इनके 26 भांगे असंयोगी 6, द्विकसंजोगी 12, तीन संयोगी 8 भांगे।

भांगों का संकेत-उच्छवास (उ) निश्वास (नि) दोनों का (नोउनी) एकवचन 1 बहुवचन 3

असंजोगी 6-	उ1, नि1, नोउनी1, उ3, नि3, नोउनी 3	= 6 भांगे
दो संयोगी 12-	उ1 नोउनि1, उ1 नोउनि 3, उ3 नोउनि 1, उ3 नोउनि3 नि1 नोउनि1, नि1 नोउनि3, नि3 नोउनि1, नि3 नोउनि3	अंक 11, 13, 31, 33 = 12 भंग
तीन संयोगी 8-	उ1 नि1 नोउनि1, उ1 नि1 नोउनि3 उ1 नि3 नोउनि1, उ1 नि3 नोउनि3 उ3 नि1 नोउनि1, उ3 नि1 नोउनि3 उ3 नि3 नोउनि1, उ3 नि3 नोउनि3 अंक 111, 113, 131, 133, 311, 313, 331, 333	= 8 भंग कुल भंग 26 हुए

(16) आहारक द्वार-उत्पल कमल आहारक भी है, अनाहारक भी है असंजोगी 4, दो संजोगी 4, कुल 8 भांगा।

(17) विरति-उत्पल कमल के जीव अविरति है। अविरति एक, अविरति बहुत, 2 भंग।

(18) क्रिया-सक्रिय है अक्रिय नहीं होते, भंग 2।

(19) बंधक–सात कर्म बंधक भी है, आठ कर्म बंधक भी है, आठ भंग-असंयोगी 4, दो संयोगी 4

(20) संज्ञा–चारों संज्ञाएँ पाई जाती है इनके 80 भांगे होते हैं (लेश्या के द्वार के अनुसार)

(21) कषाय द्वार–चारों कषाय पाई जाती है 80 भांगे (लेश्यानुसार समझे)

(22) वेद द्वार–एक नपुंसक वेद, भंग 2

(23) वेदबंधक द्वार–स्त्री, पुरुष, नपुंसक तीनों वेद के बंधक है भांगा 26 (असंयोगी 6, दो संयोगी 12, तीन संयोगी 8) उच्छवास जैसे।

(24) संज्ञी द्वार–असंज्ञी होते हैं, 2 भंग।

(25) इन्द्रिय द्वार–सइन्द्रिय होते हैं, अनिन्द्रिय नहीं, भंग 2

(26) अनुबंध द्वार–उत्पल कमलपने जघन्य-अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट-असंख्याता काल रहता है।

(27) संवेध द्वार–उत्पल कमल का कायसंवेध दो प्रकार का-काल से और भवापेक्षा से।

चार स्थावरपणे (पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय) भवादेश से-जघन्य 2 भव, उत्कृष्ट असंख्यात भव। काल से जघन्य 2 अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंख्यात काल (चार स्थावर में जावे फिर उत्पल कमल में जावे ऐसा)।

वनस्पतिकायपणे–भवादेश से-जघन्य 2 भव, उत्कृष्ट अनन्तभव, कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अनंतकाल (वनस्पति काल)।

तीन विकलेन्द्रियपणे–भवादेश से-जघन्य 2 भव, उत्कृष्ट संख्याताभव, काल से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यातकाल।

तिर्यंच पंचेन्द्रियपणे–भवादेश से-जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव, कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट प्रत्येक करोड़ पूर्व।

मनुष्यपणे–भवादेश से जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट (4 करोड़ पूर्व 40 हजार वर्ष) (प्रत्येक क्रोड़ पूर्व)

(28) आहार द्वार–द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् 288 बोल नियमा 6 दिशा का आहार लेता है।

(29) स्थिति द्वार–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की है।

(30) समुद्घात–तीन समुद्घात पाई जाती है-वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक।

(31) मरण द्वार–दोनों प्रकार के मरण समोहया (समुद्घात करके) और असमोहया (समुद्घात किये बिना) मरण भी मरते है। भंग 8 है।

(32) च्यवन द्वार–उत्पल कमल के जीव 49 ठिकाने उपजाते हैं। 46 तिर्यंच और 3 मनुष्य (पर्याप्त, अपर्याप्त, संमुर्च्छिम) में।

(33) उपपात द्वार–सर्वजीव उत्पल कमल के सभी विभागों-मूल, कंद, नाल, पत्ता, केसरा, कर्णिका, थिभुगपणे (पत्ता उत्पत्ति स्थान) में अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुए है।

श्री भगवतीसूत्र शतक 11 के उद्देशक 2 से 8 तक–इन 7 उद्देशकों में शालुक, पलास, कुंभिक, नालिक, पद्म, कर्णिका, नलिन कमल का वर्णन है, इनमें प्राय: समान है परन्तु अवगाहना, स्थिति, लेश्या में फर्क है।

(1) दूसरे उद्देशक में शालुक अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट प्रत्येक धनुष ।

(2) तीसरे उद्देशक में पलाश (एक जाति का वृक्ष) विशेष यह कि इसमें देवता उत्पन्न नहीं होते। आगत 49 की, लेश्या 3, भांगा 26, अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट प्रत्येक गाऊ (2 से 9 कोश) है।

(3) चौथे में कुंभि (वनस्पति विशेष) विशेष स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट प्रत्येक वर्ष।

(4) पाँचवें में नालिक (वनस्पति) कुंभि की तरह।

(5) छठे सातवें आठवें उद्देशक में, पद्म, कर्णिका, नलिन कमल उत्पल कमल की तरह कहना।

इनमें कुल फर्क इस प्रकार-(1) **अवगाहना**–शालुक में अनेक धनुष, पलाश में अनेक कोस, शेष 6 में 1000 योजन साधिक। (2) स्थिति-कुंभिक, नालिक में अनेक वर्ष, शेष 6 में दस हजार वर्ष।

(3) लेश्या-कुंभिक, नालिक, पलास में तीन, शेष सभी में चार लेश्या।

96. लोक (भ.श. 11 उ. 10) अनन्तानंत आकाश रूप अलोक है। जिसके मध्य भाग में लोक है, लोक ऊपर से नीचे 14 राजू प्रमाण है। नीचे चारों दिशाओं में पूर्व से पश्चिम उत्तर से दक्षिण सात राजू प्रमाण चौड़ा और गोलाकार है, इसी तरह मध्य में एक राजू प्रमाण चौड़ा और गोलाकार समभूमिरूप तिरछा लोक है।

1. लोक 4 प्रकार का है, द्रव्य लोक, क्षेत्र लोक, काल लोक, भाव लोक।

2. क्षेत्र लोक के तीन प्रकार-अधो लोक, तिर्यग (तिरछा) लोक, ऊर्ध्व लोक।

3. अधो लोक 7 प्रकार का है-रत्नप्रभा पृथ्वी यावत् तमःतमाप्रभा पृथ्वी, अधोलोक में 84 लाख नरकावासा है। 7 करोड़ 72 लाख भवनपति देवों के भवन हैं।

4. तिरछा लोक असंख्याता प्रकार का है-जम्बूद्वीप आदि असंख्याता द्वीप और लवण समुद्र से लेकर स्वयंभूरमण समुद्र तक असंख्याता समुद्र है।

5. ऊर्ध्व लोक 15 प्रकार का है- सौधर्म देवलोक से अच्युत देवलोक तक 12 देवलोक, नवग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान और ईषत्प्राग्भारा (सिद्ध शिला) पृथ्वी।

6 से 8. अधोलोक का संस्थान-तिपाई के आकार का, तिर्च्छा लोक का-झालर के आकार का और ऊर्ध्व लोक का खड़ी मृदंग के आकार का है।

9 से 10. लोक का संठाण सुप्रतिष्ठिक (सरावला-एक उल्टा, एक उसके ऊपर सीधा और एक उसके ऊपर, उल्टा) के आकार का है। अलोक पोले गोले के आकार का है।

11. अधोलोक में जीव है, जीव के देश है, जीव के प्रदेश है, अजीव भी है, अजीव के देश भी है, प्रदेश भी हैं।

12. अधोलोक में एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय है, इन छः के देश है, प्रदेश भी है ये जीव के 18 बोल हुए। अजीव के 2 भेद रूपी आदि के 4 (स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु) अरूपी अजीव के 7 भेद-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के देश-प्रदेश और काल ये 11 बोल अजीव के।

13 से 14. अधोलोक की तरह तिरछा लोक में भी 18+11=29 बोल कहना। ऊर्ध्व लोक में भी इसी तरह 29 बोल कहना।

15. लोक में इसी तरह 29 बोल का कथन, परन्तु यहाँ धर्मास्तिकाय आदि के देश की जगह स्कंध कहे।

16. अलोक में जीव और अजीव नहीं है, इनके देश प्रदेश नहीं है। सिर्फ एक अजीव द्रव्य का देश है, वह भी अगुरुलघु, अनन्त अगुरुलघु गुणों से युक्त, सर्व आकाश के अनन्तवें भाग ऊणा (कम) है।

17. अधोलोक के एक आकाश प्रदेश पर जीव नहीं, जीव का देश है, प्रदेश है, अजीव है, अजीव का देश है प्रदेश है। जीव के 23 अजीव के 9 ये 32 भांगे हैं। **जीव के 23 भांगे**-एक एकेन्द्रिय के बहुत देश, (1) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश, एक बेइन्द्रिय का एक देश, (2) बहुत एकेन्द्रियों के बहुत देश, बहुत बेइन्द्रियों के बहुत देश यों तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय के 2-2 भांगे से 10+1=11 भांगे हुए। प्रदेश के 12 भांगे (इसमें अनिन्द्रिय के 3 भांगे होने से 1 भांगा बढ़ा) ये जीव के 23 हुए। **अजीव के 9 भांगे**-धर्मास्तिकाय का स्कंध नहीं है, इनके देश और प्रदेश। इसी तरह अधर्मास्तिकाय के 2 भेद पाँचवाँ अद्धाकाल। और रूपी अजीव के 4 (स्कंध देश-प्रदेश परमाणु) ये 9 भेद हुए। जीव के 23+9 अजीव के 32 भांगे।

18. तिर्च्छा लोक में भी एक प्रदेश के इसी तरह 3 भांगे।

19. ऊर्ध्व लोक में एक प्रदेश के 31 भांगे वहाँ काल छोड़ना।

20. समुच्चय लोक में 32 भांगे कहना।

21. अलोक में जीव अजीव नहीं, मात्र अजीव का प्रदेश है अनन्त अगुरुलघु गुण से संयुक्त है, सब आकाश के अनन्तवें भाग है।

22 से 25. द्रव्य से अधोलोक में अनन्ता जीव द्रव्य, अनन्ता अजीव द्रव्य और अनन्ता जीव-अजीव द्रव्य है। इसी तरह तिर्च्छा लोक, ऊर्ध्व लोक और समुच्चय लोक में कहना।

26. द्रव्य से अलोक में जीव द्रव्य नहीं, अजीव द्रव्य नहीं, सिर्फ एक अजीव का देश है, वह भी अनन्त अगुरुलघु गुण से संयुक्त, सर्वआकाश के अनन्तवाँ भाग न्यून है।

27 से 31. अधोलोक काल की अपेक्षा आदि अन्तरहित नित्य है, तिरछा लोक, ऊर्ध्व लोक, समुच्चय लोक और अलोक में भी यही कहना।

32 से 35. अधोलोक में भाव की अपेक्षा अनन्ता वर्ण पर्याय, इसी तरह गंध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, गुरुलघु की अनन्त-अनन्त पर्याये हैं। इसी तरह तिरछा लोक, ऊर्ध्व लोक और लोक में कहना।

36. अलोकाकाश में वर्ण, गंध, रस, स्पर्श की पर्यायें नहीं है। सिर्फ एक अजीव का देश है, वह भी अनन्ता अगुरुलघु गुण से संयुक्त है, सर्वआकाश से अनन्तवें भाग न्यून है।

37. लोक की लंबाई-चौड़ाई के लिए दृष्टान्त-महाऋद्धि सम्पन्न छः देवता इस जम्बूद्वीप के मेरू पर्वत की चूलिका के चारों तरफ खड़े होवे, नीचे 4 दिशाकुमारियाँ हाथ में बलि पिण्ड लेकर जम्बूद्वीप की जगती के बाहर की तरफ मुँह करके खड़ी होवे, वे देवियाँ एक साथ बलि पिण्डों को बाहर फेंके, उन देवताओं में कोई भी उन चारों ही बलि पिण्डों को नीचे नहीं गिरने दे, हाथ में ग्रहण कर ले, ऐसी शीघ्र गति वाले छः देवता लोक माप लेने निकले (छहों दिशा में) उसी दिन उसी समय एक गाथापति के एक हजार वर्ष की आयुष्य वाला एक बालक उत्पन्न हुआ बाद में उस बालक के माता-पिता काल धर्म को प्राप्त हो गये उतने समय में भी वे देवता लोक का पार नहीं पा सके। वह बालक और हाड-हाड की मींजी, उसकी 7 पीढ़ियाँ, कुल, वंश भी नष्ट हो गया तो भी वे देवता लोक का अंत नहीं प्राप्त कर सके। उन देवों का गत क्षेत्र अधिक है, अगत क्षेत्र थोड़ा है, गत से अगत असंख्यातवें भाग है। अगत से गत असंख्यात गुणा है।

38. अलोक के क्षेत्र के लिए दृष्टान्त दिया है-10 महाऋद्धि सम्पन्न देव मेरू की चूलिका पर खड़े है, और 8 दिशाकुमारिकाएँ हाथ में बलि पिण्ड लेकर मानुषोत्तर पर्वत के 4 दिशा 4 विदिशा में बाहर मुख करके खड़ी हों, एक साथ बलि पिंड फेंके, उन 10 में से एक भी देवता उन आठों पिंडों को नीचे न गिरने दे, हाथ में ग्रहण कर लेवे, ऐसी शीघ्र गति वाले दसों देवता अलोक का माप (असत् कल्पना) लेने निकले उसी समय एक गाथापति के 1 लाख वर्ष की आयु वाला पुत्र जन्मे, उसके माता-पिता काल धर्म को प्राप्त हो जाय, वह बालक और उसकी पीढ़ियाँ, यहाँ तक नाम गोत्र तक नष्ट हो गये तो भी वे देव अलोक का अंत प्राप्त नहीं कर सकते। गत क्षेत्र थोड़ा है, अगत अनन्त गुणा है। अगत क्षेत्र से गत क्षेत्र अनन्तवें भाग है।

39. लोक के एक आकाश प्रदेश पर एकेन्द्रिय यावत् पंचेन्द्रिय के और अनिन्द्रिय के प्रदेश है, वे आपस में परस्परबद्ध हैं, स्पृष्ट (स्पर्शे) है, यावत् अन्योन्य संबद्ध है, तो भी वे आपस में बाधा, पीड़ा, उत्पन्न नहीं करते, यावत् अवयव का छेद नहीं करते। दृष्टान्त-किसी नगर में रंगमहल

में कोई नर्तकी नाटक करे। उसे सैकड़ों, हजारों, लाखों मनुष्य देखे, उसे देखने वालों की दृष्टियाँ उस नर्तकी की कोई बाधा उत्पन्न नहीं करती है, पीड़ा नहीं करती है, अवयवों का छेदन नहीं होता है, इसी तरह एक आकाश प्रदेश पर रहकर एकन्द्रिय यावत् अनिन्द्रिय जीवों के प्रदेश बद्ध, स्पष्ट, परस्पर संबद्ध हैं, परन्तु परस्पर बाधा, पीड़ा यावत् अवयव छेदन नहीं करते।

40. सबसे थोड़े लोक के एक आकाश प्रदेश पर जघन्य पद से रहे हुए जीव के प्रदेश (तीन दिशा में अलोक से उस तरफ से जीव प्रदेश नहीं आते, सिर्फ तीन दिशा से आते हैं, इसलिए सबसे थोड़े हैं।) (2) उससे सर्व जीव असंख्यात गुणा (3) उससे एक आकाश प्रदेश पर उत्कृष्ट पद से रहे जीव विशेषाधिक (6 दिशाएँ) हैं।

97. काल (भ.श. 11 उ. 11) वाणिज्य ग्राम के निवासी सुदर्शन श्रावक की पृच्छा का समाधान-काल 4 प्रकार का है-(1) प्रमाण काल (2) यथा निवृत्ति काल, (3) मरण काल (4) अद्धाकाल। **प्रमाण काल** के 2 भेद-(1) दिवस प्रमाण काल (2) रात्रि प्रमाण काल। 4 प्रहर के दिन, 4 प्रहर की रात्रि।

आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन सूर्य कर्क राशि में आकर प्रथम मांडले में चलता है तब 18 मुहूर्त का दिन, साढ़े चार मुहूर्त की उत्कृष्ट पोरिसी और 12 मुहूर्त्त की रात्रि होती है। रात्रि की 3 मुहूर्त्त की जघन्य पोरिसी होती है। उसके बाद एक मुहूर्त्त के 122 भाग में से एक-एक भाग दिन घटता है, रात्रि बढ़ती है। पोष मास की पूर्णिमा के दिन 12 मुहूर्त्त का जघन्य दिन और 18 मुहूर्त्त की उत्कृष्ट रात्रि होती है। रात्रि की पोरिसी साढ़े चार मुहूर्त्त की, दिन की 3 मुहूर्त्त की होती है। जब सूर्य अंतिम मांडले में चलता है, तब फिर रात्रि एक एक भाग घटती जाती है, दिन बढ़ता जाता है। चैत्री और आसोजी पूर्णिमा को सूर्य मध्य मण्डल में चलता है तब 15 मुहूर्त्त का दिन और 15 मुहूर्त की रात्रि होती है। दोनों बराबर होते हैं पोने चार मुहूर्त्त की पोरिसी होती है।

यथा निवृत्ति काल-नारकी, देवता, मनुष्य, तिर्यंच सब संसारी जीव अपना-अपना बांधा हुआ आयुष्य भोगते हैं, उसे यथा निवृत्ति काल कहते हैं।

मरण काल-जीव शरीर से और शरीर जीव से अलग होता है, वह मरण काल है।

अद्धा काल–समय, आवलिका, मुहूर्त्त, यावत् सागरोपम रूप जो काल का विभाजन है वह अद्धा काल है, पल्योपम, सागरोपम से आयुष्य का, स्थितियों का माप होता है।

1. समय–काल का सबसे सूक्ष्म भाग
2. आवलिका–असंख्यात समय की एक आवलिका
3. उच्छवास–संख्यात आवलिका एक उच्छवास
4. निःश्वास–संख्यात आवलिका एक निःश्वास
5. प्राण–एक उच्छवास, एक निःश्वास का एक प्राण
6. स्तोक–7 प्राण का एक स्तोक
7. लव–7 स्तोक का एक लव
8. मुहूर्त–77 लव या 3773 प्राण का एक मुहूर्त
9. अहोरात्र–तीस मुहूर्त्त का एक अहोरात्र
10. पक्ष–पन्द्रह अहोरात्र का एक पक्ष
11. मास–दो पक्ष का एक मास
12. ऋतु–दो मास की एक ऋतु
13. अयन–तीन ऋतुओं का एक अयन
14. संवतसर–दो अयन का एक संवत्सर (वर्ष)
15. युग–पाँच संवत्सर का एक युग
16. वर्षशत–बीस युग का एक सौ वर्ष
17. वर्ष सहस्त्र–दस सौ वर्ष का एक हजार वर्ष
18. वर्ष शत सहस्त्र–सौ वर्ष सहस्त्रों का एक लाख वर्ष
19. पूर्वांग–84 लाख वर्षों का एक पूर्वांग
20. पूर्व–84 लाख पूर्वांगों का एक पूर्व
21. त्रुटितांग–84 लाख पूर्वों का एक त्रुटितांग
22. त्रुटित–84 लाख त्रुटितांगों का एक त्रुटित

इस प्रकार आगे पहले की राशि को 84 से गुणा करने से उत्तरोत्तर राशियाँ बनती हैं– (23) अडडांग (24) अटुट (25) अववांग (26) अवव (27) हुहुकांग (28) हुहुक (29) उत्पलांग (30) उत्पल (31) पद्मांग (32) पद्म (33) नलिनांग

(34) नलिन (35) अच्छनिपूरांग (36) अच्छनिपुर (37) अयुतांग (38) अयुत (39) नयुतांग (40) नयुत (41) प्रयुतांग (42) प्रयुत (43) चूलिकांग (44) चूलिका (45) शीर्ष प्रहेलिकांग (46) शीर्ष प्रहेलिका। शीर्ष प्रहेलिका 194 अंकों की संख्या है। इसमें 54 अंकों पर 140 बिन्दियाँ लगाने से शीर्ष प्रहेलिका संख्या का प्रमाण आता है। 758263253073010241157973569975696406218966848080183296 इसके आगे गणित का नहीं, उपमा का विषय है, पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी, पुद्‌गल परावर्तन, भूतकाल, भविष्यत् काल, सर्वकाल (सत्वद्धा काल)।

सेठ सुदर्शन ने भगवान के पास दीक्षा अंगीकार की 14 पूर्वों का ज्ञानार्जन किया, 12 वर्ष संयम पालकर सिद्धबुद्ध मुक्त हुए।

98. तीन जागरण (भ.श. 12 उ. 1) जागरण के तीन प्रकार (1) धर्म जागरण (2) अधर्म जागरण (3) सुदुक्खु जागरण। धर्म जागरण के 4 भेद–आचार, क्रिया, दया, स्वभाव धर्म।

1. धर्म जागरण–

(1) आचार धर्म–5 मूल भेद उत्तर भेद 39 है। ज्ञाना चार के 8, दर्शनाचार के 8, चारित्रा चार के 8, तपाचार के 12 वीर्यावार के 3 ये 39 भेद हुए।

(1) ज्ञानाचार–(1)कालाचार–शास्त्र में जिस समय जो सूत्र पढ़ने की आज्ञा है, उस समय ही उसे पढ़ना (2) **विनयाचार**–ज्ञानदाता गुरु का विनय करना। (3) **बहुमानाचार**–ज्ञानी एवं गुरु के प्रति भक्ति और श्रद्धा रखना (4) **उपधानाचार**–ज्ञान सीखते यथा शक्ति तप करना। (5) **अनिह्नवाचार**–गुरु का नाम नहीं छिपाना (6) **व्यंजनाचार**–सूत्र के पाठ का शुद्ध उच्चारण करना। (7) **अर्थाचार**–सूत्र का सत्य एवं शुद्ध अर्थ करना (8) **तदुभयाचार**–सूत्र और अर्थ का दोनों का शुद्ध पढ़ना, समझना।

(2) दर्शनाचार–(1) निःशंकित–वीतराग सर्वज्ञ के वचनों में संदेह न करना (2) **निःकांक्षित** परदर्शन की (मिथ्या) वांच्छा नहीं करना (3) **निर्विचिकित्सा**–धर्म के फल में संदेह न करना। (4) **अमूढ़ दृष्टि**–पाखंडियों का आडम्बर देखकर मोहित नहीं होना। (5) **उववूह**–गुणी के गुणों की प्रशंसा करना, स्वयं भी गुणों को प्राप्त करने का प्रयत्न करना। (6) **थिरिकरण**–धर्म से डिगते को धर्म में स्थिर

करना। (7) **वात्सल्य**-अपने धर्म से तथा स्वधर्मी से प्रेम रखना। (8) **प्रभावना**-वीतराग प्ररूपित धर्म की उन्नति, प्रचार करना, दीपाना श्रीकृष्ण श्रेणिक जैसा।

(3) चारित्राचार-(1) ईर्या समिति (2) भाषा समिति (3) एषणा समिति (4) आदानभंड मात्र निक्षेपणा समिति (5) उच्चार प्रश्रवण खेल जल्ल सिंघाणा परिस्थापनिका समिति (6) मनगुप्ति (7) वचनगुप्ति (8) कायगुप्ति।

(4) तपाचार-छ: बाह्य तप (1) अनशन (2) उणोदरी (3) भिक्षाचरी (4) रस परित्याग (5) काया क्लेश (6) प्रतिसंलीनता। छ: आभ्यन्तर तप-(1) प्रायश्चित्त (2) विनय (3) वैयावच्च (4) स्वाध्याय (5) ध्यान (6) कायोत्सर्ग। इस लोक-परलोक की सुख और वांच्छारहित तप करना। ये 12 तप के आचार है।

(5) वीर्याचार-(1) धर्म के कार्य में बल वीर्य को छिपावे नहीं (गोपे नहीं) (2) पूर्वोक्त 36 बोलों में उद्यम करे (3) शक्ति अनुसार धर्म कार्य करे। ये सब आचार धर्म के 39 बोल हुए।

(2) क्रिया धर्म-(1) **करण सत्तरी के 70 बोल**। 4 प्रकार की पिंड विशुद्धि, 5 समिति, 12 बारह भावना, 12 भिक्षु पड़िमा, 5 इन्द्रिय निरोध, 25 पडिलेहणा, 3 गुप्ति, 4 अभिग्रह।

(2) **चरण सत्तरी के 70 बोल**-5 महाव्रत, 10 यतिधर्म, 17 संयम, 10 प्रकार वैयावच्च, 9 ब्रह्मचर्य की नववाड़, 3 रत्न (ज्ञान, दर्शन, चारित्र), 12 प्रकार का तप, 4 कषाय निग्रह ये 70 हुए।

(3) दया धर्म 8 भेद (1) **स्वदया-अपनी** आत्मा को पाप से बचाना (2) **परदया**-दूसरे जीवों की रक्षा करना। (3) **द्रव्यदया**-देखादेखी कुलाचार से दया पालन (4) **भावदया**-ज्ञान से जीवात्मा जानकर अनुकम्पा वाला (5) **व्यवहार दया**-श्रावक के लिए जिस तरह बताया वैसा घर कार्य करते दया पालना। (6) **निश्चय दया**-अपनी आत्मा को कर्म बंधन से छुड़ाना, ममता उतारना, आत्म गुण में रमण करना। जीव का कर्मरहित शुद्ध स्वरूप प्रकट करना। यह 14वें गुणस्थान के अंत में पूर्ण रूप से प्राप्त होती है। (7) **स्वरूप दया**-पहले खूब खिलावे-पिलावे (मारने के लिए) यह दिखावा मात्र है। (8) **अनुबंध दया**-जीव को ऊपर से तकलीफ देवे अंदर से साता पहुँचावे (माता पुत्र को औषधि) जैसे- शिक्षक शिष्य, डॉक्टर रोगी।

(4) स्वभाव धर्म-जीव अजीव की परिणति को स्वभाव धर्म कहा है। 2 भेद (1) शुद्ध स्वभाव से शुद्ध परिणति (2) कर्म संयोग से अशुद्ध परिणति इसे विभाव परिणति कहते हैं। जीव अपने ज्ञानादि गुण में रमण करे यह जीव का स्वभाव धर्म है। एक वर्ण, एक गंध, एक रस दो स्पर्श यह पुद्‌गल का स्वभाव धर्म है। धर्मास्तिकाय का चलन, अधर्मास्तिकाय का स्थिर गुण, आकाशास्तिकाय का अवकाश गुण, काल का वर्तमान गुण यह चारों का स्वभाव धर्म है। विभाव धर्म नहीं। ये 4 प्रकार की धर्म जागरणा कही है-

धर्म जागरण के 4 भेद-

	आचार धर्म					क्रिया धर्म		दया धर्म	स्वभाव धर्म
	ज्ञानचार	दर्शनाचार	चारित्राचार	तपाचार	वीर्याचार	करण सत्तरी 70 भेद	चरण सत्तरी 70 भेद		
1.	कालाचार	निर्शंकित	ईर्या समिति	अनशन	धर्म में बल	4 पिंड विशुद्धि	5 महाव्रत	स्वदया	जीव स्वभाव
2.	विनयाचार	नि:कांक्षित	भाषा समिति	उणोदरी	वीर्य न	5 समिति	10 यतिधर्म	परदया	धर्म अजीव
3.	बहुमानाचार	निर्विचिकित्सा	एषणा समिति	भिक्षाचरी	छिपावे	12 भावना	17 संयम	द्रव्यदया	स्वभाव धर्म
4.	उपधानाचार	अमूढ़ दृष्टि	आदानभंड निक्षेण समिति	रस परित्याग	पूर्वोक्त 36 आचार में	12 भिक्षु प्रतिमा	10 वैयावृत्य	भावदया	
5.	अनिह्ववाचार	उपबृंहण	उच्चार पासवण परिस्था. समिति	कायक्लेश	उद्यम करे शक्ति	5 इन्द्रिय निरोध	9 ब्रह्मचर्य वाड़	व्यवहार दया	
6.	व्यजनाचार	स्थिरीकरण	मन गुप्ति	प्रतिसंलीनता	अनुसार	25 प्रति लेखन	3 रत्न	निश्चय दया	
7.	अर्थाचार	वात्सल्य	वचन गुप्ति	प्रायश्चित	धर्म करे	3 गुप्ति	12 तप	स्वरूप दया	
8.	तदुभयाचार	प्रभावना	काय गुप्ति	विनय		4 अभिग्रह	4 कषाय	अनुबंध	
							निग्रह	दया	
9.				वैयावृत्य					
10.				स्वाध्याय					
11.				ध्यान					
12.				कायोत्सर्ग					

2. अधर्म जागरणा-संसार में धन कुटुम्बादि का संयोग मिलना, उनके लिए आरंभादि करना, धनादि की रक्षा करना, उनमें एकाग्र होना अधर्म जागरणा है।

3. सुदक्खु जागरण-सु (भली) दक्खु (चतुराई वाली) जागरणा श्रावक के होती है, क्योंकि श्रावक सम्यक् ज्ञान दर्शन वाला होता है, धन कुटुम्बादि को तथा विषयकषायादि को खोटा समझता है, इनसे देशत: निवर्तता है उदासीन रहता है, तीन मनोरथ का चिंतन करता है, यह सुदक्खु जागरणा है।

99. जयन्ती बाई (भ.श. 12 उ. 2) जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कोशाम्बी नगर के बाहर चन्द्रावतरण उद्यान था। सहस्त्रानीक राजा का पौत्र, शतानीक का पुत्र, चेड़ा राजा का दोहिता, मृगावती का पुत्र, जयन्ती श्राविका का भतीजा-उदायन राजा राज्य करता था। मृगावती राजा चेड़ा की पुत्री थी मृगावती की ननद जयन्ती श्रमणोपासिका थी तथा भगवान महावीर के साधुओं की प्रथम शय्यातर थी। जीवाजीव का उन्हें ज्ञान था। एक दिन श्रमण भगवान महावीर चन्द्रावतरण उद्यान में विराजे। राजा उदायन, माता (राणी) मृगावती और जयन्ती दर्शनार्थ गये, राजा और मृगावती दर्शन वंदन प्रवचन सुनकर वापस आ गये, जयन्ती श्राविका ने भगवान को वंदन कर प्रश्न पूछे, उत्तर सुन हृदयंगम कर दीक्षा लेने के भाव प्रकट किये दीक्षा लेकर उसी भव में मुक्त हुई।

15 प्रश्न एवं समाधान इस प्रकार है :-

1. जीव 18 पापों से निवर्तने से हल्का होता है, 18 पापों में प्रवर्तन से भारी होता है।
2. जीव 18 पापों से निवर्तने से संसार घटाता है, 18 पापों में प्रवर्तन से जीव संसार बढ़ाता है।
3. जीव 18 पापों से निवर्तने से कर्म स्थिति घटाता है, 18 पापों में प्रवर्तन से जीव कर्म स्थिति बढ़ाता है।
4. जीव 18 पापों से निवर्तने से संसार सागर तिरता है, 18 पापों में प्रवर्तने से संसार में परिभ्रमण करता है।
5. जीवों के सिद्धिपना स्वभाव से है, परिणाम से नहीं।
6. सब भव सिद्धिक मोक्ष जावेंगे। (निकट भवी की अपेक्षा से उत्तर होगा)।
7. सब भव सिद्धिक मोक्ष जावेंगे, तो भी यह लोक भव सिद्धिक जीवों से रहित नहीं होगा हे, जयन्ती! जैसे सर्व आकाश की श्रेणी अनादि अनन्त है, उनमें से एक-एक परमाणु खण्ड एक-एक समय में अपहरे (निकाले) तो एक आकाश श्रेणी अनन्त अवसर्पिणी उत्सर्पिणी में भी खाली नहीं होती, तो आकाश की अनन्त श्रेणियों की खाली होने की बात ही नहीं है। णो इणट्ठे समट्ठे। यह संसार और भव सिद्धिक जीवों का मोक्ष जाना अनादि से निरंतर चल रहा है अनन्त काल तक चलता रहेगा, तो भी यह लोक भव सिद्धिक जीवों से खाली नहीं होगा।

(8) कुछ जीव जो अधर्मी है, अधर्म का काम करते हैं, अधर्म का उपदेश देते हैं, अधर्म में आनंद मानते हैं यावत् अधर्म से आजीविका करते हैं, वे जीव सोते हुए अच्छे हैं क्योंकि सोते हुए वे सर्व प्राण भूत जीव सत्व को दु:ख नहीं पहुँचाते यावत् परितापना नहीं देते। दूसरों की आत्मा को अधर्म में नहीं जोड़ते इस कारण वे सोते हुए अच्छे हैं। जो जीवधर्मी है, यावत् धर्म से आजीविका करते हैं, वे जागते हुए अच्छे हैं, क्योंकि वे सर्वप्राण भूत जीव सत्व को सुख उपजाते हैं, तथा अपनी तथा दूसरों की आत्मा को धर्म जोड़ते हैं।

(9-10) इसी तरह बलवान् और निर्बल का तथा उद्यमी और आलसी का कथन है, विशेष यह कि जो उद्यमी होगा वह आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी यावत् स्वधर्मी की वैयावच्च में अपनी आत्मा को जोड़ेगा।

(11) श्रोत्रेन्द्रिय के वश हुआ जीव आयुष्य को छोड़ शेष कर्मों की ढ़ीली प्रकृति को गाढ़ी करता है, थोड़े काल की स्थिति को ज्यादा काल की करता है, मन्द रस को तीव्र करता है, अल्प प्रदेश को बहुत प्रदेश करता है। आयुष्य बांधता है अथवा नहीं बांधता असाता वेदनीय कर्म बारंबार बांधता है, चार गति रूप संसार में परिभ्रमण करता है।

(12-15) इसी तरह चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पशनेन्द्रिय का भी कहना। जयन्ती बाई श्रमणोपासिका बोध प्राप्त कर देवानन्दा की तरह दीक्षा लेकर मुक्त हुई।

100. पुद्‌गलों का मिलना बिखरना (भ.श. 12 उ. 4) (1) दो परमाणु मिलने से दो प्रदेशी स्कंध होता है। टुकड़े करने से दो टुकड़े एक-एक परमाणु पुद्‌गल रहता है। (2) तीन परमाणु मिलने से त्रिप्रदेशी स्कंध होता है, टुकड़े करने से दो या तीन विभाग और दो भंग होते है 1+2 या 1+1+1 दो भंग।

(3) चार परमाणु मिलने से चतुष्प्रदेशी स्कंध बनता है, बिखरने से दो-तीन-चार विभाग जैसे 1+3, 2+2, 1+1+2, 1+1+1+1 कुल 4 भंग। इसी तरह पाँच प्रदेशी से अनन्त प्रदेशी तक कथन है, जितने प्रदेशी स्कंध हो उसके विभाग एक कम होगा। पाँच प्रदेशी के 4 विभाग, छ प्रदेशी के 5 विभाग यावत् 10 प्रदेशी के 9 विभाग।

पाँच प्रदेशी के 2-3-4-5 ये चार विभाग और **भंग 6 होंगे**-1+4, 2+3, 1+1+3, 1+2+2, 1+1+1+2, 1+1+1+1+1 ये 6 भंग।

छ प्रदेशी के-2, 3, 4, 5, 6 यो पाँच विभाग और भंग 10

1+5, 2+4, 3+3, 1+1+4, 1+2+3

2+2+2, 1+1+1+3, 1+1+2+2, 1+1+1+1+2, 1+1+1+1+1+1

7 प्रदेशी के-2, 3, 4, 5, 6 या 7 विभाग 6 हुए भंग 14 बनते हैं।

8 प्रदेशी के-7 विभाग-2, 3, 4, 5, 6, 7 या 8 और भंग 21 बनते हैं।

9 प्रदेशी के 8 विभाग-2, 3, 4, 5, 6, 8 या 9 और 28 भंग (29) बनते हैं।

10 प्रदेशी के 9 विभाग 2 से 10 तक और भंग 39 (41) बनते हैं।

ये सब 125 भांगे हुए, तीन भांगे शून्य है 9 प्रदेशी में 2+2+5 और 10 प्रदेशी में 2+2+6 और 1+2+2+5 ये शून्य भांगे है, जिन्हें कोष्ठक में बताया है।

संख्यात प्रदेशी-द्विसंयोगी 11 अब आगे 10-10 बढ़ाते रहना 3 संयोगी 21, 4 में 31, 5 के 41, 6 के 51, 7 के 61, 8 के 71, 9 के 81, 10 संयोगी 91 और संख्यात का 1 कुल 460 भांगे।

असंख्यात प्रदेशी-द्विसंयोगी 12 अब आगे 11-11 बढ़ाते रहना तीन में 23, चार में 34, पाँच 45, छ में 56, सात 67, आठ 78, नौ 89, दस 100, संख्यात के 12 और असंख्यात संयोगी 11 यों कुल 517 भांगे हुए।

अनन्त प्रदेशी-द्विसंयोगी 13 अब आगे 12-12 बढ़ाना। 3 में 25, चार में 37, पाँच 49, छ में 61, सात 73, आठ 85, नौ 97, दस 109, संख्यात संयोगी 13, असंख्यात संयोगी 13 अनन्त संयोगी 1, कुल 576 भंग। यद्यपि संख्यात प्रदेशी के संख्यात, असंख्यात प्रदेशी के असंख्यात, अनन्त प्रदेशी के अनन्त भंग हो सकते हैं, परन्तु कथन पद्धति से संभव नहीं है। 460, 517, 576 आगम अपेक्षित है। गांगेय अणगार के प्रवेशक भंग में भी ऐसी ही पद्धति हैं।

संख्यात प्रदेशी में भंग का तरीका-एक परमाणु+एक संख्यात प्रदेशी। 2+संख्यात, 3+संख्यात, यों 10+संख्यात और ग्यारवाँ भांगा संख्यात+संख्यात प्रदेशी का।

तीन संयोगी में 21 भांगे-1+1+सं, 1+2+सं, 1+3+सं, 1+4+सं, 1+5+सं, 1+6+सं, 1+7+सं, 1+8+सं, 1+9+सं, 1+10+सं, 1+सं.+सं., 2+सं.+सं., 3+सं.+सं., 4+सं.+सं., 5+सं.+सं., 6+सं.+सं., 7+सं.+सं., 8+सं.+सं., 9+सं.+सं., 10+सं.+सं.,

सं.+सं.+सं.=21 भांगे। इसी विधि से संख्यात, असंख्यात, अनंत प्रदेशी के 10 संयोगी तक के भांगे बनाना। संख्यात प्रदेशी के संख्यात भंग होने से सभी परमाणु हो जाते हैं।

101. पुद्गल परावर्तन (भ.श. 12 उ. 4) (1) नाम द्वार (2) अर्थ (गुण) द्वार (3) संख्या द्वार (4) काल द्वार (5) वर्ष (क्षेत्र की उपमा) द्वार (6) पुद्गल परावर्तन की काल की अल्पाबोध (7) अल्प बहुत्व द्वार।

1. नाम द्वार-पुद्गल परावर्तन 7 प्रकार का है (1) औदारिक पुद्गल परावर्तन (2) वैक्रिय पुद्गल परावर्तन (3) तैजस पुद्गल परावर्तन (4) कार्मण पुद्गल परावर्तन (5) मन पुद्गल परावर्तन (6) वचन पुद्गल परावर्तन (7) श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन। 7 पुद्गल वर्गणाओं से कहे हैं।

2. अर्थ (गुण) द्वार-औदारिक पुद्गल परावर्तन का अर्थ है, सर्वलोक के पुद्गल औदारिक शरीरपणे ग्रहण करके छोड़ दिये, वह औदारिक पुद्गल परावर्तन है, ऐसे सभी सातों कहना।

3. संख्या द्वार-एक-एक नारकी के नेरिये ने सात पुद्गल परावर्तन 7 वर्गणापणे अतीत अनन्ता भविष्य में कस्सइ अत्थि कस्सई नत्थि जस्स अत्थि 1-2-3 जीव संख्याता, असंख्याता, अनन्ता। इसी तरह 23 दंडक और कहना। 24x7=168 अतीत, 168 भविष्य काल आसरी कुल 336 अलावा हुए। इसी तरह बहुत नारकी के नेरियों के पुनः 168+168=336 अलावा कहना। 24 दंडक के कहने से हुए।

नारकी के नेरिये ने नारकी और देवता के कुल 14 दंडक में औदारिक पुद्गल परावर्तन नहीं किये। एक-एक नारकी के नेरिये ने औदारिकपणे औदारिक पुद्गल परावर्तन अनंत किये, भविष्य में कस्सई अत्थि, कस्सई नत्थि, जस्स अत्थि एगोत्तरिया। एक-एक नारकी के नेरिया ने 17 दंडकपने वैक्रिय पुद्गल परावर्तन अतीत में अनन्त भविष्य (पुरेक्खड़ा) में कस्सई अत्थि, कस्सई नत्थि जस्स अत्थि एगोत्तरिया। एक-एक नारकी के नेरिये ने 24 दंडकपने तैजस, कार्मण, श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन अनन्ता किये, भविष्य में कस्सई अत्थि, कस्सई नत्थि जस्स अत्थि एगोत्तरिया।

एक-एक नारकी के नेरिये ने 16 दंडकपणे मन पुद्गल परावर्तन अनन्त किया, भविष्य में कस्सई अत्थि, कस्सई नत्थि जस्स अत्थि एगोत्तरिया। 8 दंडकपणे मन

पुद्गल परावर्तन नहीं किये। एक-एक नारकी के नेरिये के 19 दंडकपणे वचन पुद्गल परावर्तन का कहना और 5 स्थावरपणे वचन पुद्गल परावर्तन नहीं किया कहना। जिस तरह नारकी का कहा उसी तरह 13 दंडक देवता के कहना।

एक-एक पृथ्वीकाय आदि 10 औदारिक दंडक के जीवों ने 14 दंडकपणे औदारिक पुद्गल परावर्तन नहीं किये। एक-एक पृथ्वीकाय आदि 10 औदारिक दंडक जीवों ने 10 दंडक औदारिकपणे औदारिक पुद्गल अतीत में अनंत किये, भविष्य में कस्सई अत्थि कस्सई नत्थि जस्स अत्थि एगोत्तरिया। इसी तरह 10 औदारिक दंडक का 17 दंडकपणे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन का कहना। 10 औदारिक दंडक का 7 दंडकपणे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन नहीं किया कहना। 10 औदारिक दंडक जीवों ने 24 दंडकपणे तैजस, कार्मण, श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन अतीत में अनन्त किये, भविष्य में कस्सई अत्थि, कस्सई नत्थि जस्स अत्थि एगोत्तरिया। एक-एक पृथ्वीकायादि 10 औदारिक दंडक के जीवों का 16 दंडकपणे मन पुद्गल परावर्तन करना उपरोक्त कहना और 8 दंडकपणे नहीं करना कहना। इसी प्रकार 19 दंडकपणे वचन पुद्गल का परावर्तन का करना कहना और 5 (स्थावर) का नहीं किया नहीं करना कहना। 24 दंडक पर सात-सात पुद्गल परावर्तन गिनने से 168 अलावा हुए इनको 24 दंडक पर गुणा करने से 168x24=4032 इन्हें अतीत और आगामी काल से गुणा करने से 8064 अलावा हुए।

बहुत नारकी के नेरियों ने नारकी देवता 14 दंडकपने औदारिक पुद्गल परावर्तन नहीं किये नहीं करेंगे। दस दंडक औदारिकपणे औदारिक पुद्गल परावर्तन अनन्त किये और करेंगे। बहुत नारकों ने 17 दंडकपने वैक्रिय पुद्गल परावर्तन अनन्त किये अनन्त करेंगे। बहुत नेरियों ने 7 दंडकपणे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन नहीं किये नहीं करेंगे। बहुत नारकों ने 24 दंडकपणे तैजस, कार्मण और श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन अनन्त किये, करेंगे। इसी प्रकार 16 दंडकपणे मन पुद्गल परावर्तन 19 दंडकपने वचन पुद्गल परावर्तन अनन्त किये करेंगे। 8 दंडकपणे मन और 5 दंडकपणे वचन पुद्गल परावर्तन इन्होंने नहीं किया नहीं करेंगे। इसी तरह देवता के 13 दंडक का भी कहना।

बहुत पृथ्वीकाय आदि 10 औदारिक दंडक के जीवों ने नारकी देवता के 14 दंडकपणे औदारिक पुगल परावर्तन और 7 दंडकपणे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन नहीं किया नहीं करेंगे। बहुत 10 औदारिक दंडक के जीवों ने 10 औदारिक दंडकपणे

औदारिक पुद्गल परावर्तन और 17 दंडकपणे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन अनन्त किये, अनन्त करेंगे। बहुत 10 औदारिक दंडक के जीवों ने 24 दंडकपणे तैजस, कार्मण और श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन अतीत में अनन्त किये पुरेक्खड़ा अनन्त करेंगे। बहुत 10 औदारिक दंडक जीवों ने 16 दंडकपणे मन, 19 दंडकपणे वचन पुद्गल परावर्तन अनन्त किये करेंगे। 8 दंडकपणे मन और 5 दंडकपणे वचन पुद्गल परावर्तन नहीं किया नहीं करेंगे। 8 दंडकपणे मन और 5 दंडकपणे वचन पुद्गल परावर्तन नहीं किया नहीं करेंगे। तीसरे सूत्र (एक जीव मांहो मांही) के अनुसार 8064 अलावा हुए। कुल 336+336+8064+8064=16800 अलावा हुए। इनमें निषेध रूप (नकारे हुए) के 3264 अलावा कम करने से बाकी 13536 अलावा हुए।

4. काल द्वार-असंख्यात समय की आवलिका, उससे श्वासोच्छावास, प्राण, थोव, लव, मुहूर्त, अहोरात्रि, पक्ष, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, 100 वर्ष, 1000 वर्ष, लाख वर्ष, 84 लाख वर्ष, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अडडांग, अडड, अववांग, अवव, हुहुकांग, हुहुक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थ निपुरांग, अर्थ निपुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुत चूलितांग, चूलिका, शीर्ष प्रहेलिकांग, शीर्ष प्रहेलिका। ऐसी अनन्ता शीर्ष प्रहेलिका एक पुद्गल परावर्तन में पूरी हो जाती है।

5. वर्ष (क्षेत्र) को वर्ष (क्षेत्र) की उपमा-(1) अनन्त सूक्ष्म परमाणु इकट्ठे हो तो एक बादर व्यवहार परमाणु। (2) अनन्त बादर परमाणु का एक उष्ण सेणिया। (3) आठ उष्ण सेणिया- एक शीत सेणिया। (4) 8 शीत सेणिया एक ऊर्ध्वरेणु। (5) 8 ऊर्ध्वरेणु-एक त्रसरेणु (6) 8 त्रसरेणु-1 रथरेणु। (7) 8 रथरेणु-देवकुरु उत्तरकुरु के युगलिये का एक बालाग्र (8) देवकुरु उत्तरकुरु के युगलियों के 8 बालाग्र-हरिवास रम्यक्वास युगलिया का। बालाग्र (9) हरिवासरम्यकवास के युगलियों के 8 बालाग्र-हेमवय हेरण्यवय के युगलिये का। बालाग्र (10) हेमवय हेरण्यवय के युगलियों के 8 बालाग्र-पूर्व पश्चिम महाविदेह के मनुष्यों का एक बालाग्र (11) पूर्व पश्चिम महाविदेह के मनुष्यों के 8 बालाग्र इकट्ठे हो तो 1 लीक होती है। यहाँ भरत एरवत के मनुष्यों के बालाग्र नहीं लिये है, क्योंकि यहाँ काल का माप होने से, क्षेत्र के माप में जहाँ अवगाहना का माप करना होता है, वहाँ भरत एरवत के मनुष्यों के माप लेते हैं। (12) आठ लीक की एक यूका (जूँ) (13)

आठ जूँ-एक उत्सेध अंगुल (14) 6 उत्सेध अंगुल का-एक पाउ (पैर) (15) 12 उत्सेधांगुल की-1 वेंत (बिलांत) (16) दो वेंत (24 अंगुल) का 1 हाथ (17) दो हाथ (48 अंगुल)-एक कुक्षि। (18) 4 हाथ (96 अंगुल) का एक धनुष। (19) दो हजार धनुष का 1 गाउ (कोस) (20) 4 गाउ का एक योजन होता है।

पल्योपम-4 कोस लंबा, 4 कोस चौड़ा, 4 कोस गहरा कुँआ में देवकुरु उत्तरकुरु के 1 दिन से 7 दिन के जन्मे बालक युगलियों के केशों के बालाग्र असंख्याता खंड करके (पृथ्वीकाय के पर्याप्ता की अवगाहना जितने सूक्ष्म, दृष्टिगोचर हो उससे असंख्यात खंड) कुएँ को ठसाठस भर दे। (1) चक्रवर्ती की सेना निकले तो दबे नही (2) संवर्तक वायु चले तो उड़े नहीं (3) पुष्करावर्त मेघ बरसे तो एक खंड भी भींजे नहीं (4) गंगा सिंधु का पूर आवे तो बहे नहीं। (5) महा दावानल लगे तो भी एक खंड जले नहीं। इस प्रकार में से 100-100 वर्षों से एक-एक बालाग्र निकाले, वह कुआँ खाली हो जाये उसे एक पल्योपम कहते हैं।

इसके तीन प्रकार (1) उद्धार पल्योपम (2) अद्धा पल्योपम (3) क्षेत्र पल्योपम। प्रत्येक पल्योपम व्यावहारिक और सूक्ष्म दो भेद से हैं, सूक्ष्म पल्योपम को समझने में सुगमता रहे, इसलिए व्यवहार पल्योपम कहा है, बाकी कोई प्रयोजन नहीं है।

उद्धार पल्योपम-एक योजन लंबे-चौड़े गहरे कुएँ में से ऊपर कहे अनुसार बालाग्रों में से एक-एक बालाग्र, एक-एक समय में निकालते कुआँ खाली होने में जो काल लगे वह व्यावहारिक उद्धार पल्योपम हैं ऐसे 10 क्रोड़ा क्रोड़ी का एक सागरोपम होता है। सूक्ष्म उद्धार पल्योपम में-उस कुएँ में बालाग्रों के असंख्यात-असंख्यात खंड-खंड करके भरे और एक-एक खंड एक-एक समय में निकाले, खाली होने में जो काल लगे, वह सूक्ष्म उद्धार पल्योपम, ऐसे 10 क्रोड़ा क्रोड़ी उद्धार पल्योपम का 1 सागरोपम होता है। ऐसे सूक्ष्म अढ़ाई उद्धार सागरोपमों में जितने समय होते है, उतनें द्वीप समुद्र हैं।

अद्धा पल्योपम-उन बालाग्रों को 100-100 वर्षों में एक-एक बालाग्र निकालने में जो काल लगे वह व्यावहारिक अद्धा पल्योपम। 10 क्रोड़ा क्रोड़ी व्यावहारिक अद्धा पल्योपम का एक सागरोपम। सूक्ष्म अद्धा पल्योपम-उपरोक्त प्रकार से खंड-खंड करना और उक्त प्रकार से 100-100 वर्षों में एक-एक खंड निकालना एक सूक्ष्म अद्धा पल्योपम और 10 क्रोड़ा क्रोड़ी सूक्ष्म अद्धा पल्योपम का एक सूक्ष्म अद्धा सागरोपम होता है। इससे 4 गति के जीवों की आयु का माप किया जाता है।

क्षेत्र पल्योपम-इस कुएँ में इन बालाग्रों से जो आकाश प्रदेश स्पष्ट (स्पर्शे) हैं, उन आकाश प्रदेशों में से एक-एक आकाश प्रदेश को एक-एक समय में निकाले, सभी स्पृष्ट आकाश प्रदेश निकले उतने काल परिमाण को व्यावहारिक क्षेत्र पल्योपम कहते हैं। सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम-उन बालाग्र के खंडों को जो आकाश प्रदेश फरसे हैं, और जो स्पष्ट नहीं है उन सभी स्पृष्ट-अस्पृष्ट आकाश प्रदेशों में से एक-एक आकाश प्रदेश एक-एक समय निकाला जाये, जितना काल लगे उतने काल परिमाण को सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम कहते हैं। 10 क्रोड़ा क्रोड़ी सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम का एक सूक्ष्म क्षेत्र सागरोपम होता है। सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम और सूक्ष्म क्षेत्र सागरोपम से दृष्टिवाद के द्रव्यों का मान किया जाता है। 10 क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपम का एक सागरोपम होता है, ऐसे 10 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम की एक अवसर्पिणी होती है, जिसमें पहला आरा 4 क्रोड़ा क्रोड़ सागर का, दूसरा आरा तीन क्रोड़ा क्रोड़ सागर का, तीसरा आरा 2 क्रोड़ा क्रोड़ सागर का, चौथा आरा 42 हजार वर्ष कम एक क्रोड़ा क्रोड़ सागर, पाँचवाँ आरा 21 हजार वर्ष, छठा आरा 21 हजार वर्ष का होता है। ऐसे ही 10 क्रोड़ा क्रोड़ सागर की एक उत्सर्पिणी होती है, यो काल चक्र में 20 क्रोड़ा क्रोड़ सागर होते हैं। ऐसे अनन्त काल चक्र एक पुद्गल परावर्तन में पूरे हो जाते हैं। जीवों के संसार भ्रमण का काल, कायस्थिति आदि सभी वैक्रिय पुद्गल परावर्तन की अपेक्षा समझना चाहिए। अन्य 6 पुद्गल परावर्तन केवल ज्ञेय मात्र है।

6. पुद्गल परावर्तन में पुद्गल परावर्तन द्वार-(1) एक वैक्रिय पुद्गल परावर्तन में वचन पुद्गल परावर्तन अनन्त होते हैं। (2) एकवचन पुद्गल परावर्तन में मन पुद्गल परावर्तन अनन्त होते हैं। (3) एक मन पुद्गल परावर्तन में श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन अनंत होते हैं। (4) एक श्वासोच्छावास पुद्गल परावर्तन में औदारिक पुद्गल परावर्तन अनन्त होते हैं। (5) एक औदारिक पुद्गल परावर्तन में तैजस पुद्गल परावर्तन अनंत होते हैं। (6) एक तैजस पुद्गल परावर्तन में कार्मण पुद्गल परावर्तन अनन्त होते हैं।

7. पुद्गल परावर्तन में काल की अल्पाबोध-सबसे थोड़ा कार्मण पुद्गल परावर्तन का काल, उससे तैजस पुद्गल परावर्तन का काल अनन्त गुणा, उससे औदारिक पुद्गल परावर्तन का काल अनन्त गुणा, उससे श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन का काल अनन्त गुणा, उससे मन, उससे वचन और उससे वैक्रिय पुद्गल परावर्तन का काल अनन्त गुणा।

8. अल्पाबोध द्वार-सबसे थोड़े वैक्रिय पुद्गल परावर्तन, उससे वचन पुद्गल परावर्तन, उनसे मन पुद्गल परावर्तन, उनसे श्वासोच्छवास पुद्गल परावर्तन, उससे औदारिक पुद्गल परावर्तन, उससे तैजस पुद्गल परावर्तन, उससे कार्मण पुद्गल परावर्तन अनंत गुणा है।

102. पुद्गल परावर्तन (छठा कर्म ग्रंथ)-पुद्गल परावर्तन के भेद 4-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव, इनके सूक्ष्म बादर से कुल 8 भेद हैं।

(1-2) द्रव्य पुद्गल परावर्तन-बादर-संपूर्ण लोक के पुद्गल **सात ही वर्गणापणे** ग्रहण किये जाये, एक भी परमाणु बिना ग्रहण किये न रहे, उसे द्रव्य से बादर पुद्गल परावर्तन कहते हैं जैसे गुड़ की एक भेली के 7 मकोड़े लगे है, लोक का पुद्गल 1 और 7 वर्गणा 7 मकोड़े समान। **सूक्ष्म**-संपूर्ण लोक के पुद्गल **एक-एक** वर्गणापणे क्रम से ग्रहण किये जाये, वह द्रव्य से सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन जैसे गुड़ की सात भेली के 1 मकोड़ा। इसमें अनंत काल लगाता है।

(3-4) क्षेत्र पुद्गल परावर्तन-बादर-कोई एक जीव मरकर संपूर्ण लोक के आकाश प्रदेशों को सात ही वर्गणापणे जन्म-मरण करके स्पर्शे, एक भी प्रदेश खाली न रहे। वह बादर क्षेत्र पुद्गल परावर्तन है। **सूक्ष्म**-इस जम्बूद्वीप के मेरू पर्वत के बीचोंबीच 8 रूचक प्रदेश है, कोई जीव पहली बार पहले रूचक प्रदेश पर मरे, दूसरी बार उसके पास मरे (आगे-पीछे मरने जन्मने को गिना नहीं जाता) इस तरह संपूर्ण लोक में प्रदेशों को एक-एक वर्गणापणे क्रम से पूरा करे, वह सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गल परावर्तन है। अनंता काल लगता है।

(5-6) काल पुद्गल परावर्तन-20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का एक काल चक्र होता है। इसमें कोई जीव सातों ही वर्गणापणे आगे-पीछे मरकर समय पूरा करे, एक भी समय काल चक्र का बाकी न रहे, उसे काल से बादर पुद्गल परावर्तन कहते हैं।

सूक्ष्म-20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम के पहले समय में कोई जीव मरे, फिर दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे (आगे-पीछे मरे व गिने नहीं) इस प्रकार मरता हुआ 20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का समय पूरा करे, एक भी समय छोड़े नहीं यह सूक्ष्म काल पुद्गल परावर्तन हुआ। इसमें अनन्त काल लगता है।

(7-8) भाव पुद्गल परावर्तन-बादर-एक समय के उत्पन्न हुए असंख्याता लोकाकाश जितने सूक्ष्म तेउकायिक जीव, उससे सर्व तेउकायिक जीव असंख्यात

गुणा, उससे तेउकाय की कायस्थिति के समय असंख्यात गुणा, उससे संयम के स्थान असंख्यात गुणा, रसबंध के हेतुभूत कषाय के अध्यवसाय असंख्यात गुणा है। इसमें कोई जीव पहले अध्यवसाय में मरे, फिर आगे-पीछे करके सात ही वर्गणापणे मरकर रसबंध के सब अध्यवसायों को स्पर्श करे, बादर भाव पुद्गल परावर्तन है, **सूक्ष्म**-रसबंध अध्यवसाय स्थानों में क्रमवार मरता हुआ सब स्थानों को पूरा करे, कोई भी स्थान बाकी न रहे, यह सूक्ष्म भाव पुद्गल परावर्तन है, इसमें अनंता काल लगता है।

103. कषाय के 53 बोल (भ.श. 12 उ. 5) 4 कषाय के 53 पर्यायवाची शब्द दिये है-

(1) क्रोध के 10 बोल-क्रोध के परिणाम उत्पन्न करने वाले कर्म को क्रोध कहते हैं, इसके 10 नाम है-(1) **क्रोध**-सामान्य नाम है। (2) **कोप**-विशेष नाम है, क्रोध उत्पन्न होने पर स्वभाव से चलित होना। (3) **रोष**-क्रोध का अनुबंध, परम्परा। (4) **दोष (द्वेष)**-स्व या पर को दोष देना, अप्रीति करना। (5) **अक्षमा**-किसी का अपराध सहन नहीं करना। (6) **संज्वलन**-क्रोध से बारम्बार जलना। (7) **कलह**-जोर-जोर से परस्पर अनुचित बोलना। (8) **चांडिक्य**-रौद्र रूप धारण करना। (9) **भंडण**-लकड़ी से लड़ना। (10) **विवाद**-परस्पर आक्षेप जनक शब्द कहना।

(2) मान के 12 नाम-मान का परिणाम उत्पन्न करने वाला मान कर्म इसके 12 एकार्थक (पर्यायवाची) है। (1) **मान**-सामान्य नाम (2) **मद** (हर्ष) विशेष नाम (3) **दर्प**-मदमस्तपना, अहंकार (4) **स्तंभ**-अकड़कर रहना, किसी को नमस्कार नहीं करना। (5) **गर्व**-घमण्ड करना (6) **अत्युत्क्रोश**-दूसरों से अपने को श्रेष्ठ बताना (7) **परपरिवाद**-परनिन्दा या अवगुणवाद बोलना। (8) **उत्कर्ष**-अपनी समृद्धि या ऐश्वर्य को अभिमान से प्रकट करना। (9) **अपकर्ष**-दूसरों को नीचा दिखाना (10) **उन्नत**-गुरुजनों को नमस्कार करना छोड़ देना, अभिमान से शिष्टाचार छोड़ देना (11) **उन्नाम** नमस्कार करने को वालों नमस्कार वापस नहीं करना, नमस्कार का जवाब नहीं देना। (12) **दुर्नाम** उचित रूप से नमना नहीं, मद में प्रवृत्ति करना। स्तंभ आदि मान के कार्य है, ये 12 एकार्थक है।

(3) माया के 15 नाम-माया कर्म का बंध होता है-माया के 15 एकार्थक, पर्यायवाची है। (1) **माया**-सामान्य नाम (2) **उपधि**-किसी को ठगने का परिणाम

रखना। (3) **निकृति**–किसी को ठगने की बुद्धि से उसका आदर करना। एक माया छिपाने हेतु दूसरी माया करना। (4) **वलय**–वक्रपने की चेष्टा करना, टेढ़ा बोलना। (5) **गहन**–ठगने या धोखा, समझ न सके ऐसा जाल बुनना। (6) **नूम**–ठगने के लिए अधम से अधम बर्ताव करना। (7) **कल्क**–हिंसाकारी उपायों से ठगना। (8) **कुरूप**–माया करके भण्ड कुचेष्टा, निंदनीय बर्ताव करना। (9) **जिह्नता**–ठगने के लिए धीरे–धीरे कार्य करना। (10) **किल्विष**–माया से इस भव में किल्विषी देव सरीखा होना। (11) **आदरणता**–कपटाई कर आदर करना ठगने के लिए नाना क्रियाएँ आचरणा। (12) **गूहनता**–स्वरूप को छिपाना। (13) **वंचनता**–दूसरों को ठगना। (14) **प्रतिकुंचनता**–दूसरे के सरल भाव से कहे वचन का खंडन करना। (15) **सातियोग**–उत्तम द्रव्य में हीन या खोटा द्रव्य मिलाना। ये माया के कार्य है।

(4) लोभ के 16 नाम–लोभ का बंध कराने वाले कर्म को लोभ कहा है 16 नाम एकार्थक, पर्यायवाची है (1) **लोभ**–सामान्य नाम (2) **इच्छा**–अभिलाषा (3) **मूर्च्छा**–प्राप्त वस्तु की रक्षा की अभिलाषा (4) **कांक्षा**–वस्तु प्राप्त नहीं हुई उसे प्राप्त करने की इच्छा। (5) **गृद्धि**–प्राप्त वस्तु में आसक्ति भाव (6) **तृष्णा**–अतृप्ति, वस्तु प्राप्ति की इच्छा और प्राप्त वस्तु का नाश न हो। (7) **भिध्या**–विषयों की एकाग्रता (8) **अभिध्या**–प्रतिज्ञा करके दृढ़ न रहना (9) **आशंसना**–इच्छित वस्तु की प्राप्ति करना (10) **प्रार्थना**–दूसरे के लिए इष्ट वस्तु की मांगणी करना। (11) **लालपनता**–इष्ट वस्तु मांगने दूसरों की खुशामद करना, चापलूसी करना। (12) **कामाशा**–इष्ट रूप और शब्द प्राप्ति की इच्छा करना। (13) **भोगाशा**–इष्ट गंध आदि प्राप्ति की इच्छा। (14) **जीविताशा**–जीने की अभिलाषा (15) **मरणाशा**–विपत्ति के समय मरने की अभिलाषा (16) **नन्दिराग**–अपनी ऋद्धि पर राग करना। इच्छा आदि सब लोभ के कार्य है, एकार्थक नाम हैं। क्रोधादि 53 बोलों में 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 4 स्पर्श है।

104. रूपी अरूपी (भ.श. 12 उ.5) जिन पदार्थों, बोलों, तत्वों में 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, और 8 स्पर्श ये 20 बोल पाये जाये वे **रूपी** और जिनमें वर्णादि नहीं हो वे **अरूपी**। जिनमें खुरदरा, सुहाला, हल्का, भारी ये 4 स्पर्श नहीं होते वे चौ स्पर्शी, शेष 8 स्पर्शी। तीनों काल अरूपी द्रव्य है।

चौस्पर्शीरूपी 30 भेद	आठ स्पर्शीरूपी 15 भेद	अरूपी 61 भेद
18 पाप	6 द्रव्य लेश्या	18 पाप से निवृत्ति
8 कर्म	4 शरीर (औदा., वैक्रिय, आहारक, तैजस)	12 उपयोग (5 ज्ञान, 3 अज्ञान, 4 दर्शन)
1 कार्मण शरीर	1 घनोदधि	6 भाव लेश्या
2 योग (मन, वचन)	1 घनवाय	5 द्रव्य (धमास्ति–आदि, पुद्गल को छोड़कर)
1 सूक्ष्म पुद्गलास्तिकाय का स्कंध	1 तनवाय	4 बुद्धि (औत्पातिकी आदि)
30 इनमें 5 वर्ण 2 गंध 5 रस	1 काययोग	4 अवग्रहआदि मतिज्ञान के भेद
4 स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष)	1 बादर पुद्गलास्तिकाय का स्कंध	3 दृष्टि
	15	
नोट–वचन योग, भाषा 4 स्पर्शी	इसके अलावा आठ स्पर्शीरूपी में 8 पृथ्वी, द्वीप, समुद्र, 12 देव.,	5 शक्ति (उत्थान कर्म आदि)
शब्द आठ स्पर्शी होता है।	9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर ये 36 मिलाने से 51 होते हैं।	4 संज्ञा इनमें वर्णादि नहीं होते
		61
		अगुरुलघु एक भांगा होता है।

105. भवभ्रमण (भ.श.12 उ. 7) (1) यह लोक असंख्याता क्रोड़ा क्रोड़ी योजन का लंबा–चौड़ा है। (2) इस लोक में कोई भी ऐसा आकाश प्रदेश खाली नहीं रहा है, जहाँ इस जीव ने जन्म–मरण नहीं किया हो, जैसे 100 बकरियों के बाड़े में 1000 बकरियाँ छः माह तक रखने और उस बाड़े में मलमूत्र खुर आदि से स्पर्शित होने का दृष्टान्त दिया है, कहा है फिर भी कोई प्रदेश अस्पर्शित रह सकता है, किन्तु जीव ने कोई प्रदेश अस्पर्शित नहीं रखा है, संसार और जीव दोनों अनादि है। नरक आदि में सब जीव त्रस, स्थावरपने अनन्ती बार उत्पन्न हुए। तीसरे से बारहवें देवलोक तथा नवग्रैवेयक में देवीपने नहीं हुए, पाँच अणुत्तर में भी देव–देवीपणे उत्पन्न नहीं हुए। (3) यह जीव सब जीवों के भाई, बहिन, स्त्री, पुत्र, पुत्रवधू, माता–पितापने अनेक बार अथवा अनन्ती बार उत्पन्न हुआ है, इसी प्रकार सब जीव भी इस जीव के माता–पिता भाई–बहिन आदि बने हैं। (4) यह जीव सब जीवों के शत्रु, बैरी, घातक, वधक, प्रत्यनीक और मित्रपने अनेक बार अथवा अनंती बार उत्पन्न हुआ और सब जीव भी इस जीव के शत्रुपने आदि उत्पन्न हुए हैं। सब जीवों के राजा, युवराज, सार्थवाह, दास, चाकर, शिष्य, शत्रुपने अनेक बार अथवा अनंती बार यह जीव उत्पन्न हुआ है, सब जीव भी इस जीव के राजापने आदि अनेक बार या अनंती बार उत्पन्न हुए है। लोक शाश्वत है, अनादि है, जीव नित्य है, अपने कर्मानुसार जन्म–मरण करता है, इससे जीव संसार में परिभ्रमण करता है।

106. पाँच देव (भ.श. 12 उ. 9) देवों के 5 प्रकार है इन्हें 10 द्वारों से समझाया है

1 नाम द्वार	भव्य द्रव्यदेव	नरदेव	धर्मदेव	देवाधिदेव	भावदेव
2 अर्थद्वार	अनंतर भव में देव होने वाले मनुष्य-तिर्यंच	छ खंड के स्वामी चक्रवर्ती	साधु साध्वी	तीर्थंकर देव	वर्तमान में 4 जाति के देव
3 आगति	284 (179 की लड़ी 7 नरक 98 देव) सर्वार्थ पर्या. छोड़कर)	82 (81 देव, 1 नरक)	275 (171 लड़ी तेउ वायु कम 99 देव पर्याप्ता, 5 नरक पर्या.	38 (35 वैमानिक देव 3 नारकी)	111 (101 सन्नी मनुष्य 5 सन्नी ति. पं., 5 असन्नी ति. पं. पर्याप्ता
4 गति	198 (99 देव के पर्याप्ता अपर्याप्ता)	14 (7 नरक के प. अ.पर्या.) दीक्षा ले तो मोक्ष या देवलोक	70 (35 वैमानिक पर्या. अपर्या.	मोक्ष	46 (15 कर्म भू. 5 सनी ति.पं., 3 पृथ्वी पानी वन. बादर बादर के प. अपर्या.
5 स्थिति	ज.अ.मु. उत्कृष्ट 3 पल्योपम	ज. 700 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज.अं.मु. उत्कृष्ट देशोन क्रोड़ पूर्व	ज. 72 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागर
6 वैक्रिय	लब्धिपने हो तो ज. 1-2-3 उत्कृष्ट संख्या. असंख्याता रूप की शक्ति है। बनाते नहीं	ज. 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता	भव्य द्रव्य देववत् जानना	शक्ति है, किन्तु विराधना जान नहीं करते	नरदेव वत् जानना
7 संचिट्ठणा	जं.अं.मु. उत्कृष्ट 3 पल्योपम	ज. 700 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 1 समय उत्कृष्ट देशोन क्रोड़ पूर्व	ज. 72 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व	ज. 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागर
8 अवगाहना	ज.अं.असं. भाग उत्कृष्ट 1000 योजन	ज. 7 धनुष उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. प्रत्येक हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. 7 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष	ज. 1 हाथ उत्कृष्ट 7 हाथ (उत्पत्ति अपेक्षा से ज.अं. असंख्यातवाँ भाग)
9 अन्तर	ज. 10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त अधिक उत्कृष्ट अनंतकाल	ज. 1 सागर अधिक उत्कृष्ट देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्तन	ज. पल्योपम पृथक् उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन	अन्तर नहीं	अन्तर्मुहूर्त जघन्य उत्कृष्ट अनंतकाल
10 अल्प बहुत्व	4 असंख्यात गुणा	1 सबसे कम	3 संख्यात गुणा	2 संख्यात गुणा	5 असंख्यात गुणा

(1) नाम द्वार-देव 5 प्रकार के भव्य द्रव्यदेव, नरदेव, धर्मदेव, देवाधिदेव, भावदेव।

(2) अर्थ द्वार-(1) जो जीव अभी मनुष्य या तिर्यंच गति में है और देवगति में उत्पन्न होने वाले हैं। वे भव्य द्रव्यदेव। (2) जो राजा चारों दिशाओं के स्वामी है, चक्रवर्ती है, 84 लाख हाथी, 84 लाख घोड़ा, 84 लाख रथ, 96 करोड़ पैदल, 1 लाख 96 हजार राणियाँ, 9 निधान, 14 रत्नों के स्वामी, 6 खंड के भोक्ता, 32000 मुकुटबंध राजा जिन की आज्ञा में चले उन्हें नरदेव कहते हैं। (3) 27 गुणों के धारक धर्मदेव साधु साध्वी। (4) 34 अतिशय, 35 वाणी के गुणों सहित, उत्पन्न ज्ञानदर्शन के धारक सर्वज्ञ केवली, सर्वदर्शी तीर्थंकर भगवान देवाधिदेव हैं। (5) भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी वैमानिक ये 4 जाति के देव को भावदेव कहते हैं।

(3) आगति द्वार-भव्य द्रव्यदेव की आगति 284 (179 की लड़ी-101 सम्मुर्च्छिम मनुष्य, 48 तिर्यंच, 30 कर्म भूमि) 7 नारकी, 98 देवता (सर्वार्थ सिद्ध छोड़कर) ये सब 284 हुए। नरदेव की 82 (पहली नारकी, 10 भवनपति, 26 वाण व्यंतर, 10 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 नवग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान, ये 82)। धर्मदेव की आगत 275 (171 की लड़ी-179 में से 8 तेउ वायु कम) 99 देवता, 5 नारकी ये 275) देवाधिदेव की 38 (12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 नवग्रैवयक, 5 अणुत्तर विमान, 3 नरक ये 38) भावदेव की 111 (101 सन्नी मनुष्य, 5 सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, 5 असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, ये 111)

(4) गति द्वार-भव्य द्रव्यदेव की गति 198 (99 जाति के देवों के पर्याप्ता अपर्याप्ता) नरदेव की 14 (7 नरक के पर्याप्ता अपर्याप्ता, अगर दीक्षा ले तो मोक्ष या देवलोक) धर्मदेव की गति 70 की (12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर इनके पर्याप्ता अपर्याप्ता) देवाधिदेव की मोक्ष गति। भावदेव की 46 (15 कर्मभूमि, 5 सन्नी तिर्यंच, पृथ्वी, पानी वनस्पति इन 23 के पर्याप्ता अपर्याप्ता)।

(5) स्थिति द्वार-भव्य द्रव्यदेव की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 3 पल्योपम। नरदेव की जघन्य 700 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व की। धर्मदेव की जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशऊणी करोड़ पूर्व। देवाधिदेव की जघन्य 72 वर्ष उत्कृष्ट 84 लाख पूर्व। भावदेव की जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 33 सागरोपम की।

(6) वैक्रिय द्वार-चार देव (भ.न.ध.भा.) वैक्रिय करे तो जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता, असंख्याता करते हैं। असंख्याता करे वह एकेन्द्रिय आसरी समझना। देवाधिदेव की शक्ति तो है, अनन्ता वैक्रिय करने की, परन्तु वे वैक्रिय नहीं करते हैं।

(7) संचिट्ठणा काल-स्थिति की तरह संचिट्ठणा काल है, विशेष यह कि धर्मदेव का जघन्य संचिट्ठण काल जघन्य 1 समय (कोई अशुभ भाव प्राप्त करके 1 समय बाद शुभ भाव प्राप्त करे तुरन्त मृत्यु हो जाय तो) कहना।

(8) अवगाहना द्वार-भव्य द्रव्यदेव की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट 1000 योजन, नरदेव की जघन्य 7 धनुष उत्कृष्ट 500 धनुष की, धर्मदेव की जघन्य प्रत्येक हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष, देवाधिदेव की जघन्य 7 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष, भावदेव की जघन्य 1 हाथ उत्कृष्ट 7 हाथ की है।

(9) अन्तर द्वार-भव्य द्रव्यदेव का अंतर जघन्य 10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त अधिक (कोई भव्य द्रव्यदेव होकर व्यंतरादि में गया 10 हजार वर्ष बाद पृथ्वी, पानी आदि में अन्तर्मुहूर्त रहा फिर देव बना तो) उत्कृष्ट अनन्ता काल। नरदेव का जघन्य 1 सागर झाझेरा (कोई चक्रवर्ती पहली नरक में एक सागर की आयु भोगकर वापस नरदेव बने वहाँ चक्ररत्न की उत्पत्ति हो तब तक झाझेरा) उत्कृष्ट देशऊणा अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन। धर्मदेव का अन्तर जघन्य प्रत्येक पल उत्कृष्ट देशऊणा अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन। देवाधिदेव का अंतर नहीं होता क्योंकि मोक्ष में जाते है। भावदेव का जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनन्ताकाल का है।

(10) अल्प बहुत्व द्वार-सबसे थोड़े नरदेव ये उत्कृष्ट 370 हो सकते हैं, उनसे देवाधिदेव संख्यातगुणे जो उत्कृष्ट 1830 होते है। उससे धर्मदेव संख्यातगुणे, उससे भव्य द्रव्यदेव संख्यातगुणे, उनसे भावदेव असंख्यातगुणे होते हैं।

107. आत्मा (भ.श. 12 उ. 10) पाँच द्वार-(1) नाम (2) अर्थ (3) परस्पर संबंध (4) भांगा (5) अल्प बहुत्व।

(1) नाम द्वार-आत्मा के विविध गुणों-धर्मों की अपेक्षा 8 प्रकार कहे। द्रव्य (असंख्यात प्रदेशात्मक) आत्मा (2) कषाय आत्मा (3) योग आत्मा (4) उपयोग आत्मा (5) ज्ञान आत्मा (6) दर्शन (7) चारित्र (8) वीर्य।

(2) अर्थ द्वार-(1) त्रिकालवर्ती द्रव्य है यह सब जीवों के होती है। (2) क्रोध, मान आदि कषाय युक्त आत्मा को कषाय आत्मा-यह सकषायी जीवों में होती है, उपशान्त और क्षीण कषाय के नहीं होती। (3) मन वचन काया के व्यापार वाले को योग आत्मा-यह सयोगी जीवों के होती है। (4) साकार और अनाकार उपयोग वाले आत्मा को उपयोग आत्मा-यह सभी संसारी एवं सिद्ध जीवों के होती है। (5) सम्यग्ज्ञान युक्त आत्मा को ज्ञान आत्मा यह सम्यग् दृष्टियों में होती है। (6) सामान्य

ज्ञान युक्त आत्मा दर्शन आत्मा है यह सब जीवों के होती है। (7) विरति (चारित्र) युक्त आत्मा चारित्रात्मा है यह चारित्रवान जीवों के होती है। (8) करण वीर्य (लब्धि वीर्य के कारण जो उत्थान बल पुरुषाकार पराक्रम होता है वह करण वीर्य) युक्त आत्मा वीर्य आत्मा है यह सब संसारी जीवों के होती है।

(3) परस्पर संबंध द्वार-

आत्मा	नियमा	भजना	अल्प बहुत्व
1 द्रव्य आत्मा	2-उपयोग, दर्शन	5-कषाय, योग, ज्ञान, चारित्र, वीर्य	6 विशेषाधिक
2 कषाय आत्मा	5-द्रव्य, योग, उपयोग, दर्शन, वीर्य	2-ज्ञान, चारित्र	3 अनन्तगुणा
3 योग आत्मा	5-द्रव्य, उपयोग, दर्शन, वीर्य	2-ज्ञान चारित्र, कषाय	4 विशेषाधिक
4 उपयोग आत्मा	2-दर्शन, द्रव्य	5-ऊपरवत्	6 विशेषाधिक
5 ज्ञान आत्मा	3-उपयोग, दर्शन, द्रव्य	4-कषाय, योग, चारित्र, वीर्य	2 अनंतगुणा
6 दर्शन आत्मा	2-उपयोग, द्रव्य	5 ऊपरवत्	6 विशेषाधिक
7 चारित्र आत्मा	5 (कषाय, योग छोड़कर)	2 कषाय, योग	1 अल्प
8 वीर्य आत्मा	3-द्रव्य, उपयोग, दर्शन	4-कषाय, योग, ज्ञान, चारित्र	5 विशेषाधिक

विशेष-सिद्धों में 4 (द्रव्य, ज्ञान, दर्शन, उपयोग) आत्मा होती है। मिथ्यादृष्टि और अज्ञानी में ज्ञान और चारित्रात्मा नहीं है, शेष 6 आत्मा है, सम्यक् दृष्टि और श्रावक में 7 है चारित्रात्मा नहीं है। आठों आत्मा में आठों आत्मा हो सकती है चाहे भजना से हो या नियमा से, किसी में किसी का निषेध नहीं है। कोई भी परस्पर विरोधी या प्रतिपक्षी नहीं है।

(4) भांगा द्वार-आत्मा के अन्य रूप से तीन भेद कहे हैं-(1) आत्मा (2) नो आत्मा (3) अवक्तव्य, जो भी अपनी पर्यायों की अपेक्षा सत्स्वरूप विद्यमान हो वह आत्मा है। जो पर पर्यायों की अपेक्षा असत्स्वरूप-अविद्यमान हो वह नो आत्मा है। जो स्वरूप की अपेक्षा सत्स्वरूप और परपर्यायों की अपेक्षा असत्स्वरूप-अविद्यमान हो जो शब्दों में नहीं कहा जाये वह मिश्ररूप अवक्तव्य कहलाता है। तीन आत्माओं के भांगे 23-असंयोगी 3, दो संयोगी 12, तीन संयोगी 8, असंयोगी-3-आत्मा (आ) नो आत्मा (नो) अवक्तव्य (अ) 2 संयोगी 12-

आ 1 नो 1, आ 1 नो 3, आ 3, नो 1, आ 3 नो 3

आ 1 अ 1, आ 1 अ 3, आ 3 अ 1, आ 3 अ 3

नो 1 अ 1, नो 1 अ 3, नो 3 अ 1, नो 3 अ 3

अंक-11, 13, 31, 33

तीन संयोगी 8 भांगा-

आ 1 नो 1 अ 1, आ 1, नो 1 अ 3, आ 1 नो 3 अ 1, आ 1 नो 3 अ 3,
आ 3 नो 1 अ 1, आ 3 नो 1 अ 3, आ 3 नो 3 अ 1, आ 3 नो 3 अ 3
अंक-111, 113, 131, 133, 311, 313, 331, 333

विकल्प	असंयोगी	द्विसंयोगी	तीन संयोगी	कुल
परमाणु	3	-	-	3
द्विप्रदेशी	3	3	-	6
तीन प्रदेशी	3	9	1	13
चार प्रदेशी	3	12	4	19
पाँच प्रदेशी	3	12	7	22
छः प्रदेशी	3	12	8	23

तीन बोलों में 26 भंग हो सकते है, परन्तु यहाँ असंयोगी तीन भंग बहुवचन के नहीं होने से तीन कम है। अतः 23 कहे हैं, भंगों की विधि वही पूर्ववत् समझे, छः प्रदेशी से अनन्त प्रदेशी तक 23 भंग है।

(5) अल्प बहुत्व द्वार-सबसे थोड़े चारित्रात्मा, उससे ज्ञान आत्मा वाले अनंतगुणा, उससे कषाय आत्मा वाले अनंतागुणा, योग आत्मा वाले उससे विशेषाधिक, वीर्य आत्मा वाले विशेषाधिक 6-7-8 द्रव्य उपयोग दर्शन आत्मा वाले परस्पर तुल्य विशेषाधिक है।

108. उत्पन्न संख्या के 39 बोल (भ.श. 13 उ. 1-2) समुच्चय 1 सलेशी 1 (3) शुक्लपक्षी कृष्णपक्षी 2 (4) संज्ञी असंज्ञी 2 (5) भवी अभवी 2 (6) तीन ज्ञान तीन अज्ञान 6 (7) दर्शन 3 (8) संज्ञा 4 (9) वेद 3 (10) कषाय 4 (11) पाँच इन्द्रिय, नो इन्द्रिय 6 (12) योग 3 (13) उपयोग 2 = 39 बोल।

(1) रत्नप्रभा नरक के संख्याता योजन के नरकावासों में एक समय में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता और असंख्याता योजन के नरकावासों में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्याता एक समय में उपजते हैं, बाकी 6 नरकों में भी ऐसा ही कहना।

(2) पहली दूसरी नरक में कापोत लेश्या वाले जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता योजन वाले में संख्याता और असंख्याता योजन विस्तार वाले में असंख्याता उपजते हैं।

(3) नारकी में कृष्णपक्षी और शुक्लपक्षी दोनों उपजते हैं जिनका संसार अर्द्धपुद्गल परावर्तन से अधिक है, वे कृष्णपक्षी, जिनका कम हैं वे शुक्लपक्षी कहलाते हैं।

(4) पहली नारकी में संज्ञी, असंज्ञी दोनों उपजते हैं, शेष नरकों में संज्ञी ही उपजते हैं।

(5) नारकी में भवी और अभवी दोनों उपजते हैं।

(6) पहली से छठी नरक तक तीन ज्ञान तीन अज्ञान वाले और सातवीं नरक में सिर्फ 3 अज्ञान वाले उपजते हैं।

(7) नारकी में अचुक्ष दर्शनी और अवधि दर्शनी उपजते हैं, चक्षु दर्शनी नहीं उपजते, और अचुक्ष दर्शन उत्पत्ति के समय सामान्य ज्ञान रूप अचक्षु दर्शन होता है, इसलिए अचक्षु दर्शनी कहा है।

(8) चारों संज्ञा वाले नारकी उपजते हैं। (9) नारकी में स्त्री एवं पुरुष वेदी नहीं मात्र नपुंसक वेदी होते हैं। (10) नारकी में 4 कषाय वाले उपजते हैं। (11) नो इन्द्रिय वाले उपजते हैं, पाँच द्रव्य इन्द्रियाँ नहीं होती यद्यपि अपर्याप्त अवस्था में द्रव्यमन (मन पर्याप्ति का अभाव) नहीं होता, परन्तु चैतन्य रूप भाव मन होता है। (12) नारकी में काय योगी होते हैं (मन और वचन योगी नहीं होते)। (13) दोनों उपयोग वाले उपजते हैं।

(14) जीव	जन्म समय	विवरण (समुच्चय+38 बोलों की विचारणा)
पहली नरक	29	चक्षुदर्शन, दो वेद, 5 इन्द्रिय, 2 योग ये 10 कम हुए
दूसरी से छठी नरक	28	29 में से एक असन्नी कम हुआ
सातवीं नरक	25	28 में से तीन ज्ञान कम हुए
भवनपति व्यंतर	30	29 में दो वेद बढ़े, एक वेद कम हुआ
ज्योतिषी दो देवलोक	29	30 में से असन्नी एक कम हुआ
तीसरे से 9 ग्रैवेयक (देवलोक)	28	29 में से एक स्त्री वेद कम हुआ
पाँच अणुत्तर विमान	23	28 में से कृष्णपक्षी, अभवी, 3 अज्ञान ये 5 कम हुए
(15) जीव	**मृत्यु समय**	**विवरण (उबटने च्यवने) (समुच्चय+38 बोलों की)**
1 से 3 नरक	29	असन्नी, विभंग, चक्षु, 5 इन्द्रिय, 2 योग ये 10 कम
4 से 6 नरक	27	अवधिज्ञान, अवधि दर्शन ये 2 कम (29 में से)
7वीं नरक	25	27 में से मति श्रुत दो ज्ञान कम
भवनपति व्यंतर ज्योतिषी	28	विभंग, अवधिज्ञान, अवधि दर्शन, 5 इन्द्रिय, 2 योग, चक्षु ये 11 कम
पहला दूसरा देवलोक	30	28 में अवधिज्ञान, अवधि दर्शन बढ़े
3 देव-से नव ग्रैवेयक	29	ऊपर (पहली नरकवत्)
5 अणुत्तर विमान	25	29 में से कृष्णपक्षी, अभवी, 2 अज्ञान ये 4 कम हुए।

विशेष-अवधिज्ञान अवधि दर्शन वाले उत्कृष्ट संख्याता जन्मते मरते हैं असंख्याता नहीं।

(16) सदा सत्ता पावे यहाँ 49 बोल कहे हैं, 39 पूर्ववत् और 10 बोल बढ़े अनन्तरोपपन्नक, परम्परोपन्नक, अनन्तरावगाढ़, परम्परावगाढ़, अनन्तराहारक, परम्पराहारक, अनन्तरपर्याप्तक परम्परपर्याप्तक, चरम, अचरम।

जीव	नियमा	भजना	नहीं
पहली नरक	38	9-असंज्ञी, मान, माया, लोभ, नो इन्द्रिय, अनन्तरोपपन्नकादि 4	2 वेद-स्त्री, पुरुष
2 से 7 नरक	38	8-असंज्ञी छोड़कर ऊपर में से (तीन कषाय, 4 अनन्तरो:)	3 (2 वेद, असंज्ञी)
भवनपति व्यंतर	39	9-असंज्ञी, क्रोध, मान, माया, नो इन्द्रिय, अनंतरोपपन्नकादि 4	1 नपुंसक
ज्योतिषी दो देवलोक	39	8-ऊपर भवनपति में से 1 असंज्ञी कम	2-असंज्ञी, 1 वेद
तीसरे देव से गैवेयक	38	8-दूसरे देवलोकवत्	3-असंज्ञी 2 वेद
चार अणुत्तर देव	33	8-दूसरे देवलोकवत्	8-कृष्णपक्षी, असंज्ञी अभवी, तीन अज्ञान, 2 वेद
सर्वार्थ सिद्ध विमान	32	8-दूसरे देवलोकवत्	8-ऊपर के एवं अचरम 1 ये 9

नारकी से 8वें देवलोक तक उपजने उवटने चवने के उत्कृष्ट में संख्याता योजन के आवासों में संख्याता और असंख्याता योजन के आवासों में असंख्याता कहना। नवमें देवलोक से पाँच अणुत्तर विमानों में संख्याता और असंख्याता योजन के वासों में संख्याता कहना। सत्ता में आठवें देवलोक तक उपजने की तरह कहना। नवमें से अणुत्तर विमान तक संख्याता कहना। विशेष यह कि नो इन्द्रिय (मन के उपयोग वाले) अनन्तरोपपन्नक, अनन्तरावगाढ़, अनन्तराहारक, अनन्तरपर्याप्तक ये 5 बोल जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता ही उपजते चवते और सत्ता में रहते हैं।

पहली से छठी नारकी, भवनपति से 12वें देवलोक तक सम और मिथ्या दो दृष्टि वाले उपजते उवटते और चवते हैं। मिश्र वाले दोनों विकल्प नहीं है। सत्ता में मिश्रदृष्टि की भजना है। नवग्रैवेयक तक यही कथन है, सत्ता में भी वहाँ मिश्रदृष्टि नहीं है। सातवीं नरक में मिथ्या दृष्टि उपजते हैं, उवटते हैं बाकी दो दृष्टि वहाँ नहीं होती। सत्ता में दोनों दृष्टि है मिश्र दृष्टि की भजना। पाँच अणुत्तर में समदृष्टि ही उपजते, चवते हैं सत्ता में रहते हैं। वहाँ मिथ्या एवं मिश्र न उपजते न चवते और सत्ता में भी नहीं होते।

109. उपयोग (भ.श. 13 उ. 1) उपयोग 12 है-(1) मतिज्ञानोपयोग (2) श्रुतज्ञानोपयोग (3) अवधिज्ञानोपयोग (4) मन:पर्यवज्ञानोपयोग (5) केवलज्ञानोपयोग (6) मतिअज्ञानोपयोग (7) श्रुतअज्ञानोपयोग (8) विभंगज्ञानोपयोग (9) चक्षुदर्शनोपयोग (10) अचक्षुदर्शनोपयोग (11) अवधिदर्शनोपयोग (12) केवलदर्शनोपयोग। जीव कितने उपयोग लेकर आता है, जाता है यह इस प्रकार-

जीव	आगति	गति	अंक बने
1 से 3 नरक	8 (3+3+2)	7 (3+3+2)	87
4 से 6 नरक	8 (3+3+2)	5 (2+2+1)	85
7वीं नरक	5 (3+2)	3 (2+1)	53
भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी	8 (3+3+2)	5 (2+2+1)	85
वैमानिक 12 देव, नव ग्रैवेयक	8 (3+3+2)	7 (3+2+2)	87
अणुत्तर देव	5 (3 ज्ञान+2 दर्शन)	5 (3+2)	55
पाँच स्थावर	3 (2 अज्ञान 1 दर्शन)	3 (2+1)	33
तीन विकलेन्द्रिय	5 (2+2+1)	3 (2+1)	53
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	5 (2+2+1)	8 (3+3+2)	58
मनुष्य	7 (3+2+2)	8 (3+3+2)	78

1 से 3 नरक-8 उपयोग (3 ज्ञान 3 अज्ञान 2 दर्शन (अचक्षु और अवधि दर्शन) लेकर जाते हैं 7 लेकर निकलते हैं (3+2+2)। **4 से 6 नरक** में 8 उपयोग (पूर्ववत्) लेकर जाते हैं पाँच (2+2+1 अचक्षु) लेकर निकलते हैं। **7वीं नरक** में 5 (3 अज्ञान, 2 दर्शन-अचक्षु, अवधि) लेकर जाते है, 3 लेकर (2 अज्ञान 1 अचक्षु दर्शन) उवटते है। भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी में 8 उपयोग (पहली नरकवत्) लेकर जाते हैं, 5 (चौथी नरकवत्) लेकर निकलते हैं। पहले देवलोक से नवग्रैवयक तक 8 (पहली नरकवत्) लेकर जाते हैं, 7 (पहली नरकवत्) लेकर निकलते हैं। पाँच अणुत्तर में 5 (3 ज्ञान, दो दर्शन (अचक्षु अवधि दर्शन) लेकर जाते और 5 से चवते हैं। पाँच स्थावर 3 उपयोग (2 अज्ञान 1 अचक्षु) लेकर जाते हैं, 3 लेकर निकलते हैं। तीन विकलेन्द्रिय 5 उपयोग से जाते हैं (2 ज्ञान 2 अज्ञान 1 अचक्षु दर्शन) 3 लेकर (2 अज्ञान 1 अचक्षु) निकलते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय 5 लेकर (2 ज्ञान 2 अज्ञान 1 अचक्षु) जाते हैं, 8 (3+3+2) (पहली नरक में उपजने का) से निकलते हैं। मनुष्य में 7 लेकर जाते हैं (3+2+2) 8 लेकर (3+3+2) निकलते हैं।

110. नरक लोकआदि 7 द्वार (भ.श. 13 उ. 4) (1) नैरयिक, (2) स्पर्श द्वार, (3) प्रणिधि द्वार, (4) निरयान्त द्वार, (5) लोकमध्य द्वार, (6) दिशा विदिशा द्वार, (7) अस्तिकाय प्रवर्तन द्वार।

नैरयिक द्वार–नरक 7 कही है, रत्नप्रभा यावत् तम:तमाप्रभा। तम:तमाप्रभा 7वीं नरक में 5 नरकवासा है, छठी नरक से यहाँ लंबे–चौड़े, महाविस्तार वाले महाअवकाश, महाशून्य स्थान वाले (जीव थोड़े स्थान बहुत) है। इनमें जीव महाकर्म, महाक्रिया, महाआश्रव, महावेदना वाले और अल्प ऋद्धि वाले हैं। अल्प द्युति वाले हैं। छठी नरक में 5 कम एक लाख नरकावास है, ये 7वीं से अल्प लंबे–चौड़े, अल्प विस्तार वाले, अल्प अवकाश अल्प शून्य स्थान वाले हैं। यहाँ के जीव सातवीं नरक से अल्प कर्म, अल्पक्रिया, अल्पआश्रव, अल्पवेदना, महाऋद्धि और महाद्युति वाले हैं। इसी तरह पहली नरक तक का कहना।

स्पर्श द्वार–नारकी जीव वहाँ की पृथ्वी का अनिष्ट यावत् अमनोज्ञ स्पर्श का अनुभव करते हैं। पानी यावत् वनस्पतिकाय का भी अनिष्ट अमनोज्ञ स्पर्श अनुभव करते हैं।

प्रणिधि द्वार–पहली नरक (1,80,000 योजन) दूसरी नरक (1,32,000) की अपेक्षा जाड़ाई में मोटी है, और चारों दिशाओं में लंबाई–चौड़ाई में छोटी है इसी तरह पहली नरक लंबाई–चौड़ाई 1 राजू, दूसरी नरक अढ़ाई राजू, तीसरी 4 रजू, चौथी 5 राजू, पाँचवीं 6 राजू, छठी साढ़े छ राजू सातवीं 7 राजू है और चारों दिशाओं की लंबाई–चौड़ाई में छोटी है उत्तरोत्तर।

निरयान्तर द्वार–नरकावासों के आसपास जो पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक जीव भी महाकर्म, महाक्रिया, महाआश्रव और महावेदना वाले हैं।

लोकमध्य द्वार–समुच्चय लोक का मध्य भाग पहली नरक के नीचे आकाशान्तर में असंख्यातवें भाग के असंख्यात योजन जाने पर आता है। अधोलोक का मध्य भाग चौथी नरक के आकाशान्तर में कुछ अधिक आधा भाग जाने पर आता है। ऊर्ध्व लोक का मध्य भाग पाँचवें देवलोक की तीसरी रिष्ट प्रतर (पाथड़ा) में है। वहाँ तमस्कायभी है ऊंचे लोक के मध्य तक गई है। तिरछा लोक का मध्य भाग मेरू पर्वत के बीचोंबीच सम भूमि पर दो क्षुल्लक प्रतरों के 4–4 प्रदेश मिलकर आठ रूचक प्रदेश है, वहाँ से 10 दिशाएँ निकलती हैं, दिशाओं का केन्द्र स्थान है।

दिशा विदिशा द्वार–मेरू पर्वत के बीचोंबीच आठ रूचक प्रदेशों से 10 दिशाएँ निकलती है (1) पूर्व (2) अग्निकोण (3) दक्षिण (4) नैऋत्य कोण (5) पश्चिम (6) वायव्यकोण (7) उत्तर (8) ईशान कोण (9) विमला (ऊँची) (10) तमा (नीची)। इनके 10 मालिक देव हैं। इनमें से चार दिशाएँ 2–2 प्रदेशी है फिर आगे 2–2 प्रदेशी है फिर आगे 2–2 प्रदेश विस्तार होता गया है, लोक आसरी असंख्यात प्रदेशी और अलोक आसरी अनन्त प्रदेशी है। लोक आसरी सादि सांत अलोक

सादि अनन्त है। लोक आसरी मृदंगाकार अलोक आसरी गाड़ी के ऊध (आगे के हिस्से) आकार का है।

चार विदिशाएँ 1–1 प्रदेश वाली है, उत्तरोत्तर वृद्धि होती हुई लोक में सादि सांत असंख्याता प्रदेशी अलोक आसरी सादि अनन्त, अनंत प्रदेशी मुक्तावली आकार है। विमला और तमा 4–4 प्रदेशी दो प्रदेश चौड़ी है वृद्धि करती हुए लोक अलोक तक चली गई है। बाकी विवरण ऊपर मुजब।

अस्तिकाय प्रवर्तना द्वार–लोक पंचास्तिकाय मय है **धर्मास्तिकाय**–गति लक्षण, जीवों के गमना गमन, भाषा, नेत्र उघाड़ने, मन वचनकाय योग में सहायक है। दूसरे भी जो गमनशील पदार्थ हैं, वे सभी धर्मास्तिकाय से प्रवृत्ति करते हैं। **अधर्मास्तिकाय**–स्थिति लक्षण, जीवों को खड़ा रहने में, बैठने में, सोने में, मन स्थिर करने में सहायक है, जो पदार्थ स्थिर है वे सभी अधर्मास्तिकाय से प्रवृत्ति करते हैं। **आकाशास्तिकाय**–अवगाहना लक्षण है, जीव के लिए अजीवों के लिए आश्रय रूप है। **जीवास्तिकाय**–उपयोग लक्षण, ज्ञान, दर्शन, उपयोग रूप है। **पुद्गलास्तिकाय**–ग्रहण लक्षण, जीवों के इन्द्रिय, 5 शरीर, 3 योग, आदि पुद्गल ग्रहण होते हैं।

111. प्रदेश स्पर्शना ओघाया (भ:श: 13 उ. 4) (1) एक धर्मास्तिकाय का प्रदेश लोक मध्य है तो अन्य 6, धर्मास्तिकाय के प्रदेशों का स्पर्श करता है। लोकान्त में है 3–4–5 का। धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने अधर्मास्तिकाय के जघन्य 4 उत्कृष्ट 7 प्रदेशों को स्पर्शा है उत्कृष्ट पद में छ दिशा के 6 और केन्द्र स्थान पर रहे धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश, इस प्रकार सात प्रदेशों को स्पर्शा है। लोकान्त में जघन्य पद बनता है। आकाशास्तिकाय के 7 प्रदेशों को स्पर्शता है, सर्व दिशाओं में आकाश होता है अत: जघन्य पद नहीं होता। जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों का स्पर्श करता है, क्योंकि धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश है वहाँ जीवों के अनन्त प्रदेश है, इसी प्रकार पुद्गल के भी अनंत प्रदेश है। काल का स्पर्शन कहीं होता है, कहीं नहीं भी होता है, जहाँ होता है अनंत काल से स्पृष्ट है।

अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के जघन्य 4 उत्कृष्ट 7 प्रदेशों को स्पर्शा है, अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने अधर्मास्तिकाय के जघन्य 3 उत्कृष्ट 6 प्रदेशों को स्पर्शा है। आगे काल तक धर्मास्तिकाय की तरह कहना।

आकाशास्तिकाय–के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के प्रदेशों को कदाचित स्पर्शा है–कदाचित नहीं भी स्पर्शा (अलोक आसरी)। स्पर्शा है तो जघन्य 1–2–3–4 उत्कृष्ट

7 प्रदेशों को स्पर्शा है, इसी तरह अधर्मास्तिकाय का भी कहना। आकाशास्तिकाय के 6 प्रदेशों का स्पर्शा है (जघन्य नहीं होता)। जीवास्तिकाय के प्रदेशों को (लोक आसरी) स्पर्शता है, नहीं भी स्पर्शता (अलोक में) और स्पर्शता है अनंत प्रदेशों को, इसी तरह पुद्गलास्तिकाय और काल का भी कहना। अलोकाकाश में अस्तिकाय नहीं है, केवल आकाश है, वह किसी से भी स्पृष्ट नहीं है।

जीवास्तिकाय-के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के जघन्य 4 उत्कृष्ट 7-7 प्रदेशों को स्पर्शा है। जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल धर्मास्तिकाय की तरह कहना। जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को स्पर्शा है। काल कदाचित स्पर्शा कदाचित नहीं स्पर्शा अगर स्पर्शता है तो अनन्त समयों का स्पर्शता है।

पुद्गलास्तिकाय सारा अधिकार जीवास्तिकाय की तरह कहना। **काल**-1 समय ने धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के 7 प्रदेश और जीवा. पुद. के अनंत प्रदेशों को स्पर्शा है।

नोट-लोकान्त में जघन्य स्पर्श होंगे, बीच में उत्कृष्ट होंगे। अलोक में मात्र आकाश है। काल ढ़ाई द्वीप में ही है, जीव, पुद्गल, काल जहाँ भी है अनंत प्रदेश ही है चार अस्तिकाय लोक में है।

अस्तिकाय का अस्तिकाय प्रदेशों से परस्पर स्पर्श-

अस्तिकाय	धर्मास्तिकाय		अधर्मास्तिकाय		आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्गल.	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट			
धर्मास्तिकाय का प्रदेश	3	6	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
अधर्मास्तिकाय का प्रदेश	4	7	3	6	7	अनन्त	0/अनन्त
आकाशास्तिकाय का प्रदेश	0/1	7	0/1	7	6	0/अनन्त	0/अनन्त
जीवास्तिकाय का प्रदेश	4	7	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
काल का प्रदेश	7	7	7	7	7	अनन्त	अनन्त

पुद्गल स्कंधों का अस्तिकाय प्रदेशों से स्पर्श-

विकल्प	धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय		आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट			
परमाणु	4	7	7	अनन्त	0/अनन्त
दो प्रदेशी	6	12	12	अनन्त	0/अनन्त
तीन प्रदेशी	8	17	17	अनन्त	0/अनन्त
चार प्रदेशी	10	22	22	अनन्त	0/अनन्त
पाँच प्रदेशी	12	27	27	अनन्त	0/अनन्त

छ प्रदेशी	14	32	32	अनन्त	0/अनन्त
सात प्रदेशी	16	37	37	अनन्त	0/अनन्त
आठ प्रदेशी	18	42	42	अनन्त	0/अनन्त
नौ प्रदेशी	20	47	47	अनन्त	0/अनन्त
दस प्रदेशी	22	52	52	अनन्त	0/अनन्त
संख्यात प्रदेशी	सं.X2+2	सं.X5+2	सं.X5+2	अनन्त	0/अनन्त
असंख्याता प्रदेशी	असं.X2+2	असं.X5+2	असं.X5+2	अनन्त	0/अनन्त

नोट-अनन्त प्रदेशी भी असंख्यात प्रदेशी की तरह कहना। जितने प्रदेशी स्कंध है उसके दुगुणे से दो अधिक करने पर जघन्य स्पर्श और पाँच गुणे से दो अधिक करने से उत्कृष्ट स्पर्श निकल जाते है, यही नियम, संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश तक समझना।

(2) अस्तिकाय स्कंध का अस्तिकाय प्रदेशों से स्पर्श एवं अवगाढ़-

अस्तिकाय स्कंध	धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय	आकाशास्तिकाय काल (तीन)	जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय
धर्मास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
अधर्मास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
आकाशास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	अनन्त प्रदेश	अनन्त
जीवास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
पुद्गलास्तिकाय स्कंध	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त
काल	असंख्य प्रदेश	असंख्य प्रदेश	अनन्त

धर्मास्तिकाय-धर्मास्तिकाय के एक भी प्रदेश को नहीं स्पर्शता, अधर्मास्तिकाय के, आकाशास्तिकाय के असंख्यात प्रदेशों को स्पर्शता है, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को और काल को कदाचित् स्पर्शे तो अनन्त समयों को स्पर्शता है। इसी तरह **अधर्मास्तिकाय** का कहना। इसमें धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश स्पर्शता है, अधर्मास्तिकाय के नहीं (स्वयं-स्वयं के नहीं स्पर्शता)।

आकाशास्तिकाय-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेशों का स्पर्श करता है, आकाशास्तिकाय को नहीं। जीवास्तिकायादि तीनों का पूर्ववत् कहना।

जीवास्तिकाय-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के असंख्यात प्रदेशों की स्पर्शना, जीवास्तिकाय का वर्जन, पुद्गलास्तिकाय, काल का पूर्ववत् कहना।

पुद्गलास्तिकाय-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय का जीवास्तिकाय की तरह कहना। पुद्गलास्तिकाय का वर्जन, जीवास्तिकाय काल का अनंत कहना।

काल-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के असंख्यात, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के अनंत प्रदेशों को स्पर्शना। एक भी समय को नहीं स्पर्शता।

(3) अवगाहना द्वार-धर्मास्तिकाय स्वयं को छोड़कर अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के 1-1 प्रदेश को अवगाहे है, जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त और काल को अवगाहे तो अनन्त समयों को अवगाहे। **अधर्मास्तिकाय**-अधर्मास्तिकाय को छोड़कर धर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के 1-1 प्रदेश अवगाहे जीवास्तिकाय पुद्‌गलास्तिकाय और काल का धर्मास्तिकाय की तरह कहना।

आकाशास्तिकाय-ने कदाचित् अवगाहा है (लोक में) कदाचित् नहीं भी अवगाहा है, अगर अवगाहा है तो धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय के एक-एक प्रदेश को, (आकाशास्तिकाय छोड़ना है) जीवास्तिकाय पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को, काल को अगर अवगाहे तो अनन्त समयों को अवगाहता है।

जीवास्तिकाय-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के 1-1 प्रदेश जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेश और काल को अवगाहे तो अनन्त समयों को अवगाहता है।

पुद्‌गलास्तिकाय का-धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय का जीवास्तिकाय की तरह। पुद्‌गलास्तिकाय का अनंत कहना। जीवास्तिकाय के अनंत प्रदेश और काल के अगर अवगाहे तो अनन्त समय।

पुद्‌गलास्तिकाय के दो प्रदेश-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के 1-2 प्रदेश अवगाहे है जीवास्तिकाय के अनंत, पुद्‌गलास्तिकाय के अनंत, काल के अगर अवगाहे तो अनन्त समय अवगाहे। इसी प्रकार तीन से दस प्रदेश तक कहना संख्याता, असंख्याता, अनन्त प्रदेश का कहना।

काल का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के 1-1, जीवास्तिकाय पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त-अनन्त काल के अनन्त प्रदेशों समयों को अवगाहे हैं।

अस्तिकाय प्रदेश परस्पर अवगाढ़-

अस्तिकाय प्रदेश	धर्मास्तिकाय	अधर्मास्तिकाय	आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय पुद्‌गलास्तिकाय	काल
धर्मास्तिकाय प्रदेश	-	1	1	अनन्त	0/अनन्त
अधर्मास्तिकाय प्रदेश	1	-	1	अनन्त	0/अनन्त
आकाशास्तिकाय प्रदेश	0/1	0/1	-	0/अनन्त	0/अनन्त
जीवास्तिकाय प्रदेश	1	1	1	अनन्त	0/अनन्त
पुद्‌गलास्तिकाय प्रदेश	1	1	1	अनन्त	0/अनन्त
काल	1	1	1	अनन्त	अनन्त

पुद्‌गल स्कंध अस्तिकायों से अवगाढ़-

विकल्प	धर्मास्तिकायादि तीनों		जीवास्तिकाय/पुद्‌गलास्तिकाय	काल
	जघन्य	उत्कृष्ट		
परमाणु	1	1	अनन्त	0/अनन्त
दो प्रदेशी	1	2	अनन्त	0/अनन्त
तीन प्रदेशी	1	3	अनन्त	0/अनन्त
चार प्रदेशी	1	4	अनन्त	0/अनन्त
पाँच प्रदेशी	1	5	अनन्त	0/अनन्त
छ: प्रदेशी	1	6	अनन्त	0/अनन्त
सात प्रदेशी	1	7	अनन्त	0/अनन्त
आठ प्रदेशी	1	8	अनन्त	0/अनन्त
नौ प्रदेशी	1	9	अनन्त	0/अनन्त
दस प्रदेशी	1	10	अनन्त	0/अनन्त
असंख्य प्रदेशी	1	असंख्य	अनन्त	0/अनन्त
अनन्त प्रदेशी	1	असंख्य	अनन्त	0/अनन्त

(4) स्कंध से प्रदेशी आसरी-धर्मास्तिकाय-धर्मास्तिकाय छोड़कर अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश अवगाहे है, जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय और काल के अनन्त प्रदेशों को अवगाहे है। **अधर्मास्तिकाय**-अधर्मास्तिकाय छोड़ना धर्मास्तिकाय और ऊपर वर्णित वर्णन कहना। **आकाशास्तिकाय**-आकाशास्तिकाय छोड़कर धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय के असंख्याता और जीवास्तिकायादि तीनों का अनन्ता कहना। **जीवास्तिकाय**-जीवास्तिकाय छोड़कर धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के असंख्यात और पुद्‌गलास्तिकाय, काल का अनन्ता प्रदेश कहना। **पुद्‌गलास्तिकाय** में पुद्‌गलास्तिकाय छोड़ना धर्मास्तिकायादि तीनों का असंख्याता, जीवास्तिकाय काल का अनन्ता प्रदेश अवगाहे कहना।

काल-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के असंख्याता और काल को छोड़कर जीवास्तिकाय पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेश अवगाहना कहना।

112. जीव अवगाढ़ादि द्वार (भ.श. 13 उ. 4) (1) जहाँ पृथ्वीकायिक का एक जीव अवगाढ़ रहा हुआ है, वहाँ (एक आकाश प्रदेश पर) पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेउकायिक, वायुकायिक असंख्याता और वनस्पतिकायिक अनन्ता जीव अवगाढ़े है। पृथ्वीकायिक की तरह अन्य स्थावर का भी कहना ये 5 स्थावर के 25 अलावा हुए।

(2) अस्तिकाय निषीदन द्वार–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय पर कोई जीव खड़े होने, बैठने, सोने में समर्थ नहीं है (ये अरूपी है) उसमें अनंत जीव रहे है। प्रकाश, अंधकार रूपी है, उस पर भी बैठे, सो नहीं सकता। बैठना सोना रूपी स्थूल पुद्गल पर होता है।

(3) लोक का समभाग रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के नीचे का जो क्षुल्लक लघु प्रतर है, वहाँ समभाग है 1800 योजन का तिर्च्छालोक 900 योजन ऊपर 900 योजन नीचे के मध्य 8 रूचक प्रदेशों के पास सबसे छोटे भाग है। संकड़ा भाग है।

(4) विषम द्वार–पाँचवें ब्रह्म देवलोक के रिष्ट प्रतर के पास लोक का वक्र भाग है।

(5) लोक संस्थान द्वार–लोक का संठाण उल्टे रखे सरावले के ऊपर एक सीधा और उसके ऊपर उल्टा रखा सरावला के आकार है। अधोलोक तिपाई आकार तिरछा लोक झालर और ऊर्ध्वलोक मृदंग आकार का है। अलोक पोले गोले का आकार है।

(6) अल्प बहुत्व द्वार–सबसे थोड़ा तिरछा लोक, उससे ऊर्ध्वलोक असंख्यातगुणा उससे अधोलोक विशेषाधिक है।

113. योग (भ.श. 13 उ. 7) (1 से 8) भाषा–भाषा आत्मा रूप नहीं, अन्य रूप है। भाषा रूपी है, अरूपी नहीं है। भाषा अचित्त है सचित्त नहीं है। भाषा जीव नहीं, अजीव है। भाषा जीवों के होती है, अजीवों के नहीं। बोलने से पहले और बाद में भाषा नहीं होती, सिर्फ बोलते समय भाषा होती है। इसी तरह बोलने से पहले और बाद में भाषा के पुद्गलों का भेदन नहीं होता, सिर्फ बोलते समय ही भाषा के पुद्गलों का भेदन होता है। भाषा के 4 प्रकार–सत्य भाषा, असत्य भाषा, मिश्र भाषा, (सत्य भी नहीं असत्य भी नहीं), व्यवहार भाषा। इन प्रश्नों का कारण यह कि भाषा जीव द्वारा बोली जाती है, और भाषा जीव के बंध और मोक्ष का कारण होती है। इसलिए पूछा गया है।

9 से 16 मन–मन आत्मा नहीं है, अन्य है, अजीवों के मन नहीं होता। मनरूपी है अरूपी नहीं मन अचित्त है, सचित्त नहीं। मन जीव नहीं, अजीव है। मन जीवों के होता है, अजीवों के नहीं। मनन करने से पहले और बाद में मन नहीं होता, किन्तु मनन करते समय मन होता है। मनन करने से पहले और पीछे मन का भेद नहीं होता, मनन करते समय मन का भेदन होता है। मन के 4 प्रकार–सत्यमन, असत्यमन, सत्यामृषा (मिश्र) मन, व्यवहार मन।

17 से 24 काया–शरीर काया कथंचित् आत्म स्वरूप है, क्योंकि काया का स्पर्श करने पर आत्मा को भी अनुभव होता है। काया कथंचित् आत्मा से भिन्न है क्योंकि काया का विनाश होने पर आत्मा का विनाश नहीं होता। इसलिए सर्वथा अभिन्न नहीं मान सकते क्योंकि शरीर के साथ आत्मा का भी विनाश हो जायेगा, और ऐसा होता नहीं है। इसलिए कथंचित् भिन्न कथंचित् अभिन्न कहा है। काया आत्मा भी है और आत्मा से भिन्न भी। काया रूपी भी है, अरूपी भी है। काया सचित्त भी है अचित्त भी है, जीव भी है, अजीव भी है। काया जीवों के होती है, अजीवों के भी होती है। जीव के साथ संबंध होने से पहले (पुद्गल ग्रहण करने से पूर्व) भी काया है, करते समय और ग्रहण करने के बाद भी काया है। जीव के साथ संबंध होने से पहले, ग्रहण करते समय और संबंध होने के बाद भी काया भिदाती (भेदन) है। काया (योग) 7 प्रकार की है–औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्मण काय योग।

114. पाँच मरण (भ.श. 13 उ. 7) मरण के 5 प्रकार–आविचिमरण, अवधिमरण, आत्यन्तिक मरण, बालमरण, पंडितमरण।

(1) आविचिमरण–आयुकर्म के पुद्गल प्रति समय क्षय होते हैं, यह आविचीमरण है। आवीचिमरण के 5 भेद हैं–द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव। द्रव्य आवीचिमरण के 4 भेद– नैरयिक द्रव्य आवीचिमरण, तिर्यंच योनिक द्रव्य आवीचिमरण, मनुष्य योनिक द्रव्य आवीचिमरण, देव योनिक द्रव्य आवीचिमरण। इस तरह क्षेत्र, काल, भव और भाव का जानना। नरक में रहते नारकों ने जिन द्रव्यों को नरकायु रूप ग्रहण किया और उदय आने पर जो प्रति समय मरते है यानि जीव उन्हें छोड़ देता है, वह नैरयिक द्रव्य आवीचिमरण है, ऐसा सर्वत्र समझना। 4x5=20 भेद हुए।

(2) अवधिमरण–अवधिमरण के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव से 5 भेद हैं और 4 गति की अपेक्षा 4-4 भेद हैं। जिन आयुष्य कर्म के पुद्गल अभी भोग लिये हैं और फिर कभी ग्रहण कर बंध, उदय होगा तो उनकी अपेक्षा कुछ सीमित समय के लिए मरण हुआ माना जायेगा, इसे अवधि (कुछ काल के लिए) मरण कहते हैं। 4x5=20 भेद।

(3) आत्यंतिकमरण–जिन नरकादि के पुद्गलों को अभी भोगा जा रहा है, पुन: भविष्य में कभी भी नहीं भोगा जायेगा अर्थात् जीव मोक्ष चला जायेगा, उन आयुष्य पुद्गलों की अपेक्षा आत्यंतिकमरण है। इसके भी उपरोक्त भेद है–4x5=20 भेद।

(4) बालमरण–व्रतादि से रहित (अव्रती) असंयति प्राणियों की मृत्यु बालमरण है। इसके 12 भेद है (1) बलन्मरण (वलयमरण) तीव्र भूख प्यास से छटपटा कर या गला दबाकर, मोड़कर, संयम से भ्रष्ट प्राणी का मरण। (2) वशार्त्तमरण (इन्द्रिय वशीभूत होकर, विरह व्यथा से पीड़ित, मस्तक फोड़कर, छाती कूटकर आदि)। (3) अन्तोशल्यमरण (तीर–भाला आदि से बींधकर यह द्रव्य अन्तोशल्य और अतिचार रूप आन्तरिक शल्य की शुद्धि किये बिना मरना भाव अन्तोशल्य)। (4) तद्भवमरण (पुनः वर्तमान शरीर को प्राप्त करने के लिए मरना काशी करवत लेना आदि)। (यह मनुष्य तिर्यंच में ही संभव हो सकता है देव नरक पुनः उसी में नहीं होते)। (5) गिरिपतन मरण (6) तरूपतन मरण (7) जलप्रवेश मरण (पानी में कूदकर, डूबकर) (8) ज्वलनप्रवेश (अग्नि में जलकर) (9) विष भक्षण (10) शस्त्रावपाटन (छुरी, तलवार आदि शस्त्र से) (11) वेहाणस (फाँसी लगाकर) (12) गिद्धपिट्ठ मरण (पशु–पक्षियों से शरीर भक्षण करवाकर हाथी–ऊँट आदि के मृत कलेवर में प्रवेश करके)। कषायों के वशीभूत होकर इन उक्त तरीकों से मरना बालमरण है।

(5) पंडितमरण–पंडितमरण के दो भेद हैं–पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान इन दोनों के दो–दो भेद हैं, निहारिम और अनिहारिम। निहारिम यानि गाँव नगर बस्ती में जो मरण हो वह निहारिम एवं पर्वत की गुफा जंगल एकान्त स्थान में मरण हो उसे अनिहारिम कहते हैं। पादपोपगमन के ये दोनों भेद अप्रतिक्रम रूप होते हैं शरीर संस्कार रहित (मृत्यु के बाद जलाना आदि नहीं, चलना अंगोपांग हिलाना आदि नहीं) भक्त प्रत्याख्यान दोनों प्रकार का सपरिकर्म और अपरिकर्म दो प्रकार से हो सकता है। (शरीर संस्कार सहित या प्रतिक्रमण सहित) दूसरों से सेवा करवाई जा सकती है। 2 भेद हुए इस तरह कुल भेद 20+20+20+12+2=74 भेद हुए।

115. विग्रह गति (भ.श. 14 उ. 1) (1) आयुबंध के परिणामों की अपेक्षा से प्रश्न है कि कोई भवितात्मा अणगार पहले देवलोक की स्थितिबंध से आगे निकल गये, परन्तु तीसरे देवलोक की स्थितिबंध पर पहुँचने से पूर्व काल करे तो कहाँ जायेंगे (उत्पन्न होंगे)? समाधान फरमाया कि दूसरे देवलोक में (जो स्थान ज्यादा निकट हो वहाँ जायेंगे) यदि वे वहाँ जाकर पूर्व लेश्या को छोड़ते हैं भाव लेश्या से गिरते हैं, वे द्रव्य लेश्या से नहीं गिरते क्योंकि इनमें द्रव्य लेश्या अवस्थित है जीवन पर्यंत एक ही द्रव्य लेश्या रहती है। असुरकुमारों से लेकर वैमानिक तक कहना।

(2) नारकी में जीव की गति (एक भव से दूसरे भव में जाने को गति कहते हैं) एक समय, दो समय, तीन समय से विग्रहगति से उत्पन्न होते हैं, इसी तरह वैमानिक तक कहना। एकेन्द्रिय में चार समय की विग्रहगति कहनी।
(3) नैरयिक अनन्तरोपपन्नक (प्रथम समयवर्ती) भी है, परम्परोपन्नक (दो–तीन आदि समय) भी है और अनन्तरोपरम्परो पन्नक भी है इसी तरह वैमानिक तक कहना।
(4) अनन्तरोपपन्नक नैरयिक नारकी यावत् देवता आयुष्य बंध नहीं करते। अन्तर्मुहूर्त बाद ही आयु का बंध होता है। सामान्य रूप से तृतीयादि भाग रहने पर आयुबंध होता है। नारक छः माह शेष रहने पर तिर्यंच या मनुष्य की आयुष्य बांधते हैं। प्रथम समयवर्ती या अनन्तरपरम्परानुपन्नक आयुबंध नहीं करते हैं।
(5) परम्परोपन्नक नैरयिक नारकी और देवता का आयुष्य नहीं बांधते। वे तिर्यंच और मनुष्य की आयुष्य का बंध करते हैं।
नारकी की तरह देवता वैमानिक तक कहना। विशेष यह कि तिर्यंच और मनुष्य चारों गति की आयु बांधते हैं। (परम्परोपन्नक)।
उत्पन्न होने का कहा उसी तरह निर्गत (निकलने) का कहना। 24 दंडक में कहना दुःखोत्पन्न की अपेक्षा प्रश्न है जिसका समाधान है कि नैरयिक जीवों में अनन्तर खेदोपपन्नक, परम्परखेदोपन्नक, और अनन्तर परम्पर खेदोपपन्नक तीनों भंग होते हैं। इसी प्रकार चारों दंडक खेदोपपन्न दंडक, खेदोपपन्नक आयुष्य का दंडक, खेद निर्गत दंडक और खेद निर्गत आसरी आयुष्य का दंडक कहना। आयुष्य का बंध परम्परोपन्नक में करते हैं। अनन्तरोपपन्नक और अनन्तरपरम्परोपन्नक नहीं।

116. उन्माद (भ.श. 14 उ. 2) (1) स्पष्ट चेतना यानि विवेक ज्ञान भ्रष्ट हो जाय उसे उन्माद कहते हैं। दो प्रकार का है यक्षावेश उन्माद (यक्ष प्रवेश से), मोहनीय उन्माद। जो सुखपूर्वक वेदा जा सके, सुखपूर्वक छोड़ा जा सके वह यक्ष आवेश उन्माद है। जो दुःखपूर्वक वेदा जाये और दुःखपूर्वक ही छोड़ा जाये वह मोहनीय कर्म से उदय हुआ उन्माद।
(2) नारकी के नेरियों में 24 दंडक में दोनों उन्माद पाया जाता है। देवता नेरियों पर अशुभ पुद्गल डालते हैं, जिससे उन्हें उन्माद होता है, इसी तरह औदारिक के 10 दंडक कहना। 13 दंडक देवता में महर्द्धिक देव अल्पर्द्धिक देवों पर अशुभ पुद्गल डालते हैं उन्हें उन्माद होता है। मोहनीय कर्म के उदय से 24 दंडक में मोहनीय उन्माद की प्राप्ति होती है।

117. वर्षा और तमस्काय (भ.श. 14 उ. 2) (1) वर्षाकाल में वर्षा होती है। और तीर्थंकर भगवान के जन्म के महोत्सव आदि में जब शक्रेन्द्र को वर्षा करनी हो तो वह आभ्यन्तर परिषद् के देवों को बुलाते हैं, आभ्यन्तर वाले मध्यम परिषद् के देवों को बुलाते है वे बाह्य परिषद् के देवों को बुलाते है बाहरी परिषद् वाले बाहरी बाहरी के देवों को बुलाते है, बाहर बाहर के देव आभियोगिक देवों को बुलाते है, आभियोगिक देव वृष्टिकायिक देवों को बुलाते हैं, फिर वे वर्षा करने वाले देव वर्षा करते हैं।

(2) असुरकुमार देव भी वर्षा करते हैं वे तीर्थंकर भगवान के जन्म, दीक्षा, ज्ञान और निर्वाण महोत्सव के निमित्त वर्षा करते हैं। इसी तरह 13 दंडक के देवता का कहना।

(3) तमस्काय का भी वर्षा जैसा वर्णन है यहाँ शक्रेन्द्र की जगह ईशानेन्द्र कहना आभियोगिक देव तमस्कायिक देवों को बुलाने पर तमस्काय करते हैं।

(4) असुरकुमार भी तमस्काय करते हैं वे रतिक्रीड़ा, शत्रु को विस्मय (मोह) उपजाने, द्रव्य छिपाने, अपने शरीर को छिपाने के लिए करते हैं। 13 दंडक में देवता में कहना।

118. देवता के शास्त्र (भ.श. 14 उ. 3) (1) महाकाय, महा शरीर वाला कोई देवता भवितात्मा अणगार के बीच में से निकल जाता है, वह देवता मायी मिथ्यादृष्टि होता है, वंदना, नमस्कार, सत्कार पर्युपासना नहीं करता है इस कारण से निकल जाता है, जो अमायी सम्यक्दृष्टि होता है वह अणगार को देखकर वंदन, नमस्कार, सत्कार, पर्युपासना करता है, वह बीचोंबीच होकर नहीं जाता। 13 दंडक देवता में कहना।

(2) नारकी के नेरियों में सत्कार, सन्मान, कृतिकर्म, अभ्युत्थान, अंजलिकरण, आसनाभिग्रह, आसनानुप्रदान, सन्मुख जाना, सेवा करना, पहुँचाने जाना ये 10 विनय नहीं है, पाँच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय में भी नहीं है। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 8 प्रकार (आसनाभिग्रह और आसानानुप्रदान छोड़कर) के विनय हैं। मनुष्य और 13 दंडक देवता में दस ही प्रकार विनय है।

(3) अल्पर्द्धिक देव महर्द्धिक देव के बीचोंबीच होकर नहीं जाता।

(4-5) समऋद्धि देव की शक्ति नहीं होती, परन्तु सामने वाला देव प्रमाद में हो तो, शस्त्र का प्रहार करके चला जाता है।

(6) पहले शस्त्र का प्रहार करता है, पीछे जाता है। जाने के बाद प्रहार नहीं करता।

(7-8) महर्द्धिक देव अल्पर्द्धिक के बीच में से प्रहार करके या नहीं प्रहार करके भी जा सकता है।

(9) महर्द्धिक देव की इच्छा हो प्रहार करने को तो पहले भी कर सकता है और जाने के बाद भी कर सकता है। 13 दंडक देवता के कहने। समुच्चय देव और 13 दंडक देवता ये 14 अलावा में तीन-तीन अलावा कहने से 42 अलावा हुए। देव का देव के साथ, देव का देवी, देवी का देव और देवी का देवी के साथ, यों 42x4=168 और 14 कुल 182 अलावा हुए।

(10) रत्नप्रभा के नेरिये अभिष्ट यावत् अमनोज्ञ पुद्गल परिणाम का और परिग्रह संज्ञा का अनुभव करते हैं, यह 7 वीं नरक तक कहना। ये दस प्रकार की अशुभ वेदना वेदते हैं, शीत, उष्ण, भूख, पिपासा, खुजली, परवशता, भय, शोक, जरा, रोग। सातवीं नरक तक का कहना।

119. अग्नि (भ.श. 14 उ. 5) (1) विग्रह गति वाले नेरिये (तैजस कार्मण शरीर होने के कारण) अग्नि के बीच में निकल जाते हैं, जलते नहीं हैं (वाटेवहता)। अविग्रह गति समापन्न (उत्पत्ति स्थान पहुँचे हुए) नहीं जाते (अग्नि में से)।

नेरियों की तरह असुरकुमारों का कहना, विशेषता यह कि अविग्रह गति समापन्न भी कोई जाता है (वैक्रिय शरीर सूक्ष्म होता है, जलता नहीं) कोई नहीं जाता। इसी तरह 13 दंडक कहना। पाँच स्थावर का कथन नारकी की तरह कहना है। तीन विकलेन्द्रिय असुरकुमार की तरह कहना, किन्तु विशेषता यह कि अविग्रह गति समापन्न अगर अग्नि में से जाते हैं तो जल जाते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का कथन विग्रह गति समापन्न नारकों की तरह कहना और अविग्रह गति समापन्न के दो भेद-ऋद्धिप्राप्त (वैक्रिय लब्धि) और अनृद्धिप्राप्त (वैक्रिय लब्धि रहित)। वैक्रिय लब्धि वाला कोई जाता है, कोई नहीं जाता, जो जाता वह जलता नहीं। अनृद्धि वाला कोई जाता, कोई नहीं जाता, जो जाता वह जल जाता है।

(2) नारकी के नेरिये दस बोल का अनुभव करते हैं (1) अनिष्ट शब्द, (2) अनिष्ट रूप, (3) अनिष्ट गंध, (4) अनिष्ट रस, (5) अनिष्ट स्पर्श, (6) अनिष्ट गति, (7) अनिष्ट स्थिति, (8) अनिष्ट लावण्य, (9) अनिष्ट यश: कीर्ति, (10) अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम।

(3) देवता दस स्थानक का इष्ट अनुभव करते हैं। उपरोक्त 10 का।

(4) पाँच स्थावर ईष्टानिष्ट 6 स्थानक का (शब्द, रूप, रस, गंध छोड़कर) अनुभव करते हैं।

(5) बेइन्द्रिय 7 स्थानक (उपरोक्त 6 में इष्टानिष्ट रस बढ़ा) का तेइन्द्रिय में 8 स्थानक (बेइन्द्रिय के 7 में ईष्टानिष्ट गंध बढ़ा) चौइन्द्रिय में 9 स्थानक (तेइन्द्रिय के 8 में ईष्टानिष्ट रूप बढ़ा) का ईष्टानिष्ट अनुभव करते हैं।

(6) तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य उपरोक्त 10 स्थानक का ईष्टानिष्ट अनुभव करते हैं।

(7-8) महर्द्धिक महासुख वाला देव बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना तिच्र्छा पर्वत या तिच्र्छी भींत को उल्लंघने-प्रलंघने में समर्थ नहीं है। बाहर के पुद्गलों को ग्रहण करके कर सकता है।

स्थानक 10-देवता 10 ईष्ट, नारकी 10 अनिष्ट, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य 10 ईष्टानिष्ट, चौइन्द्रिय 9 ईष्टानिष्ट, तेइन्द्रिय 8 ईष्टानिष्ट, बेइन्द्रिय 7 ईष्टानिष्ट, एकेन्द्रिय 6 ईष्टानिष्ट अनुभव करते हैं।

120. आहार (भ.श. 14 उ. 6) (1) नारकी के नेरिये पुद्गल का आहार करते हैं, उन्हें पुद्गल रूप परिणमाते हैं, शीत, उष्ण स्पर्श वाली उनकी योनि है, आयुष्य कर्म के पुद्गल उनकी स्थिति का कारण है, कर्मबंध को प्राप्त वे नरकपणे के निमित्त भूत कर्म वाले हैं, कर्मबंध से स्थिति है और कर्म से अन्य पर्याय को प्राप्त होते हैं। इसी तरह 23 दंडक में कहना।

(2) नेरिये वीची द्रव्य और अवीचि द्रव्य दोनों का आहार करते हैं, जितने पुद्गलों से संपूर्ण आहार होता है वह अवीचि द्रव्य और उससे एक प्रदेश भी कम आहार हो वह वीचि है। इसी तरह 23 दंडक में कहना है, सभी जीव वीचिद्रव्य अविचि द्रव्य दोनों आहार करते हैं।

121. तुल्य (भ.श. 14 उ. 7) (1) छ प्रकार के तुल्य कहे हैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव, संठाण।

(2) द्रव्य तुल्य-एक परमाणु पुद्गल दूसरे परमाणु पुद्गल से द्रव्य तुल्य है। परन्तु दूसरे पदार्थों के साथ तुल्य नहीं है। जैसे दो प्रदेशी यावत् 10 प्रदेशी स्कंध के तुल्य नहीं। दो प्रदेशी-दो प्रदेशी के साथ तुल्य है इसी तरह यावत् 10 प्रदेशी 10 प्रदेशी के साथ तुल्य है। इसी तरह तुल्य संख्यात, तुल्य असंख्यात, तुल्य अनन्त प्रदेशी का समसंख्या से तुल्य कहना।

(3) क्षेत्र तुल्य-एक आकाश प्रदेश में रहा पुद्गल द्रव्य एक आकाश प्रदेश में रहे पुद्गल द्रव्य के साथ क्षेत्र तुल्य है, दो आकाश यावत् दस आकाश प्रदेश और इसी तरह संख्यात, असंख्यात आकाश प्रदेश का अतुल्य कहना। दो आकाश प्रदेश ओधाया-दो आकाश प्रदेश के ओधाया तुल्य है, इसी तरह यावत् 10 यावत् संख्याता तुल्य, असंख्याता तुल्य का कहना।

(4) काल तुल्य-एक समय की स्थिति वाला पुद्गल द्रव्य, एक समय की स्थिति वाले पुद्गल द्रव्य के तुल्य है, दो या अधिक समय के पुद्गल द्रव्यों से काल तुल्य नहीं है। इसी तरह दो समय की स्थिति वाला दो समय की स्थिति वाले के तुल्य है सारा अधिकार द्रव्य तुल्य जैसा कहना। असंख्यात समय तक 12 बोल कहना।

(5) भव तुल्य-भव तुल्य से भव तुल्य नारकी जीव नारकी से इसी तरह देव तिर्यंच मनुष्य का कहना, दूसरी गति के जीवों के साथ भव तुल्य नहीं होता। चारों गति का कहना।

(6) भाव तुल्य-भाव के 2 भेद अजीव भाव, जीव भाव। **अजीव भाव**-1 गुण वर्ण काला से 1 गुण वर्ण काला तुल्य। परन्तु 1 गुण कालासे. 2 गुणकाला तुल्य नहीं इसी तरह द्रव्य तुल्य सारा-सारा अधिकार है। इसी तरह अनंतगुण काला तक 13 बोल ये वर्ण गंध रस स्पर्श के 20 बोलों पर 13-13 से 20x13=260 अलावा हुए। **जीव भाव** के 6 भेद (1) औदयिक (कर्म उदय से होने वाला जीव परिणाम) (2) औपशमिक (कर्मों के उपशम से होने वाला जीव का परिणाम) (3) क्षायिक (कर्मों के क्षय से उत्पन्न जीव का परिणाम) (4) क्षयोपशम (कर्मों के क्षय और उपशम से उत्पन्न जीव का परिणाम, इसमें विपाक वेदन नहीं होता, प्रदेश वेदन होता है औपशमिक में दोनों वेदन नहीं होते यह फर्क है) (5) पारिणामिक (जीव का अनादि काल से स्वाभाविक परिणाम) (6) सान्निपातिक (औदयिक आदि दो-तीन भावों के संयोग से उत्पन्न जीव का परिणाम)। औदयिक औदयिक भाव तुल्य है, दूसरे भावों से तुल्य नहीं है, इसी प्रकार छहों का कहना।

(7) संठाण तुल्य-दो भेद है अजीव संठाण, जीव संठाण। **अजीव संठाण** 5 प्रकार के हैं-परिमंडल, वृत्त, तंस (त्र्यंस), चउरंस (चतुरस्त्र), आयत। परिमंडल परिमंडल तुल्य है, दूसरों से तुल्य नहीं, ऐसा पाँचों के लिए समझना।

जीव संठाण के 6 भेद है-समचतुरस्र, न्यग्रोधपरिमंडल, सादि, कुब्ज, वामन, हुण्डक। इनमें भी समचतुरस्र से समचतुरस्र तुल्य है, अन्य से तुल्य नहीं ऐसा छहों में कहना। कुल अलावा 318 (द्रव्य के 13+क्षेत्र के 12+काल के 12+भव के 4+अजीव भाव के 260+जीव भाव के 6+अजीव संठाण के 5+जीव संठाण के 6=318 हुए)।

122. श्रमण निर्ग्रंथों के सुख की तुल्यता (भ.श. 14 उ. 9) श्रमण निर्ग्रंथ आर्यपने, पाप रहितपणे विचरते हैं उन्हें सुख की प्राप्ति होती है। दीक्षा पर्याय से देव सुख की तुल्यता-

एक मास की दीक्षा पर्याय-व्यंतर देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
दो मास की दीक्षा पर्याय- नवनिकाय देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
तीन मास की दीक्षा पर्याय- असुरकुमार देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
चार मास की दीक्षा पर्याय- ग्रह नक्षत्र तारा देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
पाँच मास की दीक्षा पर्याय- सूर्य चन्द्र ज्योतिषी के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
छ मास की दीक्षा पर्याय- पहला दूसरा देवलोक के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
सात मास की दीक्षा पर्याय- तीसरा चौथा देवलोक के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
आठ मास की दीक्षा पर्याय- पाँचवें छठे देवलोक के देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
नव मास की दीक्षा पर्याय- सातवाँ आठवाँ देवलोक के देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
दस मास की दीक्षा पर्याय- नौ से बारहवें देवलोक के देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
ग्यारह मास की दीक्षा पर्याय- नव ग्रैवेयक देवलोक के देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।
बारह मास की दीक्षा पर्याय- पाँच अणुत्तर विमान के देवों के सुखों का उल्लंघन कर जाता है।

इसके बाद अधिक शुद्ध शुद्धत्तर परिणाम वाला होकर सब दु:खों का अंत कर सिद्ध होता है। यह संयम में भावित आत्मा के आनंद का एक मध्यम दर्जे का मानदंड मात्र बताया है, कई जीव तो अन्तर्मुहूर्त में ही उत्कृष्ट संयम साधना कर मुक्त हो जाते हैं।

123. केवली और सिद्ध (भ.श. 14 उ. 10) (1) केवलज्ञानी और सिद्ध भगवान छद्मस्थों को जानते हैं, देखते हैं। (2) केवलज्ञानी और सिद्ध-आधोवधिज्ञानी, परमावधिज्ञानी, केवलज्ञानी, और सिद्धों को जानते हैं, देखते हैं। (3) केवलज्ञानी बोलते हैं, प्रश्नों का उत्तर देते हैं।

(4) सिद्ध-बोलते नहीं प्रश्नों का उत्तर नहीं देते उनके उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम नहीं है। (5) केवलज्ञानी-आँख खोलते, बंद करते, शरीर संकोचते, पसारते हैं, सिद्ध नहीं करते। (6) केवलज्ञानी रत्नप्रभा यावत् ईषत् प्राग्भारा पृथ्वी को जानते देखते हैं, सिद्ध भी देखते हैं। (7) केवलज्ञानी और सिद्ध-परमाणु पुद्गल यावत् अनन्तप्रदेशी स्कंध को जानते देखते हैं।

	समानता असमानता-केवलज्ञानी	सिद्ध भगवान
1	छद्मस्थों को जानते देखते है	छद्मस्थों को जानते देखते है।
2	आधोवधिक, परमावधिक, केवली, सिद्धों को जानते देखते है	सिद्ध भी जानते देखते है।
3-4	बोलते है, प्रश्नों का उत्तर देते हैं	सिद्ध नहीं देते।
5	आँख बंद करते, खोलते, शरीर संकोचन, प्रसारण है	नहीं है।
6	रत्नप्रभा यावत् सिद्धशिला पृथ्वी जानते देखते हैं	सिद्ध भी जानते देखते हैं।
7	परमाणु पुद्गल यावत् अनन्त प्रदेशी स्कंध जानते देखते हैं	सिद्ध भी जानते देखते हैं।

124. अधिकरण (भ.श. 16 उ. 1) (1) एरण पर हथौड़ा लगने से या ऐसी ही प्रवृत्ति करने से (पाँच प्रकार से (स्थानांगसूत्र में) धम-धम करके जोर-जोर से चलने से, लोहार की धमनी से, उच्छवास, कपड़े निचोड़ने, किसी वस्तु से अचित्त वायु से सचित्त वायु की हिंसा होती है।) वायुकाय की उत्पत्ति होती है। (2) उससे सचित्त वायु की हिंसा होती है। बाद में अचित्त वायु भी सचित्त हो जाती है, फिर वे जीव दूसरी अचित्त वायु के स्पर्श से मरते हैं। स्पर्श बिना नहीं मरते। (3) तैजस कार्मण शरीर की अपेक्षा शरीर सहित औदारिक शरीर की अपेक्षा शरीर रहित भवान्तर में जाती है।

(4) अग्नि भी वायु बिना नहीं जलती। सिगड़ी में अग्निकाय जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन दिन रात सचित्त रहती है। फिर वहाँ दूसरे अग्नि और वायु के जीव उत्पन्न होते है अत: अग्नि लंबी चलती है या लंबे समय तक जलती है।

(5-6) लोहा तपाने की भट्टी में लोहा ऊँचा-नीचा करने वाले पुरुष को, जिन शरीरों से लोहा बना, भट्टी बनी, संडासी, अंगारे, अंगारे निकालने की सलाई बनी, धमण बनी, एरण पर पकड़कर रखने वाले पुरुष, घण हथौड़ादि जिनसे बना, एरण, एरण का लक्कड़ गर्म लोहे को ठंडा करने की कुंडी, लुहारशाला बना है उन सब जीवों को 5-5 क्रियाएँ लगती है।

(7-8) जीव अधिकरण (अविरति, ममत्व परिणाम की अपेक्षा से) भी है, अधिकरणी भी है, जीव साधिकरणी है, निराधिकरणी नहीं है। 24 दंडक जीवों में कहना। हिंसादि पापकर्म के कारणभूत पदार्थों को अधिकरण कहते हैं। शरीर इन्द्रियांआदि आंतरिक अधिकरण और हल, कुदाल, धन, धान्य आदि परिग्रह रूप वस्तुएँ बाह्य अधिकरण है। जिसके आंतरिक और बाह्य अधिकरण हों, वह अधिकरणी है इसलिए जीव को अधिकरण और अधिकरणी दोनों कहा है। विरति वाले जीव के शरीरादि और परिग्रहरूप वस्तुएँ है, फिर भी ममत्व न होने के कारण वह अधिकरण और अधिकरणी नहीं होता। इन्द्रियादि शरीरादि हमेशा साथ रहते हैं अत: साधिकरणी कहलाता है। शस्त्रादि हमेशा नहीं होते परन्तु अविरति रूप ममत्व भाव हमेशा होने से दोनों (आंतरिक एवं बाह्य) अधिकरण होते हैं। संयमी पुरुषों के शरीरादि होते हुए भी ममत्व भाव नहीं होने से उनमें साधिकरणपना नहीं है।

(9-10) जीव आत्माधिकरणी, पराधिकरणी और तदुभयाधिकरणी तीनों अविरति की अपेक्षा से हैं। जीवों का अधिकरण आत्म प्रयोग, पर प्रयोग, तदुभय प्रयोग तीनों से अविरति की अपेक्षा होता है। 24 दंडक में कहना।

5 शरीर, 5 इन्द्रियाँ, तीन योग इन 13 बोलों में जो-जो बोल जिसमें पावे, उन्हें निपजाते हुए 24 दंडक के जीव अविरति की अपेक्षा अधिकरण, अधिकरणी दोनों है। आहारक शरीर प्रमादी साधु के होता है, अत: आहारक शरीर प्रमाद की अपेक्षा अधिकरण, अधिकरणी है।

125. शक्रेन्द्रजी (भ.श. 16 उ. 2) एक बार देवराज शक्रेन्द्र अपनी ऋद्धि परिवार सहित श्रमण भगवान महावीर के पास आये वंदना कर उन्होंने पृच्छा की-श्रमणों के

5 प्रकार के अवग्रह होते हैं। (1) देवेन्द्र का अवग्रह (दक्षिणार्द्ध में शक्रेन्द्र का, उत्तर लोकार्द्ध में ईशानेन्द्र का), (2) राजा का अवग्रह (स्वामीपना), भरतादि छ: खंड में चक्रवर्ती का (3) गृहपति का (मांडलिक राजा के देश पर उसका) (4) सागरिक अवग्रह (गृहस्थ का अपने घर पर) (5) साधर्मिक अवग्रह (समान धर्म वाले साधु परस्पर साधर्मिक कहलाते हैं उनका पाँच कोस के क्षेत्र में साधर्मिक अवग्रह होता है।) (अढ़ाई कोस उत्तर एवं दक्षिण ये 5 कोस या अढ़ाई पूर्व अढ़ाई पश्चिम ये पाँच कोस)। उसके बाद शक्रेन्द्रजी ने कहा- हे भगवान! जो श्रमण निर्ग्रंथ विचरते हैं, उन्हें मैं आज से अवग्रह की आज्ञा देता हूँ आज से दक्षिण लोक में यानि दक्षिण भरत क्षेत्र में विचरने वालों को विचरने और कल्पनीय पदार्थों की आज्ञा दी और वंदन नमस्कार करके 32 प्रकार के नाटक दिखाकर कर चले गये।

(2-3) शक्रेन्द्रजी सत्यवादी है, मिथ्यावादी नहीं है। शक्रेन्द्रजी एवं देव चारों प्रकार की भाषा बोलते हैं।

(4) शक्रेन्द्र सावद्य और निरवद्य दोनों भाषा बोलते हैं। शक्रेन्द्र या अन्य कोई भी हाथ वस्त्रादि से मुख को ढ़ककर बोलता है, वह निरवद्य भाषा है, मुँह ढ़कने से वायुकाय के जीवों की रक्षा होती है। उघाड़े मुख बोले तो सावद्य भाषा उससे जीवों (वायुकाय) की हिंसा होती है।

(5) शक्रेन्द्र भवसिद्धिक है अभवसिद्धिक नहीं, सम्यग्दृष्टि है, परित्तसंसारी है, सुलभबोधि है, आराधक है, चरम है, एक भवावतारी है। बहुत साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका के हित, सुख, पथ्य, कल्याण चाहने वाले हैं इसलिए शक्रेन्द्रजी भवसिद्धिक यावत् चरम है।

126. स्वप्न (भ.श. 16 उ. 6) (1) स्वप्न के 5 प्रकार (1) **यथातथ्य स्वप्न**-जैसा स्वप्न वैसा फल या सत्य और शुभ फल का दाता है। (2) **प्रतान स्वप्न**-विस्तार वाला यह यथा तथ्य भी होता है, और अयथा तथ्य (मिथ्या) भी होता है। (3) **चिन्ता स्वप्न**-जागृत अवस्था में जो देखा, विचार किया वह स्वप्न में देखे। (4) **तद्‌विपरीत स्वप्न**-स्वप्न में जो देखा जागृत में उसका विपरीत फलदाता। (5) **अव्यक्त स्वप्न**-अस्पष्ट अर्थ, आल जंजाल देखना।

(2) सोते हुए को स्वप्न नहीं आता, जगते हुए को स्वप्न नहीं आता, किन्तु सोते जागते को आता है अर्द्ध जागृत अवस्था में स्वप्न आता है। इन्द्रियाँ सोई रहती हैं, मन जागता रहता है।

(3) नींद गहरी न होने से मन घूमता रहता है। जीव सोते भी है, जागते भी है, सोते जागते भी है।

(4) नारकी के नेरिये सोते है, जागते या सोते जागते नहीं। इसी तरह 21 दंडक कहना। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा 2 सोते और सोते जागते। मनुष्य में तीनों भांगा पावे।

(5) संवुडा (संवृत) (साधु) को स्वप्न आता है, नहीं भी आता। असंवुडा, संवुडा-असंवुडा को भी आता है।

(6) संवुडा को आता है तो यथा तथ्य स्वप्न आता है, बाकी दोनों को यथा तथ्य और अयथा तथ्य दोनों प्रकार के स्वप्न आते हैं।

(7) जीव संवुडा, असंवुडा, संवुडा-असंवुडा तीनों प्रकार है। मनुष्य में तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 2 और शेष 22 दंडक में असंवुडा (एक भांगा) (तिर्यंच पं. में असंवुडा, संवुडा असुंवडा)।

(8) स्वप्न के 72 प्रकार है। 42 सामान्य फल देने वाले, 30 महाफल देने वाले महास्वप्न। 30 महास्वप्नों में से 14 महास्वप्न तीर्थंकर की माता और चक्रवर्ती की माता देखती है।

14 स्वप्न-(1) गज (हाथी)-मुख में प्रवेश करता गज देखती है, जैसे हाथी संग्राम में शत्रु सेना का संहार करता है, वैसे ही तीर्थंकर भगवान कर्म शत्रुओं को नष्ट करते हैं।

(2) वृषभ (बैल)-मुख में प्रवेश करता बैल, फल-बैल भार वहन करता है, तीर्थंकर संयमरूपी भार वहन करते हैं। (3) सिंह-मुख में प्रवेश करता सिंह। अन्य प्राणी डरकर भाग जाते हैं, वैसे ही पाखंडी भगवान से भाग जाते हैं।

(4) लक्ष्मी-घर में गीत गाते देखती है, तीर्थंकर भगवान केवलज्ञान रूपी लक्ष्मी सहित होते हैं।

(5) फूलों की माला-दसों दिशाओं में सुगंध फैलाती है, तीर्थंकर भगवान का यश 10 दिशाओं में फैले।

(6) चन्द्रमा-मुख में प्रवेश करता हुआ-आनंद उपजाता है, ऐसे ही तीर्थंकर भगवान भव्य जीवों को आनंद उपजाने वाले होते हैं।

(7) सूर्य-मुख में प्रवेश करता हुआ-सूर्य अपने तेज से दीप्तमान होता है, वैसे ही तीर्थंकर भगवान अपने तेज से दीप्तिमान होते हैं।

(8) महेन्द्रध्वजा-चिह्न सहित महेन्द्रध्वजा देखती है, भगवान के ऊपर तीन छत्र होते हैं।

(9) कुंभकलश-पूर्ण भरा कलश, तीर्थंकर भगवान गुणों से परिपूर्ण होते हैं।

(10) पद्मसरोवर-देखती है पक्षी आदि उसकी सेवा करते हैं, देवतादि तीर्थंकर की सेवा करते हैं।

(11) क्षीरसमुद्र-समुद्र गंभीर होता है, इसी प्रकार तीर्थंकर भगवान भी धीर वीर गंभीर होते हैं।

(12) विमान या भवन-को अपने चारों ओर घूमता देखती है, तीर्थंकर भगवान बहुत देवी-देवताओं के पूज्यनीय होते हैं।

(13) रत्नों की राशि-देखती है, तीर्थंकर भगवान ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय से युक्त होते हैं।

(14) अग्निशिखा-तेज सहित अग्नि देखती है, तीर्थंकर भगवान तप तेज सहित होते हैं।

चक्रवर्ती की माता भी 14 महास्वप्न देखती है, परन्तु कुछ अस्पष्ट देखती है। वासुदेव की माता इन 14 महास्वप्नों में से 7 देखती है, बलदेव के गर्भ में आने पर उनकी माता 4 महास्वप्न देखती है। मांडलिक राजा की माता 1 महास्वप्न देखती है। भवितात्मा अणगार की माता 1 महास्वप्न देखती है। देखने के बाद सोती नहीं है। धर्म जागरण करती है।

श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने छद्मस्थ अवस्था में 10 स्वप्न देखे, उसके बाद उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई, भगवान ने बैठे-बैठे ही अर्द्धनिद्रित अवस्था में (भगवान ने शयनासन नहीं किया था साधना काल में) अन्तर्मुहूर्त मात्र निद्रा आई थी। अंतिम राइयंसि (अंतिम रात्रि में या रात्रि के अंतिम प्रहर में तत्त्व केवलिगम्य) मूलपाठ में वर्णित है। 10 स्वप्न देखकर जागत हुए। ये 10 स्वप्न और परिणाम इस प्रकार है।

(1) पिशाच को पराजित किया-	मोह कर्मक्षय किया
(2) सफेद नर कोयल-	शुक्लध्यान प्राप्त किया
(3) विचित्र पंख वाला नर कोयल-	द्वादशांग प्ररूपण

(4) स्वर्णरत्न मय माला द्वय–	द्विविध धर्म प्ररूपण (आगार धर्म, अणगार धर्म)
(5) सफेद गायों का झुंड–	चतुर्विध संघ रचना (साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका)
(6) महापद्म सरोवर–	चारों जाति के देवों को प्रतिबोध
(7) महासागर भुजा से तिरे–	संसार सागर से तिरे
(8) तेजयुक्त सूर्य–	केवलज्ञान प्राप्ति
(9) मानुषोत्तर पर्वत आंतों से परिवेष्टित–	संपूर्ण लोक में यशकीर्ति फैली
(10) मेरूपर्वत की चूलिका पर सिंहासन पर बैठे–	12 प्रकार की परिषदा में धर्म उपदेश फरमाया।

127. चौदह स्वप्नों का फल (भ.श. 16 उ. 6) यहाँ कुछ 14 स्वप्नों का फल बताया है, इनको देखने के बाद जागृत हो जाना चाहिए, सोते ही रहने से स्वप्न फल नहीं होता है।

(1) हाथी, घोड़ा, बैल आदि का समूह देखकर, उसके ऊपर चढ़ जाय, ऊपर बैठा हुआ देखे तो ऐसा देखकर तुरन्त जागृत हो जाये, वह व्यक्ति उसी भव में मोक्ष जायेगा।

(2) एक रस्सी जो समुद्र के पूर्व से पश्चिम तक लंबी हो, अपने हाथों से समेटकर इकट्ठा करे ऐसा देखा वह उसी भव मोक्ष जायेगा। सर्व दुःखों का अंत करेगा।

(3) लोकान्त तक पूर्व पश्चिम रस्सी को काटे। उसी भव मोक्ष जायेगा।

(4) पाँच रंगों के उलझे सूत को सुलझा दिया है, उसी भव मोक्ष जायेगा।

(5) लोहा तांबा कथीर, शीशे के ढेर हो, उस पर चढ़ जाये तो दूसरे भव मोक्ष जायेगा।

(6) सोना, चाँदी, रत्न, वज्र (हीरों) के ढेर पर चढ़ जाये तो उसी भव मोक्ष जायेगा।

(7) घास या कचरे के ढ़ेर को बिखेर दे तो उसी भव मोक्ष जायेगा।

(8) शरस्तम्भ, वीरणस्तम्भ, वंशीमूलस्तम्भ, या वल्लिमूलस्तंभ को जड़ से उखाड़कर फेंक दे, तो समझना उसी भव मोक्ष जायेगा।

(9) दूध, दही, घी, मधु (शहद) के घड़े देखे, उन्हें उठा ले तो उसी भव मोक्ष जायेगा।

(10) मदिरा, सौवीर (मदिरा विशेष), तेल, चर्बी के घड़े देखे, उन्हें फोड़ दे तो दूसरे भव मोक्ष।

(11) पुष्प युक्त पद्म सरोवर देखे, उसमें प्रवेश करे, तो उसी भव मोक्ष जायेगा।

(12) महासागर देखे, तिरकर पार करे, समझे उसी भव मोक्ष जायेगा।

(13) रत्नों का भवन देखे, उसमें प्रवेश करे, उसी भव मोक्ष जायेगा।

(14) रत्नों के विमान देखे, उसमें चढ़ जाय तो उसी भव मोक्ष जायेगा।

128. 96 बोल (भ.श. 17 उ. 2) (1) संयत, विरत और पापकर्म का पच्चक्खाण कर दिया है, वह जीव धर्म में स्थित है वह धर्म को स्वीकार कर प्रवृत्ति करता है। असंयम, अव्रत और पापकर्म का पच्चक्खाण नहीं करने वाला जीव अधर्म में स्थित है, वह जीव अधर्म को स्वीकार कर प्रवृत्ति करता है। और जो जीव संयता संयत है वह धर्माधर्म (देश विरति) को स्वीकार कर प्रवृत्ति करता है, वह धर्माधर्म में है।

(2) कोई भी जीव, धर्म में, अधर्म में या धर्माधर्म में, सो, बैठ नहीं सकता।

(3) समुच्चय जीव में, मनुष्य में भांगा 3 (धर्म, अधर्म, धर्माधर्म), तिर्यंच पंचेन्द्रिय में दो (अधर्म, धर्माधर्म) भांगा, बाकी 22 दंडक में भांगा पावे 1 अधर्म)।

(4) अन्य तीर्थियों का कथन श्रमण पंडित, श्रमणोपासक बालपंडित और जिसे एक भी जीव की अविरति हो वह बाल है यह मिथ्या है, श्रमण भगवान का फरमान है कि श्रमण पंडित है, श्रमणोपासक बालपंडित और जिसने एक भी जीव की वध की विरति की है, वह बालपंडित है एकान्त बाल नहीं है।

(5) समुच्चय जीव और मनुष्य में भांगा 3 (पंडित, बालपंडित, बाल) तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा 2 (बाल, बालपंडित) बाकी 22 दंडकों में 1 बाल।

(6) यहाँ 96 बोलों का अन्य तीर्थियों का मिथ्या कथन और भगवान का स्वसिद्धांत प्रतिपादन किया है–प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन में प्रवृत्ति और निवृत्ति करने वाला जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है, इसी प्रकार 4 बुद्धि, 4 मतिज्ञान के भेद, 5 उत्थानादि, 4 गति, 8 कर्म, 6 लेश्या, 3 दृष्टि, 12 उपयोग, 4 संज्ञा, 5 शरीर, 3 योग, 2 उपयोग इन 96 बोलों में प्रवृत्ति करता जीव अन्य और जीवात्मा अन्य है, यह अन्य तीर्थियों का मिथ्या कथन है। भगवान का सिद्धांत है कि प्राणाति पात यावत् मिथ्यादर्शन में प्रवृत्ति निवृत्ति और 60 बोलों में प्रवृत्ति (ये 96 बोल) 18+18+60 करता हुआ जीव और जीवात्मा वही है।

(7) देवता रूपी है, अत: अरूपी रूप वे नहीं बन सकते अनेक रूप, कर्म, राग, वेद, मोह, लेश्या, शरीर है, वे वर्णादि 20 बोल (वर्ण गंध रस स्पर्श) धारण करते हैं किन्तु सामान्य मनुष्यों को न दिखे वैसा रूप बना सकते हैं, परन्तु वह भी तो रूपी ही है।

(8) पहले जीव रूपी है, फिर अरूपी (केवली बनकर) बन सकता है, किन्तु अरूपी होकर (सिद्ध) फिर रूपी (संसारी) नहीं बन सकता। रूप, कर्म, राग, वेद, मोह, लेश्या, शरीर छोड़ दिया वह वर्णादि 20 बोल ग्रहण भी नहीं करता वह जीव वैक्रिय नहीं कर सकता।

129. एयणा-चलणा (भ.श. 17 उ. 3) (1) शैलेषी अवस्था में अणगार कम्पन्न, स्पंदन, गमनादि नहीं करता है, परप्रयोग (धक्का दे, गिरा दे, पानी में बहा दे) के बिना, उन-उन भावों को नहीं परिणमता। शैलेषी अवस्था में अत्यंत स्थिर हो जाती है।

(2-3) एजना (कंपन्न) 5 प्रकार की-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, भव एजना। इन सभी के नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव 4 योनियों से 5x4=20 भेद हुए।

(4) चलना के तीन भेद-शरीर चलना, इन्द्रिय चलना, योग चलना।

(5-6-7) शरीर के 5, इन्द्रिय के 5 योग के तीन, ये 13 बोल चलना के हुए। इन 13 को परिणमाया, परिणमाता है, परिणमावेगा (भूत, वर्तमान, भविष्य) चला, चलता है, चलेगा ये 39 भेद हुए।

(8) संवेगादि 49 बोलों का अंतिम फल मोक्ष कहा है, ये सभी गुण मोक्ष साधना में सहायक और गति देने वाले हैं, इनकी साधना और इन गुणों की वृद्धि एवं संरक्षण करते रहना चाहिए। (1) संवेग (वैराग्य) (2) निर्वेद (विरक्तता) (3) गुरु आदि की सेवा (4) पापों की आलोचना (5) स्वनिन्दा (6) स्वगर्हा (7) क्षमापना (8) उपशांतता (9) श्रुत (का अभ्यास) सहायता, (10) भाव अप्रतिबद्धता (अनासक्ति) (11) पाप की पूर्ण निवृत्ति (12) विविक्त शयनासन, (13 से 17) पाँच इन्द्रिय संवर (18 से 23) योग, शरीर, कषाय, संभोग, उपधि और भत्त (आहार) प्रत्याख्यान (24) क्षमा (25) विरागता (26 से 28) भाव, योग और करण सत्य (29 से 31) मन, वचन, काया का सम्यक् अवधारण (वश में) (32 से 44) क्रोध यावत् मिथ्यादर्शन शल्य ये 13 पाप का त्याग (45 से 47) ज्ञान, दर्शन, चारित्र की संपन्नता (48) रोगादि (क्षुधादि) वेदना सहिष्णुता (49) मारणांतिक कष्ट उपसर्ग में सहिष्णुता। इन 49 पदों का अंतिम फल मोक्ष कहा है।

130. पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय के उपपात (भ.श. 17 उ. 6 से 11 भ.श. 20 उ. 6) पृथ्वीकायिक जीव रत्नप्रभा नरक से मारणान्तिक समुद्घात करके सौधर्म देवलोक में पृथ्वीकायपणे उत्पन्न हो सकता है ये पहले आहार करते हैं, पीछे उत्पन्न होते है, और पहले उत्पन्न होते हैं, पीछे आहार करते हैं। पृथ्वीकायिक जीवों के तीन समुद्घात वेदना, कषाय, मारणांतिक) होती है। जब जीव मारणान्तिक समुद्घात करता है तब पूर्व शरीर को सर्वथा छोड़कर गेंद या मेंढ़क की तरह उछलकर एक साथ उत्पत्ति स्थान में जाता है तब तो पहले उत्पन्न होता है, पीछे आहार करता है। और इलिका गति से जाता है तो पहले आहार करता है, पीछे उत्पन्न होता है। मेंढ़क की तरह (सर्व समुद्घात) इलिका गति (देश समुद्घात) देश समुद्घात से पहले आहार लेता है, सर्व समुद्घात वाला पहले उत्पन्न होता है, फिर आहार लेता है। इसी तरह सातों नरकों का कहना। सातों नरकों से निकलकर पृथ्वीकायिक जीव 12 देवलोक, नवग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर विमान सिद्धशिला इन 15 ठिकानों के 105 अलावा 15x7=105 अलावा हुए दोनों के 210 अलावा हुए। नरक के 6 आंतरों (7 नरक के) में से निकलकर 15 स्थानों में उपजने के 15x6=90 अलावा हुए। इसी तरह 15 स्थानों के 10 आंतरों से (पहले दूसरे तीसरे चौथे देवलोक 1 आंतरा, 5-6-7-8 के बीच ये 4 आंतरे 9 और 10 का 1 तथा 11 और 12 का एक ये 7 तथा नवग्रैवेयक, अणुत्तर, सिद्धशिला के एक-एक, ये कुल 10 आंतरे) 7 नरक में उत्पन्न होने के 70 अलावा ये 370 (210+90+70) अलावा हुए। इसी तरह अप्काय और वायुकाय के 370+370 जोड़ने से 1110 अलावा (370+370+370) हुए।

131. पढ़म अपढ़म (भ.श. 18 उ. 1) जो भाव अनादिकाल से हैं, पहले प्राप्त किया हुआ है, वह अपढ़म (जीवत्व), और जो भाव जहाँ पहली बार होता है, वह भाव उस स्थान की अपेक्षा पढ़म है (जैसे सिद्धत्व)। जो भाव जहाँ कई जीवों में पहली बार, और कई जीवों में दूसरी यावत् संख्यातवें बार आदि भी होता है, उसे सियपढ़म सियअपढ़म (उभय भाव) कहते हैं। 14 द्वारों पर 93 बोलों से पृच्छा और समाधान है। 24 दंडक, जीव, सिद्ध से। (1) जीव द्वार 26 (2) आहारक 2 (3) भवी द्वार 3 (4) सन्नी द्वार 3 (5) लेश्या द्वार 8 (6) दृष्टि द्वार 3 (7) संयत द्वार 4 (8) कषाय द्वार 6 (9) ज्ञान द्वार 10 (10) योग द्वार 5 (11) उपयोग द्वार 2 (12) वेद द्वार 5 (13) शरीर द्वार 6 (14) पर्याप्ति द्वार 10 ये 93 बोल।

(1) जीव द्वार–जीवत्व की अपेक्षा जीव अपढ़म है, एक जीव बहुत जीव 24 दंडक के जीवों का कहना। सिद्धत्व पढ़म है अपढ़म नहीं। एक और बहुत सिद्ध का कहना।

(2) आहारक द्वार–आहारक भाव अपढ़म है। अनाहारक भाव एक जीव सिय-पढ़म (सिद्ध की अपेक्षा, सिय अपढ़म (विग्रह गति की अपेक्षा) बहुत जीव पढ़म भी, अपढ़म भी। 24 दंडक अपढ़म, सिद्ध पढ़म।

(3) भवी द्वार–भवी अभवी 24 दंडक अपढ़म है। नो भव सिद्धिक नो अभव सिद्धिक सिद्ध एक जीव बहुत जीव पढ़म है। अपढ़म नहीं।

(4) संज्ञी द्वार–16 दंडक (5 स्थावर 3 विकलेन्द्रिय छोड़कर) के संज्ञी जीव संज्ञी भाव की अपेक्षा अपढ़म है। असंज्ञी 22 दंडक (ज्योतिषी वैमानिक छोड़) भी अपढ़म है। नो संज्ञी नो असंज्ञी मनुष्य और सिद्ध पढ़म है।

(5) लेश्या द्वार–सलेशी और छ लेश्या वाले (जहाँ जितना पावे) अपढ़म है। अलेशी, मनुष्य, और सिद्ध पढ़म है।

(6) दृष्टि द्वार–सम्यक्‌दृष्टि भाव की अपेक्षा सम्यग्‌दृष्टि जीव सियपढ़म सियअपढ़म यह समुच्चय जीव 19 दंडकों में कहना कोई प्रथम बार प्राप्त करता है, कोई गिरकर पुनः प्राप्त करता है। सिद्ध जीव पढ़म है। मिथ्यादृष्टि 24 दंडक के अपढ़म है। **मिश्रदृष्टि** 16 दंडक सियपढ़म सियअपढ़म बहुत जीव प्रथम भी अप्रथम भी।

(7) संयत द्वार–संयत भाव समुच्चय जीव और मनुष्य तथा संयता संयत जीव, मनुष्य, तिर्यंच एक जीव आसरी सियपढ़म सियअपढ़म। बहुत जीव पढ़म भी अपढ़म भी। असंयत 24 दंडक अपढ़म है। नो संयत नो असंयत नो संयतासंयत (सिद्ध) पढ़म है। अपढ़म नहीं।

(8) कषाय द्वार–सकषायी, चारों कषाय समुच्चय और 24 दंडक में अपढ़म। अकषाय समुच्चय और मनुष्य में सियपढ़म (यथा ख्यात चारित्र की अपेक्षा) सियअपढ़म (पड़िवाई की अपेक्षा) बहुत जीव में प्रथम भी अप्रथम भी। सिद्ध में अपढ़म नहीं पढ़म है।

(9) ज्ञान द्वार–सज्ञानी, मति और श्रुतज्ञानी समुच्चय और 19 दंडक, अवधिज्ञानी समुच्चय और 16 दंडक, मनःपर्यवज्ञानी समुच्चय और मनुष्य सियपढ़म सियअपढ़म। बहुत जीव पढ़म भी अपढ़म भी। सिद्ध जीव पढ़म। केवलज्ञानी समुच्चय, मनुष्य

और सिद्ध एक जीव बहुत जीव पढ़म है। समुच्चय अज्ञानी मति और श्रुत अज्ञानी समुच्चय जीव 24 दंडक, विभंगज्ञानी समुच्चय और 16 दंडक अपढ़म है।

(10) योग द्वार–सयोगी, काययोगी समुच्चय और 24 दंडक, मनयोगी समुच्चय जीव 16 दंडक, वचनयोगी समुच्चय जीव 19 दंडक अपढ़म है। अयोगी जीव मनुष्य, सिद्ध एक और बहुत जीव पढ़म है।

(11) उपयोग द्वार–साकारोपयोग अनाकारोपयोग वाला समुच्चय जीव 24 दंडक अपढ़म है। सिद्ध भगवान पढ़म है।

(12) वेद द्वार–सवेदी समुच्चय जीव 24 दंडक, स्त्रीवेदी पुरुषवेदी 15 दंडक, नपुंसकवेदी 11 दंडक अपढ़म है। अवेदी समुच्चय जीव, मनुष्य एक जीव सियपढ़म सियअपढ़म, बहुत जीव पढ़म भी अपढ़म भी। अवेदी सिद्धपढ़म है, अपढ़म नहीं।

(13) शरीर द्वार–सशरीरी जीव समुच्चय जीव 24 दंडक, औदारिक शरीर समुच्चय जीव 10 दंडक, वैक्रिय शरीर समुच्चय और 17 दंडक, तैजस कार्मण शरीर समुच्चय जीव 24 दंडक आसरी एक और बहुत अपढ़म है, पढ़म नहीं। आहारक शरीर जीव और मनुष्य एक जीव सियपढ़म, सियअपढ़म, बहुत जीव पढ़म अपढ़म दोनों अशरीर, जीव और सिद्धपढ़म है, अपढ़म नहीं।

(14) पर्याप्ति द्वार–4 पर्याप्त और अपर्याप्त समुच्चय जीव 24 दंडक, भाषा पर्याप्त और अपर्याप्त समुच्चय जीव 19 दंडक, मन पर्याप्त समुच्चय जीव 16 दंडक एक जीव बहुत जीव आसरी अपढ़म है, पढ़म नहीं।

इसे चार्ट से समझते हैं–(1) सभी–जितने दंडक और समुच्चय जीव जो भी वहाँ पावे समझें।

(2) दो बोल–तीन बोल–जीव सिद्ध और मनुष्य में से दो या तीन समझना।

(3) 25 या 24+1 (समुच्चय जीव + 24 दंडक) इसी प्रकार 19+1 दंडक + जीव आदि समझना।

(4) नो सन्नी 0 = नो सन्नी नो असन्नी, इसी तरह नो भवी, नो संयत आदि समझना।

(5) 4 अज्ञान 5 कषाय आदि में समुच्चय अज्ञानी, सकषायी आदि सम्मिलित है, ऐसा समझें।

14 द्वार में प्रथम अप्रथम–

द्वार	प्रथम भाव		अप्रथम भाव		प्रथम अप्रथम उभय भाव	
	बोल	जीव	बोल	जीव	बोल	जीव
1	सिद्ध	–	जीव 24 दंडक	–	–	–
2	–	–	आहारक	24–1	–	–
	अनाहारक	सिद्ध	अनाहारक	24	अनाहारक	समुच्चय जीव
3	नो भवी	सिद्ध	भवी	24–1	–	–
	–	–	अभवी	24–1	–	–
4	नो सन्नी	3 बोल	सन्नी	16–1		
	–	–	असन्नी	22–1		
5	अलेशी	3 बोल	सलेशी	सभी	–	–
			6 लेशी			
6	सम्यग्दृष्टि	सिद्ध	मिथ्यादृष्टि	24–1	सम्यग्दृष्टि	19–1
	–	–	–	–	मिश्रदृष्टि	16–1
7	नो संयत	2 बोल	असंयत	24–1	संयत	2 बोल
	–	जीव सिद्ध	–	–	संयता संयत	3 बोल
8	अकषाय	सिद्ध	5 कषाय	24–1	अकषायी	2 बोल
9	केवलज्ञान	3 बोल	4 अज्ञान	24–1	सज्ञानी 4 ज्ञान	सभी
10	अयोगी	3 बोल	सयोगी 3 योग	सभी	–	–
11	उपयोग दो	सिद्ध	उपयोग दो	24 बोल	उपयोग दो	जीव
12	अवेदी	सिद्ध	सवेदी 3 वेद	सभी	अवेदी	2 बोल
13	अशरीरी	2 बोल	सशरीरी 4 शरीर	सभी	आहारक शरीर	2 बोल
14	–	–	5 पर्याप्ति 5 अपर्याप्ति	सभी	–	–

132. चरम अचरम (भ.श. 18 उ. 1) जीव जिस भाव को फिर प्राप्त करेगा वह अचरम और जिस स्थान में फिर नहीं आने वाला है वह चरम। जो भाव जहाँ किसी जीव में चरम है, किसी जीव में अचरम है उस भाव की अपेक्षा सियचरम सियअचरम (उभय) इसका उपरोक्त 14 द्वारों से कथन है। **(1) जीव द्वार**–समुच्चय जीव और सिद्ध अचरम है।

(2) आहारक द्वार–समुच्चय जीव 24 दंडक सियचरम सियअचरम बहुत जीव चरम भी अचरम भी। अनाहारक जीव और सिद्ध अचरम है। अनाहारक 24 दंडक के जीव सियचरम सियअचरम, बहुत जीव चरम भी अचरम भी।

(3) भवी द्वार–भवसिद्धिक चरम है, 24 दंडक में सियचरम सियअचरम, बहुत जीव चरम अचरम दोनों। अभवसिद्धिक समुच्चय जीव 24 दंडक अचरम है। नो भव सिद्धिक नो अभवसिद्धिक सिद्ध जीव एक जीव बहुत जीव अचरम है, चरम नहीं।

(4) संज्ञी द्वार–संज्ञी समुच्चय जीव 16 दंडक और असंज्ञी समुच्चय और 22 दंडक सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव चरम भी अचरम भी। नो संज्ञी नो असंज्ञी समुच्चय जीव, सिद्ध अचरम है। मनुष्य (केवली अपेक्षा) चरम है। अचरम नहीं।

(5) लेश्या द्वार–सलेशी समुच्चय और 24 दंडक, कृष्ण नील कापोत लेशी समुच्चय जीव 22 दंडक, तेजो लेशी समुच्चय जीव 18 दंडक, पद्म लेशी शुक्ल लेशी समुच्चय जीव 3 दंडक, सिय चरम सिय अचरम (चरम भी अचरम भी)। अलेशी समुच्चय और सिद्ध अचरम है। अलेशी मनुष्य चरम है।

(6) दृष्टि द्वार–समदृष्टि समुच्चय जीव 19 दंडक सिय चरम सिय अचरम (चरम अचरम दोनों) सिद्ध अचरम है। मिथ्यादृष्टि समुच्चय, 24 दंडक, मिश्रदृष्टि समुच्चय और 16 दंडक सिय चरम सिय अचरम (दोनों) है।

(7) संयत द्वार–संयति समुच्चय और मनुष्य, संयतासंयति समुच्चय और मनुष्य, तिर्यंच, असंयति समुच्चय और 24 दंडक एक जीव आसरी सिय चरम सिय अचरम है (चरम अचरम दोनों) नो संयति नो असंयति नो संयतासंयति जीव और सिद्ध अचरम है।

(8) कषाय द्वार–सकषायी, चारों कषायी समुच्चय जीव 24 दंडक सिय चरम सिय अचरम है। अकषायी जीव और सिद्ध अचरम है। मनुष्य (अकषायी) सिय चरम सिय अचरम (दोनों)।

(9) ज्ञान द्वार–समुच्चयज्ञानी, मति श्रुतज्ञानी समुच्चय जीव 19 दंडक, अवधिज्ञानी समुच्चय और 16 दंडक, मनःपर्यवज्ञानी समुच्चय, मनुष्य सिय चरम सिय अचरम (दोनों)। केवलज्ञानी समुच्चय और सिद्ध अचरम है। मनुष्य (केवली) चरम है। समुच्चय अज्ञानी मति और श्रुतअज्ञानी समुच्चय, 24 दंडक, विभंगज्ञानी समुच्चय जीव 16 दंडक सिय चरम सिय अचरम और दोनों।

(10) योग द्वार–सयोगी, काय योगी समुच्चय, 24 दंडक, मनयोगी समुच्चय, 16 दंडक वचन योगी समुच्चय और 19 दंडक सिय चरम सिय अचरम (दोनों भी)। अयोगी समुच्चय और सिद्ध अचरम। मनुष्य (अयोगी) चरम है।

(11) उपयोग द्वार–उपयोग दोनों समुच्चय जीव और सिद्ध अचरम। 24 दंडक 1 जीव सिय चरम सिय अचरम (दोनों भी)।

(12) वेद द्वार–सवेदी समुच्चय, 24 दंडक, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी समुच्चय जीव 15 दंडक नपुंसक समुच्चय, 11 दंडक एक जीव सिय चरम सिय अचरम (दोनों भी)। अवेदी और सिद्ध अचरम। मनुष्य एक जीव सिय चरम सिय अचरम बहुत जीव दोनों (चरम भी अचरम भी)।

(13) शरीर द्वार–सशरीरी समुच्चय और 24 दंडक, औदारिक समुच्चय जीव 10 दंडक, वैक्रिय समुच्चय जीव 17 दंडक, आहारक समुच्चय जीव मनुष्य, तैजस कार्मण समुच्चय जीव 24 दंडक एक जीव सिय चरम सिय अचरम (बहुत दोनों)। अशरीरी जीव सिद्ध अचरम है।

(14) पर्याप्ति द्वार–4 पर्याप्ति 4 अपर्याप्ति समुच्चय जीव 24 दंडक, मनवचन के 19 दंडक समुच्चय जीव, एक जीव आसरी सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव आसरी चरम भी अचरम भी।

चार्ट से इस प्रकार समझें–14 द्वारों पर चरम अचरम–

द्वार	चरम भाव		अचरम भाव		चरम अचरम उभय भाव	
	बोल	जीव	बोल	जीव	बोल	जीव
1	–	–	जीव, सिद्ध	–	24 दंडक	–
2	– –	– –	अनाहारक –	जीव, सिद्ध –	आहारक अनाहारक	25 बोल 24 बोल
3	भवी –	जीव –	अभवी नो भवी	25 बोल जीव, सिद्ध	भवी –	24 बोल –
4	नो सन्नी.	मनुष्य	नो सन्नी.	2 बोल	सन्नी असन्नी	सभी
5	अलेशी	मनुष्य	अलेशी	2 बोल	लेश्या सात	सभी बोल
6	– – –	– – –	सम्यग्दृष्टि – –	जीव, सिद्ध	सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि मिश्रदृष्टि	19 दंडक 25 बोल सभी
7	–	–	नो संयत	जीव, सिद्ध	संयत आदि 3	सभी
8	– –	– –	– अकषायी	– जीव, सिद्ध	5 कषाय अकषायी	सभी मनुष्य
9	केवलज्ञानी – –	मनुष्य – –	ज्ञानी केवलज्ञानी –	जीव, सिद्ध 2 बोल –	सज्ञानी 4 ज्ञान 4 अज्ञान	19 दंडक 19–1 सभी
10	अयोगी	मनुष्य	अयोगी	2 बोल	4 योग	सभी
11	–	–	2 उपयोग	2 बोल	2 उपयोग	24 बोल
12	– –	– –	अवेदी –	2 बोल –	4 वेद अवेदी	सभी मनुष्य
13	–	–	अशरीरी	सिद्ध	6 शरीर	सभी
14	–	–	–	–	5 पर्याप्ति 5 अपर्याप्ति	सभी बोल

133. माकंदीपुत्र अणगार (भ.श. 18 उ. 3) इस उद्देशक में माकंदीपुत्र अणगार के प्रश्नों के भगवान द्वारा उत्तर है। (1) बंध दो प्रकार का द्रव्य बंध, और भाव बंध। **द्रव्य बंध**–दो प्रकार का प्रयोग बंध, विस्रसा बंध। विस्रसा बंध के 2 भेद (2–3) (1) सादि विस्रसा बंध (बादलों आदि का) (2) अनादि विस्रसा बंध (धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और लोकाकाश ये तीनों आपस में परस्पर बंधे हुए हैं)।

(4) प्रयोग बंध के दो भेद (1) शिथिल बंध (2) गाठ बंध।

(5) **भाव बंध के दो भेद**–मूल प्रकृति बंध (ज्ञानावरणादि 8 कर्म भेद मूल) और उत्तर प्रकृति बंध इसके 148 भेद हैं, इनमें 120 प्रकृतियों से कर्मबंध होता है, जिस दंडक में जितनी प्रकृतियां पावे उतनी कहना।

134. जीवाजीव के 48 द्रव्य जीव के परिभोग में (भ.श. 18 उ. 4) प्राणातिपात आदि 18 पाप और इन 18 पापों का त्याग, पृथ्वीकाय आदि 5 स्थावर, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, अशरीरी जीव, परमाणु पुद्गल, शैलेषी अवस्था को प्राप्त अणगार, स्थूल आकार वाले त्रस कलेवर (बेइन्द्रियादि) इन 48 द्रव्यों में से 24 द्रव्य (18 पाप, 5 स्थावर, बादर कलेवर) ये जीव के परिभोग में आते हैं। शेष 24 (18 पाप से निवृत्ति, तीन अरूपी अस्तिकाय, परमाणु, अशरीरी जीव, शैलेषी अणगार) ये जीव के परिभोग में नहीं आते हैं।

135. जुम्मा (भ.श. 18 उ. 4) (1) जुम्मा यानि युग्म राशि 4 प्रकार की है, 1 कड़जुम्मा (2) तेओगा (3) दावरजुम्मा (4) कलिओगा।

(2) जिसमें 4 का भाग दे शेष कुछ नहीं रहे वह कड़जुम्मा (कृतयुग्म), जिसमें शेष 3 रहे वह तेओग (त्र्योज), शेष 2 रहे तो द्वापर युग्म, और शेष 1 रहे तो कलिओगा।

(3) नैरयिक जघन्य पद में कड़जुम्मा है, उत्कृष्ट पद में तेओगा, मध्यम पद में सिय कड़जुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा सिय कलिओगा है। इसी प्रकार 10 भवनपति तक कहना।

(4) वनस्पति के जीव जघन्य और उत्कृष्ट पद से अपद है, क्योंकि ये दोनों पद निश्चित संख्या रूप है, जो यहाँ घटित नहीं हो सकते, अत: मध्यम पद ही होता है इसमें चारों जुम्मा होते हैं। ऐसा ही सिद्ध में भी है, वहाँ भी बढ़ते ही रहते हैं। वनस्पति में कम होते हैं।

(5) तीन विकलेन्द्रिय और चार स्थावर (वनस्पति छोड़कर) जघन्य पद में कड़जुम्मा और उत्कृष्ट पद में दावरजुम्मा है। मध्यम पद में चारों जुम्मा है। तिर्यंच पंचेन्द्रिय,

मनुष्य, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक ये सभी नैरयिकों की तरह है। सिद्ध जीव वनस्पतिकाय की तरह है।

(6) स्त्रियाँ (तिर्यंचणी, मनुष्यणी, देवांगना) जघन्य और उत्कृष्ट पद में कड़जुम्मा है, मध्यम पद में चारों हो सकती है। मध्यम पद में चारों भंग सभी में होते हैं।

(7) जघन्य आयुष्य वाले अंधक (अप्रकाशक या सूक्ष्मकायिक, वरा) अग्निकायिक जीव है जितने हैं, उत्कृष्ट संख्या है, उतने ही उत्कृष्ट आयुष्य वाले भी है।

136. देवता की विकुर्वणा (भ.श. 18 उ. 5) (1) एक असुरकुमारा वास के देवों में से एक विभूषित प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला, दर्शनीय, सुंदर, मनोहर लगता है, दूसरा नहीं लगता, कारण कि असुरकुमार जब देवशय्या पर उत्पन्न होता है, तब अविभूषित (अलंकारादि से रहित) होता है, बाद में क्रमशः अलंकार पहनकर विभूषित होता है। देव दो प्रकार के वैक्रिय (विभूषित) शरीर और अवैक्रिय (अविभूषित) शरीर वाले होते हैं। इस मनुष्य लोक में भी दो प्रकार के मनुष्य एक अलंकारों से विभूषित, दूसरा अलंकृत न हो तो जो अलंकृत होता है, वह सुंदर लगता है। इसी तरह भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक देवों में जानना।

(2) एक नरकावास में दो नेरियों में से एक नेरिया महाकर्म यावत् महावेदना वाला और दूसरा अल्पकर्म अल्पवेदना वाला होता है, उसका कारण नारक दो प्रकार के- मायी मिथ्यादृष्टि, अमायी समदृष्टि। मायी मिथ्यादृष्टि महाकर्म महावेदना वाला, अमायी समदृष्टि अल्प कर्म अल्पवेदना वाला होता है। 16 दंडक (एकेन्द्रिय) विकलेन्द्रिय छोड़कर ये मायी मिथ्यादृष्टि ही होते हैं) में इसी प्रकार जानना।

(3) नारकी से निकलकर तुरन्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय में जाने वाला जीव नारकी की ही आयु को वेदता है, मरने के समय चरम समय में भी उसी भव की आयु भोगेगा इसी तरह मनुष्य का भी कहना। वह तिर्यंच और मनुष्य के आयुष्य को उदयाभिमुख करता है।

(4) इसी प्रकार असुरकुमार मरकर पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होने वाले हैं तो भी असुरकुमार की आयु भोगेंगे, किन्तु पृथ्वीकायिक की आयुष्य को उदयाभिमुख करेंगे। जो जिस गति में रहा है, उसका आयुष्य भोगेगा यह कथन वैमानिक तक कहना किन्तु विशेषता यह कि जो पृथ्वीकायिक पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकाय का आयुष्य भोगकर दूसरे पृथ्वीकाय के आयुष्य को उदयाभिमुख करते है, ऐसा मनुष्यों तक स्वस्थान पर स्थान आसरी कहना।

(5) एक असुरकुमार देव ऋजु विकुर्वणा करना चाहता है या वक्र करना चाहता है तो जैसी चाहे वैसी विकुर्वणा कर लेता है, दूसरा असुरकुमार ऐसा नहीं कर सकता ऋजु करना चाहे तो वक्र हो जाती है, वक्र करना चाहे तो ऋजु हो जाती है। इसका कारण यह कि मायी मिथ्यादृष्टि देव जैसे चाहे वैसे ऋजु या वक्र विकुर्वणा नहीं कर सकते हैं, जो अमायी समदृष्टि है वे जैसी चाहे वैसी कर सकते हैं। मायी मिथ्यादृष्टि देव के माया और मिथ्यादर्शन निमित्तक मंद रस वाले वैक्रिय नामकर्म का बंध किया है और अमायी समदृष्टि ने आर्जवता और सम्यक्दर्शन निमित्तक तीव्र रस वाले वैक्रिय नामकर्म का बंध किया है।

137. परमाणु आदि (भ.श. 18 उ. 6) (1) प्रत्येक पुद्गल स्कंध में व्यावहारिकनय से वर्णादि एक-एक ही होता है, परन्तु निश्चयनय से 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श होते हैं- जैसे गुड़ पीला, सुगंधी, मीठा आदि होता है, परन्तु निश्चयनय से 20 बोल वर्णादि होते हैं।

(2) भंवरे में व्यवहारनय की अपेक्षा कालावर्ण है और निश्चयनय से वर्णादि 20 बोल हैं।

(3) तोते की पंख व्यवहारनय से नीली निश्चयनय से 20 वर्णादि (5 वर्ण 2 गंध 5 रस 8 स्पर्श) मजीठ में लालवर्ण, हल्दी में पीला, शंख में सफेद, कुट (सुगंधी पत्ती) में सुगंध, मुर्दा में दुर्गंध, नीम में कड़वा रस, कविठ में कसायला, इमली में खट्टा, खांड में मधुर, वज्र में कठोर (कर्कश) स्पर्श, मक्खन में कोमल स्पर्श, पत्थर में भारी स्पर्श, बोरडी के पत्ते में हल्का (लघु) स्पर्श, बर्फ में ठंडा स्पर्श, अग्नि में उष्ण स्पर्श, तेल में चिकना (स्निग्ध) स्पर्श है, और निश्चयनय से इन सबमें पाँच वर्ण, दो गंध, 5 रस 8 स्पर्श है।

(4) राख में एक लूखा स्पर्श (व्यवहारनय से) है, परन्तु निश्चयनय से 20 बोल है।

(5) एक परमाणु पुद्गल में 1 वर्ण, 1 गंध, 1 रस और दो स्पर्श होते हैं। 5 वर्णादि होते हैं।

(6) एक द्वि प्रदेशी में उत्कृष्ट 2+2+2+4=10 वर्णादि होते हैं।

एक तीन प्रदेशी में उत्कृष्ट 3+2+3+4=12 वर्णादि होते हैं।

एक चार प्रदेशी में उत्कृष्ट 4+2+4+4=14 वर्णादि होते हैं।

एक पाँच प्रदेशी में उत्कृष्ट 5+2+5+4=16 वर्णादि होते हैं।

इसी प्रकार पाँच प्रदेशी की तरह छः प्रदेशी के और यावत् संख्यात, असंख्यात प्रदेशी तक 16 वर्णादि होते हैं।

(7-8) सूक्ष्म परिणत अनंत प्रदेशी में भी 16 वर्णादि होते हैं। बादर अनंत प्रदेशी स्कंध में 20 वर्णादि होते है।

138. यक्षावेश और उपधि आदि (भ.श. 18 उ. 7) (1) केवली यक्षावेश से आविष्ट नहीं होते, वे मृषा भाषा और मिश्रभाषा नहीं बोलते, दूसरे जीवों का उपघात न करने वाली निरवद्य सत्य भाषा और व्यवहार भाषा बोलते हैं। (2) उपधि के तीन प्रकार कर्म, शरीर, बाह्य भंडोपकरण।

(3) नारकी और एकेन्द्रिय में 2 उपधि पायी जाती है बाह्य भंडोपकरण उपधि नहीं होती। बाकी 18 दंडक में तीनों उपधि पाई जाती है।

(4) उपधि के सचित, अचित्त, मिश्र तीन प्रकार है। 24 दंडक में तीनों उपधि है, सचित उपधि (शरीर) अचित उपधि (उत्पत्ति स्थान) श्वासोच्छवास युक्त सचेतना चेतन रूप मिश्र उपधि है।

(5) परिग्रह के तीन प्रकार-कर्म परिग्रह, शरीर परिग्रह, वस्त्रपात्रादि रूप बाह्य उपकरण परिग्रह। उपरोक्त बताई तीन उपधियों को ममत्व भाव से ग्रहण करना परिग्रह कहलाता है। नरक और एकेन्द्रियों में दो परिग्रह होते हैं कर्म और शरीर, शेष 8 दंडकों में तीनों परिग्रह होते हैं।

(6) परिग्रह के तीन-सचित, अचित और मिश्र प्रकार है ये तीनों 24 दंडक में होते हैं।

(7) योगों को स्थिर करना प्रणिधान है, मन वचन काया की सुप्रवृत्ति सुप्रणिधान और दुष्प्रवृत्ति दुष्प्रणिधान है। प्रणिधान तीन है-मन, वचन, काय प्रणिधान। पाँच स्थावर में एक काय प्रणिधान। तीन विकलेन्द्रियों में दो मन, वचन प्रणिधान। बाकी 16 दंडकों में तीनों।

(8) दुष्प्रणिधान तीन है पाँच स्थावरों में काय दुष्प्रणिधान, विकलेन्द्रियों में 2 और 16 दंडकों में तीनों दुष्प्रणिधान होते हैं।

(9) सुप्रणिधान तीन हैं-मनुष्य में तीनों सुप्रणिधान होते हैं। शेष 23 दंडकों में नहीं होते हैं।

139. मंडुक (मद्रक) श्रावक (भ.श. 18 उ. 7) राजगृही के गुणशील उद्यान में श्रमण भगवान महावीर के पधारने के समाचार सुनकर जीवाजीव का ज्ञाता मंडुक श्रावक दर्शनार्थ पैदल निकलकर आ रहा था, रास्ते में राजगृही के बाहर कई अन्य-तीर्थी कालोदायी सेलोदायी आदि रहते थे, उन्होंने मंडुक को रोका और पूछने लगे

कि तुम्हारे भगवान पंचास्तिकाय बताते हैं, तुम हमको भी बताओ कि वे कहाँ है? कैसी है? हम भी देखें? मंडुक श्रावक ने कहा-वस्तुओं के कार्य से उसका अस्तित्व देखा व जाना जाता है, कई पदार्थ ऐसे हैं जो निष्क्रिय रहते हैं, कुछ कार्य नहीं करते, उन्हें प्रत्यक्ष जाना नहीं जा सकता, देखा नहीं जा सकता है। धर्मास्तिकाय आदि पाँच अस्तिकाय निश्चयनय से सक्रिय होने से मैं जानता हूँ, देखता नहीं। व्यवहारनय से जीव और पुद्गल सक्रिय है, जानता, देखता हूँ, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय अक्रिय है अत: मैं इनको जानता देखता नहीं। अन्य तीर्थियों ने आक्षेप पूर्वक कहा अरे! तुम कैसे श्रावक हो जानते नहीं, देखते नहीं फिर भी मानते हो! तब मंडुक ने कहा। हवा (वायुकाय) चलती है, उसे देखते हो? सुगंध आ रही है तुम देख रहे हो? मेरे शब्द सुन रहे हो, देखते हो? अरणिकाष्ठ में अग्नि है देखते हो? समुद्र के पार बहुत पदार्थ हैं, देखते हो? देवलोक में अनेक रूप है देवलोक है, देखते हो? अन्य तीर्थियों ने कहा मंडुक हम नहीं देखते है। मंडुक ने पूछा तुम इनको मानते हो, उन्होंने कहा हाँ मानते हैं। तब मंडुक ने कहा हे आयुष्मान्! हम या तुम जिन पदार्थों को नहीं जानते या नहीं देखते उन-उन पदार्थों के लिए ऐसा कहोगे तो लोक में कितने ही पदार्थों का अभाव हो जायेगा। ऐसा कह उन्होंने अन्य तीर्थियों को निरूत्तर कर दिया। भगवान की सेवा में पहुँच वंदन नमस्कार कर पर्युपासना करने लगा। तब भगवान ने उसके सही सटीक उत्तर की प्रशंसा धर्म परिषद् में की और फरमाया हे मंडुक! तुमने सही और बराबर उत्तर दिया जो कोई जाने बिना, देखे बिना, सुने बिना, अदृष्ट, अश्रुत, असम्मत या अविज्ञान अर्थ को, हेतु को, या प्रश्न के उत्तर को कहता है, जतलाता है, बताता या दर्शाता है, वह अरिहंतों की, अरिहंत प्ररूपित धर्म की, केवली और केवली प्ररूपित धर्म की आशातना करता है। मंडुक श्रावक प्रसन्न और संतुष्ट होकर वंदन कर वापस चला गया। गौतम स्वामी ने पूछा कि यह मंडुक दीक्षा लेगा या नहीं, भगवान ने फरमाया दीक्षा नहीं लेगा, बहुत वर्षों तक श्रावकपना पालकर पहले देवलोक के अरूणाभ विमान में देव बनकर, वहाँ से चवकर, महाविदेह में जन्म लेकर सिद्धबुद्ध मुक्त होगा।

140. पुण्य खपाने का (भ.श. 18 उ. 7) (1) कोई भी महर्द्धिक देव लवण समुद्र के चक्कर लगाकर शीघ्र आने में समर्थ है, इसी तरह धातकी खंड द्वीप यावत् रूचकवर द्वीप तक ऐसा जानना। आगे के द्वीप समुद्रों में जा, आ सकते हैं, परन्तु प्रयोजन भाव से परिक्रमा नहीं लगाते हैं।

(2) अनंत शुभ प्रकृति रूप कर्मों को देवता उन शुभ पुण्यों को इस प्रकार खपाते हैं।

क्रमांक	पुण्य	देवता	वर्ष में (पुण्य खपावे)
1	अनंत शुभ पुण्य	वाणव्यंतर देव	100 वर्ष में खपावे
2	इतने पुण्य	नव निकाय के देव	200 वर्ष में खपावे
3	इतने पुण्य	असुरकुमार के देव	300 वर्ष में खपावे
4	इतने पुण्य	ग्रह, नक्षत्र, तारा देव	400 वर्ष में खपावे
5	इतने पुण्य	चन्द्र, सूर्य देव	500 वर्ष में खपावे
6	इतने पुण्य	पहले, दूसरे देवलोक के देव	1000 वर्ष में खपावे
7	इतने पुण्य	तीसरे, चौथे देवलोक के देव	2000 वर्ष में खपावे
8	इतने पुण्य	पाँचवे, छठे देवलोक के देव	3000 वर्ष में खपावे
9	इतने पुण्य	सातवे, आठवे देवलोक के देव	4000 वर्ष में खपावे
10	इतने पुण्य	नौवे से बारहवे देवलोक के देव	5000 वर्ष में खपावे
11	इतने पुण्य	पहली त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	एक लाख वर्ष में खपावे
12	इतने पुण्य	दूसरी त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	दो लाख वर्ष में खपावे
13	इतने पुण्य	तीसरी त्रिक नव ग्रैवेयक के देव	तीन लाख वर्ष में खपावे
14	इतने पुण्य	चार अणुत्तर विमान के देव	चार लाख वर्ष में खपावे
15	इतने पुण्य	सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव	पाँच लाख वर्ष में खपावे

जिस प्रकार अनेक मन भार वाले लकड़ी जलती होली में एक रात्रि में जलकर भस्म हो जाता है, उसी लकड़े की अगरबत्तियाँ बनाने के बाद जलाने पर वर्षों बीत जाते हैं, वैसे ही हास्य, कंदर्पादि में पुण्य क्षीण शीघ्र हो जाते हैं। इन्द्रिय, कषाय, योग को संयमित (वश) में करने वालों के पुण्य खपने में वर्षों लग जाते हैं।

141. परमाणु (भ.श. 18 उ. 8) (1) छद्मस्थ परमाणु पुद्‌गल को कोई जानता है, परन्तु देखता नहीं। कोई जानता भी नहीं देखता भी नहीं। इसी तरह दो प्रदेशी से असंख्यात प्रदेशी तक कहना।

(2) अनंत प्रदेशी स्कंध को कोई जानता है, देखता भी है, कोई जानता है, परन्तु देखता नहीं, कोई जानता भी नहीं देखता भी नहीं, छद्‌मस्थ की तरह आधो अवधिज्ञानी तक कहना।

(3) परमावधि ज्ञानी का ज्ञान साकार (विशेष ग्राहक) और दर्शन (अनाकार) (सामान्य ग्राहक) होता है, इसलिए परमाणु पुद्‌गल यावत् अनंत प्रदेशी को जानता है, देखता है। परन्तु जिस समय जानता है, उस समय देखता नहीं और जिस समय

देखता है, उस समय जानता नहीं है। इसी तरह केवलज्ञानी का है। जानना देखना एक समय में नहीं होता, केवली अनन्तर समय से अन्य अन्तर्मुहूर्त से देखते है।

142. भवी द्रव्य (भ.श. 18 उ. 9) जिस जीव ने जहाँ की आयु का बंध कर लिया है, वह उसका (आगे की गति) भवि द्रव्य है, भावी नरक पर्याय का कारण तिर्यंच पंचेन्द्रिय अथवा मनुष्य भव्य द्रव्य नैरयिक कहलाता है (नरकायुष्य बांधने से) वहाँ पर उत्पन्न होने योग्य है। इसी तरह भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक 13 दंडक में।

(2) जो कोई तिर्यंच, मनुष्य या देव भव में रहा हुआ जीव पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होने के योग्य है, वह भव्य द्रव्य पृथ्वीकायिक कहलाता है। इसी तरह अप्काय, वनस्पतिकाय का है। जो कोई तिर्यंच अथवा मनुष्य भव में रहा जीव, अग्निकाय, वायुकाय या तीन विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होने योग्य है, उसे भव्य द्रव्य अग्निकायक आदि कहना। जो कोई नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य देव या तिर्यंच पंचेन्द्रिय में रहा जीव तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होने योग्य है, उसे भव्य द्रव्य पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिक कहा जाता है। इसी तरह मनुष्य का भी कहना।

(3-4-5) स्थिति-नाम	भव्य द्रव्य	स्थिति जघन्य	उत्कृष्ट
भव्य द्रव्य नारकी	सन्नी असन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य	अन्तर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व
भव्य द्रव्य देव	सन्नी असन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य	अन्तर्मुहूर्त	3 पल
भव्य द्रव्य पृथ्वी पानी वनस्पति	22 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	साधिक 2 सागर
भव्य द्रव्य तेउ, वायु, विकलेन्द्रिय	10 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	करोड़ पूर्व
भव्य द्रव्य तिर्यंच पंचेन्द्रिय	24 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	33 सागरोपम
भव्य द्रव्य मनुष्य	24 दंडक	अन्तर्मुहूर्त	33 सागरोपम

143. स्पर्शना (भ.श. 18 उ. 10) (1) भवितात्मा अणगार वैक्रिय लब्धि से तलवार की धार, उस्तरे की धार पर रह सकते हैं, छेदन नहीं होता। अग्निशिखा से निकल सकते हैं, पुष्कर संवर्त मेघ के बीच में से निकल सकते हैं, भींजते नहीं। गंगा सिंधु महानदियों के उल्टे प्रवाह में निकल सकते हैं, बहते नहीं। पानी के भंवर या पानी की बूँद में प्रवेश कर सकते हैं।

(2) छोटी वस्तु बड़ी वस्तु से व्याप्त होती है। अतः परमाणु पुद्‌गल वायुकाय से स्पर्शित है। इसी तरह दो प्रदेशी से असंख्यात प्रदेशी स्कंध का कहना। अनंत प्रदेशी सिय स्पर्शा है सिय नहीं।

(3) मशक वायुकाय से स्पर्शी हुई है चौतरफ वायु होती है। वायुकाय मशक से नहीं स्पर्शी है।

(4) रत्नप्रभा आदि 7 नरक, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर विमानों, सिद्धशिला इन सभी 33 स्थानों के नीचे वर्णादि 20 बोल अन्योन्यबद्ध, अन्योन्य स्पृष्ट, यावत् अन्योन्य संबद्ध है। भरे हैं।

144. सोमिल ब्राह्मण के प्रश्नोत्तर (भ.श. 18 उ. 10) वाणिज्य ग्राम नगर में सोमिल ब्राह्मण रहता था। चार वेद आदि ब्राह्मण शास्त्रों में कुशल था उसके 500 शिष्य थे, धन कुटुंब सम्पन्न था। सुखपूर्वक कुटुम्ब का निर्वाह करता था। भगवान महावीर वाणिज्य ग्राम नगर के द्युति पलास उद्यान में पधारे, यह समाचार सुन धर्मदेशना सुनने जनता गई, सोमिल भी अपने एक सौ शिष्यों को साथ लेकर प्रश्न करने के उद्देश्य से भगवान के समीप पहुँचा उसने मन में सोचा यदि उत्तर नहीं दिया तो मेरे प्रश्नों से निरूत्तर करूँगा, तद्नुसार उसने प्रश्न किये-

1 से 5 सोमिल-हे भंते! आपके यात्रा, यापनीय, अव्याबाध और प्रासुक विहार है? **भगवान**-हे सोमिल! तप, संयम, नियम, स्वाध्याय, ध्यान और आवश्यक योगों में यतना है, वह मेरी **यात्रा** है। **यापनीय**-इन्द्रिय यापनीय और नोइन्द्रिय यापनीय, श्रोत्रेन्द्रियादि पाँच इन्द्रियाँ मेरे अधीन प्रवर्त्तती है, यह मेरे इन्द्रिय यापनीय है, और क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय मेरे क्षय हुए हैं, उदय में नहीं आते ये मेरे नो इन्द्रिय यापनीय हैं। वात पित्त कफ और सन्निपात से पैदा होने वाले शारीरिक रोग मेरे उपशांत हो गये हैं, उदय में नहीं आते, ये मेरे अव्याबाध हैं। आराम, उद्यान, देवकुल, सभा, प्याऊ आदि स्त्री, नपुंसक, पशु से रहित निर्दोष और एषणीय, पट्ट, पाटला, शैया संस्तारक प्राप्त कर मैं विचरता हूँ यही मेरे **प्रासुक विहार** हैं।

(6) सरिसव भक्ष्य है या आपके अभक्ष्य? **भगवान**-हे सोमिल सरिसव भक्ष्य भी है, अभक्ष्य भी है। ब्राह्मण शास्त्र में सरिसव के दो प्रकार-मित्र सरिसव और धान सरिसव (सरसों)। मित्र सरिसव तीन तरह के (1) साथ जन्मे (2) साथ बड़े हुए (3) साथ खेले, यह तीनों प्रकार की मित्र सरिसव अभक्ष्य है। धान सरिसव के दो भेद-(सरसों) शस्त्र परिणत, अशस्त्र परिणत। अशस्त्र परिणत तो श्रमण निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य है, शस्त्र परिणत के दो भेद-एषणीय (निर्दोष) और अनेषणीय (सदोष), अनेषणीय अभक्ष्य है। एषणीय के दो भेद-जाँची (माँगी) हुई, नहीं

जाँची (नहीं माँगी) हुई, तो अजाँची (नहीं जाँची) अभक्ष्य है। जाँची हुई के दो भेद मिली और नहीं मिली। नहीं मिली अभक्ष्य है और मिली हुई भक्ष्य है।

(7) मास आपके भक्ष्य है या अभक्ष्य? हे सोमिल मास भक्ष्य भी है, अभक्ष्य भी। (मास प्राकृत भाषा का शब्द है माष यानि उड़द, मास यानि महीना) तुम्हारे ब्राह्मण शास्त्रों में मास दो प्रकार के कहे है द्रव्य मास और काल मास। कालमास श्रावण से आसाढ़ 12 महीना, ये अभक्ष्य है। द्रव्य मास के दो भेद अर्थमास और धान्य मास, सोने-चाँदी तौलने के अर्थ मास अभक्ष्य है। धानमास धान सरिसव की तरह कहना।

(8) कुलत्था आपके भक्ष्य है अभक्ष्य? हे सोमिल! कुलत्था भक्ष्य भी अभक्ष्य भी। तुम्हारे ब्राह्मण शास्त्रों में कुलत्था 2 प्रकार के-स्त्री कुलत्था (कुली स्त्री), धान कुलत्था। स्त्री कुलत्था-तीन-कुल कन्या, कुल वधु, कुल माता ये तीनों श्रमण निर्ग्रंथों के अभक्ष्य है। धान कुलत्था (कुलथ नाम का धान) धान सरिसव की तरह कहना।

(9) आप एक है या दो? अक्षय, अव्यय, अवस्थित हैं या अनेक भूत, वर्तमान, भविष्य परिणामों के योग्य है? हे सोमिल! मैं एक भी हूँ, दो भी है यावत् भूत वर्तमान भावी परिणामों के योग्य भी हूँ। द्रव्य रूप से एक हूँ, ज्ञान दर्शन रूप से दो हूँ। आत्मप्रदेश की अपेक्षा, अक्षय, अव्यय, अवस्थित हूँ। उपयोग की अपेक्षा अनेक भूत वर्तमान भावी तीनों ही कालों के परिणामों के योग्य हूँ। यह सुन सोमिल को प्रतिबोध हुआ, श्रावक व्रत लिया, अनेक वर्ष व्रताराधन कर देवलोक में उत्पन्न एकाभवतारी बना। महाविदेह में मनुष्य भव में दीक्षा लेकर सभी कर्मों से मुक्त होकर मोक्ष जावेंगे।

145. बारह द्वार (भ.श. 19 उ. 10) (भ.श. 20 उ. 1) (1) स्याद् द्वार (2) लेश्या (3) दृष्टि (4) ज्ञान (5) योग द्वार (6) उपयोग (7) किमाहार (8) प्राणातिपात (9) उत्पाद (10) स्थिति (11) समुद्घात (12) उद्वर्तनाहार

(1) स्याद् द्वार-पृथ्वीकायिक जीव अलग-अलग (प्रत्येक) आहारी है, प्रत्येक परिणामी है, वे अलग-अलग शरीर बांधते हैं, फिर आहार करते हैं, परिणमाते हैं, और अपना शरीर बांधते हैं पृथ्वीकाय जीव साधारण शरीर नहीं बांधते हैं, अलग अलग शरीर बांधते हैं।

(2) लेश्या द्वार-पृथ्वीकायिक जीवों के कृष्ण, नील, कापोत और तेजो ये 4 लेश्याएँ होती है।

(3) दृष्टि द्वार–पृथ्वीकायिक जीव मिथ्यादृष्टि होते हैं। समदृष्टि, मिश्रदृष्टि नहीं होते।

(4) ज्ञान द्वार–इनके 2 अज्ञान नियमा होते हैं मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान। ज्ञानी नहीं होते।

(5) योग द्वार–पृथ्वीकायिक जीवों में एक काययोग होता है। मन, वचन दो योग नहीं होते।

(6) उपयोग द्वार–पृथ्वीकायिक जीव साकारोपयोगी भी है, निराकारोपयोगी भी है।

(7) किमाहार द्वार–द्रव्य से अनंत प्रदेशी, क्षेत्र से असंख्यात प्रदेशों में रहे, काल से जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट स्थिति वाले, भाव से वर्ण, गंध, रस, स्पर्श वाले पुद्‌गलों का, व्याघात आसरी तीन दिशा, चार दिशा या कदाचित् 5 दिशा का और निर्व्याघात आसरी नियमा 6 दिशा का आहार करते हैं। पृथ्वीकायिक जीव जो आहार करते हैं उसका चय (संग्रह) होता है, चय हुए आहार का असार भाग बाहर निकलता है, सारभाग इन्द्रियपणे परिणमता है। उन जीवों को मैं आहार करता हूँ इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन, वचन नहीं होता है, तो भी वे आहार तो करते हैं। उन्हें हम अनिष्ट या ईष्ट का स्पर्श अनुभव करते हैं, ऐसी संज्ञा, प्रज्ञादि नहीं होता तो भी वे अनुभव तो करते ही हैं।

(8) प्राणातिपात द्वार–प्राणातिपात, मृषावाद आदि 18 पाप स्थानों में ये जीव रहे हुए हैं, हालाँकि इनके वचनादि नहीं है फिर भी अविरति के कारण मृषावादादि–ये रहे हुए हैं।

(9) उत्पाद द्वार–पृथ्वीकायिक जीव तिर्यंच, मनुष्य और देवों से आकर उत्पन्न होते हैं।

(10) स्थिति द्वार–इनकी जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट बावीस हजार वर्ष की स्थिति है।

(11) समुद्‌घात द्वार–इनके तीन वेदना, कषाय और मारणान्तिक समुद्‌घात होती है। पृथ्वीकायिक जीव मारणान्तिक समुद्‌घात करके भी और नहीं करके भी मरते हैं।

(12) उद्‌वर्तना द्वार–पृथ्वीकायिक जीव मरकर तिर्यंच और मनुष्य इन दो गतियों में जाते हैं।

(13) पृथ्वीकायिक जीवों की तरह अप्काय का भी कथन है, विशेषता यह कि उत्कृष्ट स्थिति सात हजार वर्ष हैं। अन्य विवरण चार्ट से समझ सकते हैं–
जो पृथ्वीकायिक से विशेष है वह दर्शाया है।

(14 से 27)

द्वार		तीन स्थावर–अग्नि, वायु वनस्पति	तीन विकलेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
1	स्याद् द्वार	वनस्पति साधारण शरीर बांधते हैं	प्रत्येक शरीर	प्रत्येक शरीर
2	लेश्या द्वार	अग्नि–3	लेश्या 3	6 लेश्या
3	दृष्टि द्वार	पृथ्वीकायवत्	दो दृष्टि	तीन दृष्टि
4	ज्ञान द्वार	पृथ्वीकायवत्	2 ज्ञान 2 अज्ञान	4 ज्ञान 3 अज्ञान
5	योग	पृथ्वीकायवत्	2 योग (काय, वचन)	3 योग
6	उपयोग	पृथ्वीकायवत्	2 उपयोग	2 उपयोग
7	किमाहार	बादर वनस्पति (निगोद) नियमा 6 दिशा	नियमा 6 दिशा	नियमा 6 दिशा
8	प्राणातिपातादि	पृथ्वीकायवत्	18 पाप पाये जाते हैं	18 पाप की भजना
9	उत्पाद	अग्नि तिर्यंच मनुष्य	मनुष्य, तिर्यंच से	चारों गति से सर्वार्थ सिद्ध से भी
10	स्थिति	अग्नि 3 दिन रात, वायु 3000 वर्ष, वनस्पति 10000 वर्ष	बेइन्द्रिय 12 वर्ष, तेइन्द्रिय–49 दिन, चौइन्द्रिय 6 माह	उत्कृष्ट 33 सागर
11	समुद्‌घात	वायु में 4	3 समुद्‌घात (दोनों मरण)	6 समुद्‌घात (दोनों मरण)
12	उद्‌वर्तना	अग्नि–तिर्यंच	मनुष्य, तिर्यंच	चारों गति सर्वार्थ सिद्ध तक मनुष्य–मोक्ष

(28) अल्प बहुत्व द्वार– सबसे थोड़े पंचेन्द्रिय, उससे चौइन्द्रिय विशेषाधिक, उससे तेइन्द्रिय विशेषाधिक, उससे बेइन्द्रिय विशेषाधिक, उससे तेउकाय असंख्यातगुणा, उससे पृथ्वीकायिक विशेषाधिक, उससे अप्काय विशेषाधिक, उससे वायुकाय विशेषाधिक, उससे वनस्पतिकाय अनंतगुणा।

146. अवगाहना के 44 बोल (भ.श. 19 उ. 3) एकेन्द्रिय के संपूर्ण जीवों के 22 भेद कहे है, जिनकी जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना ये 44 बोल होते हैं। इस प्रकार अल्प बहुत्व–

संख्या	एकेन्द्रिय जीव का भेद	अवगाहना का अल्प बहुत
1	अपर्याप्त सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना	सबसे छोटी
2	अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यगुणी
3	अपर्याप्त सूक्ष्म अग्निकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यगुणी

4	अपर्याप्त सूक्ष्म अप्काय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यगुणी
5	अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यगुणी
6	अपर्याप्त बादर वायुकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यगुणी
7	अपर्याप्त बादर अग्निकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है
8	अपर्याप्त बादर अप्काय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है
9	अपर्याप्त बादर पृथ्वीकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है
10	अपर्याप्त बादर प्रत्येक शरीरी वनस्पति की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है
11	अपर्याप्त बादर निगोद की जघन्य अवगाहना	आपस में तुल्य
12	पर्याप्त सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है
13	अपर्याप्त सूक्ष्म निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना	उससे विशेषाधिक है
14	पर्याप्त सूक्ष्म निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना	उससे विशेषाधिक है
15	पर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणा है
16	अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की उत्कृष्ट अवगाहना	उससे विशेषाधिक है
17	पर्याप्त सूक्ष्म वायुकाय की उत्कृष्ट अवगाहना	उससे विशेषाधिक है
18	पर्याप्त सूक्ष्म अग्निकाय की जघन्य अवगाहना	उससे असंख्यातगुणी है

इस तरह 18-19-20 सूक्ष्म अग्निकाय के, 21-22-23 सूक्ष्म अप्काय के, 24-25-26 सूक्ष्म पृथ्वीकाय के 27-28-29 बादर वायुकाय के, 30-31-32 बादर अग्निकाय के, 33-34-35 बादर अप्काय के, 36-37-38 बादर पृथ्वीकाय के, 39-40-41 बादर निगोद के जीवों की अवगाहना है। इनमें सूक्ष्म अग्निकाय के भेदों से आगे-आगे के भेद असंख्यातगणी समझे, परन्तु अंदर में (स्वयं से स्वयं के भेद जैसे सूक्ष्म अपकाय के 24-25-26 ये आपस में) विशेषाधिक समझें। 42-43-44 प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय के तीनों बोल की अवगाहना असंख्यातगुणी-असंख्यातगुणी है। जैसे 42 से 43 असंख्यातगुणी, 43 से 44 असंख्यातगुणी है। सबसे अधिक अवगाहना प्रत्येक शरीर बादर वनस्पति के पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना 1000 योजन साधिक है। सबसे छोटी सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना है। शेष सभी बोलों की क्रमशः कुछ अधिक अवगाहना है। प्रत्येक शरीरी वनस्पति और बादर निगोद के अपर्याप्त की अवगाहना एक सरीखी (तुल्य) है।

147. सूक्ष्म बादर (भ.श. 19 उ. 3) (1) पृथ्वी से अप्काय सूक्ष्म है, अप्काय से तेउकाय सूक्ष्म है, उससे वायुकाय सूक्ष्म है, सबसे सूक्ष्म वनस्पतिकाय है (सूक्ष्म वनस्पतिकाय की अपेक्षा सबसे सूक्ष्म है)।

(2) बादर में-वायुकाय से तेउकाय बादर है, उससे अप्काय बादर है, अप्काय से पृथ्वीकाय बादर है, पृथ्वीकाय से वनस्पतिकाय बादर है। (प्रत्येक वनस्पति की अपेक्षा से)।

(3) सबसे छोटा सूक्ष्म वनस्पति का शरीर है। चार स्थावर में जघन्य उत्कृष्ट अवगाहनाएँ सभी अंगुल के असंख्यातवें भाग की है अर्थात् उक्त 43 बोलों की अवगाहनाएँ अंगुल के असंख्यातवें भाग की हैं। केवल 44वें बोल में उत्कृष्ट एक हजार योजन साधिक की है। उक्त 44 बोलों में बादर पृथ्वीकाय का नवमां नंबर आता है, अर्थात् आठ बार असंख्यातगुणा करने जितनी अवगाहना है।

(4) पृथ्वीकाय के शरीर की इस अवगाहना (नवमे नंबर) के होने पर भी, चक्रवर्ती सम्राट के चंदन घिसने वाली दासी जो तीसरे-चौथे आरे में जन्मी, जवान, बलवान, निरोग, स्वस्थ, चतुर और वज्र (हीरे) को चिमटी से मसलकर चूर्ण बना दे, ऐसी दासी चूर्ण बनाने वाली वज्रशिला पर वज्र के लोढ़े (गोल पत्थर) से पृथ्वीकाय के पिण्ड को 21 बार पीसे तो भी कितनेक पृथ्वीकायिक जीवों का उस शिला और लोढ़े से मात्र स्पर्श होता है, कितनेक का तो स्पर्श भी नहीं होता कितनेक को संघट्टा, और पीड़ा होती है, कितनेक को नहीं होती, कितनेक मरते हैं, कितनेक नहीं मरते, कितनेक पिसे जाते हैं, कितनेक नहीं पिसे जाते। यह सूक्ष्म अवगाहना है।

(5) पीड़ा का अनुभव-जैसे किसी बलवान, कला में पारंगत पुरुष ने किसी जीर्ण, शरीर वाले, दुर्बल रोगी बूढ़े आदमी के सिर पर अपने दोनों हाथों से चोट मारी हो उस बूढ़े व्यक्ति को कैसी पीड़ा होती है, उससे भी अधिक अनिष्ट, अप्रिय, अमनोज्ञ पीड़ा जब पृथ्वीकाय के जीव पैर के नीचे दबते हैं, तब उन्हें होती है। इसी तरह अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय इन पाँच स्थावरों की पीड़ा का कहना।

148. महाआश्रव (भ.श. 19 श. 4) आश्रव, क्रिया, वेदना, निर्जरा इन चार के महा और अल्प विशेषण लगने से 16 भांगे होते हैं।

1 महाआश्रव, महाक्रिया, महावेदना, महानिर्जरा
2 महाआश्रव, महाक्रिया, महावेदना, अल्पनिर्जरा
3 महाआश्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, महानिर्जरा
4 महाआश्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, अल्पनिर्जरा
5 महाआश्रव अल्पक्रिया महावेदना महानिर्जरा

6 महाआश्रव अल्पक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
7 महाआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
8 महाआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा
9 अल्पआश्रव महाक्रिया महावेदना महानिर्जरा
10 अल्पआश्रव महाक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
11 अल्पआश्रव महाक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
12 अल्पआश्रव महाक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा
13 अल्पआश्रव अल्पक्रिया महावेदना महानिर्जरा
14 अल्पआश्रव अल्पक्रिया महावेदना अल्पनिर्जरा
15 अल्पआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना महानिर्जरा
16 अल्पआश्रव अल्पक्रिया अल्पवेदना अल्पनिर्जरा

(1) नारकी में सिर्फ 1 भांगा दूसरा (महाआश्रव, महाक्रिया, महावेदना, अल्पनिर्जरा) पाया जाता है।

(2) असुरकुमारदि 13 देव दंडकों में चौथा भांगा महाआश्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, अल्पनिर्जरा पाता है।

(3) पृथ्वीकायादि औदारिक के 10 दंडकों में 16 ही भांगे पाये जाते हैं।

इस तरह नरक का 1, देवता के 13, दस औदारिक के 160 भांगे ये कुल 174 भांगे होते हैं।

149. चरम परम (भ.श. 19 उ. 5) (1) नारकी के नेरिये चरम (अल्पायुष्य वाले) और परम (अधिक आयुष्य वाले) दोनों होते हैं। चरम भी, परम भी है।

(2) चरम नेरियों की अपेक्षा परम नेरिये महाकर्म, महाक्रिया, महाआश्रव, महावेदना वाले होते हैं। ऐसा आयुष्य की स्थिति की अपेक्षा से कहा है। इसी तरह पृथ्वीकायादि 10 औदारिक का कहना।

(3) असुरकुमार देव भी चरम, परम दोनों होते हैं।

(4) चरम असुरकुमार की अपेक्षा परम असुरकुमारादि अल्पकर्म, अल्पक्रिया, अल्पआश्रव, अल्पनिर्जरा वाले होते हैं, परम की अपेक्षा चरम महाकर्मादि होते हैं, ऐसा अशुभ कर्म की अपेक्षा कहा है। असुरकुमार की तरह वाणव्यंतर, ज्योतिषी और वैमानिक देवों का भी कहना।

150. द्वीप समुद्र (भ.श. 19 उ. 6) असंख्याता द्वीप, समुद्र हैं-जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकी खंड द्वीप, कालोदधि समुद्र, पुष्करवर द्वीप, पुष्करवर समुद्र, वारूणी द्वीप, वारूणी समुद्र, क्षीर द्वीप, क्षीर समुद्र, घृत द्वीप, घृत समुद्र, इक्षु द्वीप, इक्षु समुद्र, नंदीश्वर द्वीप, नंदीश्वर समुद्र, अरूण द्वीप, अरूण समुद्र, अरूणवर द्वीप, अरूणवर समुद्र, अरूणवर भास द्वीप, अरूणवर भास समुद्र, कुंडल द्वीप, कुंडल समुद्र, कुंडलवर द्वीप, कुंडलवर समुद्र, कुंडलवर भास द्वीप, कुंडलवर भास समुद्र, रूचक द्वीप, रूचक समुद्र यावत् स्वयंभूरमण समुद्र तक असंख्याता द्वीप, समुद्र हैं।

(2) जम्बूद्वीप का संस्थान थाली के आकार का है, शेष सब द्वीप समुद्रों का चूड़ी के आकार का है।

(3-4) जम्बूद्वीप 1 लाख योजन लंबा-चौड़ा, परिधि- 316227 योजन, 3 कोस 128 धनुष 13½ अंगुल झाझेरी।

लवणसमुद्र 2 लाख योजन लंबा-चौड़ा, परिधि 15,81,139 योजन कुछ ऊणी है।

धातकी खंड 4 लाख योजन लंबा-चौड़ा, परिधि 4110961 योजन कुछ ऊणी है।

कालोदधि समुद्र 8 लाख योजन लंबा चौड़ा परिधि 9170605 योजन झाझेरी है।

पुष्करवर द्वीप 16 लाख योजन लंबा चौड़ा परिधि 1, 92, 89, 894 योजन है।

द्वीप से समुद्र और समुद्र से द्वीप क्रमशः दुगुने-दुगुने विस्तार से लंबे-चौड़े है, परिधि तिगुणी झाझेरी है। आगे-आगे गिनते जाना।

(5) प्रत्येक द्वीप और समुद्र के चार-चार दरवाजे हैं प्रत्येक का अंतर कुछ इस प्रकार

जम्बूद्वीप के प्रत्येक दरवाजे का अंतर-79 हजार 52 योजन झाझेरा

लवण समुद्र के प्रत्येक दरवाजे का अंतर-3 लाख, 95 हजार 280 $^1/_4$ योजन

धातकी खंड के प्रत्येक दरवाजे का अंतर-10 लाख 27 हजार 735 $^3/_4$ योजन

कालोदधि समुद्र प्रत्येक दरवाजे का अंतर-22लाख 92 हजार 646 $^3/_4$ योजन

पुष्करवर द्वीप प्रत्येक दरवाजे का अंतर-48 लाख 22 हजार 469 योजन

इन सब द्वीप और समुद्रों के किनारे एक-एक पद्मवरवेदिका और दो-दो वनखंड

है। एक अंदर एक बाहर। जम्बूद्वीप के जगती है, दूसरों के जगती नहीं है।

नोट:- समवायांग के 8वें समवाय में देखना

(6) लवण समुद्र के पानी का स्वाद खारा है, कालोदधि, पुष्करवर समुद्र और स्वयंभूरमण समुद्र का पानी के स्वाद जैसा, वारूणी समुद्र का मदिरा जैसा, क्षीर समुद्र का खीर (दूध) जैसा, घृत समुद्र का घी (घृत) जैसा, बाकी सबका इक्षु रस जैसा है।

(7) जम्बूद्वीप और लवण समुद्र के एक-एक देवता मालिक है, बाकी सबके दो-दो देवता हैं।

(8) इन सब मालिक देवताओं की स्थिति एक-एक पल्योपम की है।

151. लवण समुद्र (भ.श. 19 उ. 6) (1) लवण समुद्र का आकार-गोतीर्थ, नाव, शीप, अश्वस्कंध (घोड़े का कंधा) बलभीवट (वटवृक्ष के चारों तरफ की पाल) और चूड़ी के आकार का है।

(2) लवण समुद्र की सम चक्रवाल चौड़ाई 2 लाख योजन है, परिधि 15 लाख 81 हजार 139 योजन कुछ कम है। पूर्व से पश्चिम का चरमान्त और दक्षिण से उत्तर का चरमान्त के बीच में 5 लाख योजन का अंतर है।

पर्वत-8 वेलंधर नागराज के पर्वत है पूर्व में-गोस्तूभ पर्वत (कनकमय)-गोस्तूभदेव

दक्षिण में-उदकभास पर्वत (शंखमय)-शिवदेव मालिक

पश्चिम में-शंख पर्वत (चाँदीमय)-शंख देवता मालिक

उत्तर में-दगसीम पर्वत (स्फटिकमय)-मणिशिलक देवता मालिक

चार विदिशाओं में कर्कोटक, कर्दमक, कैलाश, अरूणप्रभ ये देवों के नाम जैसे पर्वत है।

जम्बूद्वीप की जगती से 42000 योजन आगे लवण समुद्र में जाने पर 4 दिशा और 4 विदिशाओं में ये 8 पर्वत है। हरेक पर्वत 1721 योजन ऊँचा, मूल में 1022 योजन लंबा चौड़ा, बीच में 723 योजन ऊपर में 424 योजन का लंबा चौड़ा है, परिधि तीन गुणी झाझेरी है। संस्थान गाय के पूँछ के समान है। एक-एक पद्मवर वेदिका व एक-एक वनखंड से घिरे हैं। पर्वत के ऊपर सम रमणीक भूमि भाग है। एक-एक मालिक देव का एक-एक महल 62½ योजन (साढ़े बासठ)

ऊँचा, 31¼ योजन चौड़ा है। वहाँ उनके सिंहासन है। उन देवों की स्थिति एक-एक पल्योपम की है, देव परिवार सहित वहाँ रहते हैं, उनकी राजधानी अपनी-अपनी दिशा से असंख्याता द्वीप समुद्र उल्लंघने के बाद दूसरे लवण में है, जिसकी लंबाई चौड़ाई 12000 योजन है।

(3) लवण समुद्र का अधिपति सुस्थित (सुठिया) देव जम्बूद्वीप की जगती से 12000 योजन आगे लवण समुद्र में गौतम द्वीप जो 12000 योजन लंबा-चौड़ा, उसकी परिधि 37948 योजन झाझेरी है, उस द्वीप पर उसका क्रीड़ा स्थान है, उसकी राजधानी अन्य दूसरे लवण समुद्र में है।

(4) पाताल कलश-जम्बूद्वीप की जगती से 95000 योजन आगे लवण समुद्र में चारों दिशाओं में 4 महा पाताल कलश है वलयमुख, केतुमुख, यूप, ईश्वरमुख। ये पाताल कलश 1 लाख योजन जमीन में ऊंडे (गहरे) है। इनकी बीच की चौड़ाई 1 लाख योजन, नीचे की 10 हजार योजन, ऊपर का मुख 10 हजार योजन चौड़ा है। ठीकरी 1000 योजन जाड़ी है। काल, महाकाल, वेलभ, प्रभंजन ये 4 देवता मालिक है। इन चारों के बीच में 7884 छोटे कलश है, वे सभी 1 हजार योजन गहरे, और 1 हजार योजन बीच में चौड़े, नीचे का भाग और ऊपर का मुख 100-100 योजन चौड़ा है, ठीकरी 10 योजन जाड़ी है, वज्रमय है। एक-एक कलशे के बीच में छोटे कलशों की 9-9 लाइनें इस प्रकार है 215, 216, 217, 218, 219, 220, 221, 222, 223 छोटे कलश हैं। चारों कलशों में से प्रत्येक के बीच 1971 लघु कलश, यो 7884 हुए और 4 मोटे कलश यों कुल 7888 कलश हुए। इन कलशों का 1-1 देवता जिसकी स्थिति 1 पल्योपम है, मालिक है।

कलशों के ऊपर, नीचे, मध्य यों तीन भाग है। नीचे के भाग में वायु है, बीच में वायु और पानी है, ऊपर में पानी है। नीचे वायु बहुत उत्पन्न होती है, तब ऊपर के भाग में जल उछलता है, वायु शांत होती है, जल शांत होकर नीचे बैठ जाता है।

उदकमाला-लवण समुद्र के जल में एक उदकमाला उठी है, जो 16000 योजन ऊँची और चारों तरफ 10000 योजन चौड़ी है, उसमें पानी 2 कोस ऊपर उछलता है। उसको 1,74,000 देवता दबाते हैं, 42000 देव जम्बूद्वीप की तरफ से 60,000 देव ऊपर से, 72,000 देव धातकी खंड की तरफ से दबाते हैं।

लवण समुद्र की गहराई–जम्बूद्वीप की जगती से लवण समुद्र में 95 बालाग्र आगे जाने पर 1 बालाग्र गहराई होती है, इसी तरह 95 अंगुल आगे 1 अंगुल, 95 कोस आगे 1 कोस, 95 योजन जाने पर 1 योजन, 95000 योजन जाने पर 1000 योजन ऊंडा (गहरा) है। समुद्र में 500 योजन के माछले हैं, 5 लाख कुलकौड़ी जलचर है। एक दिन रात में दो बार जल की हानि और वृद्धि होती है। विजयआदि 4 दरवाजे है, उनके 4 मालिक देव है, उनकी राजधानियाँ अन्य लवण समुद्र में हैं, आधे योजन ऊँची चारों तरफ पद्मवर वेदिका है, जो 500 धनुष चौड़ी है।

(5) लवण समुद्र में जम्बूद्वीप से 14, 56, 090 नदियाँ और धातकी खंड से भी इतनी ही 14, 56, 090 नदियाँ आकर गिरती है।

(6) लवण समुद्र कभी अपनी मर्यादा नहीं लोपता क्योंकि जम्बूद्वीप में तीर्थंकर, केवली, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका, समदृष्टि है, उनके पुण्य के प्रभाव से समुद्र मर्यादा नहीं लोपता। जम्बूद्वीप और धातकी खंड में पानी नहीं गिरता है।

152. निव्वत्ति (निवृत्ति) (भ.श. 19 उ. 8) जीव के द्वारा उत्पादित भाव अनेक विध है जो जीव के मूल 5 एकेन्द्रियादि उत्कृष्ट 563 भेद हैं। कर्म 8, शरीर 5, इन्द्रिय 5, भाषा 4, मन 4, कषाय 4, वर्ण 5, गंध 2, रस 5, स्पर्श 8, संस्थान 6, संज्ञा 4, लेश्या 6, दृष्टि 3, ज्ञान 5, अज्ञान 3, योग 3, उपयोग 2 ये कुल 82 बोल हुए।

(1) समुच्चय जीव में बोल 82

क्रम	जीव	बोल	खुलासा (विवरण)
1	नारकी	70	82 में से 2 शरीर, 5 संस्थान, 3 लेश्या, 2 ज्ञान ये 12 कम हुए
2	भवनपति वाणव्यंतर देव	71	70 में एक तेजो लेश्या बढ़ी
3	ज्योतिषी, 12 देवलोक	68	ऊपर 71 में 3 लेश्या कम हुई
4	नवग्रैवेयक	67	68 में से मिश्रदृष्टि कम हुई।
5	पाँच अणुत्तर विमान	63	67 में से 3 अज्ञान और 1 मिथ्यादृष्टि ये 4 कम हुई
6	पृथ्वी, अप्काय, वनस्पतिकाय	51	8 कर्म, 3 शरीर, 1 इंद्रिय, 4 कषाय, 20 वर्णादि, 1 हुंडक संस्थान,
			4 संज्ञा, 4 लेश्या, 1 मिथ्यादृष्टि, 2 अज्ञान, 1 योग, 2 उपयोग = 51
7	तेउकाय	50	51 में से 1 लेश्या कम (तेजोलेश्या)
8	वायुकाय	51	50 में एक वैक्रिय शरीर बढ़ा
9	बेइन्द्रिय	56	51 में 1 इंद्रिय, 1 भाषा, 1 दृष्टि, 2 ज्ञान ये 5 बढ़े
10	तेइन्द्रिय	57	56 में 1 इन्द्रिय बढ़ी
12	चौइन्द्रिय	58	57 में 1 इन्द्रिय बढ़ी

13	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	79	82 में से आहारक शरीर, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान ये तीन कम
14	मनुष्य	82	सभी बोल पावे
15	पहले और तीसरे गुणस्थान	74	82 में से 1 शरीर, 2 दृष्टि, 5 ज्ञान ये 8 बोल समुच्चय से कम
16	2-4-5 गुणस्थान में	74	82 में से 1 शरीर, 2 दृष्टि, 2 ज्ञान, 3 अज्ञान ये 8 बोल कम
17	छठे गुणस्थान में	76	74 में 1 आहारक शरीर, 1 मन:पर्यवज्ञान दो बोल बढ़े
18	सातवें गुणस्थान	69	76 में से 4 संज्ञा, 3 अशुभ लेश्या ये 7 बोल कम हुए
19	8-9 गुणस्थान में	65	69 में से 2 शरीर वैक्रिय, आहारक, 2 लेश्या तेजो पदम कम हुए
20	दसवें गुणस्थान में	62	65 में से 3 कषाय कम हो गई
21	11वें 12वें गुणस्थान में	60	62 में से 1 मोहनीय कर्म, 1 लोभ कषाय दो बोल कम हुए
22	13वें गुणस्थान में	45	4 कर्म, 3 शरीर, 2 भाषा, 2 मन, 20 वर्णादि, 6 संस्थान, 1 लेश्या, 1 दृष्टि, 1 ज्ञान, 3 योग, 2 उपयोग ये 45 बोल पावे
23	14वें गुणस्थान में	37	45 में से 2 भाषा, 2 मन, 1 लेश्या, 3 योग ये 8 बोल कम हुए

153. करण (भ.श. 19 उ. 9) (1) जिसके द्वारा किया जाय उसे यानि क्रिया के साधन को करण कहते हैं या करने को करण कहते हैं। इसके 55 प्रकार है–5द्रव्य करण (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव) 5 शरीर, 5 इन्द्रिय, 4 भाषा, 4 मन, 4 कषाय, 7 समुद्घात, 4 संज्ञा, 6 लेश्या, 3 दृष्टि, 3 वेद, 5 प्राणातिपातादि (5 व्रत)। ये 55

(2) समुच्चय जीव में 55 बोल पावे–

क्रम	जीव	बोल	खुलासा (विवरण)
1	नारकी में	45	55 में से 2 शरीर, 3 समुद्घात, 3 लेश्या, 2 वेद ये 10 कम
2	भवनपति वाणव्यंतर में	48	45 में 1 समुद्घात, 1 लेश्या, 1 वेद ये तीन बढ़े
3	ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक	45	48 में से 3 लेश्या कम हो गई
4	3 से 12 देवलोक	44	45 में 1 वेद कम (स्त्री वेद कम)
5	नवग्रैवेयक में	41	44 में से 2 समुद्घात, मिश्रदृष्टि कम ये तीन कम
6	पाँच अणुत्तर विमान में	40	ऊपर 41 में 1 मिथ्यादृष्टि कम हो गया
7	पृथ्वी, पानी, वनस्पति में	31	5 द्रव्य, 3 शरीर, 1 इंद्रिय, 4 कषाय, 3 समुद्घात, 4 संज्ञा, 4 लेश्या, 1 दृष्टि, 1 वेद, 5 प्राणातिपातादि ये 31 बोल
8	तेउकाय में	30	31 में से 1 लेश्या कम
9	वायुकाय में	32	ऊपर 30 में 1 वैक्रिय शरीर, 1 वैक्रिय समुद्घात बढ़ा
10	बेइन्द्रिय	33	ऊपर के 30 में 1 इन्द्रिय, 1 व्यवहार भाषा, 1 समदृष्टि बढ़े
11	तेइन्द्रिय	34	33 में 1 इन्द्रिय बढ़ी
12	चौइन्द्रिय में	35	34 में एक इन्द्रिय बढ़ी
13	तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	52	55 में से 1 शरीर, 2 समुद्घात कम हो गये
14	मनुष्य में	55	सभी 55 बोल पावे

15	पहले और तीसरे गुणस्थान	50	55 में से 1 आहारक शरीर, आहारक समुद्घात केवली समुद्घात, समदृष्टि ये 4 और पहले गुणस्थान में मिश्रदृष्टि, तीसरा में मिथ्यादृष्टि कम ये 5-5 कम
16	2-4-5 गुणस्थान में	50	55 में 1 शरीर, 2 समुद्घात, 2 दृष्टि ये 5 कम
17	छठे गुणस्थान में	47	55 में से 1 समुद्घात, 2 दृष्टि, 5 प्राणातिपात ये 8 कम
18	सातवें गुणस्थान में	34	47 में से 6 समुद्घात, 4 संज्ञा, 3 अशुभ लेश्या ये 13 कम
19	8-9 गुणस्थान में	30	34 में से 2 शरीर, 2 लेश्या ये 4 कम
20	दसवाँ गुणस्थान में	24	30 में से 3 (तीन) कषाय, 3 वेद ये 6 बोल कम
21	11-12 गुणस्थान में	23	24 में से लोभ कषाय कम
22	13वाँ गुणस्थान में	15	23 में से 5 इंद्रिय, 2 मन, 2 भाषा ये 9 कम (5 द्रव्यादि, 3 शरीर, 2 भाषा, 2 मन, 1 केवली समुद्घात, 1 शुक्ल लेश्या, समदृष्टि ये 15 बोल)
23	14वाँ गुणस्थान में	9	5 द्रव्यादि, 3 शरीर, 1 समदृष्टि ये 9 बोल पावे
24	सिद्ध भगवान में	6	5 द्रव्यादि, 1 समदृष्टि ये 6 बोल पावे

154. छह द्रव्य (भ.श. 19 उ. 2) (1) आकाश दो प्रकार का-लोकाकाश, अलोकाकाश।

(2) लोकाकाश में जीव है, जीव के देश है, प्रदेश है। अजीव भी है, अजीव के देश है, प्रदेश भी है। (3) धर्मास्तिकाय-लोक स्वरूप, लोक प्रमाण, लोकमात्र है, संपूर्ण लोक को अवगाहता है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय का कहना।

(4) धर्मास्तिकाय ने अधोलोक को आधा झझेरा (7 राजू से कुछ अधिक) स्पर्शा है।

(5) सिद्धशिला ने लोकाकाश के असंख्यातवें भाग के स्पर्शा है।

(6) धर्मास्तिकाय के पर्यायवाची-धर्म, धर्मास्तिकाय, प्राणातिपात विरमण यावत् 18 पाप विरमण, 5 समिति, 3 गुप्ति आदि अनेक नाम है।

(7) अधर्मास्तिकाय के-अधर्म, अधर्मास्तिकाय 18 पाप, 5 असमिति, 3 अगुप्ति आदि नाम है।

(8) आकाशास्तिकाय के पर्यायवाची-आकाश, आकाशास्तिकाय, गगन, नभ, सम, विषम, खह, विहाय, वीचि, विवर, अम्बर, अम्बरस, छिद्र, शुषिर, मार्ग, विमुख, अर्द, व्यर्द, आधार, व्योम, भाजन, अंतरिक्ष, श्याम, अवकाशान्तर, अगम, स्फटिक, अनंत आदि नाम है।

(9) जीवास्तिकाय के नाम-जीव, जीवास्तिकाय, प्राण, भूत, सत्व, विज्ञ, चेता, जेता, आत्मा, रंगण, हिंडुक (गमनशील), जंतु, योनि, स्वयंभूति, शरीरी, नायक, अंतरात्मा अनेक नाम है।

(10) पुद्गलास्तिकाय के नाम-पुद्गल, पुद्गलास्तिकाय, परमाणु, द्विप्रदेशी से अनंत प्रदेशी तक।

(11) आत्मा में परिणमन करने वाले-प्राणातिपात आदि 18 पाप, तथा 18 पाप से विरमण, औत्पातिकी आदि 4 बुद्धि, अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरूषाकार पराक्रम, नारकीपना, असुरकुमारपना यावत् वैमानिकपना, ज्ञानावरणीयादि 8 कर्म, कृष्णादि 6 लेश्या, सम्यगदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि, चक्षुदर्शनादि 4 दर्शन, आभिनिबोधिक यावत् विभंगज्ञान (5 ज्ञान, तीन अज्ञान) आहारादि 4 संज्ञा, औदारिकादि 5 शरीर, तीन योग, 2 उपयोग आदि तथा इनके समान अन्य सब धर्म आत्मा में परिणमते हैं। आत्मा सिवाय अन्यत्र नहीं परिणमते।

(12) गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श वाले परिणामों से परिणमता है।

(13) जीव और सारा जगत कर्मों से विविध रूप से परिणमता है, कर्मों के बिना नहीं परिणमता।

155. वर्णादि के भांगा (भ.श. 20 उ. 5) परमाणु पुद्गल में वर्णादि के 16 भांगे पाये जाते हैं, 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 4 स्पर्श ये 16 भांगे। एक परमाणु पुद्गल में 1 वर्ण, 1 गंध, 1 रस, 2 स्पर्श, 5 वर्णादि पाते हैं, इनके 16 भांगे होते हैं। परमाणु में 2 स्पर्श के 4 प्रकार से शीत रूक्ष, शीत स्निग्ध, उष्ण रूक्ष, उष्ण स्निग्ध। द्विप्रदेशी में 2-3 या 4 स्पर्श हो सकते है, सूक्ष्म अनंत प्रदेशी स्कंध तक 4 स्पर्शी इसी प्रकार होते हैं। (शेष वर्णन शतक 18 के उद्देशक 6 में देखे) भांग संख्या इस प्रकार है-

विकल्प	वर्ण के भंग	गंध के भंग	रस के भंग	स्पर्श के भंग	कुल भंग
परमाणु	5	2	5	4	16
द्वि प्रदेशी	15	3	15	9	42
तीन प्रदेशी	45	5	45	25	120
चार प्रदेशी	90	6	90	36	222
पाँच प्रदेशी	141	6	141	36	324
छ प्रदेशी	186	6	186	36	414
सात प्रदेशी	216	6	216	36	474

आठ प्रदेशी	231	6	231	36	504
नौ प्रदेशी	236	6	236	36	514
दस प्रदेशी	237	6	237	36	516
संख्यात प्रदेशी	237	6	237	36	516
असंख्यात प्रदेशी	237	6	237	36	516
सूक्ष्म अनंत प्रदेशी	237	6	237	36	516
बादर अनंत प्रदेशी	237	6	237	1296	1776
कुल	2350	73	2350	1694 कुल	6470

परमाणु पुद्गल में 16 भंग, 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 4 स्पर्श ये 16 भंग

दो प्रदेशी में (असंयोगी 5, दो संयोगी 10) (गंध के 3) (रस के 15) (स्पर्श के 9)

तीन प्रदेशी 45(5+30+10) 5(1+2+2) 45(5+30+10) 25(4+12+9) (2) (3) (4) स्पर्शी

चार प्रदेशी 90(5+40+40+5) 6(2+2+2) 90(5+40+40+5) 36(4+16+16)

पाँच प्रदेशी 141(5+40+70+25+1) 6(2+2+2) 141(5+40+70+25+1) 36(4+16+16)

छ प्रदेशी 186(5+40+80+55+6) 6(2+2+2) 186(5+40+80+55+6) 36 पूर्ववत्

7 प्रदेशी 216 (असंयोगी 5 + दो संयोगी 40 + तीन संयोगी 80 + चार संयोगी 75 + पाँच संयोगी 16) वर्ण के

8 प्रदेशी 231(5+40+80+80+26)

नो प्रदेशी 236(5+40+80+80+31)

दस प्रदेशी 237(5+40+80+80+32)

भंग पूर्व में दिये भांगों के अनुसार समझना।

बादर अनंत प्रदेशी में स्पर्श के **1296**, भांगे बताये है–4 संयोगी 16 भांगे, पाँच संयोगी (पाँच स्पर्श के संयोग से) 128 भांगे, छ संयोगी (छ स्पर्श के संयोग से) 384 भांगे (64x6) सात संयोगी (स्पर्श के संयोग से) 512 (4x128=512) आठ संयोगी (8 स्पर्श बनने से) 256 भांगे ये सब मिलाकर 1296 भांगे होते हैं।

स्पर्श के भांगे 4 स्पर्शी 16 भंग इसे इस प्रकार समझे कर्कश (1), कोमल (2), गुरु (3), लघु 4, शीत 5, उष्ण 6, स्निग्ध 7, रूक्ष 8 इन संख्या से देखें–

स्पर्श के 4 स्पर्शी 16 भंग–क को गु.ल.शी.उ.स्नि.(चि.) रु. (ये प्रथमाक्षर दिये हैं।)

(1) 3क 3गु 3शी 3स्नि., 3क 3गु 3शी 3रु, 3क 3गु 3ऊ. 3स्नि, 3क 3गु 3ऊ 3रु,।

3क 3ल 3शी 3ऊ, 3क 3ल 3शी 3रु, 3क 3ल 3ऊ 3स्नि, 3क 3ल 3ऊ 3रु।

3को 3गु 3शी 3चि, 3को 3गु 3शी 3रु, 3को 3गु 3ऊ 3चि, 3को 3गु 3ऊ 3रु।

3को 3ल 3शी 3चि, 3को 3ल 3शी 3रु, 3को 3ल 3ऊ 3चि, 3को 3ल 3ऊ 3रु।

पाँच संयोगी 128 भंग–(1) सर्व कर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकस्नि, 1 रूक्ष (देश)

(2) सर्व कर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेशस्नि, बहुत रूक्ष

(3) सर्व कर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, बहुतस्नि, एक रूक्ष

(4) सर्व कर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, बहुतस्नि, बहुत रूक्ष

इसी तरह कर्कश, गुरु और उष्ण के साथ चौभंगी कहना। इसी तरह कर्कश, लघु, शीत के साथ चौभंगी कहना इसी तरह कर्कश लघु उष्ण के साथ चौभंगी कहना। ये 4 चौभंगिया यानि 16 भंग होते हैं। इसी तरह मृदु (कोमल) के साथ 16 भंग हुए ये सब मिलाकर 32 भंग हुए। यह पहली बत्तीसी हुई। इसी तरह सर्व कर्कश, सर्वगुरु, सर्वस्निग्ध एक देशशीत एक देशऊष्ण की दूसरी बत्तीसी। इसी तरह सर्व कर्कश, सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, एक देश गुरु, एक देश लघु की तीसरी बत्तीसी। सर्वगुरु सर्वशीत सर्वस्निग्ध एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु की चौथी बत्तीसी कहनी। ये 32x4=128 भांगे हुए।

संख्या	कर्कश	मृदु	गुरु	लघु	शीत	उष्ण	स्निग्ध	रूक्ष
1	3		3		3		1	1
2	3		3		3		1	2
3	3		3		3		2	1
4	3		3		3		2	2
5	3		3			3	1	1
6	3		3			3	1	2
7	3		3			3	2	1
8	3		3			3	2	2
9	3				3		1	1
10	3				3		1	2

11	3				3		2	1
12	3				3		2	2
13	3					3	1	1
14	3					3	1	2
15	3					3	2	1
16	3					3	2	2
17		3	3		3		1	1
18		3	3		3		1	2
19		3	3		3		2	1
20		3	3		3		2	2
21		3	3			3	1	1
22		3	3			3	1	2
23		3	3			3	2	1
24		3	3			3	2	2
25		3		3	3		1	1
26		3		3	3		1	2
27		3		3	3		2	1
28		3		3	3		2	2
29		3		3		3	1	1
30		3		3		3	1	2
31		3		3		3	2	1
32		3		3		3	2	2

जहाँ 3 अंक है वहाँ सर्व जहाँ 2 है वहाँ बहुत (अनेक) जहाँ 1 है वहाँ देश (एक देश) समझना।

छ संयोगी 384 भांगे-(64x6) सर्व कर्कश, सर्वगुरु से 16 भांगे (3 कर्कश, 3 गुरु, 1 शीत, 1 उष्ण, 1 स्नि. 1 रूक्ष में आगे भांगों के हिसाब से एक बहुत (अनेक करते हुए बनाना) यों सर्व कर्कश, सर्व लघु से 16 भांगे (3क. 3ल., 1 शीत, 1

उष्ण, 1 स्निग्ध, 1 रूक्ष) से 16 भंग। इसी तरह सर्वमृदु सर्वगुरु से 16 भांगे (3मृ. 3ल., 1 शीत, 1 उष्ण, 1 स्निग्ध, 1 रूक्ष) से 16 भंग और सर्वमृदु सर्वलघु से 16 भांगे (3मृ. 3ल., 1 शीत, 1 उष्ण, 1 स्निग्ध, 1 रूक्ष) से 16 भंग ये **पहली चौसठ्ठी** हुई (64 भांगों की)। **दूसरी चौसठ्ठी** में सर्व कर्कश सर्वशीत से 16 भांगे (3क. 3शी, 1 गुरु 1 लघु 1 स्निग्ध 1 रूक्ष) इससे पहली 16 भंग। दूसरा 16 भंग सर्व कर्कश सर्व उष्ण से। तीसरा 16 भंग सर्वमृदु सर्वशीत से। चौथा सर्वमृदु सर्वउष्ण से। **तीसरी चौसठ्ठी**-सर्व कर्कश, सर्वस्निग्ध से 16 भंग (3क. 3स्नि. 1 गुरु 1 लघु 1 शीत 1 उष्ण) दूसरा 16 भंग सर्व कर्कश सर्वरूक्ष से। तीसरा 16 भंग सर्वमृदु सर्वस्निग्ध से। चौथा 16 भंग सर्वमृदु सर्वकक्ष से बनाना। **चौथी चौसठ्ठी**-सर्वगुरु सर्वशीत से 16 भंग (3 गु. 3 शी. 1 कर्कश, 1 मृदु 1 स्निग्ध 1 रूक्ष) दूसरी 16 भंग सर्वगुरु सर्वउष्ण से 16 भंग। तीसरी 16 भंग सर्वलघु सर्वशीत से और चौथी 16 भंग सर्वलघु सर्वउष्ण से बनाना।

पाँचवीं चौसठ्ठी-सर्वगुरु सर्वस्निग्ध से 16 भंग (3 गु. 3 स्निग्ध 1 कर्कश, 1 मृदु 1 शीत 1 उष्ण) दूसरा 16 भंग सर्वगुरु सर्वरूक्ष से। तीसरा 16 भंग सर्वलघु सर्वस्निग्ध से। और चौथा 16 भंग सर्वलघु सर्वरूक्ष से बनता है। **छठी चौसठ्ठी**-सर्वशीत सर्वस्निग्ध से (3 स्नि. 3 शीत, 1 कर्कश, 1 मृदु, 1 गुरु 1 लघु) ये 16 भंग। दूसरा 16 भंग सर्वशीत सर्वरूक्ष से। तीसरा 16 भांग सर्वउष्ण सर्वस्निग्ध से। चौथा 16 भंग सर्वउष्ण सर्वरूक्ष से। इस तरह 4x16=64 चौसठ्ठिया के छहों चौसठ्ठिया 64x6=384 भांगे हुए।

7 संयोगी 512 भंग-(128x4) चार एक सौ अठाइसी इस प्रकार-

3111111	3111112	3111121	3111122	3111211
3111212	3111221	3111222	3112111	3112112
3112121	3112122	3112211	3112212	3112221
3112222	3121111	3121112	3121121	3121122
3121211	3121212	3121221	3121222	3122111
3122112	3122121	3122122	3122211	3122212
3122221	3122222			

ऊपर के 32 भांगे 31 लाख के अंक से कहे हैं, इसी प्रकार 32 लाख से भी कहना ये 64 भांगे हुए इसी तरह सर्वमृदु (सर्व कर्कश की जगह) के 64 भांगे कहना ये 128 का पहला जोड़ा हुआ। दूसरी 128 इस प्रकार सर्वगुरु, एक कर्कश, एक मृदु, एक शीत, एक उष्ण, एक स्निग्ध, एक रूक्ष इसके 64 भांगे इसी तरह सर्वलघु से भी 64 भांगे बनाना। यह **दूसरी 128** की लड़ी। **तीसरी लड़ी** में सर्वशीत एक कर्कश, एक मृदु, एक गुरु, एक लघु, एक स्निग्ध, एक रूक्ष और सर्वउष्ण के इसी तरह से 64 भांगे कहना ये 128 भांगे। चौथी 128 की लड़ी-सर्वस्निग्ध एक कर्कश, एक मृदु, एक गुरु, एक लघु, एक शीत, एक उष्ण इसके 64 भांगे और सर्वरूक्ष के 64 भांगे यह चौथी 128 हुई। 128x4=512 भांगे हुए।

8 संयोगी 256 भांगे-

11111111	11111112	11111121	11111122	11111211
11111212	11111221	11111222	11112111	11112122
11112121	11112122	11112211	11112212	11112221
11112222	11121111	11121112	11121121	11121122
11121211	11121212	11121221	11121222	11122111
11122112	11122121	11122122	11122211	11122212
11122221	11122222	11211111	11211112	11211121
11211122	11211211	11211212	11211221	11211222
11212111	11212112	11212121	11212122	11212211
11212212	11212221	11212222	11221111	11221112
11221121	11221122	11221211	11221212	11221221
11221222	11222111	11222112	11222121	11222122
11222211	11222212	11222221	11222222	

( )ऊपर में 64 भांगे कहे है-1 करोड़ 11 लाख से 32 भांगे और 1 करोड़ 12 लाख से 32 भांगे इसी तरह 1,21,11111 (एक करोड़ इक्कीस लाख से) 32 भांगे और 1,22,11111 (एक करोड़ 22 लाख से 32 भांगे कहना इस तरह ये भी 64 भांगे हुए। इसी तरह 2 करोड़ 11 लाख से 32 और 2 करोड़ 12 लाख से 32 ये 64 भांगे

कहना (2,11,11111-21211111 ये) इसके बाद 64 भांगे 2, करोड़ 21 लाख और 2 करोड़ 22 लाख से 32-32 भांगे (2,21,11111-22211111) इस तरह चार चौसठ्ठिया 64x4=156 भांगे हुए। एक परमाणु से सूक्ष्म अनंत प्रदेशी स्कंध तक स्पर्श के 39 भांग होते हैं और बादर अनंत प्रदेशी स्कंध के 1296 भांगा होते हैं, ये सब भांगे आकाश प्रदेश की अपेक्षा रहते हैं।

156. परमाणु (भ.श. 20 उ. 5) (1) एक परमाणु द्रव्य परमाणु है, एक आकाश प्रदेश क्षेत्र परमाणु है, एक समय काल परमाणु और एक गुण कालाआदि भाव परमाणु, यों परमाणु 4 प्रकार कहे हैं।

(2) द्रव्य परमाणु के 4 प्रकार-अछेद्य, अभेद्य, अदाह्य, अग्राह्य (छेदना, भेदना, जलाना, पकड़ना)।

(3) क्षेत्र परमाणु 4 प्रकार-अनर्ध (टुकड़ा नहीं हो), अमध्य, अप्रदेश, अविभाग।

(4) काल परमाणु 4 प्रकार-अवर्ण, अगंध, अरस, अस्पर्श।

(5) भाव परमाणु 4 प्रकार-वर्ण वाला, गंध वाला, रस वाला, स्पर्श वाला।

157. तीन बंध (भ.श. 20 उ. 7) बंध के तीन प्रकार है-(1) **जीव प्रयोग बंध**-जीव के प्रयोग से मन वचन काया की प्रवृत्ति से आत्मा के साथ कर्म पुद्गलों का जो संबंध होता है वह जीव प्रयोग बंध है। (2) **अनन्तर बंध**-कर्म पुद्गलों का बंध होने के बाद के समय (अंतर रहित) में जो बंध होता है वह अनन्तर बंध। (3) **परम्पर बंध**-कर्म पुद्गलों का बंध होने के बाद द्वितीयादि समय में जो बंध होता है, वह परम्पर बंध है। बीच में एक या दो समयादिका अंतर पड़कर बंध होता है, उसे परम्पर बंध कहते है। जिसे 1-2-3 समय हो गया हो वह परम्पर बंध। वर्तमान समय बंधे वह अनन्तर बंध।

(2) इन तीन प्रकार के बंध में 55 बोल पाये जाते हैं-कर्मबंध 8, कर्मउदय 8, वेद 3, दर्शन मोहनीय 1, चारित्र मोहनीय 1, शरीर 5, संज्ञा 4, लेश्या 6, दृष्टि 3, ज्ञान 5, अज्ञान 3, ज्ञान का विषय 5, अज्ञान का विषय 3, ये कुल 55 बोल हुए।

समुच्चय जीव में 55 बोल पाये जाते हैं।

क्रम	जीव	बोल	विवरण
1	नारकी में	44	55 में से 2 वेद, 2 शरीर, 3 लेश्या, 2 ज्ञान, 2 ज्ञान के विषय कम
2	भवनपति वाणव्यंतर में	46	44 में 1 नपुंसक वेद कम और 2 वेद 1 लेश्या तीन बढ़े
3	ज्योतिषी देवों में	43	46 में 3 लेश्या कम
4	वैमानिक देवों में	45	43 में 2 लेश्या बढ़ी
5	पृथ्वी पानी वनस्पति में	35	8 कर्मबंध, 8 कर्मउदय, 1 वेद, 1 दर्शन मोह, 1 चारित्र मोह, 3 शरीर, 4 संज्ञा, 4 लेश्या, 1 दृष्टि, 2 अज्ञान, 2 अज्ञान का विषय ये सब 35 हुए
6	तेउकाय	34	35 में से 1 लेश्या कम
7	वायुकाय	35	34 में एक शरीर बढ़ा
8	तीन विकलेन्द्रिय में	39	34 बोलों में 1 दृष्टि, 2 ज्ञान, 2 ज्ञान के विषय ये 5 बढ़े
9	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	50	1 शरीर, 2 ज्ञान, 2 ज्ञान के विषय ये 55 में से 5 कम हुए
10	मनुष्य	55	सभी बोल पाये जाते हैं

24 दंडक में जितने-जितने बोल पाते हैं सब में प्रत्येक में जीव प्रयोग बंध, अनन्तर और परम्पर बंध ये तीनों पाये जाते हैं।

158. कर्मभूमि (भ.श. 20 उ. 8) (1) कर्मभूमि 15 है-5 भरत, 5 एरवत, 5 महाविदेह।

(2-3) अकर्मभूमि 30 हैं-5 हैमवय, 5 हैरण्यवय, 5 हरिवर्ष, 5 रम्यक वर्ष, 5 देवकुरु, 5 उत्तर कुरु। इन पाँचों में उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी काल नहीं है।

(4) 5 भरत 5 एरवत क्षेत्र में उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल है।

(5) 5 महाविदेह क्षेत्र में उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल नहीं है। वहाँ अवस्थित काल है।

(6) पाँच महाविदेह क्षेत्र में अरिहंत भगवन्त पाँच महाव्रत और प्रतिक्रमण सहित धर्म का उपदेश नहीं देते हैं। पाँच भरत, पाँच एरवत क्षेत्रों में प्रथम और अंतिम तीर्थंकर पाँच महाव्रत रूप धर्म और प्रतिक्रमण सहित धर्म का उपदेश देते हैं, बीच के बाईस तीर्थंकर चार महाव्रत रूप धर्म का उपदेश देते हैं। पाँच महाविदेह क्षेत्र में भी 4 महाव्रत रूप धर्म का भगवान उपदेश करते हैं।

(7) जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में इस अवसर्पिणी काल में ऋषभदेव से वर्द्धमान तक 24 तीर्थंकर हुए हैं।

(8) 24 तीर्थंकरों के 23 अंतर कहे हैं।

(9) 23 अंतरों में पहले के आठ और अंतिम के आठ जिनान्तरों में कालिक श्रुत का विच्छेद नहीं कहा है, शेष बीच के 7 अंतरों में (नवमें तीर्थंकर के बाद से 16

तीर्थंकर तक) कालिक (11 अंगसूत्र 4 छेदसूत्र 5 निरयावलिका, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति चन्द्र प्रज्ञप्ति, उत्तराध्ययन ये कालिक सूत्र है) श्रुत का विच्छेद कहा है। दृष्टिवाद का विच्छेद तो सभी (23) अंतरों में कहा है।

(10) जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में इस अवसर्पिणी काल में आपके (श्रमण भगवान महावीर से श्री गौतम स्वामी का प्रश्न था) भगवान के पूर्वों का ज्ञान 1000 वर्ष तक रहेगा।

(11) इससे पूर्व 23 तीर्थंकरों में से कितनेक तीर्थंकरों कापूर्व का ज्ञान संख्याता काल तक और कितनेक का असंख्याता काल तक रहा था। (इस अवसर्पिणी)

(12) श्रमण भगवान महावीर स्वामी का शासन 21 हजार वर्ष तक रहेगा।

(13) जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आगामी अंतिम तीर्थंकर का तीर्थ एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व तक रहेगा।

(14) अरिहंत भगवान निश्चित रूप से तीर्थंकर होते हैं, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका ये 4 तीर्थ है।

(15) अरिहंत भगवान निश्चित रूप से प्रवचनी है, और द्वादशांग गणिपिटक (आचारांग से दृष्टिवाद तक 12 अंगसूत्र) प्रवचन है।

(16) उग्रकुल, भोगकुल, राजन्यकुल, इक्ष्वाकुकुल, ज्ञातकुल, कौरव्यकुल आदि कुलों के क्षत्रिय जैन धर्म का पालन करके 8 कर्मों का क्षय करके सर्व दुःखों का अंत करते हैं, सिद्ध होते हैं और कितनेक (जिनके कर्म बाकी रह जाते है वे) देवलोक में जाते हैं।

(17) देवलोक 4 प्रकार के है-भवनवासी, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक ये 4 देवलोक हैं।

159. विद्याचारण जंघाचारण लब्धि (भ.श. 20 उ. 9) लब्धि के द्वारा आकाश मार्ग में अतिशय गमन करने की शक्ति वाले मुनिचारण कहलाते हैं, ये दो प्रकार के होते हैं।

(1) विद्याचारण और जंघाचारण।

(2) **विद्याचारण**-निरंतर बेले-बेले तपस्या करने से और पूर्वों के ज्ञान द्वारा उत्तर गुण लब्धि (तपो लब्धि) प्राप्त मुनि को विद्याचारण की लब्धि उत्पन्न होती है। यह लब्धि उत्पन्न होने के बाद उन्हें विद्याचारण मुनि कहा जाता है।

(3) **गति** कोई देव तीन चिमटी बजावे उतने समय में इस जम्बूद्वीप के तीन चक्कर लगाकर वापस आ जाये, इतनी शीघ्र गति विद्याचारण की होती है।

(4-5) जाने-आने का विषय-तिरछा जाने के विषय में मानुषोत्तर पर्वत पर एक उड़ान में ठहरता है, दूसरी उड़ान में नन्दीश्वर द्वीप में पहुँच जाता है, और वापसी में एक ही उड़ान में वापस अपने स्थान पर पहुँच जाता है। ऊँचा जाने के विषय में एक उड़ान में नंदनवन (मेरूपर्वत) पहुँचकर दूसरी उड़ान में पण्डुक वन पहुँच जाते हैं, और वापसी में एक ही उड़ान से स्वस्थान आ जाते हैं।

(6-7-8) जंघाचारण-निरंतर तेले-तेले तपस्या कर पारना करने से जंघाचारण लब्धि प्राप्त होती है। विद्याचारण से 7 गुणी अधिक होती है। कोई देव तीन चुटकी बजावे जितनी समय में 21 परिक्रमा करके वापस आ जाय ऐसी द्रुतगति होती है। एक उड़ान में रूचकवर द्वीप में जा सकते हैं, वापस आते हुए नंदीश्वर द्वीप में रूककर दूसरी उड़ान में स्वस्थान पहुँच जाते हैं। ऊपर जाने में एक उड़ान में पण्डुक वन पहुँच जाते हैं, वापस आते समय नंदनवन में रूककर दूसरी उड़ान में स्वस्थान पहुँचते हैं। उक्त लब्धिधारी मुनिराज आगम वर्णित स्थानों द्वीप समुद्रों आदि के देखने के प्रयोजन से ही लब्धि का उपयोग (प्रयोग) करते हैं, अथवा अपनी जिज्ञासा शांत करने, तीर्थंकरों के दर्शन करने हेतु भी लब्धि का प्रयोग करते हैं।

लब्धि के प्रयोग करने के बाद आलोचना प्रतिक्रमण करने पर ही आराधक होते हैं, आलोचना किये बिना काल करे तो आराधक नहीं होते।

160. सोपक्रमी निरूपक्रमी (भ.श. 20 उ. 10) (1) जिन जीवों का आयुष्य अकाल में (असमय में) समाप्त हो जाता है, वह सोपक्रमी और जो पूर्ण समय पर ही समाप्त होता है, वह निरूपक्रमी कहलाता है। (2) सोपक्रमी टूट जाता है, निरूपक्रमी नहीं टूटता (आयुष्य) है।

(2) जो आयुष्य अप्राप्त काल में टूट जाये उसे सोपक्रमी कहते हैं, आयुष्य टूटने के 7 कारण-(1) अध्यवसान-राग, द्वेष, स्नेह या भय रूप प्रबल मानसिक आघात (हार्टअटेक)।

(2) निमित्त-शस्त्र दंड आदि का निमित्त मिलना (3) आहार-अधिक करना।

(4) वेदना-आँख या शूल आदि का असह्य वेदना होने से।

(5) पराघात-गढ्ढे आदि में गिरने से (6) स्पर्श-साँप आदि के काटने या विष स्पर्श से

(7) आणपाण-श्वासोच्छवास की गति बंद हो जाये।

इन 7 कारणों से आयुष्य टूट जाता है (बीच में)। नहीं टूटे वह निरूपक्रमी आयुष्य है।

(3) समुच्चय जीवों और औदारिक के 10 दंडकों में दोनों प्रकार का आयुष्य होता है।

नारकी देवता के 14 दंडक में एक निरूपक्रमी आयुष्य ही होता है।

(4) मरण के तीन प्रकार-(1) आत्मोपक्रम (आत्महत्या) मरण-राजा श्रेणिक की तरह। (2) परोपक्रम-परनिमित्त से मरना जैसे कोणिक राजा। (3) निरूपक्रमण मरण-स्वाभाविक रूप से मृत्यु आने पर मरना जैसे काल शौकरिक कसाई।

(5) नारकी देवता में निरूपक्रम मरण पाया जाता है। पृथ्वीकायादि 10 औदारिक दंडकों में तीनों प्रकार के मरण पाये जाते है।

(6) **ऋद्धि दो प्रकार** की आत्मऋद्धि और परऋद्धि। 24 दंडक के जीव आत्मऋद्धि से ही मरकर परभव में जाता है। परऋद्धि से नहीं मरते हैं।

24 दंडक में नारकी देवता, युगलिया मनुष्य, युगलिया तिर्यंच, तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदि 63 श्लाघा पुरुष एवं चरम शरीरी जीव से सभी मात्र निरूपक्रमी आयुष्य वाले ही होते हैं। शेष जीवों में दोनों में से कोई भी आयुष्य वाले हो सकते हैं। नारकी में आने वाले तीनों मरण से आ सकते हैं, जाने वाले निरूपक्रम ही होंगे। सभी देवों में भी एक भेद गत का होता है नारकी देवता उपक्रम से नहीं मरते।

161. कति संचय अकति संचय (भ.श. 20 उ. 10) जो जीव दूसरी जाति में से आकर एक समय में एक साथ संख्याता उत्पन्न होवे वे कति संचय, जो एक समय में एक साथ असंख्याता उत्पन्न होवे वे अकति संचय, और एक उत्पन्न हो वह अव्यक्त कहा जाता है।

(1-2) नारकी के नेरिये तीनों है, पाँच स्थावर अकति संचित, शेष 18 दंडक के जीव तीनों प्रकार के हैं। सिद्ध भगवान कति संचित और अव्यक्त संचित होते हैं, अकति संचित नहीं होते। पृथ्वीकायादि एक समय में एक साथ असंख्याता उपजते हैं, वनस्पतिकाय में तो अनन्ता उत्पन्न होते हैं, परन्तु यहाँ विवक्षा विजातीय जीवों की है। वे असंख्याता ही उत्पन्न होते हैं। सिद्ध भगवान एक साथ एक से संख्याता ही एक समय में मोक्ष जाते हैं।

(3) अल्प बहुत्व–नारकी आदि 19 दंडक में सबसे थोड़े अवक्तव्य संचित, उससे कति संचित संख्यातगुणा, उससे अकति संचित असंख्यातगुणा। सिद्ध भगवान सबसे थोड़े कति संचित उससे अवक्तव्य संचित संख्यातगुणा। पाँच स्थावर में एक अकति संचित।

162. छक्क समज्जिया (भ.श. 20 उ. 10) एक साथ छ उत्पन्न हुए हो, वे छक्क समज्जिया और एक से लेकर पाँच तक उत्पन्न हुए हो वे नो छक्क समज्जिया (समर्जित) कहलाते हैं। इसके 5 भांगे हैं।

(1) छक्क समज्जिया के 5 भांगे–(1) छक्क समर्जित–6 जीव (2) नो छक्क समर्जित 1–2–3–4–5 ये नो छक्क है (3) छक्क नो छक्क–7, 8, 9, 10, 11 (4) अनेक छक्क 12, 18, 24, 30 आदि जिससे छ का भाग जाये। (5) अनेक छक्क नो छकक 13, 14 से 17 तक या 19 से 23 या 25 से 29 आदि यों आगे भी समझना।

(2) द्वादश समज्जिया–बारह समर्जित इनके भी छक्क के समान 5 भेद है। यहाँ संख्या 12 से समझना।

(3) चौरासी समज्जिया–इसके भी छके समान 5 भेद है संख्या 84 से समझना है।

नारकी और 18 दंडकों में पाँचों भेद तीनों के पाये जाते हैं कति–अकति संचय के अनुरूप समझना है।

पाँच स्थावर में 2 भांगे चौथा और पाँचवाँ (अनेक छक्क, अनेक छक्क नो छक्क की तरह) तीनों के छक्क, द्वादश और चौरासी समर्जित के पाये जाते हैं।

सिद्ध भगवान में–छक्क समर्जिक और द्वादश समर्जित के पाँच–पाँच भागे पाये जाते हैं परन्तु चौरासी समर्जिक के पहले के तीन भांगे ही पाते है, क्योंकि सिद्ध एक समय में 108 ही होते हैं और चौरासी समर्जित का 4 भांगा (अनेक चौरासी और पाँचवाँ भांगा अनेक चौरासी नो चौरासी ये दोनों भांगे 108 से ज्यादा हो जाते हैं। इसलिए सिद्धों में चौरासी समर्जित (84), नो चौरासी 1 से 83, चौरासी नो चौरासी (85, 86 आदि 108 तक)।

अल्प बहुत्व–19 दंडक में सबसे थोड़े (1) छक्क समज्जिया, उससे (2) नो छक्क समज्जिया संख्यातगुणा (3) उससे छक्क नो छक्क संख्यातगुणा (4) उससे अनेक

छक्क असंख्यातगुणा (5) उससे अनेक छक्क नो छक्क संख्यातगुणा। पाँच स्थावर में चौथे भंग से पाँचवाँ भंग संख्यातगुणा।

163. शालि (भ.श. 21 उ. 1 से 8) इक्कीसवें शतक में वनस्पति से सरीखी जातियों के आठ वर्ग है। प्रत्येक में मूल, कंद, स्कंध, त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज 10–10 उद्देशे हैं।

प्रथम वर्ग–चावल, गेहूँ, जौ, ज्वार आदि धान्य का है। (1) **अवगाहना**–जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अनेक धनुष। **स्थिति**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनेक वर्ष (3 वर्ष) **कायस्थिति**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्य काल। **आगति**–कंदमूल आदि 10 विभागों में से 7 विभाग में देव नहीं आते 49 की आगत शेष तीन पुष्प फल बीज में देव आते हैं। इनकी अपेक्षा इन तीनों विभाग में लेश्या 4 है, और भंग 80 होते हैं क्योंकि अशाश्वत है। देव से आने वाले सदा नहीं मिलते। 80 भंग उत्पल शतक 11 के अनुसार जानना। (5) पुष्प फल और बीज में उत्कृष्ट अवगाहना अनेक अंगुल की होती है। इस प्रकार प्रथम वर्ग के सात उद्देशक एक समान है, शेष तीन उद्देशक में अवगाहना लेश्या एवं आगति में फर्क है। (74 की आगत)।

दूसरा वर्ग–चना, मसूर, तिल, मूँग, उड़द, कुलथ आदि का है, प्रथम वर्ग के समान वर्णन है, स्थिति अनेक वर्ष में 5 वर्ष समझना।

तीसरा वर्ग–अलसी, कुंसुंभ, कोद्रव, कंगु, सण, सरसों आदि का है, प्रथम वर्ग के समान वर्णन है, स्थिति 7 वर्ष (अनेक वर्ष में) समझना।

चौथा वर्ग–बाँस, वेणु, दंड, कल्कावंश, चारूवंश आदि का है। इसके दशों विभाग में कहीं भी देव उत्पन्न नहीं होते। इसलिए आगति, लेश्या (तीन) में फर्क है भंग 26 कहना।

पाँचवाँ वर्ग–इक्षु, वीरण, इक्कड़, भमास, सूंठ, तिमिर, सतपोरग, नल आदि का है इसके स्कंध विभाग में देवता आकर उत्पन्न होते हैं, बाकी 9 विभागों में देवता नहीं आते। देव आवे उसमें लेश्या 4 भंग 80 होते हैं।

छठा सातवाँ आठवाँ वर्ग–**छठे** में दर्भ, कोंतिय, पर्वक, पौदीना, अर्जुन, भुस, एरंड, कुरू कुंद मधुर तृण। **सातवें में**–अध्यारोह (एक वृक्ष में दूसरा जैसे बड़ में पीपल) वत्थुल, माजरिक, चिल्लि, पालक, शाक, मंडुकी, सर्षप, अंबिलशाक,

आदि। **आठवे में**-तुलसी, चूयणा, जीरा, दमणा, मरूया, इन्दीवर, शतपुष्पी। ये तीनों वर्ग बाँस वर्ग के समान है।

164. तालतमाल (भ.श. 22) इसके छ वर्ग है जिनके 60 उद्देशक है मूल, कंदादि पूर्ववत् है।

प्रथम वर्ग-ताल, तमाल, कदलि (केला), तेतली, तक्कली, देवदारू, केवड़ा, गूंद, हींगु, लवंग, सुपारी, खजूर, नारियल आदि। इसका बाकी वर्णन शालि की तरह है और शेष वर्णन शतक 11 के अनुसार उत्पल कमल की तरह समझना। कुछ विशेषताएँ भिन्न है इस प्रकार (1) **मूल आदि** 5 विभागों (उद्देशकों में) में देवता नहीं उत्पन्न होते, अत: लेश्या तीन है, भांगे 26 है। (2) **प्रवाल आदि** 5 विभागों में देवता उत्पन्न होते है, अत: लेश्या 4 है, भांगे 80 है। (3) **स्थिति**-मूल आदि पाँच की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 10 हजार वर्ष है (4) शेष पाँच की उत्कृष्ट स्थिति अनेक वर्ष है। (5) **अवगाहना**-उत्कृष्ट मूल और कंद की उत्कृष्ट अनेक धनुष, त्वचा और शाखा की अनेक कोश, प्रवाल और पत्र की अनेक धनुष है। पुष्प की अनेक हाथ, जल और बीज की अनेक अंगुल है, जघन्य और मध्यम विविध प्रकार की अवगाहना हो सकती है।

दूसरा वर्ग-नीम, आम, जम्बू, पीलू, सेलु, सल्लकी, पलाश, करंज, पुत्रंजीवक, अरीठा, हरड़ा, बहड़ा, चारोली, नागकेशर, श्रीपर्णी, अशोक आदि। इसका वर्णन पहले वर्ग जैसा है।

तीसरा वर्ग-अस्थिक, तिंदुक, बोर, कपित्थ, अंबाडग, बिजोरा, आँवला, फणस, दाड़िम, पीपल, उंबर, बड, न्यग्रोध, नंदीवृक्ष, पीपर, सत्तर, सप्तपर्ण, लोद्र, धव, चंदन, कुटज, कदंब आदि का वर्णन पहले वर्ग जैसा है ताड वृक्ष जैसा।

चौथा वर्ग-बेंगन, पोंडईगंज, अंकोल्ल, आदि का वर्णन बाँस वर्ग जैसा है।

पाँचवाँ वर्ग-श्रियक, सिरियक, नवनालिक, कोरंटक, बंधुजीवक, मणोजा, नलिनीकुंड इत्यादि का वर्णन शालि वर्ग के समान है।

छठा वर्ग-पूसफलिका, तुम्बी, त्रपुषी (ककड़ी) एल वालुंकी आदि वल्लियों का वर्णन ताड़ वर्ग के समान है, किन्तु स्थिति उत्कृष्ट अनेक वर्ष की है, फल की अवगाहना उत्कृष्ट अनेक धनुष की है।

165. आलू (भ.श. 23) इसमें 5 वर्ग है जिसके पूर्व जैसे 50 उद्देशक (10-10) है।

प्रथम वर्ग-आलू, मूला, अदरख, हल्दी, क्षीर, विराली, मधुश्रृंगी, सर्पसुगंधा, छिन्नरूहा,

बीजरूहा आदि का वर्णन है, वंश वर्ग के (बाँस) समान है, किन्तु कुछ विशेषताएँ हैं-(1) परिमाण-ये एक समय में एक-दो तीन उत्कृष्ट अनंता जीव उत्पन्न होते हैं। **स्थिति**-अनंत जीव में उत्पन्न होने वाले जीवों की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है शेष की बाँस के समान।

दूसरा वर्ग-लोही, नीहू, थीहू, अश्वकर्णी, सिंहकर्णी, सिउंठी, मुसुंढ़ी आदि आलू वर्ग के समान है। अवगाहना ताड़ वर्ग के समान है।

तीसरा वर्ग-आय, काय, कुहुणा, सफा, सज्जा, छत्रा, कुंदुरूक्क आदि दूसरे वर्ग के समान है।

चौथा वर्ग-पाठा, मृगवालुंकी, मधुररसा, राजवल्ली, पद्मा, मोढ़री, दंती चंडी आदि का वर्णन आलू के समान है। अवगाहना वल्ली वर्ग के समान है।

पाँचवाँ वर्ग-माषपर्णी, मुद्गपर्णी, जीवक, काकोली, क्षीर काकोली, कृमिराशि, भद्रयुस्ता आदि का वर्णन आलू वर्ग के समान है। इनमें देव कहीं भी उत्पन्न नहीं होते अत: लेश्या 3 होती है। 21वें शतक के 80 उद्देशे, 22वें शतक के 60 उद्देशे, 23वें शतक के 50 उद्देशे ये कुल 190 उद्देशों पर शतक 11वें के पहले उद्देशे में वर्णित उत्पल कमल के 33-33 द्वारों के समान सारा वर्णन समझना है। विशेषताएँ इन शतकों में यथास्थान दे दी है।

166. गम्मा (भ.श. 24 उ. 1 से 24) यह गम्मा शतक है इसमें 24 उद्देशक है जो 24 दंडक की अपेक्षा विभाजित है। प्रत्येक उद्देशक में एक-एक दंडक के जीवों का 20 द्वारों से वर्णन है-(1) उपपात (जन्म) (2) परिमाण (3) संहनन (4) अवगाहना (ऊँचाई) (5) संस्थान (6) लेश्या (7) दृष्टि (8) ज्ञान अज्ञान (9) योग (10) उपयोग (11) संज्ञा (12) कषाय (13) इन्द्रिय (14) समुद्घात (15) वेदना (16) वेद (17) आयुष्य (18) अध्यवसाय (19) अनुबंध (20) कायसंवेध। ये 20 द्वार है। इनका वर्णन सीधा उस दंडकवर्ती जीव से नहीं लेकर उसके आगत स्थान वाले प्रत्येक जीव से संबंधित कर दर्शाया है। जैसे प्रथम दंडक नारकी का इसमें जीव के 7 भेद है, प्रथम जीव का भेद प्रथम नारकी का जीव है, इसमें आगत तीन की (1) असन्नी तिर्यंच (2) सन्नी तिर्यंच (3) मनुष्य (सन्नी) सर्वप्रथम पहली नरक में आने वाले असन्नी तिर्यंच को लेकर 20 द्वारों का वर्णन है।

आठ द्वार है-घर, जीव आगति, भव के स्थान, गम्मा, नाणता, गम्मा स्थान, अवगाहना, रिद्धि स्थान इनसे स्पष्टीकरण दिया है।

(1) घर–घर 44 है। 24 दंडक में से 22 दंडक के 22 घर और 7 नारकी के 7 घर, वैमानिक देवों के 15 (देवलोक–12, नवग्रैवयक–1, चार अणुत्तर–1, सर्वार्थसिद्ध–1) ये कुल 22+22=44 घर हुए इनमें वैक्रिय के 34 (7 नारकी, 10 भवनपति, 1 वाणव्यंतर, 1 ज्योतिषी, 15 वैमानिक) औदारिक के 10 (5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यंच पंचेन्द्रिय, 1 मनुष्य)।

(2) जीव द्वार–दूसरे बोले जीव 48। ऊपर के 44 घर के 44 जीव और तिर्यंच पंचेन्द्रिय तथा मनुष्य के तीन–तीन (सन्नी, असन्नी, युगलिया) ये चार बढ़े (42 घर के 42 और मनुष्य और तिर्यंच के तीन+तीन ये कुल 48 हुए। वैक्रिय के 34 (34 घर के 34) औदारिक के 14 (5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यंच के तीन मनुष्य के 3)।

(3) आगति–प्रत्येक घर में 48 जीवों में से जितनी आगति होती है, उनका योग 321 है।

आगति के 321 स्थान

घर	जीव	आगत संस्था	विवरण (आगत संख्या)
1	पहली नरक	3X1=3	असन्नी तिर्यंच, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य।
6	शेष 6 नरक	2X6=12	सन्नी तिर्यंच, मनुष्य।
10	दस भवनपति	5X10=50	सन्नी असन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य, दो युगलिया
1	व्यंतर देव	5X1=5	सन्नी असन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य, दो युगलिया
1	ज्योतिषी देव	4X1=4	उक्त पाँच में एक असन्नी तिर्यंच कम हुआ
2	पहला दूसरा देवलोक	4X2=8	उक्त पाँच में एक असन्नी तिर्यंच कम हुआ
6	3 से 8 देवलोक	2X6=12	सन्नी तिर्यंच मनुष्य
7	शेष देवता	1X7=7	मनुष्य
3	पृथ्वी पानी वनस्पति	26X3=78	भवनपति आदि 14 देवता (दूसरे देव तक) 12 औदारिक
2	तेउकाय, वायुकाय	12X2=24	12 औदारिक
3	विकलेन्द्रिय	12X3=36	12 औदारिक
1	तिर्यंच	39X1=39	48 में से 7 देवता (ऊपर के) दो युगलिया कम ये 39
1	मनुष्य	43X1=43	48 में से तेउ, वायु, 7वीं नरक, दो युगलिया कम ये 43
योग	44	आगत 321	वैक्रिय में 101, औदारिक में 220 की आगति है।

(4) गम्मा–प्रत्येक आगति के बोल के विषय में 9 प्रकार है गमक, अपेक्षाएँ, पृच्छाएँ होती हैं। ये 9 गमक स्थिति की अपेक्षा से हैं। आने वाले जीव की समुच्चय, जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति एवं उत्पन्न होने के स्थान में (घर) प्राप्त होने वाली

समुच्चय, जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति की अपेक्षा से 9 गमक बनते हैं–विवरण एवं समीक्षा इस प्रकार है–

1	औघिक (समुच्चय) औघिक	औघिक स्थिति वाला, औघिक स्थिति में उत्पन्न होवे
2	औघिक जघन्य	औघिक स्थिति वाला, जघन्य स्थिति में उत्पन्न होवे
3	औघिक उत्कृष्ट	औघिक स्थिति वाला, उत्कृष्ट स्थिति में उत्पन्न होवे
4	जघन्य औघिक	जघन्य स्थिति वाला, औघिक स्थिति में उत्पन्न होवे
5	जघन्य जघन्य	जघन्य स्थिति वाला, जघन्य स्थिति में उत्पन्न होवे
6	जघन्य उत्कृष्ट	जघन्य स्थिति वाला, उत्कृष्ट स्थिति में उत्पन्न होवे
7	उत्कृष्ट औघिक	उत्कृष्ट स्थिति वाला, औघिक स्थिति में उत्पन्न होवे
8	उत्कृष्ट जघन्य	उत्कृष्ट स्थिति वाला, जघन्य स्थिति में उत्पन्न होवे
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	उत्कृष्ट स्थिति वाला, उत्कृष्ट स्थिति में उत्पन्न होवे

(5) भव के स्थान–पाँचवे बोल में भव के 16 स्थान है–

क्र. सं.	भव का स्थान	स्थानों (घरों) में जावे	स्थिति वाला जावे	स्थिति पावे	भव करे
(1)	असंज्ञी तिर्यंच मरकर	12 घर–10 भवनपति 1 वाणव्यंतर पहली नरक (वैक्रिय के)	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	ज. दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग	जघन्य उत्कृष्ट दो भव करे
(2)	संज्ञी तिर्यंच मरकर	26 स्थान–वैक्रिय के पहली से छठी नरक, 20 देवता (आठवें तक)	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने–अपने स्थान अनुसार	जाने–आने आसरी जघन्य 2 उत्कृष्ट 8
(3)	संज्ञी तिर्यंच मरकर	सातवीं नरक में	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	ज. 22 सागरोम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जाने आसरी 6 गम्मा से ज. 3 उत्कृष्ट 7 (3, 6, 9 छोड़कर) तीन गम्मा से ज. 3 उ. 5 (3, 6, 9 गमा) आने आसरी 1 से 6 गम्मा ज. 2 उ. 6 भव आने आसरी 3 गम्मा (7, 8, 9) ज. 2 उ. 4 भव
(4)	संज्ञी मनुष्य मरकर	15 स्थान वैक्रिय 10 भवनपति 1 व्यंतर, 1 ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक 1 पहली नरक	ज. पृथकत्व मास उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने–अपने स्थान से	जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव

(5)	सन्नी मनुष्य	11 वैक्रिय के-दूसरी से छठी पाँच नरक, 3 से 8, ये 6 देवलोक	ज. प्रत्येक वर्ष उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने-अपने स्थान के अनुसार	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव
(6)	संज्ञी मनुष्य	5 वैक्रिय-9 से 12वां देवलोक के 4, नवग्रैवेयक का एक ये 5 स्थान	"	"	जाने का जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 7, आने का ज. 2 भव उत्कृष्ट 6 भव
(7)	संज्ञी मनुष्य	4 अणुत्तर विमान	"	जघन्य 31 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जाने का ज. 3 उत्कृष्ट 5 भव आने का ज. 2 भव उत्कृष्ट 4 भव
(8)	संज्ञी मनुष्य	सर्वार्थ सिद्ध विमान	"	33 सागरोपम	जाने का 3 भव आने का 2 भव
(9)	संज्ञी मनुष्य	सातवीं नरक	"	ज. 22 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव
(10)	दो प्रकार के युगलिया	वैक्रिय के 14 घर-10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक	10 भवन, वाणव्यंतर में ज. करोड़ पूर्व झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम ज्योतिषी-ज. पल्योपम का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 3 पल्योपम पहला देव-1 पल्य उत्कृष्ट 3 पल्योपम दूसरा देव-1 पल झाझेरी 3 उत्कृष्ट 3 पल्य	असुरकुमार-ज. 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट 3 पल्य। नौ निकाय में उ. देशोन दो पल्य। व्यंतर में उत्कृष्ट 1 पल्योपम (ज. एक सरीखा) पल्योपम का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष जघन्य 1 पल्य उत्कृष्ट 3 पल्योपम ज. 1 पल्य झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव
(11)	14 देवता 10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक	पृथ्वी, पानी, वन स्पति में 9 गम्मे से जावे	अपने-अपने स्थान की स्थति से जावे	अपने-अपने स्थान की स्थिति पावे	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव करे
(12)	4 स्थावर (पृथ्वी पानी तेउ वायु) वनस्पति मरकर वनस्पति मरकर	5 स्थावर में 5X4=20 बोल 4 बोल 24 बोल 4 स्थावर में वनस्पति में	अपनी-अपनी स्थिति दो अन्तर्मुहूर्त अनन्ता काल	दो अन्तर्मुहूर्त और असंख्याता काल दो अन्त.अनन्ता काल	4 गम्मे से (1, 2 4, 5) ज. 2 उत्कृष्ट असंख्याता भव 4 गम्मे (1, 2 4, 5) से ज. 2

					उत्कृष्ट अनंत 5 गमे से (3,6,7 8,9) ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव
(13)	पाँच स्थावर 3 विकलेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय 5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय	तीन विकलेन्द्रिय 3X5=15 " 3X3=9 पाँच स्थावर में 5X3=15=39 तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अपनी-अपनी स्थिति " " " " "	अपने-अपने स्थान से " " " " "	4 गम्मे से ज. 2 भव और संख्याता भव 5 गम्मे से ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव ज. 2 उत्कृष्ट 8 भव
(14)	संज्ञी, असंज्ञी तिर्यंच	10 स्थान औदारिक पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य	जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व	अपने-अपने स्थान से	जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव
(15)	पृथ्वी पानी वनस्पति, 3 विकलेन्द्रिय सन्नी असन्नी मनुष्य	मनुष्य आठ औदारिक पृथ्वी पानी, वनस्पति, 3 विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य	अपनी-अपनी स्थिति वाले	अपने-अपने स्थिति से	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव
(16)	संज्ञी असंज्ञी मनुष्य	तेउकाय वायुकाय	"	"	2 भव

(6) छठे बोले गम्मा 2805 (गमक-विकल्प)-321 आगति के स्थान है, उन्हें 9 गम्मे से गुणा करने से 2889 गम्मा होते हैं। इन गमक को ही गम्मा कहते है यानि तत्त्व को पूछने (पृच्छा) के तरीके। एक-एक बोल में 9-9 प्रश्नों से पूछना। 321x9=2889 गम्मा।

शून्य गम्मा-सर्वत्र जघन्य उत्कृष्ट स्थिति हो तो गम्मा 2889 बनते हैं, परन्तु कहीं एक ही स्थिति है, तो कहीं एक स्थिति ही प्राप्त होती है वहाँ आगति से 9 गम्मा नहीं बनते हैं-(1) असन्नी मनुष्य की स्थिति अन्तर्मुहूर्त है, अत: तीन गम्मा हुए 6 कम हो गये। औदारिक के 10 घरों में असन्नी मनुष्य जाता है अत: 10x6=60 गम्मा कम हो गये। (शून्य)

(2) सर्वार्थसिद्ध में 33 सागर की एक ही स्थिति है, वे देव केवल मनुष्य में 1, 2, 3 गम्मे से आते हैं, और केवल मनुष्य ही उनमें 1, 4, 7 गम्मे (तीन) से जाता है। अत: इन 2 आगत स्थानों में 6-6 गम्मे टूटे। 6x2=12 गम्मे शून्य हुए। कम हो गये।

(3) तिर्यंच युगलिया, मनुष्य युगलिया मरकर ज्योतिषी और पहले दूसरे देवलोक में जाते हैं, तब जघन्य स्थिति युगलिये वहाँ एक ही स्थिति में जाते हैं जिससे एक चौथा गम्मा ही बनता है, पाँचवा-छठा नहीं बनता अतः युगलिया x स्थान x गम्मा 2x3x2=12 गम्मे शून्य हो गये। इस प्रकार 60+12+12=84 गम्मा शून्य है। इन्हें टूटे गम्मे कहते हैं, अतः 2889-84=2805 गम्मा रहे।

उद्देशक	जीवघर	आगत स्थान	गम्मा 9	विवरण
1	7 नरक	3+12=15	15X9=135	प्रथम नरक में 3 शेष छ में 2-2 आगत
2-11	10 भवनपति	5×10=50	50X9=450	
12	पृथ्वीकाय	26	25X9=225 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
13	अपकाय	26	25X9=225 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
14	तेउकाय	12	11X9=99 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
15	वायुकाय	12	11X9=99 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
16	वनस्पतिकाय	26	25X9=225 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
17-19	विकलेन्द्रिय तीन	3X12=36	102X3=306	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
20	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	39	38X9=342 1X3=3	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तीन गम्मा से आवे
21	मनुष्य	43	41X9=369 2X3=6	सम्मुर्च्छिम मनुष्य तथा सर्वार्थसिद्ध भी तीन गम्मे से आवे।
22	वाणव्यंतर देव	5	5X9=45	
23	ज्योतिषी	4	2X9=18 2X7=14	दोनों युगलिक 7 गम्मों से आवे
24	वैमानिक 15	2X4=8 (27) 6X2=12	22X9=198 4X7=28	दोनों युगलिक 7 गम्मों से आवे सर्वार्थसिद्ध में मनुष्य तीन गम्मा से आवे
		7X1=7	1X3=3	
कुल	24 उद्देशक	आगत 321	गम्मा 2805	

(1) जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के 774 गम्मा-असन्नी तिर्यंच मरकर 12 स्थान में (10 भवनपति व्यंतर, पहली नरक) जाता है दो भव ही करता है वापस असन्नी तिर्यंच नहीं बनता। दो प्रकार के युगलिया 14 देवता में जाते हैं दो-दो भव ही करते है वापस युगलिया नहीं बनते। 14 देवता पृथ्वी, पानी, वनस्पति में ये कुल 12+28+42 स्थान हुए इनके 9 गम्मा से 738 स्थानों में दो युगलिया के 2 गम्मा (चौथा छठा) कम होने से युगलिया स्थान गम्मा 2x3x2=12 गम्मा कम होने से 738-12=726 गम्मा। संज्ञी और असंज्ञी मनुष्य तेउकाय वायुकाय में जावे-दो भव करे। संज्ञी मनुष्य के 2x9=18 और असंज्ञी के 2x3=6 ये कुल 24 गम्मा हुए। संज्ञी मनुष्य 7वीं नरक 9 गम्मा से, सवार्थसिद्ध देवता मनुष्य ये 3 गम्मा से। संज्ञी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य, असंज्ञी तिर्यंच ये तीन तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में उपजते हैं फिर दो-दो भव ही करे फिर उन गम्मों से युगलिया बनते हैं, वापस फिर तिर्यंच मनुष्य नहीं बनते 2-2 गम्मे (3-9) से जाते हैं ये 12 गम्मा (3x2x2=12) ये 726+18+6+9+3+12=774 गम्मा। भव के स्थान 1, 8, 9, 10, 11, 14, 15, 16

जीव स्थान		गम्मा	विवरण
असन्नी तिर्यंच	12 (भवन 10 व्यंतर,1 नरक)	12X9=108	
2 युगलिया	14 देवता 2X14=28	28X9=252	युगलिया दोनों 7 गम्मों से जावे
		-2X3X2 12 कम 240	
14 देवता	पृथ्वी पानी वनस्पति 3X14	42X9 378	
संज्ञी असंज्ञी मनुष्य	तेउकाय वायुकाय	2X9 18 2X3 6	असंज्ञी 3 गम्मे से जावे
संज्ञी मनुष्य	7वीं नरक	1X9 9	
सर्वार्थसिद्ध	मनुष्य	1X3 3	तीन गम्मो 7-8-9 से
संज्ञी असंज्ञी तिर्यंच	तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य	1X2X2 12	दो-दो गम्मों से (3, 9)
और संज्ञी मनुष्य		774	

(2) जघन्य दो भव उत्कृष्ट 8 भव के 1646 गम्मा-भव के स्थान 2, 4, 5, 12, 13, 14, 15 संज्ञी तिर्यंच सन्नी मनुष्य 26 स्थान (6 नरक, 20 देवता आठवें देव तक) 2x26x9=936 गम्मा। **पृथ्वीकाय** के जीव 10 औदारिक में जाते हैं, 12 के आते हैं। 5 स्थावर 3 विकलेन्द्रिय इन 8 के 5-5 गम्मा से 40। असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य 9 गम्मा से आते हैं-27 गम्मा। असंज्ञी मनुष्य के 3 गम्मा (40+27+3=70)। 4 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय के भी 70x8=560। तेउ वायु में संज्ञी असंज्ञी मनुष्य नहीं जाते अतः 9+3=12x2=24 गम्मा कम ये, 560-24=536 गम्मा।

तिर्यंच में-96 इसमें 12 औदारिक के आते हैं। 5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय ये 8x9=72 गम्मा। सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य असन्नी तिर्यंच 7-7 गम्मा से, असन्नी मनुष्य तीन गम्मा से 72+21+3=96 गम्मा।

मनुष्य का 78-औदारिक के 10 (तेउ वायु छोड़कर) आते हैं पृथ्वी, पानी, वनस्पति, तीन विकलेन्द्रिय के 6x9=54। असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, संज्ञी मनुष्य 7-7 गम्मा से (3, 9 छोड़कर) असंज्ञी मनुष्य 3 गम्मा से 54+21+3=78 गम्मा। ये सभी 936+536+96+78=1646 गम्मा।

जीव	स्थान	गम्मा	विवरण
सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य	26 वैक्रिय (6 नरक 20 देवता) 26+26=52	52X2X9=936	
पृथ्वीकाय	5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय	8X5=40	पाँच गम्मा (3, 6, 7, 8, 9)
	सन्नी-असन्नी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य असंज्ञी मनुष्य	3X9=27 1X3=3	असंज्ञी तीन गम्मा से असंज्ञी मनुष्य 3 गम्मा से (4,5,6)
पानी वन. तीन	पृथ्वीकाय जैसे	70X5=350	तेउवायु में मनुष्य नहीं आते
विकलेन्द्रिय			संज्ञी के 9 असंज्ञी के 3
तेउकाय वायुकाय	ऊपर में से संज्ञी असंज्ञी के नहीं आते 9+3X2=24	70X2=140-24=116 =536	कम 12X2=24 कम
तिर्यंच	पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय	8X9=72	
	संज्ञी-असंज्ञी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य	3X7=21	7 गम्मे से (3, 7 छोड़कर)
	असंज्ञी मनुष्य के	1X3=3 = 96	
मनुष्य	10 औदारिक पृथ्वी पानी वनस्पति	6X9=54	
	तीन विकलेन्द्रिय 3+3 संज्ञी असंज्ञी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य	3X7=21	सात गम्मे से
	असंज्ञी मनुष्य	1X3 3 = 78	तीन गम्मे से
		1646	

(3) दो भव और असंख्यात भव के 96 गम्मे-भव के स्थान-12वाँ। 4 स्थावर मरकर 5 स्थावर में और वनस्पति मरकर 4 स्थावर में जाते है ये 24 स्थान 4 गम्मे (1, 2, 4, 5) से 96 गम्में

(4) दो भव और अनन्ता भव के 4 गम्मा-भव का स्थान 12वाँ। वनस्पति मरकर वनस्पतिकाय में 4 गम्मों से (1, 2, 4, 5) उत्पन्न होती हैं उत्कृष्ट अनन्त भव करें।

(5) दो भवों और संख्याता भवों के 156 गम्मे-भव स्थान 13वाँ। तीन विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावर मरकर बेइन्द्रिय में और बेइन्द्रिय पाँच स्थावर में इन स्थानों में 4 गम्मो (1, 2, 4, 5) से 13x4=52 इसी तरह तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय के 52+52+52=156 गम्मा।

(6) तीन भव और 7 भव जाने और 2 भव 6 भव आने के 102 गम्मा-भव स्थान 6 में 45 तथा 3 में 6 यों 51x2=102 गम्मा। मनुष्य 5 स्थान (4 (नव से 12) देव+1 नवगैवेयक) 9 गम्मा से = 45। तिर्यंच मरकर 7वीं नरक 6 गम्मा से (जाने के 1, 2, 4, 5, 7, 8 आने के 1 से 6) ये 51x2=102.

(7) तीन भव पाँच भव जाने के 2 भव 4 भव आने के 24 गम्मा-भव स्थान 7 में 9 और तीन में 3 गम्मे ये 12x2=24 गम्मे। मनुष्य 4 अणुत्तर विमान में 9 गम्मा से, और तिर्यंच मरकर 7वीं नरक में तीन गम्मा (जाने के 3, 6, 9 आने के 7, 8, 9) ये 12x2=24 गम्मा।

(8) तीन भव जाने के तीन गम्मे-(भव स्थान 8वाँ) मनुष्य सर्वार्थसिद्ध में जाता है तीन गम्मे से (3, 6, 9)। ये सब मिलाकर-2805 (774+1646+96+4+156+102+24+3=2805) हुए।

कौन कहाँ कितने भव-

(1) उत्कृष्ट दो भव-असन्नी तिर्यंच (12 स्थान) नारकी, मनुष्य सातवीं नरक, सर्वार्थसिद्ध मनुष्य में, सन्नी असन्नी मनुष्य-तेउवायु में, दोनों युगलिये देव बने, सन्नी असन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य तिर्यंच और मनुष्य के घर में, 14 देवता पृथ्वी पानी वनस्पति में जावे तो दो ही भव करें।

(2) उत्कृष्ट तीन भव-मनुष्य सर्वार्थसिद्ध में जावे तो उत्कृष्ट तीन ही भव करें।

(3) उत्कृष्ट 4 भव-(1) 4 अणुत्तर विमान के देव मनुष्य में, 7 नरक का तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 7 से 9 गम्मा से जावे तो उत्कृष्ट 4 भव करें।

(4) उत्कृष्ट 5 भव-मनुष्य चार अणुत्तर, सन्नी तिर्यंच 7वीं नरक में तीन (3, 6, 9) से जावे तो।

(5) उत्कृष्ट 6 भव-9 से 12 देव और 9 ग्रैवेयक मनुष्य में, 7वीं नरक का सन्नी तिर्यंच में 1 से 6 गम्मो से जावे तो उत्कृष्ट 6 भव करें।

(6) उत्कृष्ट 7 भव-(1) मनुष्य 9 से 12 देव और नवग्रैवेयक में, सन्नी तिर्यंच 7वीं नरक में (1, 2, 4, 5, 7, 8) गम्मों से जावे तो उत्कृष्ट 7 भव करें।

(7) उत्कृष्ट संख्याता भव–(1) पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय (1, 2, 4, 5) से जावे तो तीन विकलेन्द्रिय औदारिक के 8 घर (5+3) (1, 2, 4, 5) से जावे तो उत्कृष्ट संख्याता।

(8) उत्कृष्ट असंख्याता–(1) पृथ्वी आदि 5 स्थावर 4 स्थावर में (1, 2, 4, 5) से जावे, 4 स्थावर वनस्पति में जावे (1, 2, 4, 5) से तो उत्कृष्ट असंख्याता भव करें।

(9) उत्कृष्ट अनन्ता–(1) वनस्पति मरकर वनस्पति में (1, 2, 4, 5) से उत्कृष्ट अनंता भव।

(10) उत्कृष्ट 8 भव–ऊपर के 9 क्रमांक तक कहे स्थानों के सिवाय शेष बचे सभी में उत्कृष्ट 8 भव करते है। असन्नी मनुष्य सभी में 3 गम्मों (1, 2, 3) से, सन्नी असन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्य ये तीन (शेष बचे स्थानों में) जावे सर्वत्र नव गम्मों से और पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय इन्हीं 8 घरों में (3, 6, 7, 8, 9) से उत्कृष्ट 8 भव और ये आठ (5+3) जीव तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में 9 ही गम्मों जावे तो 8 भव। यहाँ 1 से 10 संख्या में सभी प्रकार के उत्कृष्ट भव संग्रहीत किये है। जघन्य तो सर्वत्र 2 भव होते ही है।

7. **सातवें बोल णाणत्ता 1998**–321 स्थानों के जीवों की औघिक के पहले गम्मे की ऋद्धि की अपेक्षा जघन्य के चौथे आदि तीन गम्मों में उत्कृष्ट आदि के सातवें आदि गम्मों में जो फर्क–विशेषताएँ होती है वे णाणत्ता है। ये णाणत्ता के बोल 9 है–(1) अवगाहना, (2) लेश्या, (3) दृष्टि, (4) ज्ञान–अज्ञान, (5) योग, (6) समुद्घात, (7) आयुष्य, (8) अध्यवसाय, (9) अनुबंध इन बोलों में फर्क पड़ता है।

(1) औदारिक से वैक्रिय में जाने के 715 णाणत्ता–

(1) असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय वैक्रिय के 12 घर में जावे उसके 5 णाणत्ता से 60 णाणत्ता जघन्य में 3 बोलों का फर्क आयुष्य, अध्यवसाय और अनुबंध और उत्कृष्ट में आयुष्य और अनुबंध दो बोलों का 12x5=60 णाणत्ता।

(2) सन्नी तिर्यंच वैक्रिय के 27 घर (7 नारकी 20 देवता) उसके 10–10 णाणता। (1) अवगाहना–ज. अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अनेक धनुष (2) लेश्या–नारकी में 3, भवनपति से दूसरे देवलोक तक 4 लेश्या, तीन–चार–पाँचवें देवलोक में 5 लेश्या (ऊपर आगे के देवों में फर्क नहीं होता)।

(3) दृष्टि–नारकी से ज्योतिषी तक मिथ्या, पहले से 8वें देवलोक तक 2 दृष्टि।

(4) ज्ञान अज्ञान–ज्योतिषी तक दो अज्ञान, ऊपर में 8वें तक दो ज्ञान 2 अज्ञान।

(5) समुद्घात–3 (6) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त (7) अध्यवसाय–नारकी में अशुभ देवों में शुभ। (8) आयुष्य के अनुसार अनुबंध। उत्कृष्ट गम्मा में 2 णाणत्ता–आयुष्य, अनुबंध ये 10 हुए। 27x10=270 उनमें से 6–7–8 देवलोक में लेश्या में फर्क नहीं है इसलिए तीन कम 267 बोल।

(3) संज्ञी मनुष्य वैक्रिय के 15 घरों में जावे–नाणत्ता 8। जघन्य गम्मा में 5 बोल का फर्क–अवगाहना अनेक अंगुल, ज्ञान अज्ञान–3 ज्ञान 3 अज्ञान की भजना, समुद्घात–5 आयुष्य प्रत्येक मास अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट गम्मा तीन अवगाहना–500 धनुष की। आयुष्य–करोड़ पूर्व की, अनुबंध–आयुष्यवत, ये 8 णाणत्ता x 15 घर = 120 णाणत्ता।

(4) संज्ञी मनुष्य वैक्रिय के 19 घरों में जावे–णाणत्ता 6 जघन्य 3 गम्मा में 3 बोल–अवगाहना–प्रत्येक हाथ, आयुष्य–प्रत्येक वर्ष अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में भी तीन, अवगाहना–500 धनुष, आयुष्य करोड़ पूर्व अनुबंध आयुष्यवत्। 19x6=114 णाणत्ता।

(5) तिर्यंच युगलिया वैक्रिय के 14 घरों में जावे–णाणत्ता 5। जघन्य 3 बोलों में 3 णाणत्ता।

(1) अवगाहना–भवनपति वाणव्यंतर में ज. प्रत्येक धनुष उत्कृष्ट हजार धनुष झाझेरी। ज्योतिषी में जाने वालों की ज. प्रत्येक धनुष उत्कृष्ट 1800 धनुष झाझेरी, पहले देवलोक में जाने वाले की उत्कृष्ट 2 गाऊ, दूसरे देवलोक में जाने वाले की उत्कृष्ट 2 गाऊ झाझेरी।

(2) आयुष्य–भवनपति व्यंतर में जाने वाले की करोड़ पूर्व झाझेरी, ज्योतिषी में जाने वाले की पल्य का आठवाँ भाग, पहले देवलोक में जाने की 1 पल्योपम दूसरे में जाने वाले की 1 पल्य झाझेरी।

(3) अनुबन्ध–आयुष्य वत् उत्कृष्ट गम्मा 3 में णाणत्ता 2–आयुष्य 3 पल्योपन की अनुबंध–आयुष्य वत् ये 5 हुए। 14 x 5 = 70 हुये।

(6) मनुष्य युगालिया वैक्रिय के 14 घरों में जावे–णाणत्ता 6 का 14 x 6=84 णाणत्ता। जघन्य तीन बोलों में तीन णाणत्ता ।

(1) अवगाहना–भवनणति व्यंतर में जाने वाले की 500 धनुष झाझेरी, ज्योतिषी में जाने वालों को 900 धनुष झाझेरी पहले देवलोक में जाने वालों को 1 गाऊ दूसरे देवलोक में जाने वालों को 1 गाऊ झाझेरी। आयुष्य–भवनणति वाणव्यंतर में जाने वालों की। करोड़ पूर्व झाझेरी, ज्योतिषि पल्य का आठवां भाग, पहले देवलोक में एक पल्योपम, दूसरे दवोलोक में जाने वालों की। पल्योपम झाझेरी।

(3) अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट गम्मे में णाणत्ता पड़े-3-**अवगाहना**-3 गाऊ आयुष्य–तीन पल्योपम, अनुबंध–आयुष्यवत्। ये 6 णाणत्ता x 14 = 84 णाणत्ता।

(2) औदारिक से औदारिक में जाने का 879 णाणत्ता–वैक्रिय से औदारिक के 404 णाणत्ता–(1) पृथ्वीकाय में जाये उसके 6 णाणत्ते जघन्य में 4–**लेश्या**–तीन **आयुष्य**–अन्तर्मुहूर्त (3) अध्यवसाय–अप्रशस्त, प्रशस्त (4) **अनुबंध**–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में 2 णाणत्ता–आयुष्य–22 हजार वर्ष–अनुबंध–आयुष्यवत्। ये 6 णाणत्ता।

(2) अप्काय–पृथ्वीकाय में जाये उसके 6 णाणत्ता पृथ्वीकाय के समान कहना। 6 णाणत्ता उत्कृष्ट–आयुष्य–7 हजार वर्ष, अनुबंध आयुष्यवत्।

(3) तेउकाय–पृथ्वीकाय में जाये उसके 5 णाणत्ता जघन्य में 3 (लेश्या उपरोक्त में से कम) उत्कृष्ट में 2, ये 5 णाणत्ता हुए। उत्कृष्ट–आयुष्य–3 अहोरात्रि, अनुबंध आयुष्यवत्।

(4) वायुकाय–पृथ्वीकाय में जाये तो 6 णाणत्ता। जघन्य 3 में 4 णाणत्ता–(1) समुद्घात तीन (2) आयुष्य–अन्तर्मुहूर्त (3) अध्यवसाय–अप्रशस्त (4) अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में 2 णाणत्ता–आयुष्य–3000 वर्ष अनुबंध आयुष्यवत्।

(5) वनस्पतिकाय–पृथ्वीकाय में जावे 7 णाणत्ता। जघन्य गम्मा से 5 (1) **अवगाहना**–अंगुल के असंख्यातवें भाग (2) लेश्या–3 (3) आयुष्य–अन्तर्मुहूर्त (4) अध्यवसाय–अप्रशस्त (5) अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में 2 णाणत्ता (1) आयुष्य–10000 वर्ष, अनुबंध–आयुष्यवत्।

(6) बेइन्द्रिय–पृथ्वीकाय में जावे तो णाणत्ता 9 जघन्य गम्मा से 7 (1) अवगाहना–अंगुल का असंख्यातवाँ भाग (2) दृष्टि 1 मिथ्या (3) ज्ञान अज्ञान–2 अज्ञान (4) योग–1 काया (5) आयुष्य–अन्तर्मुहूर्त (6) अध्यवसाय–अप्रशस्त (7) अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में णाणत्ता 2 आयुष्य–12 वर्ष, अनुबंध–आयुष्यवत्। ये 9 णाणत्ता।

(7) तेइन्द्रिय–पृथ्वीकाय में जावे तो णाणत्ता 9 जघन्य में 7 (बेइन्द्रिय अनुसार) उत्कृष्ट 2, आयुष्य–49 अहोरात्रि, अनुबंध–आयुष्य के अनुसार।

(8) चौइन्द्रिय–पृथ्वीकाय में जावे तो णाणत्ता 9 जघन्य में 7 (बेइन्द्रिय के अनुसार) उत्कृष्ट 2, आयुष्य–6 महीना, अनुबंध–आयुष्य के अनुसार।

(9) असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय–पृथ्वीकाय में जावे तो णाणत्ता 9 जघन्य 7 (बेइन्द्रियानुसार) उत्कृष्ट 2 आयुष्य–करोड़ पूर्व का, अनुबंध–आयुष्य के अनुसार।

(10) सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय–पृथ्वीकाय में जावे तो णाणत्ता 11 जघन्य में 9 णाणत्ता (1) अवगाहना–अंगुल के असंख्यातवें भाग (2) लेश्या तीन (3) दृष्टि 1 मिथ्यादृष्टि (4) ज्ञान–अज्ञान–2 अज्ञान (5) योग–1 काया (6) समुद्घात–तीन (7) आयुष्य अन्तर्मुहूर्त। (8) अध्यवसाय–अप्रशस्त (9) अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट गम्मा से 2 णाणत्ता (1) आयुष्य–करोड़ पूर्व का (2) अनुबंध–आयुष्यवत्।

(11) संज्ञी मनुष्य–पृथ्वीकाय में जावे तो 12 णाणत्ता। जघन्य तीन बोलों में 9 णाणत्ता (तिर्यंचवत्) उत्कृष्ट गम्मा तीन में तीन णाणत्ता (1) अवगाहना–500 धनुष (2) आयुष्य–करोड़ पूर्व (3) अनुबंध–आयुष्यवत्। ये कुल 89 णाणत्ता (6+6+5+6+7+9+9+9+9+11+12=89) इसी प्रकार तेउकाय और वायुकाय तक तीन विकलेन्द्रिय में भी 89–89 णाणत्ता समझना। असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भी 89 णाणत्ता। इनके अलावा मनुष्य में औदारिक के 89 में से 11 कम (तेउकाय, वायुकाय के) होने से औदारिक के 78 हुए। ये कुल 89+9=801+78=879 णाणत्ता हुए।

(12) चवदह देवता–पृथ्वीकाय में जाये तो 4 णाणत्ता। जघन्य तीन में 2 आयुष्य–अपने–अपने स्थान से, अनुबंध–आयुष्यवत्। उत्कृष्ट में भी 2 बोल–आयुष्य, अनुबंध ये 14×4=56 णाणत्ता। उपरोक्त में वर्णित पृथ्वीकायादि 5 स्थावर के 30, विकलेन्द्रिय के 27, असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 9, संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 11, संज्ञी मनुष्य के 12, देवता के 56 ये कुल 145 णाणत्ता हुए। (89 औदारिक से औदारिक, 56 वैक्रिय से औदारिक) इसी तरह 145 णाणत्ता अप्काय के, वनस्पति काय के भी कहना। तेउकाय, वायुकाय और तीन विकलेन्द्रिय में 89–89 णाणत्ता कहना, क्योंकि इनमें (तेउ, वायु, विकलेन्द्रिय में) देवता उत्पन्न नहीं होते हैं।

(13) तिर्यंच पंचेन्द्रिय में–कुल 197 णाणत्ता होते हैं, जिनमें से 145 णाणत्ता पृथ्वीकाय में कहे, वैसे कहना। सात नारकी, 6 देवलोक (तीसरे ये आठवें) तक

इन 13 स्थानों में 4 बोलों का फर्क। जघन्य दो आयुष्य-स्थिति के अनुसार, अनुबंध-आयुष्य वत्। उत्कृष्ट दो-आयुष्य-स्थिति के अनुसार, अनुबंध-आयुष्य वत्। ये 13x4=52 णाणत्ता जोड़ने से 145+52=197 णाणत्ता हुए।

(14) मनुष्यों में-कुल 206 णाणत्ता होते हैं, इनमें 78 णाणत्ता औदारिक से औदारिक के (पृथ्वीकाय अप्काय के 6-6 वनस्पति के 7, तीन विकलेन्द्रिय के 27, असंज्ञी तिर्यंच के 9, संज्ञी तिर्यंच के 11, मनुष्य 12) वैक्रिय के 32 स्थानों के 128 णाणत्ता (पहली से छठी नरक, 10 भवनपति, वाण व्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, 1 नवग्रैवेयक, 1 चारअणुत्तर विमान) इन 32 स्थानों में 4- बोलों का फरक-जघन्य में 2 आयुष्य-अपनी स्थिति अनुसार, अनुबंध-आयुष्य वत्। उत्कृष्ट 2 आयुष्य-अपनी स्थिति अनुसार, अनुबंध-आयुष्यवत्। ये 32x4=128+78=206 णाणत्ता (औदारिक 78, वैक्रिय 128)।

(वैक्रिय से औदारिक के 404-14 देवता पृथ्वी पानी वनस्पति 14x3=42

27 वैक्रिय-7 नरक 20 देवता, तिर्यंच में 27,

32 वैक्रिय (6 नरक 26 देवता सर्वार्थसिद्ध तक मनुष्य में 32

101x4=404

कुल णाणत्ता-60+267+120+114+154+145+145+145+89+89+89+89+89+197+206=1998 (औदारिक से वैक्रिय 715, औदारिक से औदारिक 879+वैक्रिय से औदारिक के 404=1998) इसी प्रकार नीचे चार्ट में-

उद्देशक	नाम	विवरण णाणत्ता	योग
1	नरक में	असन्नी तिर्यंच के 5, सन्नी तिर्यंच के 70, मनुष्य के 44 (6X6+8)	119
2 से 11	भवनपति में	असन्नी के 50, सन्नी ति. 100 मनुष्य के 80 युगलिया के 110	340
12	पृथ्वीकाय में	औदारिक के 89 वैक्रिय के 56 (14X4)	145
13	अप्काय में	औदारिक के 89 वैक्रिय के 56 (14X4)	145
14	तेउकाय में	औदारिक के 89	89
15	वायुकाय में	औदारिक के 89	89
16	वनस्पति में	पृथ्वीकाय के समान औदारिक 89 वैक्रिय के 56	145
17 से 19		तीन विकलेन्द्रिय तेउकाय के समान 89X3 औदारिक के	267
20		तिर्यंच पंचेन्द्रिय औदारिक के 89 वैक्रिय के 108 (27X4)	197
21	मनुष्य में	औदारिक के 78, वैक्रिय के 128 (32X4)	206
22	व्यंतर में	आसन्नी के 5 सन्नी के 10 मनुष्य के 8 युगलिया के 11	34
23	ज्योतिषी में	सन्नी के 10, मनुष्य के 8 युगलिया के 11	29

24	वैमानिक	दो देवलोक में 29X2=58	58	58
		6 देवलोक में 6+10=16X6=96-3	93	93
		ऊपर के 7 देवस्थानों में 6X7	42	42
			193	
		24 उद्देशकों में कुल णाणत्ता		1998

यहाँ आगत स्थान में जितने णाणत्ते कहे है, दो णाणत्ते उत्कृष्ट गम्मों में होते हैं, शेष जघन्य गम्मों में होते हैं। परन्तु मनुष्य में उत्कृष्ट गम्मों में 3 णाणत्ते होते हैं, शेष जघन्य में।

(8) आठवें बोले 9 बोल का फर्क-उपरोक्त नाणत्ता प्रकरण में नो बोलों से फर्क आता है-

(1) अवगाहना (2) लेश्या (3) दृष्टि (4) ज्ञान (5) योग (6) समुद्घात (7) आयुष्य (8) अध्यवसाय (9) अनुबंध इन बोलों का आगति के 321 स्थानों में फर्क पड़ता है।

(9) नवमें बोले 20 द्वार-आगति के 321 स्थानों (घरों) में प्रत्येक में 20-20 बोलों से समझाया है ये रिद्धि के द्वार भी कहलाते हैं। (1) उपपात (2) परिणाम आदि, शतक के शुरू में है।

उद्देशक 1 पहली नारकी (घर 1)-असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय आता है, नरक योग्य 20 द्वार इस प्रकार-

(1) उपपात-जघन्य 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति होती है।

(2) परिमाण-जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता।

(3) संहनन्-1 सेवार्त (छेवट्ठ) पाता है।

(4) अवगाहना-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन (जलचर) होती है।

(5) **संस्थान**-एक हुण्डक (6) **लेश्या**-3 कृष्ण नील कापोत। (7) **दृष्टि**-1 मिथ्या (8) **ज्ञान**-2 अज्ञान (9) **योग**-वचन और काया 2 (10) **उपयोग**-2 (2 अज्ञान 2 दर्शन) (11) **संज्ञा**-चारों (12) कषाय 4 (13) इन्द्रिय-पाँच (14) समुद्घात-तीन (15) वेदना-साता असाता दोनों (16) वेद-एक नपुंसक

(17) आयुष्य-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व (18) अध्यवसाय-दोनों शुभ और अशुभ (19) अनुबंध-आयुष्य के अनुसार (20) कायसंबंध-दो प्रकार का भवादेश-2 ही भव करे (एक चालू, एक नरक का) फिर सन्नी तिर्यंच या मनुष्य बने।

कालादेश (असन्नी तिर्यंच पहली नारकी में) 2 भव

गम्मा क्र.	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक-औघिक	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+पल्य का असंख्यातवाँ भाग
2	औघिक-जघन्य	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व अधिक दस हजार वर्ष
3	औघिक-उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग
4	जघन्यऔघिक	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग
5	जघन्य-जघन्य	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त+10000 वर्ष
6	जघन्य-उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग	अन्तर्मुहूर्त+पल का असं. भाग
7	उत्कृष्ट-औघिक	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग
8	उत्कृष्ट-जघन्य	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष	करोड़ पूर्व+10000 वर्ष
9	उत्कृष्ट-उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग	करोड़ पूर्व+पल का असं. भाग

पहली से 7वीं नरक-इनमें संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य ही आकर उत्पन्न होते हैं।

(1) उपपात (स्थिति) पहली नरक में ज. 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागर, दूसरी में उत्कृष्ट तीन सागर (पहले की उत्कृष्ट अगले की जघन्य होगी), तीसरी में उत्कृष्ट 7 सागर, चौथी में 10 सागर, पाँचवीं में उत्कृष्ट 17 सागर, छठी में 22 सागर, सातवीं में जघन्य 22 उत्कृष्ट 33 सागर की।

(2) परिमाण-मनुष्य एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता। तिर्यंच यावत् असंख्याता किन्तु सातवीं नरक में तीसरे और नवमें गम्मे में संख्याता उपजते हैं।

(3) संहनन-पहली दूसरी नरक में 6 संहनन, तीसरी में पाँच, चौथी में चार, पाँचवीं में तीन, छठी में दो और सातवीं नरक में वज्र ऋषभ नाराच संहनन एक ही होता है।

(4) अवगाहना-तिर्यंच अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन वाला। मनुष्य पहली नरक में जाने वाले की अपेक्षा जघन्य प्रत्येक अंगुल, दूसरी सभी 6 में प्रत्येक हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है। (5) **संस्थान**-छहों संस्थान सातों में (6) **लेश्या**-जाने वालों में 6-6 लेश्या (7) **दृष्टि**-तीनों दृष्टि वाला (8) **ज्ञान अज्ञान**-तीन ज्ञान तीन अज्ञान की भजना (तिर्यंच) और मनुष्य में 4 ज्ञान 3 अज्ञान

की भजना (9) योग 3 (10) **उपयोग**-दोनों (11) **संज्ञा** 4 (12) **कषाय**-चारों (13) **इन्द्रियाँ**-पाँच (14) **समुद्घात**-तिर्यंच में 5 मनुष्य में 6 (15) **वेदना**-दोनों साता असाता (16) **वेद**-पहली से छठी तक तीन सातवीं में दो (पुरुष, नपुंसक) (17) **आयुष्य**-तिर्यंच का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, मनुष्य का प्रत्येक मास। दूसरी से 7वीं तक जघन्य प्रत्येक वर्ष (अनेक वर्ष) उत्कृष्ट तिर्यंच मनुष्य दोनों का करोड़ पूर्व (18) **अध्यवसाय** शुभ और अशुभ (19) **अनुबंध**-आयुष्य के अनुसार (20) **कायसंवेध**-दो प्रकार का भवादेश से-तिर्यंच और मनुष्य पहली से छठी नारकी तक जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव। 7वीं नरक में तिर्यंच 6 गमा (3, 6, 9 छोड़ा) से जाने का 3 और 7 भव, आने का 2 भव 6 भव करते है। 3 गम्मा (3, 6, 9) में तीन भव 5 भव आने का तीन गम्मा (7, 8, 9) दो भव 4 भव। मनुष्य सातवीं नरक में 2 भव करता है। पहली नरक में 9 गम्मे से तिर्यंच में ज. अन्तर्मुहूर्त मनुष्य में अनेक मास सन्नी तिर्यंच/सन्नी मनुष्य पहली नरक में (2 भव 8 भव)। (मनुष्य में अन्तर्मुहूर्त की जगह प्रत्येक मास कहना)

गम्मा क्र.	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त (ति.)-10000 वर्ष प्रत्येक मास (म.)	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त (ति.)-10000 वर्ष प्रत्येक मास (म.)	4 करोड़ पूर्व 40000 वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	अंमु./(प्र.मा.) 1 सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
4	जघन्य औघिक	अंमु./प्र.मा. 10 हजार वर्ष	4 अंमु./4 प्र.मा./4 सागर
5	जघन्य जघन्य	अंमु./प्र.मा. 10 हजार वर्ष	4 अंमु./4 प्र.मा./40 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	अंमु./प्र.मा./ 1 सागर	4 अंमु./4 अ.मा.-4 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व 10000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व 10000 वर्ष	4 करोड़ पूर्व 40 हजार वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 1 सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर

दूसरी नारकी के 9 गम्मे कालादेश से (तिर्यंच का अन्तर्मुहूर्त जहाँ हो वहाँ मनुष्य का प्रत्येक वर्ष कहना)।

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त तीन सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 12 सागर

5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त एक सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 4 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त तीन सागर	4 अन्तर्मुहुर्त 12 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व एक सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व एक सागर	4 करोड़ पूर्व 4 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व तीन सागर	4 करोड़ पूर्व 12 सागर

इसी प्रकार तीसरी नारकी के जघन्य 3 सागरोपम उत्कृष्ट 7 सागरोपम के 9 गम्मे कहना।

इसी प्रकार चौथी नारकी के जघन्य 7 सागरोपम उत्कृष्ट 10 सागरोपम कहना।

इसी प्रकार पाँचवीं नारकी के जघन्य 10 सागरोपम उत्कृष्ट 17 सागरोपम कहना।

इसी प्रकार छठी नारकी के जघन्य 17 सागरोपम उत्कृष्ट 22 सागरोपम के 9 गम्मे से इन चारों नरक में तिर्यंच और मनुष्य के कथन सभी समान है सिर्फ जघन्य में तिर्यंच में अन्तर्मुहूर्त आता है, उस सभी जगह मनुष्य के लिए प्रत्येक वर्ष या अनेक वर्ष कहना।

सातवीं नरक में सन्नी तिर्यंच के (3 भव 7 भव और 3 भव 5 भव) 22 सागरोपम से 33 सागरोपम

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
2	औघिक जघन्य	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	2 अन्तर्मुहूर्त 33 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर
4	जघन्य औघिक	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 अन्तर्मुहूर्त 66 सागर
5	जघन्य जघन्य	2 अन्तर्मुहूर्त 22 सागर	4 अन्तर्मुहूर्त पूर्व 66 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	2 अन्तर्मुहूर्त 33 सागर	3 अन्तर्मुहुर्त 66 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	2 करोड़ पूर्व 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	2 करोड़ पूर्व 22 सागर	4 करोड़ पूर्व 66 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	2 करोड़ पूर्व 33 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर

33 सागर की स्थित के उत्कृष्ट 2 ही हो सकते हैं, तीन भव 22 सागर से होते हैं।

मनुष्य सातवीं नरक में (2 भव) 22 सागर उत्कृष्ट 33 सागर

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अनेक वर्ष 22 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर
2	औघिक जघन्य	अनेक वर्ष 22 सागर	करोड़ पूर्व 22 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	अनेक वर्ष 33 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर

4	जघन्य औघिक	अनेक वर्ष 22 सागर	अनेक वर्ष 33 सागर
5	जघन्य जघन्य	अनेक वर्ष 22 सागर	अनेक वर्ष 22 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	अनेक वर्ष 33 सागर	अनेक वर्ष 33 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व 22 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व 22 सागर	करोड़ पूर्व 22 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 33 सागर	करोड़ पूर्व 33 सागर

यहाँ जो ऋद्धि के 20 द्वार बताये हैं, वे मनुष्य-तिर्यंच के सारे भव की अपेक्षा से है। पहले उद्देशे में गम्मा 135 नाणत्ता 119 (असन्नी तिर्यंच के 5, सन्नी तिर्यंच के 70 और मनुष्य के 44 कुल 119) है।

दूसरा उद्देशा असुरकुमार-(1) **उपपात**-असंज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट पल के असंख्यातवें भाग। संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागर झाझेरी स्थिति में। दोनों युगलिया जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति होती है। असंज्ञी तिर्यंच अध्यवसाय जघन्य स्थिति में प्रशस्त बाकी रत्नप्रभा में कहा उसी प्रकार अन्य गम्मे भी कहना। संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य के बाकी परिमाण रिद्धि गम्मे रत्नप्रभा में उत्पन्न होवे जैसे कहना, तिर्यंच में जघन्य स्थिति में अध्यवसाय प्रशस्त कहना। लेश्या 4 कहना।

तिर्यंच युगलिया मनुष्य युगलिया में (2) **परिमाण** यावत् 1-2-3 यावत् संख्याता। (3) **संहनन् वज्र** ऋषभ नाराच। (4) **अवगाहना** तिर्यंच में जघन्य प्रत्येक धनुष उत्कृष्ट 6 गाउ, मनुष्य की जघन्य 500 धनुष झाझेरी उत्कृष्ट 3 गाऊ की। (5) संस्थान-सम चौरस (6) लेश्या-4 (7) दृष्टि-1 मिथ्या (8) ज्ञान-नहीं 2 अज्ञान (9) योग 3 (9) उपयोग 2 (10) संज्ञा 4 (11) कषाय 4 (13) इन्द्रिय 5 (14) समुद्घात 3 (15) वेदना 2 (16) वेद-2 स्त्री पुरुष (17) आयुष्य-जघन्य करोड़ पूर्व झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम किन्तु तीसरे गम्मे में जघन्य उत्कृष्ट तीन पल्योपम (18) अध्यवसाय-2 शुभ अशुभ (19) अनुबंध आयुष्य के अनुसार (20) कायसंबंध-2 प्रकार भवादेश से जघन्य उत्कृष्ट 2 भव। कालादेश की अपेक्षा 9 गम्मे से औघिक और औघिक 1 करोड़ पूर्व झाझेरा 10 हजार वर्ष का, तीन पल्योपम और तीन पल्योपम का इस प्रकार आगे नवमा गम्मा-उत्कृष्ट उत्कृष्ट-तीन पल्य तीन पल्य और तीन पल्य तीन पल्य का इस बीच के गम्मे बना सकते है। 5x9=45 गम्मा। णाणत्ता 34 (असंज्ञी तिर्यंच के 5 संज्ञी तिर्यंच के 10 संज्ञी मनुष्य के 8 युगलिया तिर्यंच के 5 युगलिया मनुष्य के 6) दूसरा उद्देशक संपूर्ण।

तीसरे से ग्यारहवें उद्देशक तक–नागकुमार से स्तनित कुमार तक नव निकाय के 9 उद्देशे–असंज्ञी तिर्यंच आकर उपजता है स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग। परिमाण ऋद्धि, गम्मा, णाणत्ता सभी रत्नप्रभा में असंज्ञी उपजे वैसा कहना। संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम की स्थिति में उपजते है। परिमाण ऋद्धि, गम्मा, नाणत्ता रत्नप्रभा में उत्पन्न होवे वैसा कहना किन्तु देवता की स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम कहनी। दो प्रकार के युगलिया जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट देशऊणी दो पल्योपम की स्थिति में उपजते हैं। परिमाण ऋद्धि गम्मा णाणत्ता असुरकुमार में उपजे वैसा कहना। किन्तु तीसरे गम्मे में युगलियों की स्थिति देशऊणी दो पल्योपम कहना। अवगाहना मनुष्य युगलिया की देशऊणी दो गाऊ की कहनी। 5x9=45 गम्मा। 34 णाणत्ता यो 45x9=405 गम्मा 306 णाणत्ता।

बारहवाँ उद्देशा–पृथ्वीकाय का पाँच स्थावर और एक असंज्ञी आकर उपजता है। जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष। परिमाण–पाँच स्थावर चार गम्मा (1, 2, 4, 5) समय–समय असंख्याता उपजते हैं। पाँच गम्मा आसरी एक समय में 1–2–3 यावत् संख्याता असंख्याता उपजे। **संहनन**–1 सेवार्त्त, **अवगाहना**–4 स्थावर असंज्ञी मनुष्य की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग। उत्कृष्ट 1 हजार योजन झाझेरी वनस्पतिकाय की। **संस्थान**–पृथ्वीकाय का चन्द्र तथा मसूर की दाल जैसा, तेउकाय–सुइयों की भारी जैसा वायुकाय का–ध्वजा पताका जैसा, अप्काय का पानी के परपोटे जैसा, वनस्पतिकाय का नाना प्रकार का है, असंज्ञी मनुष्य का हुंडक संस्थान है। **लेश्या** पृथ्वी पानी वनस्पति में 4 तेउ वायु असंज्ञी मनुष्य में 3 लेश्या। **दृष्टि** 1 मिथ्या **ज्ञान**–नहीं दो अज्ञान।

योग–1 काया, उपयोग–2, कषाय 4, संज्ञा 4 इन्द्रिय–5 स्थावर में 1, असंज्ञी मनुष्य में पाँच। **समुद्घात**–असंज्ञी मनुष्य 4 स्थावर में 3, वायुकाय में 4 समुद्घात, **वेदना** दोनों, **वेद** 1 नपुंसक, **आयुष्य** जघन्य–अन्तर्मुहूर्त–उत्कृष्ट पृथ्वीकाय का 22 हजार वर्ष, अप्काय का 7 हजार वर्ष, तेउकाय तीन अहोरात्रि, वायुकाय तीन हजार वर्ष, वनस्पतिकाय 10 हजार वर्ष, असंज्ञी मनुष्य अन्तर्मुहूर्त। अध्यवसाय–शुभ और अशुभ दोनों। **अनुबंध**–आयुष्य के अनुसार होता है।

कायसंवेध–दो प्रकार का है। भवादेश की अपेक्षा–**पाँच स्थावर** 4 गम्मा आसरी दो भव असंख्याता भव, पाँच गम्मा आसरी दो भव आठ भव। असंज्ञी मनुष्य– 2 भव

आठ भव। कालादेश से पाँच स्थावर का काल 9 गम्मा का है। (1) पहला गम्मा–औघिक औघिक–दो भव और असंख्याता भव, दो अन्तर्मुहूर्त और असंख्याता काल। पहले गम्मे की तरह पाँच स्थावर में दूसरा चौथा पाँचवा गम्मा कहना। (3) तीसरा गम्मा–औघिक उत्कृष्ट पृथ्वीकाय पृथ्वी इस प्रकार–

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 22000 वर्ष	88 हजार 88 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 22000 वर्ष	4 अन्तर्मुहूर्त 88 हजार वर्ष
7	उत्कृष्ट औघिक	अन्तर्मुहूर्त 22000 वर्ष	88 हजार वर्ष 88 हजार वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	अन्तर्मुहूर्त 22000 वर्ष	4 अन्तर्मुहूर्त 88 हजार वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	22 हजार वर्ष 22 हजार वर्ष	88 हजार वर्ष 88 हजार वर्ष

अप्काय पृथ्वीकाय में उपजे तीसरे गम्मे में अन्तर्मुहूर्त 22 हजार वर्ष, 28 हजार 88 हजार वर्ष इसी प्रकार ऊपर मुजब पाँच गम्मे बनाने हैं। सात हजार और बाईस हजार वर्ष से।

तेउकाय पृथ्वीकाय में पाँच गम्मे–अन्तर्मुहूर्त 22 हजार वर्ष, 12 अहोरात्रि 88 हजार वर्ष से।

वायुकाय पृथ्वीकाय में पाँच गम्मे–अन्तर्मुहूर्त 22 हजार वर्ष, 12 हजार वर्ष 88 हजार वर्ष से ऊपर दर्शाये अनुसार चार्ट बना सकते हैं। वनस्पतिकाय अन्तर्मुहूर्त 22 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष और 88 हजार वर्ष इसके भी 3, 6, 7, 8, 9 गम्मे ऊपर जैसे बनाने हैं।

असंज्ञी मनुष्य का काल 3 गम्मा का है।

1	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 88 हजार वर्ष
2	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
3	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 22 हजार वर्ष	4 अन्तर्मुहूर्त 88 हजार वर्ष

पाँच स्थावर के 5x9=45 गम्मा असंज्ञी मनुष्य के 3 ये 48 गम्मा। पाँच स्थावर के 30 णाणत्ता हुए।

असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और तीन विकलेन्द्रिय पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हैं, **स्थिति** जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष। **परिमाण**–जघन्य (1–2–3, 5) 4 गम्मों से जघन्य उत्कृष्ट असंख्याता उपजते हैं, शेष 5 गम्मों में एक समय में जघन्य 1–2–3 यावत् संख्याता, असंख्याता। **संहनन**–एक सेवार्त। **अवगाहना**–जघन्य अंगुल

के असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की 12 योजन, तेइन्द्रिय की 3 गाऊ, चौइन्द्रिय 4 गाऊ, असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय की एक हजार योजन। **संस्थान**-एक हुंडक। **लेश्या**-3 पहले की। **दृष्टि**-2 सम, मिथ्या। **ज्ञान**-2 ज्ञान 2 अज्ञान। **योग**-2 **उपयोग** 2 **संज्ञा** 4 कषाय 4 इन्द्रिय-बेइन्द्रिय में 2, तेइन्द्रिय में 3, चौरन्द्रिय में 4, असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 5 होती है। **समुद्घात**-तीन, **वेदना** 2, **वेद** 1 नपुंसक, आयुष्य-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट बेइन्द्रिय का 12 वर्ष, तेइन्द्रिय का 49 दिन, चौइन्द्रिय का 6 मास, असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय का 1 करोड़ पूर्व होती है। अध्यवसाय-2 शुभ, अशुभ। अनुबंध-आयुष्य के अनुसार। कायसंवेध-दो-भवादेश से तीन विकलेन्द्रिय 5 गम्मा आसरी जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव और असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9 गम्मा आसरी दो भव आठ भव करता है। कालादेश की अपेक्षा-तीन विकलेन्द्रिय जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्याता काल का है। **पहला गम्मा**-औघिक औघिक-जघन्य दो भव उत्कृष्ट संख्याता भव, दो अन्तर्मुहूर्त संख्यात काल इसी तरह दूसरा चौथा पाँचवाँ गम्मा है। गम्मा पाँच 3, 6, 7, 8, 9 पृथ्वीकाय की तरह कहना। तीनों विकलेन्द्रिय में अपनी-अपनी आयु के अनुसार कथन करना बेइन्द्रिय 12 वर्ष, तेइन्द्रिय 49 दिन, चोइन्द्रिय 6 मास। असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 9 गम्मों से कथन है। औघिक औघिक अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व 88 हजार वर्ष आगे 9 गम्मा कहना। नवमां गम्मा उत्कृष्ट उत्कृष्ट-करोड़ पूर्व 22 हजार वर्ष, 4 करोड़ पूर्व 88 हजार वर्ष। 3+1=4x9=36 गम्मा। 27+9=36 नाणत्ता हुए।

संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और संज्ञी मनुष्य पृथ्वीकाय में उपजते हैं।

स्थिति-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष। **परिमाण** एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् तिर्यंच संख्याता असंख्याता और मनुष्य संख्याता उपजते हैं। **संहनन**-6-6 **अवगाहना**-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तिर्यंच पंचेन्द्रिय की 1 हजार योजन, मनुष्य की 500 धनुष। **संस्थान** 6-6, **लेश्या**-6-6। **दृष्टि**-3-3। **ज्ञान**-तिर्यंच पंचेन्द्रिय में तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की भजना, मनुष्य में 4 ज्ञान 3 अज्ञान की भजना। **संज्ञा**-4-4, **कषाय** 4-4, इन्द्रिय-पाँच-पाँच। **समुद्घात** तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 5 मनुष्य 6, **वेदना**-2-2 **वेद** 3-3, **आयुष्य**-दोनों का जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व **अध्यवसाय**-शुभ, अशुभ। अनुबंध आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध**-दो-**भवादेश** की अपेक्षा दोनों जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव करते हैं।

कालादेश की अपेक्षा-9 गम्मा का काल ये 9 गम्मा असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय की तरह। गम्मा 2x9=18 णाणत्ता 11+12=23।

भवनपति से लेकर दूसरे देवलोक तक 14 देवता पृथ्वीकाय में आकर उपजते है। **स्थिति** जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष **परिमाण**-एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता। **संहनन** नहीं होता। शुभ पुद्गल परिणमते हैं। **अवगाहना**-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 7 हाथ, उत्तर वैक्रि ज. अ.सं. भाग उ. 1 लाख योजन की। **लेश्या**-भवनपति वाणव्यंतर में 4 ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक में 1, तेजो लेश्या। **दृष्टि** 3। **ज्ञान**-भवनपति व्यंतर में 3 ज्ञान की नियमा 3 अज्ञान की भजना, ज्योतिषी, पहले, दूसरे देवलोक में 3 ज्ञान 3 अज्ञान की नियमा। **योग**-3-3 **उपयोग**-2-2, **संज्ञा** 4-4, **कषाय**-4-4, **इन्द्रिय** 5-5, **समुद्घात** 5-5, **वेदना**-2-2, **वेद**-2-2, **आयुष्य**-भवनपति में असुरकुमार का जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागर झाझेरा, नवनिकाय का उत्कृष्ट देशऊणा दो पल्योपम, व्यंतर का उत्कृष्ट 1 पल्य ज्योतिषी का जघन्य पल्य का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 1 पल्य 1 लाख वर्ष पहले देवलोक का जघन्य 1 पल्य उत्कृष्ट 2 सागरोपम दूसरे देवलोक का जघन्य 1 पल्योपम झाझेरा, उत्कृष्ट 2 सागरोपम झाझेरा। **अध्यवसाय** 2-2 **अनुबंध**-आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध**-दो-भवादेश से जघन्य उत्कृष्ट 2-2 भव है। **कालादेश** से काल 9 गम्मा का असुरकुमार से-

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
2	औघिक जघन्य	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
4	जघन्य औघिक	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष
5	जघन्य जघन्य	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त	10000 वर्ष अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष	10000 वर्ष 22 हजार वर्ष
7	उत्कृष्ट औघिक	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त	1 सागर साधिक अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष	1 सागर साधिक 22 हजार वर्ष

बाकी देवताओं के गम्मे अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार कहने हैं। गम्मा 14x9=126 णाणत्ता 14x4=56 कुल गम्मा 45+3+36+18+126=228 हुए। णाणत्ता 30+36+23+56=145 हुए।

तेरहवाँ उद्देशा-(घर अप्काय का) 26 स्थानों से जीव आकार उपजते हैं, बाकी सब अधिकार पृथ्वीकाय की तरह कहना किन्तु विशेषता यह कि स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 7 हजार वर्ष है। इसी स्थिति से गम्मा कहना। गम्मा 228 णाणत्ता 145 हुए।

चौदहवाँ उद्देशा (तेउकाय का) 12 औदारिक के जीव आकर उत्पन्न होते हैं। **स्थिति**-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि। सन्नी असन्नी मनुष्य भवादेश की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट 2 भव करते हैं। अन्य अधिकार सभी पृथ्वीकायवत् कहना। काल के 9 गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि की स्थिति के कहना। गम्मा 11x9=99 असंज्ञी मनुष्य के 3 गम्मा ये कुल 102 गम्मा, णाणत्ता 89 हुए।

पन्द्रहवाँ उद्देशा (वायुकाय का) 12 औदारिक के जीव आकार उपजते हैं। **स्थिति**-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 3000 वर्ष, अन्य अधिक तेउकाय की तरह कहना, किन्तु काल के 9 गम्मा में स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष से कहना। गम्मा 102 णाणत्ता 89 हुए।

सोलहवाँ उद्देशा (वनस्पतिकाय) 26 स्थानों से जीव आकर उत्पन्न होते हैं। **स्थिति**-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 10 हजार वर्ष, अन्य सारा अधिकार पृथ्वीकायवत् कहना, विशेषता यह कि काल के 9 गम्मा में स्थित जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 10 हजार वर्ष से कहना। और वनस्पति वनस्पति में उत्पन्न होवे उनमें 4 गम्मा 1, 2, 4, 5 में परिमाण समय-समय विरह रहित अनन्ता उपजे। भवा देश की अपेक्षा जघन्य 2 भव उत्कृष्ट अनंतभव और कालादेश की अपेक्षा जघन्य 2 अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनंतकाल।

वनस्पति वनस्पति में-

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1-2-4-5	औघिक औघिक, ओ. जघन्य जघन्य औघिक, जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	अनंतकाल अनंतकाल
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 10000 वर्ष	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 10000 वर्ष	4 अन्तर्मुहूर्त 40 हजार वर्ष
7	उत्कृष्ट औघिक	10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त	40 हजार वर्ष 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	10 हजार वर्ष 10 हजार वर्ष	40 हजार वर्ष 40 हजार वर्ष

गम्मा 25x9=225 असंज्ञी मनुष्य के 3 गम्मा कुल गम्मा 228 णाणत्ता 145 हुए।

सत्तरहवाँ उद्देशा-(घर एक बेइन्द्रिय का) 12 औदारिक जीव आकर उत्पन्न होते हैं। **स्थिति**-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 12 वर्ष, बाकी सभी अधिकार पृथ्वीकायवत्। किन्तु काल के 9 गम्मा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट12 वर्षसे कहना। पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय ये आठ में 4 गम्मा (1, 2, 4, 5) से कहना। भवादेश की अपेक्षा जघन्य 2 भव उत्कृष्ट संख्याता भव कालादेश की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यातकाल कहना। गम्मा 102 णाणत्ता 89 हुए।

अठारहवाँ उद्देशा (तेइन्द्रियका) 12 औदारिक के जीव आकर उपजते है- **स्थिति** जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 49 दिन की। सारा अधिकार बेइन्द्रिय जैसा सिर्फ काल के गम्मा में स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 49 दिन से कहना। गम्मा 102 णाणत्ता 89 हुए।

उन्नीसवाँ उद्देशा (चौइन्द्रिय) 12 औदारिक के बाकी सारा अधिकार बेइन्द्रियवत् स्थिति के अनुसार काल के 9 गम्मा कहे जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 6 महीना है। गम्मा 102 णाणत्ता 89 हुए।

बीसवाँ उद्देशा (घर एक तिर्यंच पंचेन्द्रिय का) इसमें 39 आगत है 27 वैक्रिय के (7 नारकी, 20 देवता आठवें देवलोक तक) और 12 औदारिक के (युगलिया छोड़कर) जीव उत्पन्न होते हैं।

सात नारकी-स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते हैं। **परिमाण**-एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। **संहनन्**-नारकी में नहीं होता, अशुभ पुद्गल परिणमते हैं। **अवगाहना**-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट पहली नरक-पौने आठ धनुष 6 अंगुल। दूसरी में-साढ़े 15 धनुष 12 अंगुल, तीसरी में सवा इकत्तीस धनुष। चौथी में साढ़े बासठ धनुष, पाँचवीं में 125, छठी में 250 और सातवीं में 500 धनुष की। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अपनी-अपनी स्थिति से दुगुनी। **संस्थान**-हुंडक। **लेश्या**-पहली दूसरी कापोत, तीसरी में कापोत-नील चौथी में नील पाँचवीं में दो नील-कृष्ण छठी में कृष्ण, सातवीं में कृष्ण (महाकृष्ण) **दृष्टि-3 ज्ञान** पहली में नियमा तीन ज्ञान, 3 अज्ञान की भजना, दूसरी से सातवीं तक तीन ज्ञान 3 अज्ञान की नियमा। **योग-3, उपयोग दो, संज्ञा 4, कषाय 4, इन्द्रिय-5**

समुद्घात 4, वेदना 2, वेद 1, नपुंसक। आयुष्य इस प्रकार-

पहली नरक-	जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागरोपम
दूसरी नरक-	जघन्य 1 सागरोपम उत्कृष्ट 3 सागरोपम
तीसरी नरक-	जघन्य 3 सागरोपम उत्कृष्ट 7 सागरोपम
चौथी नरक-	जघन्य 7 सागरोपम उत्कृष्ट 10 सागरोपम
पाँचवीं नरक-	जघन्य 10 सागरोपम उत्कृष्ट 17 सागरोपम
छठी नरक-	जघन्य 17 सागरोपम उत्कृष्ट 22 सागरोपम
सातवीं नरक-	जघन्य 22 सागरोपम उत्कृष्ट 33 सागरोपम

अध्यवसाय-दोनों शुभ और अशुभ। **अनुबंध**-आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध** 2 भवादेश की अपेक्षा से पहली से छठी नारकी, जघन्य दो भव उत्कृष्ट 8 भव करता है। सातवीं नारकी 6 पहले के गम्मे से आसरी 2 भव और 6 भव पीछे के तीन गम्मा से 2 भव और 4 भव करता है। कालादेश की अपेक्षा 9 गम्मा होते हैं।

पहली नारकी से 9 गम्मा औघिक और औघिक दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त, चार सागरोपम 4 अन्तर्मुहूर्त इस प्रकार आगे के बनाते रहना चाहिए 9 गम्मा।

दूसरी नारकी से 9 गम्मा-पहला गम्मा औघिक औघिक 1 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त 12 सागरोपम 4 करोड़ पूर्व से इसी तरह आगे पहले बनाये अनुसार 9 गम्मा बनाना।

तीसरी नारकी से 9 गम्मा-पहला गम्मा औघिक औघिक तीन सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, 28 सागरोपम 4 करोड़ पूर्व से आगे-आगे पूर्व चार्टों के अनुसार 9 गम्मे बनाना।

चौथी नारकी से 9 गम्मा-पहला गम्मा औघिक औघिक 7 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, 40 सागरोपम 4 करोड़ पूर्व से इसी तरह 9 गम्मे बनाना।

पाँचवीं नारकी से 9 गम्मा पहला गम्मा औघिक औघिक 10 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, 68 सागरोपम 4 करोड़ पूर्व से 9 गम्मे सभी उपरोक्तानुसार बनाना।

छठी नारकी से 9 गम्मा पहला गम्मा औघिक औघिक 17 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त, 88 सागरोपम 4 करोड़ पूर्व से आगे के 9 गम्मे तक बनाना।

सातवीं नरक से 9 गम्मे जघन्य स्थिति 22 सागर उत्कृष्ट 33 सागर से इस प्रकार कहना।

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश (7वीं नरक) तिर्यंच में
1	औघिक औघिक	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	22 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	22 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर तीन अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	22 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर तीन करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर दो करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर अन्तर्मुहूर्त	66 सागर दो अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व

20 स्थानों के देवता-भवनपति से आठवें देवलोक तक के देवता तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं। **स्थिति** जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में। परिमाण आदि सारा अधिकार पृथ्वीकाय में उपजने वाले देवों के अनुसार कहना। विशेषता यह तीसरे, चौथे, पाँचवें देवलोक में लेश्या 1 पद्म कहनी और छठे सातवें आठवें में लेश्या 1 शुक्ल कहनी। तीसरे से आठवें देवलोक की स्थिति अपनी-अपनी, स्थान के अनुसार कहनी। **कायसंवेध**-दो भवादेश की अपेक्षा जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव। कालादेश की अपेक्षा 9 गम्मा का काल होता है।

असुरकुमार से 9 गम्मा-जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागर झाझेरा से कहना है। पहला गम्मा-औघिक औघिक 10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त चार सागर झाझेरा 4 करोड़ पूर्व इसी प्रकार पूर्वोक्त 9 प्रकार से गम्मा बनाना।

नव निकाय से 9 गम्मा-जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट देशऊणा दो पल की स्थिति से 9 गम्मा पहला गम्मा औघिक औघिक दस हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त देशऊणा 8 पल 4 करोड़ पूर्व इसी प्रकार से।

व्यंतर देवों से 9 गम्मा-जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 पल की स्थिति से 9 गम्मों का। पहला गम्मा औघिक औघिक 10 हजार वर्ष अन्तर्मुहूर्त 4 पल 4 करोड़ पूर्व। इस तरह आगे के 9 गम्मा तक।

ज्योतिषी से 9 गम्मा–जघन्य पल का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष से 9 गम्मा कहना। 9 गम्मा **चन्द्र विमानवासी** जघन्य पाव पल उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष से कहना। (1)औघिक औघिक–पाव पल अन्तर्मुहुर्त, 4 पल 4 लाख वर्ष 4 करोड़ पूर्व से 9 गम्मा।

सूर्य विमानवासी देव–के जघन्य पाव पल्य उत्कृष्ट 1 पल 1 हजार वर्ष से 9 गम्मा आगे आगे तक।

(1) औघिक औघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त 4 पल 4 हजार वर्ष 4 करोड़ पूर्व इसी तरह 9 तक आगे बनाना।

ग्रहविमानवासी देव से 9 गम्मा–जघन्य पाव पल उत्कृष्ट 1 पल की स्थिति से बना करके कहना।

(1) औघिक औघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त 4 पल 4 करोड़ पूर्व की विवक्षा से आगे 9 तक बनाना।

नक्षत्र विमानवासी देव से 9 गम्मा–जघन्य पाव पल उत्कृष्ट आधा पल स्थिति से 9 गम्मा।

(1) औघिक औघिक–पाव पल अन्तर्मुहूर्त 2 पल 4 करोड़ पूर्व की विवक्षा से बनाना।

तारा विमानवासी देवों से 9 गम्मा जघन्य पल का आठवाँ भाग उत्कृष्ट पाव पल की स्थिति से कहना।

(1) औघिक औघिक पल का आठवाँ भाग अन्तर्मुहूर्त 1 पल 4 करोड़ पूर्व की विवक्षा से बनाना।

पहले देवलोक से 9 गम्मा–जघन्य 1 पल उत्कृष्ट दो सागरोपम की स्थिति से 9 गम्मा कहना।

(1) औघिक औघिक 1 पल अन्तर्मुहूर्त आठ सागरोपम 4 करोड़ पूर्व की विवक्षा से बनाना।

दूसरे देवलोक से 9 गम्मा–जघन्य 1 पल झाझेरी उत्कृष्ट दो सागरोपम झाझेरी स्थिति से कहे।

(1) औघिक औघिक पहले देवलोक के समान किन्तु झाझेरी स्थिति कहनी 9 गम्मे में।

तीसरे देवलोक से 9 गम्मा–जघन्य दो सागर उत्कृष्ट 7 सागर की स्थिति से 9 गम्मा कहना।

(1) औघिक औघिक 2 सागर अन्तर्मुहूर्त 28 सागर 4 करोड़ पूर्व की विवक्षा से बनाना।

चौथे देवलोक से 9 गम्मा–जघन्य दो सागर झाझेरी उत्कृष्ट 7 सागर झाझेरी से कहना। गम्मा 9 तीसरे देवलोक की तरह परन्तु झाझेरी कहना।

पाँचवाँ छठा सातवाँ आठवाँ देवलोक से 9-9 गम्मा–

पाँचवें देवलोक में जघन्य 7 सागरोपम, उत्कृष्ट 10 सागरोपम की स्थिति से
छठे देवलोक में जघन्य 10 सागरोपम, उत्कृष्ट 14 सागरोपम की स्थिति से
सातवें देवलोक में जघन्य 14 सागरोपम, उत्कृष्ट 17 सागरोपम की स्थिति से
आठवें देवलोक में जघन्य 17 सागरोपम, उत्कृष्ट 18 सागरोपम की स्थिति से
इन चारों देवताओं के 9-9 गम्मे अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार बनाना–

(1) औघिक औघिक 7, 10, 14, 17 सागर अन्तर्मुहूर्त 40, 56, 68, 72 सागर 4-4 करोड़ पूर्व की अपेक्षा से 9 गम्मा की विवक्षानुरूप पूर्ववत् अनुसार बनाना।

पाँच स्थावर असंज्ञी मनुष्य–औदारिक के ये 12 में से ये 6 जीव तिर्यंच पंचेन्द्रिय में आकर उपजने की अपेक्षा से कहा है। **स्थिति**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उत्पन्न होते हैं। परिमाणादि वर्णन पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने वाले इन्हीं 6 जीवों की तरह कहना है किन्तु विशेष यह कि एक समय में 1, 2, 3 यावत् संख्याता असंख्याता उपजते हैं। **कायसंवेध**–दो। **भवादेश** की अपेक्षा 2 भव उत्कृष्ट आठ भव है। **कालादेश** की अपेक्षा पाँच स्थावर का काल 9 गम्मा का है, असंज्ञी मनुष्य 3 गम्मा का है। पाँच स्थावर की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट स्थिति पृथ्वीकाय 22000 वर्ष, अप्काय 7 हजार वर्ष, तेउकाय 3 अहोरात्रि वायुकाय तीन हजार वर्ष वनस्पतिकाय 10 हजार वर्ष की है। असंज्ञी मनुष्य की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है।

पाँच स्थावर से 9 गम्मा–(1) औघिक औघिक–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, 88 हजार वर्ष, 28 हजार वर्ष, 12 अहोरात्रि, 12 हजार वर्ष, 40 हजार वर्ष, 4-4 करोड़पूर्व। इस तरह आगे से आगे सभी 9 गम्मों में स्थिति अनुसार गम्मे बनाते रहें।

असंज्ञी मनुष्य में तीन गम्मा–स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त से तीन गम्मा बनाना

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	जघन्य औधिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
2	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहुर्त
3	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व

तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यंच–औदारिक के ये 4 जीव आकर तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उपजते हैं। **स्थिति**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति (तीन विकलेन्द्रिय) और असंज्ञी तिर्यंच जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल के असंख्यातवें भाग की स्थिति में। **परिमाण**–एक समय में 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता उपजते है, किन्तु तीसरे, नवमें गम्मे में असंज्ञी तिर्यंच संख्याता उपजाते है। **संहनन्**–सेवार्त। अवगाहना–तीन विकलेन्द्रिय जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट **बेइन्द्रिय** 12 योजन, **तेइन्द्रिय** 3 गाऊ, चौइन्द्रिय 4 गाऊ, असंज्ञी तिर्यंच एक हजार योजन की है। **संस्थान** 1 हुंडक। **लेश्या**–तीन। **दृष्टि–2** सम, मिथ्या। तीसरे नवमें गम्मा में असंज्ञी तिर्यंच मिथ्यादृष्टि। **ज्ञान**–2 ज्ञान 2 अज्ञान परन्तु तीसरे नवमें गम्मे में असंज्ञी तिर्यंच को 2 अज्ञान। **योग 2 उपयोग–2 संज्ञा 4, कषाय 4 इन्द्रिय**–अपनी-अपनी **समुद्घात 3 वेदना–2 वेद 1** नपुंसक आयुष्य–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट **बेइन्द्रिय** का 12 वर्ष **तेइन्द्रिय** का 49 दिन, **चोइन्द्रिय** का 6 महीना, **असंज्ञी तिर्यंच** पंचेन्द्रिय का करोड़ पूर्व का। **अध्यवसाय** दो है। अनुबंध–आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध**–2 भेद। भवादेश से तीन विकलेन्द्रिय जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव, असंज्ञी तिर्यंच 2 भव 8 भव किन्तु तीसरे नवमें गम्मे में 2 भव ही जघन्य उत्कृष्ट करता है। कालादेश से काल के 9 गम्मा है असंज्ञी तिर्यंच के पहले और 7वें गम्मे में युगलिया की भजना है और तीसरे और नवमें गम्मा में युगलिया की नियमा है। **तीन विकलेन्द्रिय से 9 गम्मा**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीनों की अपनी-अपनी कहना है।

(1) औधिक औधिक–अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त, 48 वर्ष, 196 दिन, 24 मास, 4 करोड़ पूर्व 4 करोड़ पूर्व इस प्रकार सभी के 9-9 गम्मा यथानुसार स्थिति से बनाना है।

असंज्ञी तिर्यंच से 9 गम्मा–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति से कहना है।

1	औधिक औधिक	अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व	3 करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग
2	औधिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औधिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त 4 पल के असंख्यातवें भाग	करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग
4	जघन्य औधिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औधिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	तीन करोड़ पूर्व 4 करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग	करोड़ पूर्व पल के असंख्यातवें भाग

संज्ञी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य–औदारिक के ये 2 जीव तिर्यंच पंचेन्द्रिय में आकर उत्पन्न होते है। **स्थिति**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट 3 पल्योपम। **परिमाण**–एक समय में 1-2-3 यावत् तिर्यंच असंख्याता मनुष्य संख्याता उपजते हैं। किन्तु तीसरा नवमां गम्मा में तिर्यंच संख्याता उपजते हैं। **संहनन**–6। **अवगाहना**–तिर्यंच की अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तिर्यंच की एक हजार योजन, मनुष्य की 500 धनुष। परन्तु मनुष्य की तीसरा गम्मा में जघन्य प्रत्येक अंगुल उत्कृष्ट 500 धनुष और नवमां गम्मा में जघन्य उत्कृष्ट 500 धनुष है। **संस्थान** 6-6, **लेश्या** 6-6, **दृष्टि** 3-3, किन्तु तीसरे नवमें गम्मे में एक मिथ्यादृष्टि।

ज्ञान–तिर्यंच में 3 ज्ञान 3 अज्ञान की भजना। मनुष्य में 4 ज्ञान 3 अज्ञान की भजना। किन्तु तीसरा नवमां गम्मा में दोनों के (तिर्यंच, मनुष्य में) दो अज्ञान की नियमा। **योग 3-3। उपयोग–2-2। संज्ञा 4-4। कषाय 4-4। इन्द्रिय 5-5। समुद्घात**–तिर्यंच में 5, मनुष्य में 6, **वेदना** 2-2 ,**वेद** तीनों, **आयुष्य**–जघन्य–अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट करोड़ पूर्व, परन्तु मनुष्य के तीसरे गम्मे से जघन्य प्रत्येक मास का, नवमें गम्मे में करोड़ पूर्व का होता है। **अध्यवसाय** शुभ अशुभ होवे। **अनुबंध**–आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध**–दो प्रकार से। भवादेश से जघन्य 2 उत्कृष्ट 8 भव किन्तु तीसरे नवमें गम्मे में जघन्य उत्कृष्ट दो भव करते हैं। कालादेश से 9 गम्मा काल है। **संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य से 9 गम्मा** जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति से कहना है, किन्तु **मनुष्य** में तीसरे गम्मा से स्थिति जघन्य प्रत्येक (अनेक) मास की कहनी है। पहले सातवें गम्मे में युगलिया की भजना है, तीसरे नवमा गम्मा से युगलिया की नियमा है।

संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य (तिर्यंच घर में) (2 भव 8 भव एवं 2 भव)

1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 3 करोड़ पूर्व 3 पल
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त/प्रत्येक मास 3-3 पल	करोड़ पूर्व 3 पल
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व तीन पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल्योपम

पाँच स्थावर के 45 गम्मा 30 णाणत्ता, असंज्ञी मनुष्य के 3 गम्मा, नाणत्ता नहीं। तीन विकलेन्द्रिय के असंज्ञी तिर्यंच के 36 गम्मा, 36 णाणत्ता, संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य के 18 गम्मा और 23 णाणत्ता। सात नारकी भवनपति दस, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक से आठवें तक इन 27 बोलों (वैक्रिय के) 9-9 गम्मा से 243 गम्मा और 4-4 णाणत्ता से 108 णाणत्ता हुए। कुल 345 गम्मा (45+3+36+18+243=345 औदारिक के 102 वैक्रिय के 243) और णाणत्ता 30+0+36+23=89 औदारिक के + 108 वैक्रिय के ये 197 णाणत्ता हुए।

उद्देशक 21वाँ (घर का मनुष्य का) मनुष्य में 43 जीवों की आगत है (7वीं नरक, दो युगलिया, तेउ, वायु ये पाँच कम 48 में से)। (33 वैक्रिय के 10 औदारिक)।

पहली से छठी नरक-पहली नरक से निकला हुआ नेरिया जघन्य प्रत्येक मास और शेष 5 नरक से निकला नेरिया जघन्य प्रत्येक वर्ष उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति से उत्पन्न होते है। परिमाण आदि सारा विवरण तिर्यंच पंचेन्द्रिय की तरह है। किन्तु विशेषता यह कि जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता उत्पन्न होते हैं। कालादेश 9 गम्मों से।

27 देवता-दस भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, नवगैवेयक, चार अणुत्तर विमान, सर्वार्थसिद्ध आकर उपजते हैं।

स्थिति-भवनपति से दूसरे देवलोक तक जघन्य प्रत्येक मास, तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक जघन्य प्रत्येक वर्ष उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उत्पन्न होते हैं।

परिमाण-1-2-3 यावत् संख्याता उपजते है। **संहनन्**-नहीं देवता में शुभ पुद्गल परिणमते है।

अवगाहना-भवधारणीय जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अलग-अलग है-भवनपति से दूसरे देवलोक तक 7 हाथ, तीसरे चौथे की 6 हाथ, पाँचवें छठे की 5 हाथ, सातवें आठवें की 4 हाथ, नव से बारहवें तक 3 हाथ, नवगैवेयक 2 हाथ, पाँच अणुत्तर 1 हाथ।

यदि उत्तर वैक्रिय करे तो भवनपति से 12वें देवलोक तक जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1 लाख योजन। इससे ऊपर देवता उत्तर वैक्रिय नहीं करते। **संस्थान**-समचौरस, उत्तर वैक्रिय करे तो नाना प्रकार। **लेश्या**-भवनपति व्यंतर में 4, ज्योतिषी पहले दूसरे देवलोक में 1 तेजो लेश्या, तीसरे से पाँचवें तक 1 पद्म लेश्या छठे से आगे 1 शुक्ल लेश्या। **दृष्टि** भवनपति से बारहवें देवलोक तक 3 दृष्टि, नवगैवेयक में 2 और अणुत्तर विमानों में 1 (सम) होती है। **ज्ञान**-भवनपति से नवगैवेयक तक 3 ज्ञान, 3 अज्ञान किन्तु भवनपति व्यंतर में 3 अज्ञान की भजना। पाँच अणुत्तर में 3 ज्ञान की नियमा। **योग 3। उपयोग 3। संज्ञा 4। कषाय 4 इन्द्रिय 5। समुद्घात**-भवनपति से 12 देवलोक तक 5, नवगैवेयक अणुत्तर में 3 समुद्घात। **वेदना**-2 शाता, अशाता। **वेद** भवनपति से दूसरे देवलोक तक 2 वेद (स्त्री पुरुष) आगे सभी में एक वेद (पुरुष)। **आयुष्य**-अपने-अपने स्थान के अनुसार **अध्यवसाय**-2 (शुभ, अशुभ) **अनुबंध**-आयुष्य के अनुसार। **कायसंवेध**-दो प्रकार भवादेश और कालादेश से भवनपति से लेकर 8वें देवलोक तक तिर्यंच की तरह समझना। विशेषता यह कि भवनपति से दूसरे देवलोक तक जघन्य गम्मे अन्तर्मुहूर्त के बदले प्रत्येक मास से और तीसरे से आठवें देवलोक तक प्रत्येक वर्ष से कहे। नवमें देवलोक से नवगैवेयक तक भवादेश की अपेक्षा जघन्य दो भव उत्कृष्ट 6 भव। कालादेश से 9 गम्मा। चार अणुत्तर विमान में जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 4 भव। कालादेश से 9 गम्मा। सर्वार्थसिद्ध के भवादेश से जघन्य उत्कृष्ट 2 भव और कालादेश से तीन गम्मा (7, 8, 9) होते हैं।

नवां देवलोक से नवगैवेयक तक काल के 9 गम्मा-नवमें देवलोक की स्थिति
नवमें देवलोक की स्थिति जघन्य 18 सागरोपम उत्कृष्ट 19 सागरोपम
दसवें देवलोक की स्थिति जघन्य 19 सागरोपम उत्कृष्ट 20 इसी तरह बढ़ाते बढ़ाते
नवमें नवग्रैवेयक की स्थिति जघन्य 30 सागरोपम उत्कृष्ट 31 सागरोपम से गम्मे कहना।

नवमें देवलोक में काल संबंधी 9 गम्मा

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	18 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	18 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	18 सागर करोड़ पूर्व	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	18 सागर प्रत्येक वर्ष	54 सागर तीन करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	18 सागर प्रत्येक वर्ष	54 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	18 सागर करोड़ पूर्व	54 सागर तीन करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	19 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	19 सागर प्रत्येक वर्ष	57 सागर तीन प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	19 सागर करोड़ पूर्व	57 सागर तीन करोड़ पूर्व

इसी तरह नवगैवेयक तक अपनी-अपनी स्थिति से 9-9 गम्मा कहना है।

चार अणुत्तर विमानों से 9 गम्मा (स्थिति जघन्य 31 सागर उत्कृष्ट 33 सागर) 2 भव 4 भव

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	31 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर 2 करोड़ पूर्व
2	औघिक जघन्य	31 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो प्रत्येक वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	31 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व
4	जघन्य औघिक	31 सागर प्रत्येक वर्ष	62 सागर दो करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	31 सागर प्रत्येक वर्ष	62 सागर दो प्रत्येक वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	31 सागर करोड़ पूर्व	62 सागर दो करोड़ पूर्व
7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर प्रत्येक वर्ष	66 सागर दो प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	66 सागर दो करोड़ पूर्व

सर्वार्थसिद्ध से 3 गम्मा (33 सागरोपम की स्थिति) 2 भव

गम्मा

7	उत्कृष्ट औघिक	33 सागर प्रत्येक वर्ष	33 सागर करोड़ पूर्व
8	उत्कृष्ट जघन्य	33 सागर प्रत्येक वर्ष	33 सागर प्रत्येक वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	33 सागर करोड़ पूर्व	33 सागर करोड़ पूर्व

पृथ्वी, पानी, वनस्पति और असंज्ञी मनुष्य-ये चारों मनुष्य में आकर उपजते हैं। **स्थिति**-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की स्थिति में उपजते है। परिमाणादि सारा अधिकार तथा गम्मा णाणत्ता आदि तिर्यंच में उपजते हुए इन जीवों की तरह कहना। किन्तु विशेष यह है कि पृथ्वी पानी वनस्पति तीसरे छठे नवमें गम्मे में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता उपजते हैं। और असंज्ञी मनुष्य छठे गम्मे में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता उपजते हैं। पृथ्वी पानी वनस्पति काल से 9 गम्मा स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पृथ्वीकाय की 22 हजार वर्ष, अप्काय की 7000 वर्ष वनस्पतिकाय की 10 हजार वर्ष की स्थिति से कहना।

(1) पहला गम्मा औघिक औघिक-अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त 88 हजार, 28 हजार, 40 हजार वर्ष 4 करोड़ पूर्व। इस तरह आगे-आगे के गम्मे 9 तक कहना।

असंज्ञी मनुष्य के तीन गम्मे संज्ञी तिर्यंच में कहे वैसे कहना।

तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यंच-मनुष्य में आकर उपजते है, परिमाणादि सारा अधिकार संज्ञी तिर्यंच में कहा वैसा कहना, विशेष यह कि तीसरे छठे नवमें गम्मे में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता उत्पन्न होते हैं।

संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य-मनुष्य में उपजते है, सारा अधिकार संज्ञी तिर्यंच में इनका कहा वैसा ही यहाँ कहना, विशेष यह कि संज्ञी तिर्यंच (3, 6, 9) में 1-2-3 यावत् संख्याता और संज्ञी मनुष्य 9 गम्मों में 1-2-3 यावत् संख्याता ही उत्पन्न होते हैं।

संज्ञी मनुष्य मनुष्य के घर में

गम्मा	गम्मा नाम	जघन्य कालादेश	उत्कृष्ट कालादेश
1	औघिक औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व तीन करोड़ पूर्व 3 पल
2	औघिक जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
3	औघिक उत्कृष्ट	प्रत्येक मास 3 पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल
4	जघन्य औघिक	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व
5	जघन्य जघन्य	अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त	4 अन्तर्मुहूर्त 4 अन्तर्मुहूर्त
6	जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहूर्त करोड़ पूर्व	4 अन्तर्मुहूर्त 4 करोड़ पूर्व

7	उत्कृष्ट औघिक	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 3 करोड़ पूर्व 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	करोड़ पूर्व अन्तर्मुहूर्त	4 करोड़ पूर्व 4 अन्तर्मुहूर्त
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व 3 पल	1 करोड़ पूर्व 3 पल

6 नारकी, 10 भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, नवगैवेयक, चार अणुत्तर विमान 32 स्थानों के 9-9 गम्मों से 32x9=288 और सर्वार्थसिद्ध के 3 गम्मा ये कुल 291 गम्मा (वैक्रिय के) तथा 32 स्थानों के 4-4 णाणत्ता (सर्वार्थसिद्ध में नहीं) 32x4=128 णाणत्ता (वैक्रिय) तथा पृथ्वी पानी वनस्पति के 9x3=27 असंज्ञी मनुष्य के 3 कुल 30 तथा तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यंच के 9-9 से 36 गम्मा, संज्ञी तिर्यंच, संज्ञी मनुष्य के 9x2=18 गम्मा ये कुल 27+3+36+18 ये 84 गम्मा (औदारिक से) और णाणत्ता पृथ्वीकाय में 6 अप्काय में 6 वनस्पतिकाय में 7 तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यंच के 9x4=36 णाणत्ता संज्ञी तिर्यंच के 11 संज्ञी मनुष्य के 12 (असंज्ञी मनुष्य में नहीं होते) ये कुल 6+6+7+36+11+12=78 णाणत्ता औदारिक के हुए। 291+84=375 गम्मा हुए। णाणत्ता 128+78=206 हुए।

22वां उद्देशक (घर एक वाणव्यंतर का) असंज्ञी तिर्यंच आकर उत्पन्न होता है। स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट पल के असंख्यातवें भाग की स्थिति से उत्पन्न होता है। बाकी परिमाण आदि सारा अधिकार रत्नप्रभा नारकी में उपजते असंज्ञी तिर्यंच में कहे वैसा कहना। गम्मा 9 णाणत्ता 5 हुए।

संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य-स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 पल से उपजते हैं। अन्य अधिकार रत्नप्रभा में उपजते इन्हीं जीवों के अनुसार कहना। देवता की स्थिति जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 पल की कहना 18 गम्मा, 18 णाणत्ता हुए।

तिर्यंच युगलिया मनुष्य युगलिया-दोनों युगलिया व्यंतरों में जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 पल की स्थिति में उपजते हैं। अन्य अधिकार असुरकुमार में उपजते युगलियों की तरह कहना। स्थिति में जघन्य 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 पल कहना। तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना जघन्य 1 गाऊ उत्कृष्ट 3 गाऊ की कहना, स्थिति दोनों युगलियों की जघन्य 1 पल उत्कृष्ट 3 पल्योपम से कहना। गम्मा 2x9=18 और णाणत्ता 5+6=11 हुए। कुल गम्मा 45 (9+18+18) और णाणत्ता 5+18+11=34 हुए।

तिर्यंच युगलिया व्यंतर में (2 भव)

1	औघिक औघिक	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	3 पल 1 दल
2	औघिक जघन्य	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	3 पल 10 हजार वर्ष
3	औघिक उत्कृष्ट	1 पल 1 पल	3 पल 1 पल
4	जघन्य औघिक	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक
5	जघन्य जघन्य	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष	करोड़ पूर्व साधिक 10 हजार वर्ष
6	जघन्य उत्कृष्ट	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक	करोड़ पूर्व साधिक करोड़ पूर्व साधिक
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल 10 हजार वर्ष	3 पल 1 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल 10 हजार वर्ष	3 पल 10 हजार वर्ष
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल 1 पल	3 पल 1 पल

तेइसवाँ उद्देशा (घर एक ज्योतिषी का) दो प्रकार के युगलिया उत्पन्न होते है। **स्थिति**-जघन्य पल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष। अन्य गम्मा आदि सारा अधिकार नागकुमार की तरह कहना किन्तु तीसरे गम्मे में मनुष्य की अवगाहना जघन्य 1 गाऊ झाझेरी उत्कृष्ट 3 गाऊ, स्थिति जघन्य 1 पल 1 लाख वर्ष उत्कृष्ट 3 पल कहनी। बाकी सभी गम्मों में स्थिति जघन्य में पल के आठवें भाग कहनी। **ज्ञान**-नहीं अज्ञान 2 गम्मा 7 कहने (4, 6 नहीं)

मनुष्य/तिर्यंच युगलिया ज्योतिषी में (2 भव) 7 गम्मा

1	औघिक औघिक	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग	तीन पल, एक पल 1 लाख वर्ष
2	औघिक जघन्य	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग	तीन पल, पल का आठवाँ भाग
3	औघिक उत्कृष्ट	1 पल 1 लाख वर्ष, एक पल एक लाख वर्ष	3 पल 1 पल 1 लाख वर्ष
5	जघन्य जघन्य	पल का आठवाँ, पल का आठवाँ भाग	पल का आठवाँ भाग, पल का आठवाँ भाग
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल, पल का आठवाँ भाग	3 पल, 1 पल 1 लाख वर्ष
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल, पल का आठवाँ भाग	3 पल, पल का आठवाँ भाग
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल, 1 पल 1 लाख वर्ष	3 पल 1 पल 1 लाख वर्ष

ये 7x2=14 गम्मा और णाणत्ता 11 हुए।

संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य-ज्योतिषी में आकर उत्पन्न होते हैं। जघन्य 1 पल का आठवाँ भाग उत्कृष्ट 1 पल 1 लाख वर्ष की स्थिति होती है। अन्य अधिकार रत्नप्रभा में उत्पन्न होने वाले इन जीवों के समान कथन है। काल के 9 गम्मे तिर्यंच की तरह कहना। (1) औघिक औघिक-अन्तर्मुहूर्त पल का आठवाँ भाग, 4 करोड़ पूर्व 4 पल्योपम 4 लाख वर्ष। इसी तरह आगे के गम्मे बनाना। गम्मा 18 णाणत्ता 10+8 (18) कुल गम्मा 32 (14+18) कुल णाणत्ता 29 (11+18) हुए।

चौवीसवाँ उद्देशा (घर एक वैमानिक देवता का) इसमें दो युगलिया, संज्ञी तिर्यंच संज्ञी मनुष्य। **दो युगलिया आकर** उत्पन्न होते हैं। **स्थिति** पहले देवलोक में

1 पल दूसरे में 1 पल झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल्योपम की। परिमाणादि समस्त अधिकार ज्योतिषी में उत्पन्न इन्हीं जीवों के अनुसार कथन है। किन्तु तीसरे गम्मे में मनुष्य युगलिया की अवगाहना तीन गाऊ, स्थिति दोनों की 3 पल्य कहना है, बाकी 6 गम्मों में स्थिति 1 पल, एक पल झाझेरी उत्कृष्ट 3 पल है। दृष्टि (सम, मिथ्या) ज्ञान-2, अज्ञान 2, गम्मा 7 युगलिया तिर्यंच पहले देवलोक में-

1	औघिक औघिक	एक पल, एक पल	3 पल, 3 पल
2	औघिक जघन्य	एक पल, एक पल	3 पल, 1 पल
3	औघिक उत्कृष्ट	3 पल, 3 पल	3 पल, 3 पल
5	जघन्य जघन्य	1 पल, 1 पल	1 पल, 1 पल
7	उत्कृष्ट औघिक	3 पल, 1 पल	3 पल, 3 पल
8	उत्कृष्ट जघन्य	3 पल, 1 पल	3 पल, 1 पल
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	3 पल, 3 पल	3 पल, 3 पल

इसी तरह मनुष्य युगलिया के भी 7 गम्मा कहना है। और दूसरे देवलोक में इसी तरह 7 गम्मा कहना है किन्तु दूसरे देवलोक में 1 पल झाझेरी कहना है। गम्मा 7x2x2=28, णाणत्ता 5+6=11x2=22 हुए।

संज्ञी तिर्यंच-पहले से आठवें देवलोक तक आकर उत्पन्न होते हैं। **स्थिति** इस प्रकार है-पहला देवलोक जघन्य 1 पल उत्कृष्ट 2 सागर। दूसरा देवलोक जघन्य 1 पल झाझेरी उ. सागर झाझेरी तीसरे में जघन्य 2 सागर उत्कृष्ट 7 सागर। चौथे में जघन्य 2 सागर झाझेरी उ. 7 सागर झाझेरी पाँचवें में जघन्य 7 सागर उत्कृष्ट 10 सागर। छठे में जघन्य 10 सागर उत्कृष्ट 14 सागर सातवें में जघन्य 14 सागर उत्कृष्ट 17 सागर। आठवें में जघन्य 17 सागर उत्कृष्ट 18 सागर परिमाणादि अन्य सारा अधिकार रत्नप्रभा में उपजते तिर्यंच संज्ञी जीवों की तरह है। विशेष यह कि चौथे देवलोक तक 6 संहनन वाले, 5वें छठे में 5 संहनन वाले 7वें 8वें में 4 संहनन वाले संज्ञी तिर्यंच उत्पन्न होते हैं। **कायसंवेध**-2 भवादेश से 2 भव 8 भव।

कालादेश से 9 गम्मा, ऊपर कही अलग स्थिति से कहने हैं।

(1) औघिक औघिक-अन्तर्मुहूर्त 1 पल, एक पल झाझेरी, दो सागरोपम, दो सागरोपम झाझेरी 7 सागर, 10 सागर, 14 सागर, 17 सागर 4 करोड़ पूर्व 8 सागर, 8 सागर झाझेरी 28 सागर, 28 सागर झाझेरी, 40 सागर, 56 सागर, 68 सागर, 72

सागर। इस तरह अन्य भी 8 गम्मा आगे-आगे विकल्पों में बनाते रहना है इस तरह तिर्यंच के देवों (8 वैमानिक) के गम्मा बनाना है।

मनुष्य-संज्ञी मनुष्य पहले से आठवें देवलोक तक उपजने का सारा अधिकार शर्कराप्रभा पृथ्वी के वर्णनानुसार समझना है। विशेष 4 देवलोक तक 6 संहनन वाले, पाँचवें छठे में 5 संहनन वाले, सातवें आठवें में 4 संहनन वाले, नवमें से 12वें देवलोक तक 3 संहनन वाले, नवग्रैवेयक में दो संहनन वाले, अणुत्तर विमानों में 1 संहनन वाले उत्पन्न होते हैं। काल संबंधी 9 गम्मा तिर्यंच की तरह कहना किन्तु पहले दूसरे देवलोक में जघन्य स्थिति प्रत्येक मास की कहनी है, और तीसरे से आठवें देवलोक तक प्रत्येक वर्ष की (जघन्य) कहनी। भवादेश 2 से 8 भव।

नवमें देवलोक से नवग्रैवेयक तक-मनुष्य 9 गम्मों से जाता है, स्थिति अपने-अपने देवलोक की कहना। जाने आसरी 3 भव आने आसरी 7 भव होते हैं।

काल के 9 गम्मा इस प्रकार-(1) **पहला गम्मा औघिक औघिक**-2 अनेक (प्रत्येक) वर्ष 18 सागर, 19 सागर, 20 सागर, 21 सागर, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30 सागरोपम (नवग्रैवेयक तक)-उत्कृष्ट कालादेश में-4 करोड़ पूर्व 54 सागर 57 सागर 60, 63, 66, 69, 72, 75, 78, 81, 84, 87, 90, 93 सागरोपम।

दूसरा गम्मा में औघिक जघन्य में 2 प्रत्येक वर्ष 18 सागर से बढ़ाते हुए 30 सागर तक और 4 करोड़ पूर्व 54 सागर से 90 सागर तक कहना।

तीसरा गम्मा-औघिक उत्कृष्ट में 2 प्रत्येक वर्ष 19 सागर से 1-1 बढ़ाते 31 सागर और 4 करोड़ पूर्व 57 सागर से 93 सागर तक।

चौथे 18 से 30 सागर 4 प्रत्येक वर्ष 57 से 93 सागर

पाँचवें में प्रत्येक वर्ष 18 से 30 सागर 4 प्रत्येक वर्ष 54 से 90 सागर

छठे में प्रत्येक वर्ष 19 से 31 सागर 4 प्रत्येक वर्ष 57 से 93 सागर

सातवें में करोड़ पूर्व 18 से 30 सागर, 4 करोड़ पूर्व 57 से 93 सागर

आठवें गम्मे में करोड़ पूर्व 18 से 30 सागर, 4 करोड़ पूर्व 54 से 90 सागर

नवमें गम्मे में करोड़ पूर्व 19 से 31 सागर, 4 करोड़ पूर्व 57 से 93 सागर

चार अणुत्तर विमानों से 9 गम्मा स्थिति जघन्य 31 सागर उत्कृष्ट 33 सागर (3 भव 5 भव)

1	औघिक औघिक	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 66 सागर
2	औघिक जघन्य	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 62 सागर
3	औघिक उत्कृष्ट	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागरोपम	तीन करोड़ पूर्व 66 सागर
4	जघन्य औघिक	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 66 सागर
5	जघन्य जघन्य	2 प्रत्येक वर्ष 31 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 62 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागरोपम	3 अनेक वर्ष 66 सागर
7	उत्कृष्ट औघिक	2 करोड़ पूर्व 31 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर
8	उत्कृष्ट जघन्य	2 करोड़ पूर्व 31 सागर	3 करोड़ पूर्व 62 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	2 करोड़ पूर्व 33 सागर	3 करोड़ पूर्व 66 सागर

सर्वार्थसिद्ध से 3 गम्मा-स्थिति 33 सागरोपम (तीसरा छठा नवमा) 3 भव गम्मा

3	औघिक उत्कृष्ट	दो प्रत्येक वर्ष 33 सागर	2 करोड़ पूर्व 33 सागर
6	जघन्य उत्कृष्ट	दो प्रत्येक वर्ष 33 सागर	2 प्रत्येक वर्ष 33 सागर
9	उत्कृष्ट उत्कृष्ट	दो करोड़ पूर्व 33 सागर	2 करोड़ पूर्व 33 सागर

पहले देवलोक के युगलियों के 14, मनुष्य-तिर्यंच 18, ये 32, दूसरे देवलोक से भी 32 गम्मा, तीसरे से आठवें तक तिर्यंच और मनुष्य के 54+54=108। नवमें देवलोक से 4 अणुत्तर तक 6 घरों में मनुष्य के 6x9=54 और सर्वार्थसिद्ध के 3 ये 57 कुल 229 गम्मा हुए। (32+32+108+54+3)। णाणत्ता पहले देवलोक में 29, दूसरे में 29, तीसरे से 8वें तक 16x6=96, छठे सातवें आठवें लेश्या का फर्क नहीं अत: 96-3=93 रहे। नवमें से सर्वार्थसिद्ध तक 7 घर में 6-6 णाणत्ता से 42 ये सब 193 णाणत्ता हुए। (29+29+93+42)।

2805 गम्मा में संख्याता, असंख्याता, अनन्ता उपजने के-

(1) संख्याता के 950 गम्मा-मनुष्य 67 स्थान (34 जाने के 7 नारकी, 10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, नवग्रैवेयक, अणुत्तर, सर्वार्थसिद्ध। आने में 1 नरक (7वीं कम ये 67)) 67x9=603 में से सर्वार्थ के 6+6 (आने जाने के) 12 कम होने पर 591

दोनों युगलिया 14 देवता में जाते हैं 14x2x9=252 में से ज्योतिषी

पहला दूसरा देवलोक 6+6=12 (चौथा छठा कम) करने से 240

मनुष्य मरकर 9 स्थान में (5 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय x 9)=81

मनुष्य में 8 से आते हैं (पृथ्वी पानी वनस्पति 3 विकलेन्द्रिय अ.ति. पंचे. सन्नी ति. पंचेन्द्रिय) इनके तीन-तीन गम्मे (3, 6, 9) 8x3 =24

मनुष्य में असन्नी मनुष्य आने का 1 गम्मा छठा =01

मनुष्य में सन्नी मनुष्य आता है =09

सन्नी तिर्यंच में सन्नी असन्नी तिर्यंच आने के 2-2 (तीसरा, नवमां) गम्मा =04

कुल गम्मा संख्याता उपजने के- 950

असंख्याता उत्पन्न होने के गम्मे-1851 स्थान

12 असन्नी तिर्यंच मरकर 12 स्थान (10 भवनपति, व्यंतर, पहली नरक) 12

54 सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय 27 स्थान (10 भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी) पहले से 8वें देवलोक 7 नरक में जाता है और इन्हीं से आता है 54

42 पृथ्वी पानी वनस्पति में 14 प्रकार के देवता आते हैं (दूसरे देव. तक) 42

90 पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9 में 10 स्थान से आते हैं (5 स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, असन्नी) 90

तिर्यंच पंचेन्द्रिय ये 9x10=90 स्थान 198x9 =1782

असन्नी मनुष्य 9 स्थान में (पाँच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9x3) 27

जाता है 3 गम्मा से (यानि उपरोक्त 9 में असंज्ञी मनुष्य 3 गम्मों से जाता है)

मनुष्य में 8 स्थान (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी और 8x6=48

सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय) से आते हैं, 6 गम्मा से (1, 2, 4, 5, 7, 8)

मनुष्य में असन्नी मनुष्य आता है 2 गम्मा (4, 5) 2

सन्नी तिर्यंच में सन्नी तिर्यंच और असन्नी तिर्यंच आते हैं, उनके दो-दो गम्मे (3, 9) युगलिया होने से संख्याता में गिनाये हैं ये 2x2=4 कम हुए।1859

वनस्पति वनस्पति में उत्पन्न होने के अनन्ता में गिनाये हैं ये 4 कम - 8

8 कम हुए 1851

अनन्ता उत्पन्न होने के 4 गम्मा

वनस्पति मरकर वनस्पति में उपजे (1, 2, 4, 5) 4 गम्मा से 4

950+185+4=252 = 2805

भवों का गम्मा का विवरण

क्रम	भव संख्या	औधिक	जघन्य	उत्कृष्ट	कुल गम्मा
1	जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के	261	249	264	774
2	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 8 भव	496	526	624	1646
3	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट असंख्याता भव	48	48	0	96
4	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट अनन्ता भव	2	2	0	4
5	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट संख्याता भव	78	78	0	156
6	जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 7 भव	17	17	17	51
7	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 6 भव	18	18	15	51
8	जघन्य 3 भव उत्कृष्ट 5 भव	4	4	4	12
9	जघन्य 2 भव उत्कृष्ट 4 भव	3	3	6	12
10	जघन्य उत्कृष्ट 3 भव	1	1	1	3
		928	946	931	2805

167. 28 बोलों की योगों का अल्प बहुत्व (भ.श. 25 उ. 1) आत्मप्रदेश के परिस्पंदन (कम्पन) को योग कहते हैं, वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम के कारण एक जीव का दूसरे जीव की अपेक्षा अल्पयोग या उत्कृष्ट योग होता है, यहाँ जीव के 14 भेदों से जघन्य योग उत्कृष्ट योग से 28 भेद हैं। सूक्ष्म अपर्याप्त एकेन्द्रिय का जघन्य योग सबसे अल्प योग है उसका शरीर सूक्ष्म है और अपर्याप्त होने से अपूर्ण है, यह कार्मण शरीर द्वारा औदारिक पुद्गलों को ग्रहण करने के प्रथम समय में होता है, उसके बाद उसके योगों की वृद्धि होती रहती है। उत्कृष्ट योग तक बढ़ती है।

(1) संसारी जीव के भेद 14-(1) अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय (2) पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय (3) अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय (4) पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय (5-6) बेइन्द्रिय के अपर्याप्त पर्याप्त (7-8) तेइन्द्रिय के अपर्याप्त पर्याप्त। (9-10) चौइन्द्रिय के अपर्याप्त, पर्याप्त। (11-12) असन्नी पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त पर्याप्त (13-14) संज्ञी पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त पर्याप्त।

(2) 14 प्रकार के जीवों में जघन्य उत्कृष्ट योग का अल्प बहुत्व इस प्रकार है-

जीव संख्या	जीव के भेद	जघन्य योग अल्प बहुत्व	उत्कृष्ट योग अल्प बहुत्व
1	सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तका	1 अल्प	10 असंख्यात गुणा
2	सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तका	8 असंख्यात गुणा	12 असंख्यात गुणा
3	बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तका	2 असंख्यात गुणा	11 असंख्यात गुणा
4	बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तका	9 असंख्यात गुणा	13 असंख्यात गुणा
5	बेइन्द्रिय अपर्याप्तका	3 असंख्यात गुणा	19 असंख्यात गुणा
6	बेइन्द्रिय पर्याप्तका	14 असंख्यात गुणा	24 असंख्यात गुणा
7	तेइन्द्रिय अपर्याप्तका	4 असंख्यात गुणा	20 असंख्यात गुणा
8	तेइन्द्रिय पर्याप्तका	15 असंख्यात गुणा	25 असंख्यात गुणा
9	चौरेन्द्रिय अपर्याप्तका	5 असंख्यात गुणा	21 असंख्यात गुणा
10	चौरेन्द्रिय पर्याप्तका	16 असंख्यात गुणा	26 असंख्यात गुणा
11	असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तका	6 असंख्यात गुणा	22 असंख्यात गुणा
12	असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तका	17 असंख्यात गुणा	27 असंख्यात गुणा
13	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तका	7 असंख्यात गुणा	23 असंख्यात गुणा
14	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तका	18 असंख्यात गुणा	28 असंख्यात गुणा

इन 14 जीवों के जघन्य योग उत्कृष्ट योग का अल्प बहुत्व ये कुल 28 बोल हुए। कर्म प्रकृति में 8 बोल और बढ़ाये है-29 पर्याप्त अणुत्तर विमान देवों का (30) पर्याप्त ग्रैवेयक देवता का (31) पर्याप्त दोनों युगलिया (32) पर्याप्त आहारक शरीर का (33) पर्याप्त बाकी देवता का (34) पर्याप्त नैरियकों का (35) पर्याप्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय का (36) उससे पर्याप्त मनुष्य का इन सभी के उत्कृष्ट योग एक-एक से असंख्यात गुणा हैं।

168. समयोगी विषम योगी (भ.श. 25 उ. 1) प्रथम समय में उत्पन्न दो नैरयिक समयोगी भी और विषम योगी भी होते हैं। आहारक और अनाहारक की अपेक्षा से अधिक योगी और हीन योगी होता है। जो ऋजुगति से आकर आहारकपणे उत्पन्न होता है वह निरंतर आहारक होने से पुद्गलों से पुष्ट होता है अतः अधिक योग वाला होता है, जो विग्रह गति से अनाहारकपणे उत्पन्न होता है वह क्षीण योगी होता है। दो आहारक या दो अनाहारक आपस में तुल्य होते हैं। जो हीन योगी है वे असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, या असंख्यात गुणहीन या संख्यात गुणहीन चौठाणवड़िया होते हैं। इसी तरह अधिक योगी भी असंख्यात भाग अधिक, या संख्यात भाग अधिक या असंख्यात गुण अधिक या संख्यात गुण अधिक होते हैं। ये भी चौठाणवड़िया होते हैं। इस प्रकार नारक सिय समयोगी, सिय विषमयोगी होते है। 24 दंडक में कहना। **चौठाणवड़िया**-(1) कोई जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया दूसरा इलिका गति से आया दोनों के योग असंख्याता गुणा न्यूनाधिक है। (2) एक समय का आहारक मंडूक गति से दूसरा दो समय का आहारक एक वक्रगति से आया दोनों के योग संख्यातगुणा न्यूनाधिक है। (3) एक समय का आहारक मंडूक गति से आया दूसरा एक समय का अनाहारक एक व वक्रगति से आया दोनों

के योग असंख्यात गुण न्यूनाधिक है। (4) एक समय का आहारक मंडूक गति से आया दूसरा दो समय का अनाहारक दो वक्रगति से आया दोनों के योग असंख्यात गुणा न्यूनाधिक है।

169. 15 योगों का अल्प बहुत्व (भ.श. 25 उ. 1) 4 मन के 4 वचन के 7 काया के ये 15 योग है। सामर्थ्य विशेष से योग अल्पाधिक होते हैं। अपर्याप्तों में कम और पर्याप्तों में अधिक होता है। मन वचन का योग सामर्थ्य विशाल होता है, काया का कम होता है। मन वचन काया के व्यापार प्रवृत्ति को योग कहते हैं। प्रथम समयोत्पन्न में आहारक आहारक ऋजु और वक्रगति की अपेक्षा चौठाणवड़िया अंतर भी और समान भी हो सकता है। दीर्घकाल वालों का भी दोनों प्रकार का हो सकता है।

(1) **योग 15 प्रकार-मनयोग** 4-सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार मनयोग।

वचन योग 4-सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार वचन योग।

काययोग 7-औदारिक काययोग, औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रिय काययोग, वैक्रिय मिश्र काययोग, आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग, कार्मण काययोग।

(2) उपरोक्त 15 योगों में जघन्य और उत्कृष्ट योगों की अपेक्षा अल्प बहुत्व इस प्रकार है-

	15 योगों का अल्प बहुत्व	योग	अल्पा बहुत्व
1	कार्मण काय योग	जघन्य योग	1 सबसे अल्प
2	औदारिक मिश्रकाय योग	जघन्य योग	2 असंख्य गुणा
3	वैक्रिय मिश्रकाय योग	जघन्य योग	3 असंख्य गुणा
4	औदारिक काययोग	जघन्य योग	4 असंख्य गुणा
5	वैक्रिय काययोग	जघन्य योग	5 असंख्य गुणा
6	कार्मण काययोग	उत्कृष्ट योग	6 असंख्य गुणा
7	आहारक मिश्र काययोग	जघन्य योग	7 असंख्य गुणा
8	आहारक मिश्र काययोग	उत्कृष्ट योग	8 असंख्य गुणा
9-10	औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रिय मिश्र काययोग	उत्कृष्ट योग	9/10 असंख्य गुणा आपस में तुल्य
11	व्यवहार मनयोग का	जघन्य योग	11 असंख्य गुणा
12	आहारक काययोग का	जघन्य योग	12 असंख्य गुणा
13 से 19	तीन मनोयोग (सत्य असत्य मिश्र) 4 वचन योग (सत्य असत्य मिश्र व्यवहार)	जघन्य योग	13 से 19 असंख्य गुणा आपस में तुल्य
20	आहारक शरीर काययोग	उत्कृष्ट योग	20 असंख्य गुणा
21 से 30	औदारिक, वैक्रिय काययोग, 4 मनोयोग 4 वचनयोग	उत्कृष्ट योग	असंख्यात गुणा आपस में तुल्य 21 से 30

170. जीव द्रव्य अजीव द्रव्य (भ. 25 उ. 2) (1) द्रव्य दो प्रकार के-जीव द्रव्य अजीव द्रव्य।

(2 से 5) अजीव द्रव्य-अजीव द्रव्य दो प्रकार के रूपी और अरूपी अजीव। **रूपी अजीव के** 4 भेद-स्कंध, देश, प्रदेश और परमाणु पुद्‌गल। **अरूपी अजीव के** 10 भेद-**धर्मास्तिकाय** 3 के स्कंध, देश, प्रदेश। **अधर्मास्तिकाय** के 3 स्कंध, देश, प्रदेश। **आकाशास्तिकाय के** 3 स्कंध, देश, प्रदेश। ये 9 हुए और दसवाँ काल द्रव्य। रूपी अजीव-संख्यात असंख्यात नहीं अनंत है, परमाणु पुद्‌गल अनंत है। इसी प्रकार दो प्रदेशी यावत् 10 प्रदेशी संख्यात प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध अनंत हैं। इसी कारण रूपी अजीव द्रव्य अनंत द्रव्य है।

(6) जीव द्रव्य-यह भी संख्यात असंख्यात नहीं अनंत है। 23 दंडक के जीव असंख्यात है, और वनस्पतिकाय के जीव और सिद्ध भगवान अनंत है।

(7) अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम आता है, परन्तु जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम नहीं आता है। जीव द्रव्य सचेतन होने से अजीव द्रव्यों को ग्रहण करता है शरीरादि रूप से उनका भोग परिभोग करता है, जीव भोक्ता है, अजीव अचेतन होने से ग्राह्य है, भोग्य है। जीव द्रव्य अजीव द्रव्यों को ग्रहण करके 14 बोलों में परिणमाता है-5 शरीर, 5 इन्द्रिय, 3 योग 1 श्वासोच्छवास।

नारकी देवता 14 दंडक 12 बोलों (औदारिक आहारक दो शरीर कम) से परिणमाते हैं।

4 स्थावर-6 बोलों (3 शरीर, 1 इन्द्रिय, 1 योग, 1 श्वासोच्छवास) से परिणमाते हैं।

वायुकाय 7 बोलों से (उपरोक्त 6 में वैक्रिय शरीर बढ़ा) से परिणमते हैं।

बेइन्द्रिय 8 बोलों से (3 शरीर 2 इन्द्रिय, 2 योग 1 श्वासोच्छवास) से परिणमते हैं।

तेइन्द्रिय 9 बोलों से (1 इन्द्रिय बढ़ी) चौइन्द्रिय 10 बोलों (एकन्द्रिय बढ़ी 9 में) से परिणमाते हैं।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव 13 बोलों से (14 में से आहारक शरीर कम)

मनुष्य 14 बोलों से परिणमाते हैं। इन 13 बोलों में से लोकान्त में एकेन्द्रिय तीन शरीर, औदारिक काययोग, स्पर्शेन्द्रिय ये 5 पुद्‌गल 3, 4 या 5 दिशा से ग्रहण करते हैं। मध्य में 6 दिशा से।

(8-9) असंख्यात प्रदेशी लोक में अनंत जीव द्रव्य अनंत अजीव द्रव्य समाये हुए हैं, कूटागारशाला और प्रकाश के दृष्टान्तवत्। लोक के एक आकाश प्रदेश पर यदि

रुकावट न हो तो आसरी छहों दिशा के पुद्गल आकर इकट्ठा होते हैं, व्याघात हो तो तीन, 4 या 5 दिशा से पुद्गल आते हैं, चय होता है, उपचय, अपचय (छेद) होता है।

5 स्थावर को छोड़कर 19 दंडक के जीव नियमा छः दिशा के पुद्गल लेना, चय, उपचय, अपचय करते हैं। समुच्चय जीव और 5 स्थावर 6 बोल (औदारिक तैजस कार्मण तीन शरीर, स्पर्शेन्द्रिय, काययोग, श्वासोच्छवास) आसरी 3-4-5-6 दिशा से पुद्गल लेते हैं, चय, उपचय, अपचय करते हैं। एक आकाश प्रदेश पर पुद्गल आते-जाते हैं। लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अनंत द्रव्य समाये हुए हैं।

171. स्थित अस्थित (भ.श. 25 उ. 2) जितने आकाश प्रदेशों में जीव रहा है, वे स्थित और उससे बाहर के अस्थित पुद्गल कहलाते हैं, जीव उन बाहर के पुद्गलों को खींचकर ग्रहण करता है। जो द्रव्य गति रहित है वे स्थित, गतिशील अस्थित है।

(1) औदारिक शरीरपणे, स्थित पुद्गलों को और अस्थित पुद्गलों को द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् 288 बोल नियमा 6 दिशा का निर्व्याघात आसरी ग्रहण करता है, व्याघात हो तो 3-4-5 दिशा का ग्रहण करता है। (लोकान्त में रहे एकेन्द्रिय जीवों के व्याघात हो तो)।

(2) वैक्रिय शरीरपणे स्थित और अस्थित दोनों प्रकार के पुद्गलों का 288 बोलों का नियमा 6 दिशा का ग्रहण करते हैं (यहाँ लोकान्त में वायुकाय की अपेक्षा नहीं है)।

(3) तैजस शरीरपणे जीव 288 बोल का निर्व्याघात आसरी 6 दिशा, व्याघात आसरी 3-4-5 दिशा का ग्रहण करता है।

(4) जीव कार्मण शरीरपणे स्थित अस्थित पुद्गलों को द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् 240 बोलों (द्रव्य 1, क्षेत्र 1, काल के 12, वर्णादि 16x13=208 तथा 18 स्पृष्ट आदि) का निर्व्याघात आसरी नियमा 6 दिशा, व्याघात हो तो 3-4-5 दिशा का ग्रहण करता है।

(5) जीव श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रियपणे स्थित और अस्थित पुद्गलों को द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् 288 बोल का नियमा 6 दिशा से ग्रहण करता है।

(6) स्पर्शेन्द्रियपणे, काययोगपणे, श्वासोच्छवासपणे स्थित अस्थित दोनों का औदारिक की तरह है।

(7) मनयोगपणे वचनयोगपणे स्थित को ग्रहण करता है, अस्थित नहीं, द्रव्य क्षेत्र काल, भाव आसरी 240 बोल का नियमा 6 दिशा ग्रहण करता है।

नारकी और देवता के 14 दंडक में 12 बोल (आहारक औदारिक दो शरीर नहीं) पाये जाते हैं, समुच्चय की तरह नियमा 6 दिशा का कहना। चार स्थावर में 6 बोल, वायुकाय में 7 बोल समुच्चय की तरह कहना। बेइन्द्रिय में 8, तेइन्द्रिय में 9, चौइन्द्रिय में 10, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 13 और मनुष्य में 14 बोल समुच्चय की तरह किन्तु नियमा 6 दिशा का।

172. संस्थान 6 (भ.श. 25 उ. 3) (1) संस्थान 6 प्रकार का (1) परिमंडल, (2) वृत्त, (3) तंस-त्र्यस्त्र, (4) चउरंस-चतुरस्त्र, (5) आयत (लंबा), (6) अनित्थंस्थ (भिन्न)।

(2) द्रव्य की अपेक्षा से परिमंडल संस्थान अनंत है इसी प्रकार अन्य पाँच भी अनंत है। इसी प्रकार प्रदेश की तथा द्रव्य और प्रदेश दोनों शामिल अपेक्षा से भी अनंत-अनंत है।

अल्प बहुत्व-द्रव्यापेक्षा से-

(1) सबसे थोड़ा परिमंडल संस्थान (2) वृत्त संस्थान संख्यात गुणा (3) चतुरंस उससे संख्यात गुणा (4) त्र्यंस उससे संख्यात गुणा (5) उससे आयत संख्यात गुणा (6) उससे अनित्थंस्थ (इन सबसे भिन्न हो वह) असंख्यात गुणा है। इसी तरह प्रदेशा पेक्षा से भी समझें।

द्रव्य प्रदेश दोनों की शामिल अल्प बहुत्व (1) सबसे थोड़ा परिमंडल संस्थान द्रव्यापेक्षा (2) वृत्त संस्थान द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (3) चतुरंस्र द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (4) उससे त्र्यंस्र संस्थान द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (5) उससे आयत संस्थान द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (6) उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा। इसी प्रकार अब आगे 7 से 12 तक इसी क्रम से प्रदेशापेक्षा कहना। ये कुल 42 अलावा हुए। 6x7=42।

173. पाँच संस्थान (भ.श. 25 उ. 3) (1) संस्थान 5 प्रकार के परिमंडल, वृत्त, त्र्यंस्र, चतुरस्र, आयत।

(2) सभी पाँचों संस्थान अनंत-अनंत है।

(3) नारकी में पाँचों संस्थान अनंत-अनंत हैं इसी प्रकार 7 नरक, 12 देवलोक, 9 नवग्रैवयक, 5 अणुत्तर, 1 सिद्धशिला इन 35 स्थानों में अनंत-अनंत है 35x5 =175 भांगे।

(4) जहाँ एक जव मध्य परिमंडल संस्थान होता है वहाँ दूसरे परिमंडल संस्थान अनंत होते है। इसी प्रकार अन्य चारों भी अनंत-अनंत होते हैं। परिमंडल संस्थानों से यह सारा लोक ठसाठस भरा है, उनमें से तुल्य प्रदेश वाले, तुल्य प्रदेशावगाही और तुल्य वर्णादि पर्याय वाले जो-जो परिमंडल द्रव्य है, कल्पना से उन्हें पंक्तिबद्ध करे उसके ऊपर और नीचे एक-एक जाति वाले परिमंडल द्रव्यों को एक-एक पंक्ति में स्थापित करे, इससे उसमें अल्प बहुत्व होने से परिमंडल संस्थान का समुदाय जवमध्य के आकार का होता है। इसमें जघन्य प्रादेशिक द्रव्य स्वभाव से ही अल्प होने से पहली पंक्ति छोटी होती है। आगे मोटी-मोटी उसके बाद क्रमशः घटते-घटते अत्यंत छोटी होती है इस प्रकार तुल्य प्रदेश वाले और परिमंडल द्रव्यों से जवमध्य क्षेत्र बनता है। जिस तरह एक जवमध्य परिमंडल संस्थान का कहा उसी तरह बाकी 4 संस्थानों का 5x5=25 हुए। 25 को 35 से गुणा करने से 875 भांगे + 175=1050 भांगे हुए।

174. संस्थान के 20 बोल (भ.श. 25 उ. 3) प्रदेश की अपेक्षा प्रत्येक संस्थान के प्रदेशों की गिनती से उनके युग्म कहे हैं। प्रत्येक संस्थान के प्रदेश की संख्या उसके भेद करके इस प्रकार बताई है-

संस्थान नाम	संस्थान भेद	प्रदेश भेद	प्रदेश संख्या		अवगाहना	
			ज.	उ.	ज.	उ.
वृत्त	प्रतर वृत्त	ओज प्रदेशी	5	अनंत	5	असंख्य
वृत्त	प्रतर वृत्त	युग्म प्रदेशी	12	अनंत	12	असंख्य
वृत्त	घन वृत्त	ओज प्रदेशी	7	अनंत	7	असंख्य
वृत्त	घन वृत्त	युग्म प्रदेशी	32	अनंत	32	असंख्य
त्र्यस्त्र	प्रतर त्र्यस्त्र	ओज प्रदेशी	3	अनंत	3	असंख्य
त्र्यस्त्र	प्रतर त्र्यस्त्र	युग्म प्रदेशी	6	अनंत	6	असंख्य
त्र्यस्त्र	घन त्र्यस्त्र	ओज प्रदेशी	35	अनंत	35	असंख्य
त्र्यस्त्र	घन त्र्यस्त्र	युग्म प्रदेशी	4	अनंत	4	असंख्य
चतुरस्त्र	प्रतर चतुरस्त्र	ओज प्रदेशी	9	अनंत	9	असंख्य
चतुरस्त्र	प्रतर चतुरस्त्र	युग्म प्रदेशी	4	अनंत	4	असंख्य
चतुरस्त्र	घन चतुरस्त्र	ओज प्रदेशी	27	अनंत	27	असंख्य
चतुरस्त्र	घन चतुरस्त्र	युग्म प्रदेशी	8	अनंत	8	असंख्य
आयत	श्रेणी आयत	ओज प्रदेशी	3	अनंत	3	असंख्य
आयत	श्रेणी आयत	युग्म प्रदेशी	2	अनंत	2	असंख्य
आयत	प्रतर आयत	ओज प्रदेशी	15	अनंत	15	असंख्य
आयत	प्रतर आयत	युग्म प्रदेशी	6	अनंत	6	असंख्य
आयत	घन आयत	ओज प्रदेशी	45	अनंत	45	असंख्य
आयत	घन आयत	युग्म प्रदेशी	12	अनंत	12	असंख्य
परिमंडल	प्रतर परिमंडल	युग्म प्रदेशी	20	अनंत	20	असंख्य
परिमंडल	धन परिमंडल	युग्म प्रदेशी	40	अनंत	40	असंख्य

नोट-गेंद की तरह समप्रमाण (सब तरफ से) हो वह घन वृत्त और जो मांडे की तरह सिर्फ मोटेपन (जाड़ा) में कम हो वह प्रतर वृत्त है। एकी की संख्या 1-3-5-7 ये ओज प्रदेशी और बेकी की संख्या 2-4-6-8 ये युग्म प्रदेशी है। परिमंडल में ओज प्रदेशी नहीं होते। सभी युग्म प्रदेशी है। कहीं ओज प्रदेशी संस्थान के ज्यादा प्रदेश है, कहीं युग्म प्रदेश के, इसका कारण यह कि उस संस्थान में कहीं ओज संख्या का संयोग बाद में मिलता है कहीं युग्म संख्या का संयोग बाद में मिलता है यानि उस संख्या से कम संख्या में भी वह संस्थान तो बनता है, पर ओज या युग्म संख्या वहाँ नहीं होती है।

घन परिमंडल संस्थान

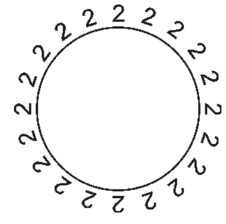

40

प्रतर परिमंडल संस्थान

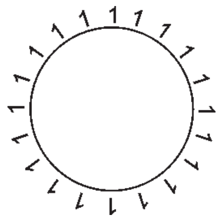

20

ओज प्रदेशी प्रतर वृत्त

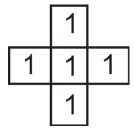

5

युग्म प्रदेशी प्रतर वृत्त

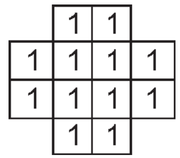

12

ओज प्रदेशी घनवृत्त

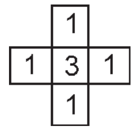

7

युग्म प्रदेशी घनवृत्त संस्थान

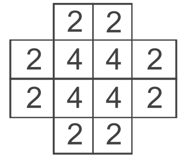

32

घन त्र्यस्र संस्थान ओज प्रदेशी

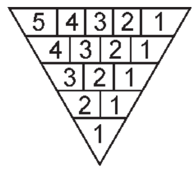

35

घन त्र्यस्र संस्थान युग्म प्रदेशी

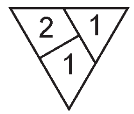

4

प्रतर त्र्यस्र ओज प्रदेशी

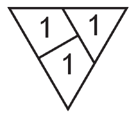

3

प्रतर त्र्यस्र युग्म प्रदेशी

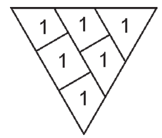

6

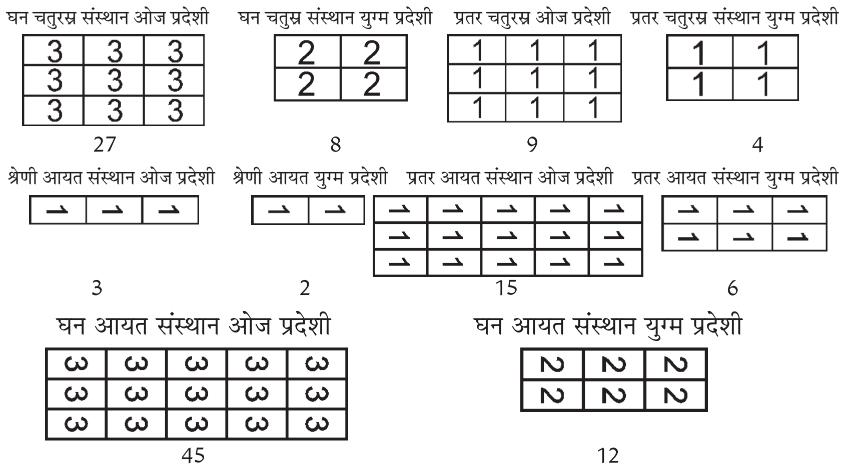

175. संस्थान के कृत युग्म (कड़जुम्मा) (भ.श. 25 उ. 3) (1) एक परिमंडल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा कल्योज (कलिओगा) होता है। कड़जुम्मा (कृत युग्म) तेओगा और दावरजुम्मा (द्वापर युग्म) नहीं है। परिमंडल संस्थान द्रव्य रूप से एक है, एक वस्तु का 4-4 से भाग नहीं होता, एक ही बाकी रहता है अत: कल्योज है। जब बहुवचन आसरी विचार किया जाय (परिमंडल संस्थान का) जब उसमें 4-4 का भाग दिया जाय और कुछ भी नहीं बचे तो कृतयुग्म, तीन बचे तो तेओगा (त्र्योज), 2 बचे तो द्वापर युग्म, कभी एक बचे तो कल्योज होता है। जब विशेष दृष्टि से एक संस्थान का विचार किया जाय तो चार का अपहार न होने से एक ही बाकी रहता है, इसलिए कल्योज है। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थानों को जानना।

(2) बहुत परिमंडल संस्थान ओघादेश से (सब समुदाय रूप से) सिय कड़जुम्मा सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा और सिय कलिओगा है। विधानादेश से कलिओगा है। चारों में इसी प्रकार कहना।

(3) एक परिमंडल संस्थान प्रदेशापेक्षा से सिय कड़जुम्मा यावत् सिय कलियोगा है। चारों संस्थानों में यही कथन है। (एक वचन से)। बहुवचन की अपेक्षा ओघादेश और विधानादेश दोनों से भी सिय कड़जुम्मा यावत् सिय कलिओगा है। सभी में कहना।

(4) एक परिमंडल संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा कड़जुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, अन्य जुम्मा नहीं।

(5) एक वृत्त संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा सिय कड़जुम्मा, सिय तेओगा, सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, किन्तु दावरजुम्मा नहीं अवगाहे हैं।

(6) एक त्र्यंस्त्र संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा कलिओगा प्रदेश नहीं अवगाहे है शेष तीन सिय कड़जुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं।

(7) एक चौरस संस्थान ने वृत्त संस्थान की तरह प्रदेश अवगाहे हैं।

(8) एक आयत संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा सिय कड़जुम्मा यावत् सिय कलिओगा प्रदेश अवगाहे हैं।

(9) बहुत परिमंडल संस्थान क्षेत्र की अपेक्षा ओघादेश और विधानादेश से क्रमश: कड़जुम्मा, बहुत कड़जुम्मा प्रदेशी अवगाहे हैं अन्य तीन नहीं। इसी प्रकार वृत्त संस्थान ने ओघादेश की अपेक्षा कड़जुम्मा, विधानादेश की अपेक्षा दावरजुम्मा छोड़कर तीनों प्रदेश अवगाहे हैं। त्र्यंस्त्र संस्थान के दो भेद-ओघादेश से कड़जुम्मा विधानादेश की अपेक्षा कलिओगा छोड़कर तीनों अवगाहे हैं। चौरस संस्थान ओघादेश की अपेक्षा कड़जुम्मा और विधानादेश की अपेक्षा कलिओगा छोड़ तीन प्रदेश। आयत संस्थान की अपेक्षा कड़जुम्मा विधानादेश की अपेक्षा चारों विकल्प अवगाहते हैं।

(10) एकवचन की अपेक्षा परिमंडल आदि सभी संस्थान सिय कड़जुम्मा यावत् सिय कलिओगा स्थिति वाले हैं।

(11) बहुवचन की अपेक्षा पाँचों संस्थान ओघादेश और विधानादेश दोनों की अपेक्षा चारों प्रकार की स्थिति वाले है। व्यक्तिगत चारों में कोई एक और समुच्चय में चारों ही स्थिति हो सकती है।

(12) पाँचों संस्थानों का पर्यायों की अपेक्षा एकवचन और बहुवचन से स्थिति की तरह कहना। इसी तरह काल वर्ण आदि की तरह वर्णादि 20 बोलों पर कहना।

176. आकाश प्रदेशों की श्रेणी (भ.श. 25 उ. 3) (1) आकाश प्रदेश की श्रेणियाँ द्रव्य की अपेक्षा अनंत है। छहों दिशा में अनंत-अनंत है।

(2-3) लोकाकाश और अलोकाकाश की भेद विवक्षा करके आकाश श्रेणियाँ 6 हों दिशा में लोकाकाश श्रेणियाँ और अलोकाकाश श्रेणियाँ अनंत है। द्रव्यापेक्षा से।

(4) आकाश प्रदेश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा अनंत है।

(5) लोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा पूर्व-पश्चिम उत्तर-दक्षिण 4 दिशा में सिय संख्यात सिय असंख्यात है। (अनंत नहीं) लोकाकाश वृत्ताकार (गोल) होने

से पर्यंतवर्ती अंतिम में रहने वाली श्रेणियाँ संख्यात प्रदेश रूप है। बाकी असंख्यात प्रदेश रूप है। ऊँची और नीची दिशा की श्रेणियाँ असंख्यात रूप है।

(6) अलोकाकाश की श्रेणियाँ सिय संख्यात, सिय असंख्यात, सिय अनंत प्रदेश रूप है। (6 दिशा)

(7) श्रेणियाँ अनादि अनंत है (सादि सांत, सादि अनंत, अनादि सांत नहीं)। छहों दिशा में। लोक में श्रेणियों का एक भांगा सादि सांत पाया जाता है। छहों दिशा में कहना। अलोकाकाश में चारों भंग पाये जाते हैं। ऊँची नीची दिशा में भी चारों भंग पाते हैं। पूर्वादि 4 दिशाओं में 3 भंग (सादि सांत नहीं) पाये जाते हैं।

(8) द्रव्य अपेक्षा से श्रेणियाँ कड़जुम्मा है। शेष तीन भांगे नहीं। छहों दिशा का कहना। इसी तरह लोकाकाश और अलोकाकाश की श्रेणियाँ का कहना।

(9) श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा कड़जुम्मा है शेष तीन भांगे नहीं। लोकाकाश की श्रेणियाँ समुच्चय में और 4 दिशा में सिय कड़जुम्मा, सिय दावरजुम्मा है। शेष दो भंग नहीं। ऊँची और नीची दिशा में कड़जुम्मा है। शेष तीन भंग नहीं। अलोकाकाश की समुच्चय श्रेणियों और 4 दिशा में चारों भंग कड़जुम्मादि पाये जाते हैं। ऊँची नीची दिशा में तीन भंग (कलियोगा नहीं) पाते हैं।

(10) श्रेणियाँ 7 है जहाँ जीव और पुद्‌गल की गति होती है, उन आकाश प्रदेशों की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं। (1) **ऋज्वायता (सीधी)**–जीव और पुद्‌गल सीधी गति करते हैं।

(2) एकत्तोवक्र (एक मोड़वाली)–सीधे जाकर फिर वक्र गति कर दूसरी श्रेणी में जाते हैं।

(3) उभयतो वक्र (दो मोड़ वाली) सीधे जाकर (दो बार मोड़ दो बार दूसरी श्रेणी में प्रवेश करे)। वह श्रेणी ऊर्ध्व लोक की आग्नेयी से अधोलोक की वायवी में उत्पन्न होने वाले करते हैं। पहले समय में आग्नेय से तिरछे नेऋत्य में, दूसरे में तिरछे वायवी, तीसरे में नीचे वायवी यों तीन समय की गति त्रसनाड़ी या उसके बाहर होती है।

(4) एकतः खा (एक तरफ त्रस नाड़ी के बाहर जाने वाली) जिस श्रेणी द्वारा त्रस नाड़ी के बायें पसवाड़े से त्रसनाड़ी से प्रवेश करते हैं, फिर त्रसनाड़ी द्वारा जाकर उसके बायें पसवाड़े में उत्पन्न होते हैं। उसके एक तरफ त्रसनाड़ी के बाहर का

आकाश आया हुआ होता है, यद्यपि यह दो, तीन, चार समय वाली वक्र गति होती है परन्तु क्षेत्र की विशेषता होने से इसे अलग कहा है।

(5) उभयतः खा (दोनों तरफ त्रसनाड़ी के बाहर जाने वाली) त्रसनाड़ी के बाहर उसके बायें भाग से प्रवेश करके त्रसनाड़ी द्वारा जाकर फिर उसके दाहिने भाग में उत्पन्न होने को उभयतःखा कहते हैं। उसके त्रसनाड़ी के बाहर आकाश बाईं और दाईं दोनों तरफ स्पर्श करता है।

(6) चक्रवाल–परमाणु आदि जिस श्रेणी से गोल घूमकर उत्पन्न होते हैं। वह चक्रवाल है।

(7) अर्द्ध चक्रवाल–परमाणु आदि जिस श्रेणी द्वारा आधे गोल घूमकर उत्पन्न हो जावे अर्द्ध चक्रवाल। ये जीव और पुद्‌गल की गतिकी अपेक्षा से कही है, बाकी श्रेणियाँ तो सभी सीधी ही है।

(11) परमाणु आदि की अनुश्रेणी गति होती है, विश्रेणी नहीं होती। परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कंध तक 13 बोल और 24 दंडक इन 37 बोलों की अनुश्रेणी गति होती है। विश्रेणी गति नहीं होती। जीव प्रारंभ की 5 श्रेणी से अजीव 7 श्रेणी से गमन करते हैं।

177. द्रव्य (भगवती श. 25 उ. 4) (1) युग्म (जुम्मा) 4 प्रकार कड़जुम्मा, दावरजुम्मा, तेओगा, कलियोगा। समुच्चय जीव, नारकी आदि 24 दंडक और सिद्ध भगवान में 4-4 जुम्मा पाते हैं।

(2) द्रव्य 6 प्रकार–(1) धर्मास्तिकाय, (2) अधर्मास्तिकाय, (3) आकाशास्तिकाय, (4) जीवास्तिकाय, (5) पुद्‌गलास्तिकाय, (6) काल।

(3) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा कलियोगा है, शेष 3 नहीं।

(4) जीवास्तिकाय कड़जुम्मा है। शेष तीन नहीं।

(5) पुद्‌गलास्तिकाय द्रव्यापेक्षा सिय कड़जुम्मा यावत् सिय कलियोगा। चारों में से कोई भी हो सकता है।

(6) काल द्रव्य-कड़जुम्मा है। तीन अन्य नहीं।

(7) छहों द्रव्यों की अवगाहना प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म हैं। सभी के अवगाहन प्रदेश निश्चित है।

(8) छहों द्रव्य द्रव्यापेक्षा सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय आपस में तुल्य हैं। उनसे जीवास्तिकाय अनन्तगुणा। उनसे पुद्गलास्तिकाय अनंतगुणा, उससे काल अनंतगुणा।

(9) छहों द्रव्य प्रदेशापेक्षा सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आपस में तुल्य है। उनसे जीवास्तिकाय के अनन्तगुणा, उनसे पुद्गलास्तिकाय अनंतगुणा, काल अप्रदेश रूप से अनंतगुणा, उससे आकाश प्रदेश रूप से अनंतगुणा है। काल ढ़ाई द्वीप प्रमाण है। आकाशास्तिकाय के अनंत और पाँचों के असंख्यात प्रदेश है। काल के अलावा 4 लोक प्रमाण है। द्रव्य और प्रदेश रूप से दो-दो बोलों की अल्प बहुत्व-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय द्रव्य रूप से सबसे थोड़े-थोड़े इनके प्रदेश असंख्याता है। आकाशास्तिकाय के अनंत प्रदेश है। काल पर अल्पा बोध नहीं। अप्रदेशी होने से।

(1) सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के द्रव्य आपस में तुल्य (2) उनसे धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के प्रदेश आपस में तुल्य असंख्यातगुणा। (3) उनसे जीवास्तिकाय के द्रव्य अनंतगुणा (4) उससे जीवास्तिकाय प्रदेश असंख्यातगुणा (5) उससे पुद्गलास्तिकाय के द्रव्य अनंतगुणा (6) उससे पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश असंख्यातगुणा (7) उससे काल द्रव्य अप्रदेश रूप से अनंतगुणा (8) उससे आकाशास्तिकाय के प्रदेश अनंतगुणा।

(1) सबसे थोड़े जीव (2) उससे पुद्गल अनंतगुणा (3) उनसे काल अनंतगुणा (4) उनसे सर्वद्रव्य विशेषाधिक (5) उनसे सर्वप्रदेश अनंतगुणा। (6) उनसे सर्व पर्याय अनंतगुणा।

(10) धर्मास्तिकाय अवगाढ़ है (आश्रित) अनावगाढ़ नहीं। लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश में अवगाढ़ है। लोकाकाश के असंख्यात आकाश प्रदेशों के कड़जुम्मा प्रदेशों में अवगाढ़ है, इसी तरह अधर्मास्तिकाय आदि 5 द्रव्य, (छहों द्रव्य), 7 नारकी, 12 देवलोक, 9 नवग्रैवयक, 5 अणुत्तर, सिद्धशिला पृथ्वी का भी कहना।

25 सूत्र जुम्मा के, 6 द्रव्य के, 6 द्रव्यार्थ के, 6 प्रदेशार्थ के, 6 द्रव्यार्थ के अल्पाबोध, 6 सूत्र प्रदेशार्थ के अल्पाबोध, 12 सूत्र, दो-दो के अल्पाबोध, 12 सूत्र शामिल की अल्पाबोध, 40 धर्मास्तिकाय आदि के अवगाढ़ के अल्पबोध ये 119 सूत्र हुए।

178. जीव के कड़जुम्मा (भ.श. 25 उ. 4) (1) जीव द्रव्यार्थ रूप से कलियोगा

है, जीव द्रव्य रूप से एक ही व्यक्ति है, अतः कलियोगा है। इसी तरह 24 दंडक, सिद्ध भगवान का कहना।

(2) बहुत जीव सामान्य रूप से वे कृतयुग्म ही होते हैं, बहुत जीव द्रव्य रूप से अनंत हैं। ओघादेश (सामान्य) से कड़जुम्मा और विधानादेश की अपेक्षा कलियोगा है। नारकी आदि 24 दंडक, सिद्ध भगवान ओघादेश की अपेक्षा सिय कड़जुम्मा यावत् कलियोगा है, विधानादेश से कलियोगा है।

(3) एक जीव जीव प्रदेश की अपेक्षा कड़जुम्मा है, शरीर प्रदेश की अपेक्षा कोई एक।

इसी तरह 24 दंडक में कहना। सिद्ध भगवान जीव प्रदेश की अपेक्षा कड़जुम्मा, शरीर प्रदेश नहीं होते।

(4) बहुत जीव प्रदेश की अपेक्षा-प्रदेश दो प्रकार के-जीव प्रदेश, शरीर प्रदेश जीव प्रदेश-ओघादेश की अपेक्षा कड़जुम्मा है। विधानादेश से भी कड़जुम्मा है। शरीर प्रदेश-ओघादेश की अपेक्षा 4 में से कोई एक और विधानादेश से चारों। इसी प्रकार 24 दंडक में कहना। सिद्ध भगवान जीव प्रदेशी की अपेक्षा दोनों कड़जुम्मा है। शरीर नहीं होता अतः प्रदेश भी नहीं होते।

(5) एक जीव के प्रदेश सिय कृतयुग्म यावत् सिय कलियोगा है। 24 दंडक सिद्ध में भी कहना।

(6) बहुत (अनेक) जीव में ओघादेश की अपेक्षा कृतयुग्म है विधानादेश की अपेक्षा चारों में से एक कोई भी स्वतंत्र अपेक्षा से।

19 दंडक (5 स्थावर छोड़कर) में चारों में से कोई एक युग्म (ओघादेश से) और विधानादेश से चारों युग्म हो सकते हैं। 5 स्थावर और सिद्ध भगवान ओघादेश की अपेक्षा कड़जुम्मा, विधानादेश की अपेक्षा चारों युग्म होते हैं।

(7) एक जीव कड़जुम्मा की स्थिति वाला है, एक जीव का सर्वकाल शाश्वत होता है, अनन्त समय होते हैं, अतः कड़जुम्मा है। 24 दंडक में से एक जीव कोई भी युग्म का हो सकता है। सिद्ध भगवान कड़जुम्मा स्थिति के होते हैं।

(8) समुच्चय में एक अनेक कड़जुम्मा समय की स्थिति वाले होते हैं। बहुत जीव ओघादेश और विधानादेश दोनों से कड़जुम्मा स्थिति वाले होते हैं। बहुवचन 24 दंडक के जीव चारों में से कोई भी युग्म के होते हैं। विधानादेश से कड़जुम्मा भी होते हैं। सिद्ध भगवान की स्थिति कड़जुम्मा है।

(9) जीव काले वर्ण के पर्याय में नहीं होते जीव अमूर्त होता है। शरीर सहित जीव की अपेक्षा शरीर के वर्ण चारों राशि रूप हो सकते हैं। इसी तरह बाकी 19 वर्णादिक का भी कहना। सिद्ध भगवान के शरीर नहीं है अत: वर्णादि प्रश्न नहीं होता। बहुत जीव आसरी भी जीव के वर्णादि नहीं होते। शरीर प्रदेश की अपेक्षा ओघादेश से चारों ही युग्म होते हैं। विधानादेश से भी चारों युग्म होते हैं। कालावर्ण की तरह अन्य 19 वर्णादि 24 दंडक में कहना सिद्ध भगवानों के शरीर नहीं होते। वर्णादिक भी नहीं होते।

(10) एक जीव के मतिज्ञान आदि का कथन है-मतिज्ञान के क्षयोपशम की विचित्रता से उनका अनन्तपणा सरीखा नहीं होता अत: एक जीव की अपेक्षा चारों में से कोई एक युग्म होता है इसी तरह 19 दंडक (एकन्द्रिय में समकित नहीं होती) में कहना।

बहुवचन (अनेक) आसरी भी मतिज्ञान के पर्याय ओघादेश की अपेक्षा चारों में से कोई एक हो सकता है। विधानादेश से चारों ही युग्म होते हैं। इसी तरह 19 दंडक में कहना श्रुतज्ञान का भी मतिज्ञान की तरह कहना। अवधि ज्ञान का भी कहना परन्तु विकलेन्द्रिय छोड़कर कहना। मन:पर्यव ज्ञान का इसी तरह कथन परन्तु समुच्चय जीव और मनुष्य में (मनुष्य में ही होता है) कहना। केवलज्ञान की पर्याय एक जीव आसरी कृतयुग्म होती है। अनन्तपणा है अत: कड़जुम्मा ही होते हैं। मनुष्य और सिद्ध भगवान में ही कहना। अनेक जीव भी कृतयुग्म ही होते हैं। तीन अज्ञान का मतिज्ञान की तरह कहना। 24 दंडक में तीन अज्ञान का कहना किन्तु विभंग ज्ञान का 16 दंडक में (एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय छोड़कर) कहना। चक्षुदर्शन 17 दंडक में, अचक्षु दर्शन 24 दंडक में, अवधि दर्शन 16 दंडक में मतिज्ञान की तरह कहना। केवल दर्शन केवलज्ञान पर्याय की तरह कहना।

179. जीव कम्पमान अकम्पमान (भ.श. 25 उ. 4) (1) जीव सकम्प भी है, और निष्कंप भी है। जीव के 2 भेद है-सिद्ध और संसारी। **सिद्ध के 2 भेद**-अनन्तर सिद्ध परम्पर सिद्ध। परम्पर सिद्ध निष्कम्प है। अनन्तर सिद्ध (सिद्धत्व प्राप्ति का प्रथम समय) सकम्प है। वे सर्व अंशों से कम्पते हैं देश से नहीं।

संसारी जीव के दो भेद-शैलेषी प्रतिपन्न (14वाँ गुणस्थान वाले) और अशैलेषी प्रतिपन्न (पहले से 13वें गुणस्थानवर्ती) शैलेषी प्रतिपन्न निष्कम्प होते हैं (उनके

योगों का सर्वथा निरोध होने से) और अशैलेषी प्रतिपन्न देश से और सर्व से सकम्प होते हैं। ईलिका गति से उत्पत्ति स्थान को जाते हुए जीव देश से सकम्प होते हैं, क्योंकि उनका पहले के शरीर में रहा हुआ अंश क्रिया रहित होने से निश्चल है। विग्रह गति प्राप्त जो उत्पत्ति स्थान में जाते हैं वे गेंद की तरह सर्वात्म रूप से उत्पन्न होते हैं, अत: सर्व से सकम्प हैं। विग्रह गति प्राप्त दो प्रकार ऋजुगति और अवस्थित में से यहाँ अवस्थित ग्रहण किया है। ईलिका गति से उत्पन्न होने वाले जीव उत्पत्ति स्थान का स्पर्श करते हैं वे देश से सकम्प है, अथवा स्व. क्षेत्र में रहते हुए जीव हाथ पैरादि अवयव चलाने से देश से सकम्प है। अविग्रह गति वाले जीव देश से सकम्प है।

इस तरह 24 दंडक के जीव देश से भी कम्पते हैं और सर्व से भी कम्पते हैं।

180. पुद्‌गलों की बहुया (बहुत्व) (भ.श. 25 उ. 4) (1) पुद्‌गल के 4 भेद हैं, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

द्रव्य की अपेक्षा-परमाणु से अनन्त प्रदेशी तक 13 भेद होते हैं।

क्षेत्र की अपेक्षा-एक आकाश प्रदेश अवगाहे से असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे तक 12 भेद।

काल-के भी क्षेत्र की तरह 12 भेद (एक से असंख्य)।

भाव के एक गुण काला से अनन्तगुण काला ये 13 इस प्रकार अनन्तगुण रूक्ष तक 20 भेदों के 13x20=260 भेद। चारों मिलकर 13+12+12+260 ये कुल 297 भेद होते हैं।

(2) दो प्रदेशी स्कंध से परमाणु पुद्‌गल **द्रव्यार्थ रूप से** बहुया (बहुत) है। इसी प्रकार तीन प्रदेशी से दो प्रदेशी यावत् 10 प्रदेशी से 9 प्रदेशी, इसी तरह अनन्त प्रदेशी स्कंध से असंख्यात प्रदेशी स्कंध बहुत है।

(3) प्रदेश से-परमाणु पुद्‌गल से दो प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ रूप से बहुत है। इसी प्रकार 9 प्रदेशी से 10 प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ रूप से बहुत है, इसी प्रकार संख्यात प्रदेशी से असंख्यात प्रदेशी उससे अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ रूप से बहुत है।

(4) द्रव्य से अवगाहना-दो प्रदेश अवगाहे पुद्‌गलों से एक प्रदेश अवगाहे पुद्‌गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक है। परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कंध तक एक प्रदेशावगाढ़ होते हैं। दो प्रदेशी स्कंध से अनन्त प्रदेशी स्कंध तक दो प्रदेशावगाढ़ होते हैं। इसी तरह तीन प्रदेशावगाढ़ यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ़ होते हैं। इसी तरह

10 प्रदेश अवगाहे से 9 प्रदेश अवगाहे और उनसे संख्यात प्रदेश अवगाहे पुद्‌गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत है, तथा संख्यात से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत है।

(5) प्रदेश से अवगाहना–एक प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल से दो प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल प्रदेश रूप से विशेषाधिक है। इसी तरह 9 से 10, दस से संख्यात और संख्यात से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्‌गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत है।

(6) समय से–एक समय की स्थिति दस यावत् असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्‌गलों में द्रव्यार्थ रूप से क्षेत्र की तरह वक्तव्यता है।

(7) भाव से–एक गुण काला से दो गुण काला आदि की परमाणु की तरह वक्तव्यता है, इसी तरह 5 वर्ण, दो गंध, 5 रस इन 12 की वक्तव्यता कहना।

(8) एक गुण कर्कश से दो गुण कर्कश विशेषाधिक है। इसी तरह 9 से 10 और संख्यात से असंख्यात, अनन्त गुण कर्कश पुद्‌गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत है। **द्रव्यार्थ** की तरह **प्रदेशार्थ** का भी कहना। कर्कश की तरह मृदु, गुरु, लघु का भी कहना। वर्ण की तरह शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष का भी कहना। ये सभी समुच्चय से 297 द्रव्यार्थ से 297 प्रदेशार्थ से 297 कुल 891 सूत्र हुए।

181. 69 बोलों का अल्प बहुत्व (भ.श. 25 उ. 4) द्रव्य, क्षेत्र और काल के तीन–तीन तथा भाव के 20x3=60 ये 69 बोल की अल्प बहुत्व श्री प्रज्ञापना सूत्र पद 3 में कही अनुसार है, विशेषता यह कि संख्यात गुण कर्कश पुद्‌गल प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा कहना। इसी तरह गुरु लघु मृदु का भी कहना।

182. अजीव के कड़जुम्मा (भ.श. 25 उ. 4) (1) द्रव्य से–एक परमाणु यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध द्रव्य रूप से कलियोगा है (2) बहुवचन (अनेक) परमाणु पुद्‌गल द्रव्य रूप से चारों में से कोई एक हो सकता है (ओघादेश से) और विधानादेश से कल्योज है (अन्य तीन नहीं)।

(3-4-5) प्रदेश से–एक परमाणु, एक पाँच प्रदेशी, एक 13 प्रदेशी आदि ये कल्योज युग्म है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कंध 6 प्रदेशी, 10 प्रदेशी, 14 प्रदेशी आदि दावर युग्म प्रदेशी है। तीन प्रदेशी, 7 प्रदेशी, 11 प्रदेशी, 15 प्रदेशी आदि तेओगा है। चार, आठ, बारह, सोलह प्रदेशी एक–एक स्कंध कड़जुम्मा युग्म है। आगे संख्यात, असंख्यात, यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध चारों में से एक युग्म यथा योग्य होता है। बहुवचन में (सम्मिलित अपेक्षा) परमाणु से अनन्त प्रदेशी तक सभी में ओघादेश

से कोई भी एक युग्म और विधानादेश से (स्वतंत्र अपेक्षा) प्रदेश संख्या के अनुसार परमाणु कल्योज, दो प्रदेशी दावर, तीन प्रदेशी तेओगा और चार प्रदेशी तो ओघादेश और विधानादेश से कड़जुम्मा ही होते हैं। संख्यात प्रदेशी, असंख्यात और अनन्त प्रदेशी स्कंध में ओघादेश से चारों में से कोई एक तथा विधानादेश से चारों युग्म हो सकते हैं।

(6) अवगाहना से–अपनी–अपनी प्रदेश संख्या से अवगाहना संख्या कम हो सकती है, अधिक नहीं। परमाणु पुद्‌गल ने कल्योज प्रदेश अवगाहे हैं। दो प्रदेशी में एक बढ़ा (सिय दावरजुम्मा, सिय कलियोगा) शेष दो नहीं। इसी तरह तीन प्रदेशी में एक बढ़ा तेओगा, चार प्रदेशी में एक कड़जुम्मा बढ़ा। आगे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ तक चारों युग्म होते हैं। एकवचन की पृच्छा में कोई एक युग्म, बहुवचन की पृच्छा में ओघादेश से कोई एक और विधानादेश से चारों होते हैं। बहुत परमाणु पुद्‌गल ने ओघादेश से कड़जुम्मा, विधानादेश से कलियोगा, तीन प्रदेशी में तीनों या तीन में से एक दो प्रदेशी में दोनों या दो में से एक युग्म होता है।

(7) स्थिति से–परमाणु से अनन्त प्रदेशी स्कंध तक एकवचन में चारों में से कोई एक युग्म हो सकता है। बहुवचन में ओघादेश से कोई भी एक युग्म की स्थिति, विधानादेश से चारों युग्म की स्थिति वाले परमाणु होते हैं।

(8) भाव से वर्णादि–स्थिति के समान ही वर्णादि 16 बोल समझना। परमाणु आदि में जो वर्णादि हो, उस अपेक्षा से। कर्कश आदि 4 स्पर्शों में अनन्त प्रदेशी ही होते हैं। कर्कश पर्यव भी एकवचन में चारों में से कोई एक युग्म वाले, तथा बहुवचन में ओघादेश से चारों में से कोई एक युग्म और विधानादेश से चारों युग्म होते हैं। इसी तरह गुरु लघु मृदु का भी कहना।

(9) सार्द्ध-अनर्द्ध–परमाणु पुद्‌गल सार्द्ध (जिसका आधा भाग हो सके) नहीं, अनर्द्ध है। दो प्रदेशी सार्द्ध है। बेकी संख्या सार्द्ध है, एकी संख्या अनर्द्ध है। 3, 5, 7, 9 ये अनर्द्ध तथा 4, 6, 8, 10 ये सार्द्ध हैं। संख्यात असंख्यात अनन्त प्रदेशी एकवचन की अपेक्षा कोई एक तथा बहुवचन की अपेक्षा दोनों होते हैं।

183. अजीवकम्पमान (भ.श. 25 उ. 4)

1. परमाणु से अनन्त प्रदेशी तक सभी सकम्प अकम्प दोनों होते हैं। बहुवचन की अपेक्षा सदाकाल शाश्वत सकम्प भी अकम्प भी दोनों होते हैं।

2-3. परमाणु जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सकम्प रहता है, जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्याता काल तक निष्कंप रहता है। दो प्रदेशी यावत् अनन्त प्रदेशी तक इसी तरह कहना। बहुवचन में सदाकाल सकम्प अकम्प मिलते हैं।

4. **सकम्प का अन्तर**–परमाणु (परमाणु अवस्था में रहता है तब तक स्वस्थान और स्कंध में होता है तब परस्थान कहलाता है) स्वस्थान और परस्थान आसरी जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्याता काल का सकम्प का अन्तर होता है।

5. **अकम्प का अन्तर**–निष्कंप परमाणु का स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवाँ भाग और परस्थान आसरी जघन्य 1 समय उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है।

दो प्रदेशी स्कंध सकम्प का अन्तर स्वस्थान से जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्याता काल और परस्थान में उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। निष्कंप दो प्रदेशी स्कंध का अन्तर स्वस्थान में उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग और परस्थान आसरी उत्कृष्ट में अनन्त काल। जघन्य एक समय सर्वत्र समझें। इसी तरह अनन्त प्रदेशी स्कंध तक कहना।

बहुवचन में अन्तर नहीं होता। बहुत परमाणु से अनन्त प्रदेशी तक कहना।

अल्प बहुत्व–(1) सबसे थोड़ा सकम्प, निष्कंप परमाणु असंख्यात गुणा यावत् असंख्यात प्रदेशी तक कहना। अनन्त प्रदेशी में निष्कंप थोड़ा सकम्प अनंतगुणा।

द्रव्यार्थ रूप से अल्पाबोध–(1) सबसे थोड़े द्रव्यार्थ रूप से अकम्प अनंत प्रदेशी स्कंध (2) उससे सकम्प अनंत प्रदेशी स्कंध अनंतगुणा। (3) उससे सकम्प परमाणु अनंतगुणा (4) उससे संख्यात प्रदेशी सकम्प असंख्यगुणा (5) उससे असंख्यात प्रदेशी सकम्प असंख्यातगुणा (6) उससे निष्कंप परमाणु असंख्यातगुणा (7) उससे संख्यात प्रदेशी निष्कंप संख्यातगुणा (8) उससे असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यातगुणा।

प्रदेशार्थ रूप से अल्पाबोध–द्रव्यार्थ की तरह कहना किन्तु परमाणु पुद्गल में अप्रदेशार्थ रूप कहना। और संख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यातगुणा कहें।

दोनों की शामिल अल्पाबोध–(1) अनंत प्रदेशी स्कंध निष्कंप सबसे अल्प (2) उनके प्रदेश अनंतगुणे (3) वे ही सकम्प अनंतगुणे (4) उनके प्रदेश अनंतगुणे

(5) परमाणु सकम्प अनंतगुणे (6) संख्यात प्रदेशी सकम्प असंख्यगुणे (7) वे ही प्रदेश से संख्यातगुणे (8) असंख्यात प्रदेशी सकम्प असंख्यगुणे (9) उनके प्रदेश असंख्यगुणे (10) परमाणु निष्कंप असंख्यगुणे (11) संख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यगुणे (12) उन्हीं के प्रदेश संख्यातगुणे (13) असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यगुणे (14) उनके ही प्रदेश असंख्यातगुणे।

184. सर्व से और देश से कम्पमान अकम्पमान (भ.श. 25 उ. 4) (1) परमाणु पुद्गल सर्व से कम्पता है, सर्व से अकम्पता है (देश से नहीं)। (2) द्विप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी स्कंध देश से और सर्व से कम्पते और अकम्पते भी है। (3) बहुवचन में परमाणु सर्व से कम्पते या अकम्पते हैं। (4) दो प्रदेशी आदि बहुवचन में देश और सर्व दोनों से कम्पमान और अकम्पमान है। यावत् अनंत प्रदेशी तक कहना।

(5) स्थिति–परमाणु की कम्पमान की स्थिति (जघन्य सर्वत्र एक समय की समझें) उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग। अकम्पमान की उत्कृष्ट असंख्य काल द्विप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी की सकम्प देश से और सर्व से उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग और अकम्प की उत्कृष्ट असंख्य काल। बहुवचन में कम्पमान और अकम्पमान की देश और सर्व से सदाकाल शाश्वत है।

(6) अन्तर–

पुद्गल	काय स्थिति (उत्कृष्ट)	स्वस्थान अंतर (उत्कृष्ट)	परस्थान अंतर (उत्कृष्ट)	अल्प बहुत्व
सर्व सकंप परमाणु	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	असंख्याता काल	अल्प
सर्व सकंप द्विप्रदेशी आदि	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	अनंत काल	1 अल्प
देश सकंप द्विप्रदेशी आदि	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्याता काल	अनंत काल	2 असं. गुणा
निष्कंप परमाणु	असंख्याता काल	आवलिका के असंख्यातवें भाग	असंख्यात काल	असं. गुणा
निष्कंप द्विप्रदेशी आदि	असंख्याता काल	आवलिका के असंख्यातवें भाग	अनंत काल	3 असं. गुणा

बहुवचन में कम्पमान अकम्पमान का अंतर नहीं होता।

अल्प बहुत्व–(1) सर्व सकंप परमाणु अल्प है, उससे निष्कंप परमाणु असंख्य गुणा। (2) सर्व सकंप द्विप्रदेशी अल्प है, उससे देश सकंप असंख्यातगुणे, उससे निष्कंप असंख्यगुणे, असंख्य प्रदेशी तक इसी प्रकार है। (3) अनंत प्रदेशी में सर्व

सकंप अल्प है उससे सर्व निष्कंप अनंतगुणा, उससे देश सकंप अनंतगुणा है।

द्रव्यार्थ की अल्प बहुत्व-परमाणु, संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी, तथा अनंत प्रदेशी स्कंध-सर्वकंप, देशकंप, अकंप की द्रव्यार्थ की अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़ा अनंत प्रदेशी सर्व सकंप द्रव्य रूप से (2) उसके अकंपमान अनंतगुणा (3) उसके देश कंपमान अनंतगुणा (4) उससे असंख्यात प्रदेशी सकंप अनंतगुणा (5) उससे संख्यात प्रदेशी सर्व सकंप असंख्यातगुणा (6) उससे परमाणु पुद्‌गल सकंप असंख्यातगुणा (7) उससे संख्यात प्रदेशी देशकंप असंख्यातगुणा (8) उससे असंख्यात देशकंप असंख्यगुणा (9) उससे परमाणु अकंप असंख्यगुणे (10) उससे संख्यात प्रदेशी अकंप संख्यातगुणे (11) उससे असंख्यात प्रदेशी अकंप असंख्यगुणे।

प्रदेशार्थ अल्प बहुत्व-सारा अधिकार द्रव्यार्थ की तरह है, विशेषता यह कि परमाणु में अप्रदेशार्थ कहना। संख्यात प्रदेशी अकंप प्रदेशार्थ असंख्यगुणा कहें।

सम्मिलित अल्प बहुत्व-परमाणु के सकंप अकंप दो भेद, संख्यात, असंख्यात, अनंत प्रदेशी के तीन इनके प्रदेशों के तीन यो 6-6 भेद कुल 20 भेद। (1 से 6) अनंत प्रदेशी के इस प्रकार सर्वप्रथम सर्व सकंप द्रव्य, प्रदेश, फिर निष्कंप द्रव्य, प्रदेश फिर देशकंप द्रव्य, प्रदेश ये सभी क्रमशः अनंतगुणे है। (7) असंख्यात प्रदेशी सर्व सकंप अनंतगुणा।

(8) उन्हीं के प्रदेश असंख्यगुणा (9) संख्यात प्रदेशी सर्व सकंप अनंतगुणा (10) उन्हीं के प्रदेश संख्यातगुणा (11) परमाणु सर्व सकंप असंख्यातगुणा (12) संख्यात प्रदेशी देश सकंप असंख्यगुणा (13) उन्हीं के प्रदेश संख्यातगुणा (14) असंख्यात प्रदेशी देशकंप असंख्यातगुणा (15) उन्हीं के प्रदेश असंख्यगुणा (16) परमाणु निष्कंप असंख्यगुणा (17) संख्यात प्रदेशी निष्कंप संख्यातगुणा (18) उनके प्रदेश संख्यातगुणा (19) असंख्यात प्रदेशी निष्कंप असंख्यातगुणा (20) उन्हीं के प्रदेश असंख्यगुणा।

7. धर्मास्तिकाय के मध्यप्रदेश है, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय के भी 8-8 मध्यप्रदेश कहे हैं।
8. जीवास्तिकाय के ये 8 मध्यप्रदेश आकाशास्तिकाय के जघन्य एक, दो, तीन, चार, पाँच और छ में समा सकते हैं उत्कृष्ट आठ प्रदेशों में समा सकते हैं, सात में नहीं। सात में नहीं समाते, वस्तु स्वभाव ही ऐसा है।

185. काल का थोकड़ा (भ.श. 25 उ. 5) (1) असंख्यात समयों की एक आवलिका होती है। इसी तरह (2) आणपाण श्वासोच्छवास) (3) स्तोक (4) लव (5) मुहूर्त (6) अहोरात्रि (7) पक्ष (8) मास (9) ऋतु (10) अयन (11) संवत्सर (12) युग (13) सौ वर्ष (14) हजार वर्ष (15) लाख वर्ष (16) पूर्वांग (17) पूर्व (18) त्रुटितांग (19) त्रुटित (20) अटटांग (21) अटट (22) अववांग (23) अवव (24) हुहुकांग (25) हुहुक (26) उत्पलांग (27) उत्पल (28) पद्मांग (29) पद्म (30) नलिनांग (31) नलिन (32) अच्छनिपूरांग (33) अच्छनिपूर (34) अयुतांग (35) अयुत (36) नयुतांग (37) नयुत (38) प्रयुतांग (39) प्रयुत (40) चूलिकांग (41) चूलिका (42) शीर्ष प्रहेलिकांग (43) शीर्ष प्रहेलिका (44) पल्योपम (45) सागरोपम (46) अवसर्पिणी (47) उत्सर्पिणी तक है, ये सभी असंख्यात समय रूप है। उत्कृष्ट 194 अंक तक गणना उसके आगे पल्योपम आदि उपमा संख्या है।

(2) पुद्‌गल परावर्त्तनादि अनंत समय रूप है, इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल और सर्वकाल का कहना।

(3) बहुत आवलिकाएँ सिय असंख्यात और सिय अनंत समय रूप है इसी तरह बहुवचन में आणपाणु यावत् उत्सर्पिणी का कहना।

(4) बहुत पुद्‌गल परावर्तन अनंत समय रूप है। भूतकाल, भविष्य काल और सर्वकाल में प्रश्न (बहुवचन नहीं होता) नहीं बनते।

(5) आणपाणु संख्यात समय रूप है, इसी तरह शीर्ष प्रहेलिका तक कहना। पल्योपमादि आगे के 4 बोलों में प्रत्येक में असंख्यात आवलिका है। पुद्‌गल परावर्त्तन और भूत, भविष्य और सर्वकाल में सभी में अनंत-अनंत आवलिका है।

(6) बहुवचन में बहुत आवलिका में यावत् शीर्ष प्रहेलिका तक सिय संख्यात, सिय असंख्यात सिय अनंत आवलिका है। पल्योपम आदि 4 बोलों में सिय असंख्यात, सिय अनंत आवलिका और बहुत पुद्‌गल परावर्त्तन में अनंत आवलिका है।

(7) स्तोक में आणपाणु का आवलिका की तरह वक्तव्यता है, शीर्ष प्रहेलिका तक कहना। इसी तरह एक-एक बोल छोड़कर सभी के बारे में एकवचन और बहुवचन से कहना।

(8-9) एक पल्योपम में समय से लेकर शीर्ष प्रहेलिका तक असंख्यात बहुत पल्य में असंख्य या अनंत होते हैं।

(10-11) एक सागरोपम में संख्यात पल्योपम होते हैं, अवसर्पिणी उत्सर्पिणी में भी संख्यात पल्योपम होते हैं। बहुवचन में संख्यात असंख्यात अनंत कहना।

(12) एक पुद्गल परावर्त्तन में अनंत पल्योपम होते हैं, इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल, सर्वकाल में भी अनंत पल्योपम होते हैं।

(13) एक अवसर्पिणी और एक उत्सर्पिणी में 10-10 सागरोपम (संख्यात) होते हैं।

(14-15) एक पुद्गल परावर्तन में अनंत अवसर्पिणी अनंत उत्सर्पिणी होती है, इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल, सर्वकाल का कहना। बहुवचन में अनंत कहना।

(16) भूतकाल में अनंत पुद्गल परावर्त्तन है, भविष्य काल और सर्वकाल में भी अनंत है। समुच्चय तीन काल के 6 अलावा-(1) भूतकाल से भविष्य काल एक समय अधिक है। (2) भविष्य काल से भूतकाल एक समय न्यून है। (3) भूतकाल से सर्वकाल दुगुना झाझेरा है। (4) सर्वकाल से भूतकाल आधे से कुछ न्यून (कम) है। (5) भविष्य काल से सर्वकाल दुगुने से कुछ न्यून है। (6) सर्वकाल से भविष्य काल आधे से कुछ अधिक है।

186. 6 नियंठा (निर्ग्रंथ) (भ.श. 25 उ. 6) नियंठा-निर्ग्रंथ यह शब्द श्रमण, संयमी, मुनि एवं जैन साधु का पर्यायवाची शब्द है। श्रमणों के गुणों, योग्यतानुसार 6 भाग किये हैं। इनका 36 द्वारों से वर्णन है-

1	प्रज्ञापना	5
2	वेद	3
3	राग	2
4	कल्प	5
5	चारित्र	2
6	प्रतिसेवना	2
7	ज्ञान	5
8	तीर्थ	2

9	लिंग	3
10	शरीर	5
11	क्षेत्र	5
12	काल	6
13	गति	2
14	संयम	स्थान
15	निकास	
16	योग	2

17	उपयोग	2
18	कषाय	4
19	लेश्या	6
20	परिणाम	3
21	बंध	8
22	वेदन	8
23	उदीरणा	8
24	उपसंपद्हान	
25	संज्ञा	2
26	आहार	2

27	भव	
28	आकर्ष	2
29	कालमान	2
30	अंतर	2
31	समुद्घात	7
32	क्षेत्र	5
33	स्पर्शना	5
34	भाव	3
35	परिणाम	
36	अल्प बहुत्व	

(1) प्रज्ञापना द्वार-श्रमणों का 6 से 14 गुणस्थान होता है, सर्व विरति चारित्र होने पर भी चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशम, उपशम और क्षय आदि विशेषताओं से 6 भेद किये हैं (1) पुलाक (2) बकुश (3) प्रतिसेवना कुशील (4) कषाय कुशील (5) निर्ग्रंथ (6) स्नातक। इन सभी के 5-5 भेद किये हैं।

1. **पुलाक**-छठा गुणस्थान, शालि के पूले के समान जिसमें सार (दाने) कम घास, मिट्टी अधिक होती है वह पुलाक यानि सार थोड़ा असार बहुत। संयमवान होते हुए भी प्रायः दोष सेवन से संयम दूषित कर देता है। इसके 2 प्रकार है-लब्धि पुलाक-अपनी लब्धि से चक्रवर्ती की सेना का भी विनाश कर देता है (ज्ञान पुलाक को ही ऐसी लब्धि होती है। अन्य को नहीं होती)। चारित्र पुलाक (प्रतिसेवना) इसके 5 भेद है-

(1) ज्ञान पुलाक-स्खलित आदि दोष से ज्ञान की विराधना करता है। किसी के द्वारा बाधा पहुँचाने पर पुलाक लब्धि का प्रयोग करता है, वह ज्ञान पुलाक कहलाता है।

(2) दर्शन पुलाक-दर्शन के संबंध में, शंका यानि श्रद्धा प्ररूपणा में बाधा होने पर पुलाक लब्धि का प्रयोग करता है, वह दर्शन पुलाक।

(3) चारित्र पुलाक-मूल गुण, उत्तर गुण की विराधना में विकट परिस्थिति में प्रयोग करें।

(4) लिंग पुलाक–परिस्थिति या बिना कारण लिंग बदले या अन्य लिंग धारण करें।

(5) यथा सूक्ष्म पुलाक–अकल्पनीय वस्तु सेवन की इच्छा, या अन्य साधु, श्रावक, दीक्षार्थी पर आयी आपत्ति के कारण लब्धि प्रयोग की हो, यथा सूक्ष्म पुलाक है।

2. **बकुश**–छठा सातवाँ गुणस्थान है, जिसका चारित्र विचित्र प्रकार का हो, वह बकुश (चित्तकबरा) है। इसके दो भेद है (1) शरीर बकुश–हाथ, पैर, नख, मुख, शरीर के अवयवों को शुभित (सुशोभित) रखता हो वह शरीर बकुश। उपकरण बकुश–वस्त्र, पात्रादि उपकरण की विभूषा रखता हो। ये 5 प्रकार के हैं–

(1) आभोग बकुश–जानता हुआ उपयोग सहित, दोष लगावे।

(2) अनाभोग बकुश–अनजानपने में दोष लगावे।

(3) संवुड (संवृत) बकुश–माया, लज्जा से छिपकर दोष लगावे।

(4) असंवृत बकुश–सरलता अथवा निर्लज्जता से प्रकट रूप से दोष लगावे।

(5) यथासूक्ष्म बकुश–आँख, मुख, वस्त्र आदि को साफ (धोने वाला) रखने वाला।

3. **कुशील (प्रतिसेवना कुशील)**–दोषों के सेवन से चारित्र दूषित हो वह कुशील प्रतिसेवना मूल एवं उत्तर गुणों की विराधना प्रतिसेवना कुशील कहलाती है–5 भेद

1. ज्ञान प्रतिसेवना–ज्ञान से आजीविका चलाने वाला।

2–3. दर्शन प्रतिसेवना चारित्र प्रतिसेवना–दर्शन और चारित्र से आजीविका चलाना।

4. लिंग प्रतिसेवना–लिंग (वेश) पलटकर आजीविका करने वाला।

5. यथासूक्ष्म प्रतिसेवना–तपस्या के फल या देवादि पद की इच्छा करे, यथासूक्ष्म। कुशील प्रतिसेवना है।

4. **कषाय कुशील**–6 से 10 गुणस्थान। क्रोध, मान आदि कषायों के उदय से परिणामों में उतार–चढ़ाव आते हैं ज्ञान दर्शन चारित्र में दोष लगता है। संज्वलन कषाय के कारण चारित्र दूषित हो गया हो वह कषाय कुशील है। 5 भेद है

1 से 3. ज्ञान, दर्शन, चारित्र कषाय कुशील–मन से कषाय द्वारा ज्ञान दर्शन चारित्र की विराधना करता है वह ज्ञान, दर्शन, चारित्र कषाय कुशील है।

4. लिंग कषाय कुशील–कषायपूर्वक लिंग (वेश) परिवर्तन करे।

5. यथासूक्ष्म कषाय कुशील–मन से क्रोधादि का सेवन करता है। मूल या उत्तर गुण में दोष नहीं लगता है।

5. **निर्ग्रंथ**–11वाँ 12वाँ गुणस्थान (मोह का अनुदय) उपशांत मोहनीय, क्षीण मोहनीय इसकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त होती है। (साफ किये हुए शालि कण की तरह)

(1) प्रथम समयवर्ती निर्ग्रंथ–10वें से 11 या 12वें गुणस्थान में प्रथम समय वाला।

(2) अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रंथ–शेष समय (पहला समय छोड़कर) वर्ती 11वाँ या 12वाँ।

(3) चरम समयवर्ती निर्ग्रंथ–अंतिम समय छद्मस्थपना जिसका शेष रहा हो। (या प्रथम समयवर्ती वीतराग) 11वाँ या 12वाँ का अंतिम समयवर्ती।

(4) अचरम समयवर्ती निर्ग्रंथ–दोनों गुणस्थान (11वाँ या 12वाँ) के बीच में (प्रथम और अंतिम समय छोड़कर) का समय या 1 समय से अधिक वीतरागता का समय।

(5) यथासूक्ष्म निर्ग्रंथ–प्रथमादि समय की विवक्षा बिना सामान्यतः निर्ग्रंथ। इनके लिए सब समय सरीखे हैं।

6. **स्नातक**–13वाँ 14वाँ गुणस्थान–पूर्णतया शुद्ध, अखंड चारित्र वाले निर्ग्रंथ स्नातक कहलाते हैं (सुगंधित चावल)। यहाँ भेद व्याख्या नहीं है, शब्द नय से भेद

1. अच्छवी स्नातक–शरीर की शुश्रुषा विभूषा रहित योग निरोध किये 14वें गुणस्थान वाले।

2. अशबल स्नातक–दोष रहित शुद्ध चारित्र वाले।

3. अकम्मे स्नातक–4 घातिकर्म रहित।

4. संशुद्ध स्नातक–केवली 13वाँ गुणस्थान वाले।

5. अपरिस्त्रावी स्नातक–अबंधक, योग–क्रिया रहित 14वें गुणस्थान वाले।

(2) वेद द्वार–पुलाक में 2 वेद (पुरुष, पुरुष नपुंसक) बकुश और प्रतिसेवना में तीन स्त्री, पुरुष, नपुंसक (स्त्री नपुंसक भी), कषाय कुशील में तीनों वेद और

अवेदी भी। (उपशांत वेदी या क्षीण वेदी अवेदी में) निर्ग्रंथ में अवेदी (उपशांत या क्षीण) स्नातक अवेदी (क्षीण अवेदी) 13वाँ 14वाँ गुणस्थान होने से।

(3) राग द्वार–प्रथम के 4 नियंठा सरागी, निर्ग्रंथ उपशांत या क्षीण वीतरागी (सरागी नहीं) और स्नातक क्षीण वीतरागी होते हैं।

(4) कल्प द्वार–कल्प 5 होते हैं–स्थित कल्प, अस्थित कल्प, स्थविर, जिनकल्प, कल्पातीत। प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के साधुओं में 10 कल्प होते हैं, वे स्थित कल्प में होते हैं, शेष 22 तीर्थंकरों के साधुओं के कभी होते हैं, कभी नहीं होते अस्थित कल्प। पुलाक में 3 कल्प (स्थित, अस्थित, स्थविर) बकुश में चार कल्प (जिन कल्प बढ़ा) कषाय कुशील में पाँचों कल्प। निर्ग्रंथ स्नातक में 3 (स्थित, अस्थित, कल्पातीत)।

(5) चारित्र द्वार–चारित्र 5–सामायिक छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय, यथा ख्यात चारित्र। पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना में दो चारित्र (सामायिक, छेदोपस्थापनीय) कषाय कुशील में 4 (प्रथम के चार) निर्ग्रंथ एवं स्नातक में एक (यथा ख्यात) 11 से 14 गुणस्थान होने से।

(6) प्रतिसेवना द्वार–प्रतिसेवी और अप्रतिसेवी। पुलाक प्रतिसेवी होता है 5 मूल गुण 10 उत्तर गुण (पच्चक्खाण रूप) में दोष लगाता है। प्रतिसेवना में भी प्रतिसेवी है। बकुश मात्र उत्तर गुण सेवी (मूल अप्रतिसेवी) शेष तीनों कषाय कुशील, निर्ग्रंथ, स्नातक ये तीनों अप्रतिसेवी होते हैं। मूल गुण उत्तर गुणों में दोष नहीं लगाते।

(7) ज्ञान द्वार–मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव, केवलज्ञान ये 5 हैं। पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना इन तीन में कदाचित् दो (मतिश्रुत) कदाचित् तीन (मतिश्रुत अवधि या मनःपर्यव दो में से एक) ज्ञान होते हैं। कषाय कुशील और निर्ग्रंथ में 2–3 या 4 ज्ञान होते हैं। स्नातक में एक केवलज्ञान होता है।

श्रुतज्ञान–पुलाक जघन्य नवमें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु तक और उत्कृष्ट नौ पूर्व तक पढ़ता है। बकुश प्रतिसेवना में आठ प्रवचन माता तथा 10 पूर्व का श्रुत पढ़ते हैं। कषाय कुशील और निर्ग्रंथ जघन्य आठ प्रवचन माता उत्कृष्ट 14 पूर्व। और स्नातक श्रुत व्यतिरिक्त (केवली होने से) होता है।

(8) तीर्थ द्वार–पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना तीर्थ में होते हैं (अतीर्थ में नहीं) कषाय कुशील निर्ग्रंथ और स्नातक तीर्थ में भी होते है, अतीर्थ में भी होते हैं। तीर्थंकर और प्रत्येक बुद्ध में भी होते हैं।

(9) लिंग द्वार–सभी नियंठा द्रव्य लिंग आश्रित स्वलिंग, अन्य लिंग, गृहस्थ लिंग और भाव लिंग आसरे मात्र स्वलिंग में होते हैं।

(10) शरीर द्वार–शरीर पाँच। पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक में तीन शरीर औदारिक, तैजस, कार्मण। बकुश और प्रतिसेवना में तीन या 4 (वैक्रिय शरीर बढ़ा) शरीर में। कषाय कुशील में पाँचों (3, 4 और 5) शरीर होते हैं।

(11) क्षेत्र द्वार–क्षेत्र 15 है। सभी नियंठा जन्म और सद्भाव की अपेक्षा 15 कर्मभूमि में ही होते हैं। संहरण की अपेक्षा पुलाक को छोड़कर (पुलाक लब्धि वाले का देवता भी साहरण नहीं कर सकते) शेष सभी नियंठा कर्मभूमि अकर्मभूमि में होते हैं। नौ बोलों का साहरण नहीं होता पुलाक लब्धि, आहारक लब्धि, साध्वी, अप्रमादी, उपशम श्रेणी, परिहार विशुद्ध चारित्री, 14 पूर्वी, केवली।

(12) काल द्वार–पुलाक निर्ग्रंथ और स्नातक अवसर्पिणी काल के जन्म की अपेक्षा तीसरे चौथे आरे में और सद्भाव की अपेक्षा तीसरे चौथे पाँचवें (चौथे में जन्मा हुआ) में होता है। उत्सर्पिणी काल में दूसरे, तीसरे, चौथे में जन्म और सद्भाव तीसरे चौथे आरे में होता है। क्योंकि तीसरे चौथे दो आरों में चारित्र की प्राप्ति होती है। बकुश, प्रतिसेवना, कषाय कुशील अवसर्पिणी के 3, 4, 5वें में जन्म लेते हैं और सद्भाव भी इन तीनों में होता है। उत्सर्पिणी में 2, 3, 4 में जन्म तथा इनका सद्भाव तीसरे चौथे आरे में होता है। नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल की अपेक्षा सभी नियंठा जन्म और सद्भाव से चौथे पलिभाग (महाविदेह क्षेत्र) में होते हैं। संहरण की अपेक्षा–पुलाक का संहरण नहीं होता शेष नियंठा छहों आरे और चारों पलि भागों में पाये जाते हैं। (देवकुरु, उत्तरकुरु, हरिवास, रम्यक्वास, हैमवय, हैरण्यवय, 4 महाविदेह)।

(13) गति द्वार–पुलाक मरकर जघन्य पहले उत्कृष्ट 8वें देवलोक में,० जघन्य प्रत्येक पल्य उत्कृष्ट 18 सागर की स्थिति में जाता है। आराधक हो तो चार में से कोई एक पदवी पाता है।

बकुश, प्रतिसेवना–जघन्य पहले देव–उत्कृष्ट 12वें देवलोक में जघन्य प्रत्येक पल्य उत्कृष्ट 22 सागर की स्थिति में जाता है, आराधक हो तो चार में से एक पदवी पाता है।

कषाय कुशील–जघन्य पहले देवलोक उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध में जघन्य प्रत्येक पल उत्कृष्ट 33 सागर की स्थिति में जाता है आराधक हो तो पाँच में से एक पदवीधर बनता है। **निर्ग्रंथ मरकर** सर्वार्थसिद्ध में 33 सागर की स्थिति से अहमिन्द्र बनकर जाता है।

स्नातक मोक्ष में ही जाते हैं, आराधक ही होते हैं, विराधक नहीं होते।

(14) संयम स्थान–प्रथम चार के संयम स्थान असंख्याता है चारित्र की हीनाधिकता के कारण। निर्ग्रंथ और स्नातक में एक ही संयम स्थान है (कषाय का अभाव होने से)। सबसे थोड़े–निर्ग्रंथ और स्नातक के (एक ही) उनसे पुलाक के, बकुश के, प्रतिसेवना के, कषाय कुशील के क्रमशः असंख्यात–असंख्यातगुणा है।

(15) निकास (संनिकर्ष) द्वार–संयम के (चारित्र के) पर्यव इस प्रकार हीनाधिक है–

नियंठे	पुलाक से	बकुश से	प्रतिसेवना से	कषाय कु. से	निर्ग्रंथ, स्नातक से
पुलाक	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन	अनंतगुणहीन	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
बकुश	1 अनंतगुणवृद्धि	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
प्रति.	1 अनंतगुणवृद्धि	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
कषा.	3 छठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	6 ठाणवड़िया	1 अनंतगुणहीन
निर्ग्रंथ	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	0 परस्पर तुल्य
स्नातक	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	1 अनंतगुणवृद्धि	0 परस्पर तुल्य

चारित्र	पर्यव जघन्य उत्कृष्ट	छठाणवड़िया हानि	छठाणवड़िया वृद्धि
पु.कषा.	जघन्य–परस्पर तुल्यअल्प	1 अनंत भाग हानि	अनंत भाग वृद्धि
पुलाक	उत्कृष्ट अनंतगुणा	2 असं. भाग हानि	असं. भाग वृद्धि
ब.प्रति.	जघन्य–परस्पर तुल्य अनंतगुणा	3 संख्यात भाग हानि	संख्यात भाग वृद्धि
बकुश	उत्कृष्ट–अनंतगुणा	4 संख्यात गुण हानि	संख्यात गुण वृद्धि
प्रति.	उत्कृष्ट–अनंतगुणा	5 असं. गुण हानि	असं. गुण वृद्धि
कषाय.	उत्कृष्ट–अनंतगुणा	6 अनंत गुण हानि	अनंत गुण वृद्धि
नि.स्ना.	जघन्य उत्कृष्ट तुल्य अनंतगुणा	षट् स्थान रहित	षट् स्थान रहित

(16) योग द्वार–पुलाक आदि पाँचों सयोगी होते है तीनों योग पाते है। स्नातक सयोगी अयोगी दोनों होते हैं। सयोगी 13वें अयोगी 14वें गुणस्थान में।

(17) उपयोग द्वार–छहों नियंठा में दोनों (साकार, अनाकार) उपयोग होते हैं।

(18) कषाय द्वार–पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना में चारों कषाय (संज्वलन) होते हैं। कषाय कुशील में सकषायी होता है उसमें 4, 3, 2, 1 कषाय (संज्वलन) पाते

हैं। निर्ग्रंथ में अकषायी (उपशांत या क्षीण कषायी) और स्नातक अकषायी क्षीण कषायी होता है।

(19) लेश्या द्वार–छ लेश्या द्रव्य रूप से अपेक्षा है। पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना इनमें तीन विशुद्ध लेश्या तेजा, पद्म, शुक्ल लेश्या होती है। कषाय कुशील में 6 लेश्या निर्ग्रंथ में एक परम शुक्ल लेश्या और स्नातक में लेश्या हो तो परम शुक्ल या अलेशी होता है।

(20) परिणाम द्वार–पुलाक आदि चार में तीनों परिणाम (हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित) पाये जाते है। निर्ग्रंथ और स्नातक में दो–दो (वर्द्धमान, अवस्थित) परिणाम पाते हैं। **स्थिति**–पुलाकआदि 4 में हीयमान वर्द्धमान की जघन्य स्थिति 1 समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त और अवस्थित की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 7 समय होती है। निर्ग्रंथ में वर्द्धमान की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अवस्थित की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त (निर्ग्रंथ का मरण अवस्थित परिणाम में होता है, अतः 1 समय कहा है) स्नातक में वर्द्धमान की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अवस्थित की जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़ पूर्व होती है। केवलज्ञान प्राप्ति के अन्तर्मुहूर्त तक परिणाम अवस्थित रहकर फिर शैलेषी अवस्था स्वीकारता है अतः अन्तर्मुहूर्त कहा।

(21) बंध द्वार–पुलाक 7 कर्मों का बंध करता है, आयुष्य के परिणाम (अध्यवसाय) नहीं होते। बकुश, प्रतिसवेना में 7 या 8 कर्मों का बंध होता है। कषाय कुशील में 7, 8 या 6 कर्मो का। छ बांधे तो आयुष्य मोहनीय छोड़कर। निर्ग्रंथ एक कर्म साता वेदनीय का और स्नातक के अगर बंधता है तो एक साता वेदनीय, नहीं तो अबंध होते हैं।

(22) वेदन द्वार–पुलाकादि 4 आठों कर्मों को वेदते हैं, निर्ग्रंथ 7 (मोहनीय छोड़कर) कर्म वेदते हैं, स्नातक चार कर्म अघाती (वेदनीय, आयु, नाम, गौत्र) कर्म वेदते हैं।

(23) उदीरणा द्वार–पुलाक 6 कर्मों की उदीरणा (आयुष्य, वेदनीय छोड़कर) करता है। बकुश प्रतिसेवना 7, 8, 6 कर्मों की उदीरणा, कषाय कुशील 5, 6, 7, 8 कर्मों की आयुष्य, मोहनीय वेदनीय छोड़कर) उदीरणा निर्ग्रंथ 5 या 2 (नाम और गौत्र की उदीरणा तथा स्नातक उदीरणा करे तो दो (नाम और गौत्र की) कर्मों की उदीरणा करता है अथवा नहीं करता है।)

(24) उपसंपद्हान द्वार–अपना स्थान छोड़कर ऊपर नीचे (एक अवस्था छोड़ दूसरी नियंठा अवस्था) नियंठा जाने की अवस्था–(असंयम = मनुष्य या देवगति, संयमासंयम = श्रावकपना)

नियंठा	जावे	पु.	ब.	प्र.	क.	नि.	स्ना.	असं.	संयमा संयम	नीचे उतरे तो	ऊपर चढ़े तो
पुलाकपणे छोड़ता हुआ	2 जावे	–	–	–	1	–	–	1	–	असंयम	कषाय कुशील
बकुशपणे छोड़ता हुआ	4 जावे	–	–	1	1	–	–	1	1	असंयम, संयमा संयम	प्रति. कषाय.
प्रतिसेवना छोड़ता हुआ	4 जावे	–	1	–	1	–	–	1	1	बकु., असं, संयमा संयम	कषाय कुशील
कषाय कुशील छोड़ता हुआ	6 जावे	1	1	1	–	1	–	1	1	पु.ब., प्रति. असं, सं. सयम	निर्ग्रंथ
निर्ग्रंथपने छोड़ता हुआ	3 जावे	–	–	–	1	–	1	1	–	कषाय., असंयम	स्नातक
स्नातकपणे छोड़ता हुआ	मोक्ष जावे	–	–	–	–	–	–	–	–	–	मोक्ष

(25) संज्ञा द्वार–पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक में एक नो संज्ञोपयुक्त (आहारादि में आसक्ति नहीं)। बकुश, प्रतिसवेना कुशील और कषाय कुशील संज्ञोपयुक्त और नो संज्ञोपयुक्त दोनों होते हैं। चारों संज्ञा पाई जाती है।

(26) आहार द्वार–पुलाक आदि 5 आहारक (कवल या रोम) होते हैं। स्नातक 13वें गुणस्थान में दोनों होते हैं और 14वें गुणस्थान में अनाहारक होते हैं। (3, 4, 5 समय में)

(27) भव द्वार–यहाँ साधुपने के ही भव लेना है, वैसे अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन देशोन में अनंतभव संभव है। पुलाक और निर्ग्रंथपने जघन्य 1 भव उत्कृष्ट तीन भव करे (मनुष्य)। बकुश, प्रतिसेवना, कषाय कुशीलपना जघन्य 1 भव उत्कृष्ट 8 भव में प्राप्त करता है। स्नातकपणा में उसी भव में मोक्ष चला जाता है।

(28) आकर्ष द्वार–कितनी बार अवस्थाएँ आती है जघन्य उत्कृष्ट इस प्रकार–

नियंठा	एक भव अपेक्षा		अनेक भव अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	1 बार	3 बार	2 बार	7 बार
ब., प्रति., कषाय.	1 बार	पृथक सौ बार	2 बार	पृथक हजार बार
निर्ग्रंथ	1 बार	2 बार	2 बार	5 बार
स्नातक	एक बार प्राप्त होने के बाद नहीं जाता, इसी भव में मोक्ष			

पुलाक में एक भव में एक दूसरे भव में (अन्य भव) दूसरा इस तरह जघन्य दो उत्कृष्ट 7 बार। पुलाक पणा उत्कृष्ट तीन भव में आता है, एक भव में उत्कृष्ट तीन बार आता हैं। बकुश के उत्कृष्ट 8 भव होते हैं, आठ भव में 7200 (900=8=7200) बार आता है। अनेक भव आसरी प्रत्येक हजार बार आता है। निर्ग्रंथ को एक भव में एक बार उत्कृष्ट दो बार उपशम श्रेणी होती है, आकर्ष भी एक या दो होते हैं। निर्ग्रंथ के तीन भव उत्कृष्ट होते हैं। एक भव में दो बार, दूसरे भव में (अन्य भव) 2 बार, तीसरे में एक बार। फिर क्षपक श्रेणी कर मोक्ष चला जाता है।

(29) काल द्वार–एक जीव और अनेक जीव की अपेक्षा से काल स्थिति इस प्रकार है–

नियंठा	एक जीव की अपेक्षा		अनेक जीवों की अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
ब.प्रति. कषाय	1 समय	देशोन क्रोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत
निर्ग्रंथ	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
स्नातक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन क्रोड़ पूर्व	शाश्वत	

(30) अन्तर द्वार–अन्तर द्वार एक जीव और अनेक जीव की अपेक्षा से इस प्रकार–

नियंठा	एक जीव की अपेक्षा		अनेक जीव की अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन	1 समय	संख्याता वर्ष
ब.प्रति. कषाय.	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन	अंतर नहीं	अंतर नहीं
निर्ग्रंथ	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन	1 समय	6 मास
स्नातक	अन्तर नहीं–स्नातक मोक्ष में ही जाते हैं।			

(31) समुद्‌घात द्वार–पुलाक में तीन समुद्‌घात (वेदना, कषाय, मारणान्तिक) होती है। बकुश और प्रतिसेवना में 5 समुद्‌घात (प्रथम पाँच, आहारक और केवली

छोड़कर) होती है कषाय कुशील में 6 समुद्घात (केवली छोड़कर) होती है। निर्ग्रंथ में समुद्घात नहीं होती। स्नातक में एक केवली समुद्घात (13वें गुणस्थानवर्ती कुछ को) होती है।

(32) क्षेत्र द्वार–पुलाक आदि पाँच लोक के असंख्यातवें भाग में होता है (समुद्घात करे तो भी) स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में (शरीरस्थ दण्ड कपाट करे तब), लोक के बहुत असंख्याता भागों में (मथानी करे तब) और संपूर्ण लोक में (समग्र लोक व्याप्त समय) होता है।

(33) स्पर्शना द्वार–पाँचों नियंठा लोक के असंख्यातवें भाग को स्पर्शते हैं, स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग को, असंख्याता भागों को तथा संपूर्ण लोक को स्पर्शता है।

(34) भाव द्वार–पुलाकादि 4 में मोह कर्म आश्रित क्षयोपशमिक भाव होते हैं। निर्ग्रंथ में 2 औपशमिक अथवा क्षायिक भाव, तथा स्नातक में एक क्षायिक भाव होते हैं।

(35) परिमाण द्वार–6 हों नियंठा कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते हैं, होते हैं तो इस प्रकार प्रति पद्यमान–वर्तमान समय में जो उस नियंठापने को पा रहे हैं। पूर्व प्रतिपन्न भूतकाल से उस नियंठापने में विद्यमान है–

नियंठा	वर्तमान पर्याय		पूर्व पर्याय आश्रित (पूर्व प्रतिपन्न)	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	1–2–3	प्रत्येक सौ (200 से 900)	1–2–3	प्रत्येक हजार
बकुश, प्रतिसेवना	1–2–3	प्रत्येक सौ	जघन्य उत्कृष्ट	प्रत्येक सौ करोड़
कषाय कुशील	1–2–3	प्रत्येक हजार	–	प्रत्येक हजार करोड़
निर्ग्रंथ	1–2–3	162 (क्षपक 108, उपशम 54)	1–2–3	प्रत्येक सौ
स्नातक	1–2–3	108 (क्षपक श्रेणी)	–	नियमा प्रत्येक करोड़

(36) अल्प बहुत्व द्वार–निर्ग्रंथ–सबसे कम (प्रत्येक सौ होने से 108+54=162)
पुलाक–संख्यातगुणा प्रत्येक हजार होने से।
स्नातक–संख्यातगुणा–प्रत्येक करोड़ होने से।
बकुश–संख्यातगुणा–प्रत्येक 2 से 3 सौ करोड़ होने से।
प्रतिसवेना–संख्यातगुणा–प्रत्येक 4 से 6 सौ करोड़ होने से।
कषाय कुशील–संख्यातगुणा–प्रत्येक हजार करोड़ होने से।

6 नियंठों पर 36 द्वार चार्ट से इस प्रकार–

द्वार	पुलाक	बकुश	प्रतिसेवना	कषाय कुशील	निर्ग्रंथ	स्नातक
1 प्रज्ञापना	ज्ञानादि 5	आभोगादि 5	ज्ञानादि 5	ज्ञानादि 5	पढ़म आदि 5	5 गुण
2 वेद	2	3	3	3+अवेदी	अवेदी	अवेदी
3 राग	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी	वीतरागी	वीतरागी
4 कल्प	3	4	4	5	3	3
5 चारित्र	2	2	2	4	1	1
6 प्रतिसेवना	2	1	2	अप्रतिसेवी	अप्रतिसेवी	अप्रतिसेवी
7 ज्ञान	3	3	3	4	4	1
श्रुत	9 पूर्व न्यून/ पूर्ण	10 पूर्व	10 पूर्व	14 पूर्व	14 पूर्व	श्रुत व्यतिरिक्त
8 तीर्थ द्वार	तीर्थ में	तीर्थ में	तीर्थ में	दोनों में	दोनों में	दोनों में
9 लिंग द्रव्य/ भाव	3/1	3/1	3/1	3/1	3/1	3/1
10 शरीर	3	4	4	5	3	3
11 क्षेत्र जन्म	1 (कर्मभूमि)	1	1	1	1	1
संहरण	नहीं	2	2	2	2	2
12 काल	3	3	3	3	3	3
अवसर्पिणी जन्म	3–4 आरा	3–4–5	3–4–5	3–4–5	3–4	3–4
'' सद्भाव	3–4–5			3–4–5	3–4–5	
उत्सर्पिणी जन्म		2–3–4	2–3–4	2–3–4	2–3–4	2–3–4
'' सद्भाव		3–4	3–4	3–4	3–4	3–4
संहरण	नहीं	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र
नो उत्स. नो.अव. जन्म/सद्भाव	1 (महाविदेह)	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग	1/4 पलिभाग
संहरण	नहीं	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र	सर्वत्र
13 गति	1 से 8 देवलोक	1 से 12 देवलोक	1 से 12 देवलोक	सभी वैमानिक (35)	5 अणुत्तर	मोक्ष
स्थिति	2 पल/18 सागर	2 पल/22 सागर	2 पल/22 सागर	2 पल/33 सागर	33 सागर	सादि अनंत
पदवी	4	4	4	5	1	नहीं (मोक्ष)
14 संयम स्थान	असंख्य	असंख्य	असंख्य	असंख्य	1	1
अल्प बहुत्व	2 असं. गुणा	3 असं. गुणा	4 असं. गुणा	5 असं. गुणा	1 अल्प	1 अल्प
15 पर्यव	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत
पुलाक पर्यव	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग

ब.प्रति. पर्यव	अनंतगुणा	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
कषाय कुशील	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
नि.स्ना.	अनंतगुण	अनंतगुण	अनंतगुण	अनंतगुण	तुल्य	तुल्य
अल्प बहुत्व	1/2	3/4	3/5	1/6	7 अनंतगुणा	7 अनंतगुणा
16 योग	3	3	3	3	3	3/अयोगी
17 उपयोग	2	2	2	2	2	2
18 कषाय	4	4	4	4, 3, 2, 1	अकषायी	अकषायी
19 लेश्या	3	3	3	6	1	1/अलेशी
20 परिणाम	3	3	3	3	2	2
वर्द्धमान स्थिति	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
हायमान स्थिति	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	नहीं	नहीं
अवस्थित	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ अ.मु.	अ.मु./देशोन क्रोड़ पूर्व
21 कर्मबंध	7	7-8	7-8	7-8-6	1	1/अबंध
22 उदय (वेद)	8	8	8	8	7	4
23 उदीरणा	6	7-8-6	7-8-6	6-8-6-5	5-2	2/अनुदीरणा
24 उवसंपदा (गत) संयम आदि में	2 कषा.कु./ असंयम	4 3 नियंठा/ असंयम	4 3 नियंठा/ असंयम	6 5 नियंठा असंयम	3 कषा.असं. स्नातक	मोक्ष
25 संज्ञा	नो संज्ञोपयुक्त	5	5	5	नो संज्ञोपयुक्त	नो संज्ञोपयुक्त
26 आहार	आहारक	आहारक	आहारक	आहारक	आहारक	दोनों
27 भव ज./उ.	1/3	1/8	1/8	1/8	1/3	1/मोक्ष
28 आकर्ष 1 भव आ.	1/3 बार	1/अनेक सौ बार	1/अनेक सौ बार	1/अनेक सौ बार	1/2	1
अनेक भव	2/7 बार	2/अनेक हजार	2/अनेक हजार	2/अनेक हजार	2/5	1
29 स्थिति एक जीव अनेक जीव	अन्तर्मुहूर्त 1 समय/अ.मु.	1 समय/देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत	1 समय/ देशोन क.पू. शाश्वत	1 समय/देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत	1 समय/अ.मु. करोड़ पूर्व 1 समय/अ.मु.	अं.मु./देशोन करोड़ पूर्व शाश्वत
30 अंतर एक जीव ज.उ.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध.पुद.परा.	अ.मु./देशोनअर्द्ध पुद.परा.	– –
अंतर अनेक जीव ज./उ.	1 समय/ संख्याता वर्ष	–	–	–	1 समय/6 माह	–

31 समुद्घात	3 क्रमशः	5	5	6	–	1
32 क्षेत्र (अवगा.)	असंख्यांश लोक	असंख्यातवां भाग लोक	असंख्यातवां भाग लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	सर्वलोक आदि असंख्यांश लोक
33 स्पर्शना	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक लोक साधिक	सर्वलोक आदि असंख्यांश लोक
34 भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	क्षयोपशम भाव	2 भाव	क्षायिक भाव
35 परिमाण नये	0/1/अनेक सौ	0/1 अनेक सौ	0/1/अनेक सौ	0/1/अनेक हजार	0/1/162	0/1/108
परिमाण पुराने	0/अनेक हजार	अनेक सौ करोड़	अनेक सौ करोड़	अनेक हजार करोड़	0/1/अनेक सौ	अनेक करोड़
36 अल्प बहुत्व	2 संख्यगुणा	4संख्यगुणा	5 संख्यगुणा	6 संख्यगुणा	1 अल्प	3 संख्यगुणा

187. संयत (संजय) का थोकड़ा (भ.श. 25 उ. 7) संयत में भी 36 उपरोक्त द्वारों से कथन है।

1. **प्रज्ञापना द्वार**–चारित्र (संयम) 5 प्रकार के हैं–सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र।

(1) सामायिक चारित्र–के दो भेद **इत्वर कालिक**–अल्पकाल के चारित्र को इत्वर कालिक कहते हैं। प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के तीर्थ में शिष्य में जब तक महाव्रत का आरोपण नहीं दिया जाता, तब तक अल्प काल का सामायिक चारित्र होता है, जघन्य 7 दिन, मध्यम 4 माह, उत्कृष्ट 6 माह का होता है। **यावत्कथिक** सामायिक चारित्र जीवन पर्यंत के लिए होता है। यह बीच के 22 तीर्थंकरों के समय, महाविदेह क्षेत्र में सभी तीर्थंकरों के समय तथा अन्य स्वयंबुद्ध द्वारा लिया सामायिक चारित्र है।

(2) छेदोपस्थापनीय चारित्र–जिस चारित्र में पूर्व दीक्षा पर्याय का छेदकर महाव्रतों का आरोपण किया जाता है, वह छेदोपस्थापनीय है। भरत और ऐरवत क्षेत्र में प्रथम और अंतिम तीर्थंकरों के तीर्थ में होता है। दो भेद–**सातिचार** यानि मूल गुणों का घात होने पर दीक्षा पर्याय का छेद या नई दीक्षा दी जाय वह सातिचार है। और **निरतिचार** यानि 23वें तीर्थंकर के साधु 24वें के शासन में आवे या इत्वर सामायिक चारित्र वाले शिष्य को बड़ी दीक्षा दी जाये वह निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र है।

(3) परिहार विशुद्धि चारित्र–जिससे परिहार तप कर कर्म निर्जरा करके विशेष विशुद्ध की जाये, वह परिहार विशुद्ध चारित्र कहलाता है। इसमें नौ साधु इस चारित्र की आराधना करते हैं। इसमें नौ वर्ष की उम्र में दीक्षा लें, और 20 वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञानार्जन करे, जघन्य नवमें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु एवं उत्कृष्ट कुछ न्यून दस पूर्व तक का अध्ययन करें, ऐसे नौ साधु गुरु महाराज की आज्ञा लेकर परिहार विशुद्ध चारित्र अंगीकार करते हैं। इनमें से 4 साधु छ माह तक तपस्या करते हैं। चार साधु सेवा, वैयावच्च करते हैं, और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही में तपस्या करने वाले वैयावच्च करते हैं, और पहले के आनुपारिहारिक 4 साधु तप करते हैं, व्याख्यान देने वाला व्याख्यान देता है, इस प्रकार तीसरी छमाही में व्याख्याता साधु तप करता है, आठ में से एक व्याख्यान देता है, शेष सात वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जघन्य 1 उपवास मध्यम बेला, उत्कृष्ट तेला का तप करते हैं, शीतकाल में जघन्य बेला मध्यम तेला उत्कृष्ट चौला तथा वर्षाकाल में तेला चोला पचोला इसी प्रकार करते हैं। पारणे में आयंबिल करते हैं। इस तरह 18 महीनों का तप होता है। यह पूरा हो जाने के बाद वे साधु पुनः उसी तप को स्वीकार कर लेते हैं, या जिनकल्प धारण कर लेते हैं या गच्छ में पुनः आ जाते हैं। यह चारित्र तीर्थंकर भगवान के पास या जिन्होंने तीर्थंकर भगवान के सान्निध्य में यह तप किया है, उन्हीं से अंगीकार किया जाता है, अन्य के पास नहीं। इसके दो भेद हैं। (1) निर्विश्यमान–जो तप कर रहे हैं (2) निर्विष्टकायिक–जो यह चारित्र अंगीकार कर चुके है।

(4) सूक्ष्म सम्पराय चारित्र–जिस चारित्र में संज्वलन लोभ का सूक्ष्म अंश रहता है, वह सूक्ष्म सम्पराय चारित्र होता है, इसके दो भेद है।

(1) विशुद्धयमान–क्षपक और उपशम श्रेणी चढ़ते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर शुद्ध रहने से उनका चारित्र विशुद्धमान सूक्ष्म संपराय होता है।

(2) संक्लिश्यमान–उपशम श्रेणी से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेश युक्त होते हैं, अतः उनका चारित्र संक्लिश्यमान सूक्ष्म संपराय कहलाता है।

(5) यथाख्यात चारित्र–सर्वथा कषायोदय न होने से अतिचार रहित, सर्वोच्च चारित्र यथाख्यात चारित्र कहलाता है। इसके दो भेद है–

(1) उपशांत मोह वीतराग (प्रतिपाति) एवं (2) क्षीण मोह वीतराग (अप्रतिपाति) क्षीण मोह वीतरागी के दो भेद–सयोगी केवली और अयोगी केवली।

2. **वेद द्वार**–सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला सवेदी होता है तो तीनों वेद और अवेदी हो तो 9वें गुणस्थान वाला उपशांत वेदी या क्षीण वेदी होता है। परिहार विशुद्ध वाला सवेदी दो वेद वाला होता है पुरुष, पुरुष नपुंसक (कृत्रिम)। सूक्ष्म संपराय वाला अवेदी 10वें गुणस्थान और यथाख्यात वाला अवेदी 11वें से 14वें गुणस्थान की अपेक्षा से।
3. **राग द्वार**–पूर्व के चारों चारित्र वाले सरागी होते हैं 10वें गुणस्थान तक लोभ कषाय होने से, यथाख्यात चारित्र वीतरागी होते है 11वें में उपशांत, आगे के क्षीण वीतरागी।
4. **कल्प द्वार**–सामायिक चारित्र में 5 कल्प (स्थित, अस्थित, स्थविर, जिनकल्प, कल्पातीत)। छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि में तीन (स्थित, जिनकल्प, स्थविर कल्प) सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात में तीन (स्थित, अस्थित, कल्पातीत) कल्प होते हैं।
5. **नियंठा द्वार**–सामायिक में 4 नियंठा पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना, कषाय कुशील। छेदोपस्थापनीय में भी 4 ये ही। तथा परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म संपराय में एक कषाय कुशील तथा यथाख्यात में दो निर्ग्रंथ (11वें 12वें) स्नातक (13, 14)।
6. **प्रतिसेवना द्वार**–सामायिक और छेदोपस्थापनीय में प्रतिसेवी और अप्रतिसेवी दोनों होते हैं, प्रतिसेवी हो तो मूल और उत्तरण गुण दोनों में दोष लगाते हैं। परिहार विशुद्ध, सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात चारित्र वाले अप्रतिसेवी होते हैं०।
7. **ज्ञान द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्ध, सूक्ष्म संपराय में दो तीन या चार ज्ञान वाले होते हैं (ज्ञान की भजना, छद्मस्थ होने से केवलज्ञान नहीं होता)। यथाख्यात वालों को 2, 3, 4 या एक (केवलज्ञान) होता है (ज्ञान की भजना, 13, 14 गुणस्थान में केवलज्ञान)।

श्रुतद्वार–प्रथम दो चारित्र जघन्य आठ प्रवचन माता उत्कृष्ट 14 पूर्व का ज्ञान पढ़ता है, सूक्ष्म संपराय का भी इसी प्रकार कथन है। परिहार विशुद्धि वाला जघन्य 9वें पूर्व

की तीसरी आचार वस्तु उत्कृष्ट कुछ कम 10 पूर्व, यथाख्यात वाला जघन्य आठ प्रवचन माता उत्कृष्ट 14 पूर्व का ज्ञान पढ़ता है या श्रुत व्यतिरिक्त (केवली)।

8. **तीर्थ द्वार**–सामायिक, सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात चारित्र वाले तीर्थ में, अतीर्थ में, तीर्थंकर और प्रत्येक बुद्ध में भी होता है। छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि तीर्थ में ही होता है–अतीर्थ में नहीं होते।

9. **लिंग द्वार**–परिहार विशुद्ध वाले द्रव्य और भाव से स्वलिंगी ही होते हैं। अन्य चारों चारित्र वालों तीनों लिंग (स्वलिंग, अन्य लिंग, गृहस्थ लिंग) में होते हैं। (द्रव्य से) और भाव से स्वलिंगी ही होते हैं।

10. **शरीर द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय में 3, 4 या 5 शरीर पाये जाते हैं शेष तीन चारित्र में तीन शरीर (औदारिक, तैजस, कार्मण) पाये जाते हैं।

11. **क्षेत्र द्वार**–सामायिक, सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात चारित्र 15 कर्मभूमि में। छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि 10 क्षेत्र (5 भरत, 5 एरवत) में होता है। संहरण की अपेक्षा परिहारविशुद्धि का साहरण नहीं होता, अन्य चार का अढ़ाई द्वीप 2 समुद्र में होता है। (कर्मभूमि, अकर्मभूमि मनुष्य क्षेत्र)।

12. **काल द्वार**–सामायिक छेदोपस्थापनीय का जन्म अवसर्पिणी काल के तीसरे, चौथे, पाँचवें आरे में होता है। सद्भाव आसरी तीसरे, चौथे, पाँचवें आरे में होता है। उत्सर्पिणी काल में दूसरे, तीसरे, चौथे आरे में जन्म होता है, सद्भाव तीसरे, चौथे आरे में होता है। शेष तीन चारित्र वाला अवसर्पिणी के तीसरे, चौथे आरे में जन्म लेता है, सद्भाव तीसरे चौथे पाँचवें आरे में होता है। उत्सर्पिणी में दूसरे, तीसरे, चौथे आरे में जन्म और तीसरे चौथे आरे में सद्भाव होता है।

साहरण–परिहारविशुद्धि का साहरण नहीं होता। छेदोपस्थापनीय वाले जन्म से महाविदेह में नहीं होते, साहरण से हो सकते हैं। शेष तीन सामायिक सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात वाले साहरण से छहों आरों में और चारों पलिभागों (1 देवकुरु उत्तर कुरु, (2) हरिवास रम्यकवास (3) हेमवत एरण्यवत, (4) महाविदेह) में होते हैं। नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल में सामायिक, सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात चारित्र वाले चौथे पलिभाग यानि महाविदेह क्षेत्र में होते हैं। (जन्म से)।

13. **गति द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय वाला जघन्य पहला देवलोक उत्कृष्ट

पाँच अणुत्तर, विमान में जघन्य 2 पल उत्कृष्ट 33 सागर की स्थिति में जाता है। आराधक हो तो पाँच में से 1 पदवी (इन्द्र, सामानिक, तायत्रिसग, लोकपाल, अहमिन्द्र) पाता है। परिहार विशुद्ध वाला जघन्य पहले देवलोक उत्कृष्ट आठवें देवलोक जघन्य दो पल्योपम उत्कृष्ट 18 सागर की स्थिति और आराधक हो तो चार में से एक पदवी (अहमिन्द्र छोड़ना) पाता है। सूक्ष्म संपराय वाला और यथाख्यात चारित्र (उपशांत मोह.) वाला अजघन्य अनुत्कृष्ट 33 सागर की स्थिति में अणुत्तर विमान में जाते अहमिन्द्र की पदवी पाता है। यथाख्यात में क्षीण मोहनीय वाला मोक्ष जाता है। अल्पविराधक हो तो 4 में से एक पदवी, अधिक विराधक हो तो आधा पुद्गल परावर्त्तन संसार परिभ्रमण करे, चार में से अन्यतर गति में जावें।

14. **संयम स्थान**–प्रथम चारों के असंख्यात संयम स्थान है। यथाख्यात के एक है। अल्प बहुत्व–यथाख्यात चारित्री सबसे कम (एक) स्थान, 11वें से 14वें गुणस्थान का वीतराग संयम तुल्य होने से। सूक्ष्म संपराय का असंख्यातगुणा संयम स्थान 10वें गुणस्थान के जितने समय, उतने। परिहार विशुद्धि के असंख्यातगुणा उनसे सामायिक, छेदोपस्थापनीय के परस्पर तुल्य असंख्यातगुणा।

15. **निकास द्वार**–पाँचों के चारित्र पर्यव अनंत है, सभी परस्पर छठाणवड़िया है–

चारित्र	सामायिक	छेदो.	परि.	सूक्ष्म.	यथाख्यात
सा.छे.प.	परस्पर तुल्य छठाणवड़िया	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	अनंतगुणहीन	अनंतगुणहीन
सूक्ष्म.	अनंत गुण वृद्धि	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	छठाणवड़िया	अनंतगुणहीन
यथाख्यात	अनंत गुण वृद्धि	सामायिक की तरह	सामायिक की तरह	अनंत गुण वृद्धि	परस्पर तुल्य

अल्प बहुत्व जघन्य उत्कृष्ट चारित्र पर्यव (प्रकाश मात्रा के समय)

सा.छेदो.	1–2 जघन्य	सबसे कम परस्पर तुल्य चारित्र पर्याय	1/4 1/4
परिहार	3 जघन्य	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	2/3
परिहार	4 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	2/3
सा.छेदो.	5–6 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	1/4 1/4

सूक्ष्म	7 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	5/6
सूक्ष्म	8 उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक चारित्र पर्याय	5/6
यथा.	9 जघन्य उत्कृष्ट	अनंतगुण अधिक परस्पर तुल्य	7

16. **योग द्वार**–प्रथम चार चारित्र वाले सयोगी तीनों योग सहित होते हैं। यथाख्यात चारित्र वाले सयोगी और अयोगी (14वें गुणस्थान में) होते हैं।

17. **उपयोग द्वार**–सामायिक छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और यथाख्यात में दोनों उपयोग होते हैं, सूक्ष्म संपराय में एक साकार उपयोग होता है।

18. **कषाय द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि में संज्वलन कषाय के चार कषाय पाये जाते हैं। सूक्ष्म संपराय में संज्वलन का लोभ और यथाख्यात चारित्र वाला अकषायी (उपशांत या क्षीण) होता है।

19. **लेश्या द्वार**–सामायिक और छेदोपस्थापनीय में 6 हो लेश्याएँ पाई जाती हैं। परिहारविशुद्धि में तीन शुभ (तेजो, पद्म, शुक्ल) लेश्या। सूक्ष्म संपराय में शुक्ल लेश्या और यथाख्यात में एक शुक्ल अथवा अलेशी (14वें गुणस्थान) भी होते हैं।

20. **परिणाम द्वार**–तीन परिणाम पाये जाते हैं, हीयमान, वर्द्धमान और अवस्थित।

चारित्र	परि.	हीयमान		वर्द्धमान		अवस्थित	
		जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सा.छे.प.	3	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	7 समय
सूक्ष्म संपराय	2	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	–	–
यथाख्यात	2	–	–	अन्तर्मुहूर्त (13वें 14वें में जाते)	अन्तर्मुहूर्त	1 समय (11वां)	देशोन करोड पूर्व (13वां)

21. **बंध द्वार**–सामायिक छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि वाला 7 या 8 कर्मों को बांधता है, सूक्ष्म संपराय 6 कर्म बांधे (आयुष्य, मोहनीय छोड़कर) यथाख्यात वाला बंध करे तो एक सातावेदनीय नहीं तो अबंध (14वें गुण स्थान में) (11वें 12वें 13वें में बंध करता है तो साता वेदनीय)।

22. **वेदन द्वार**–सामायिक आदि 4 चारित्र वाले नियमा 8 कर्मों का वेदन करते हैं (10वें गुण. तक कषायोदय होने से) यथाख्यात चारित्री सात (मोहनीय छोड़) अथवा 4 आघाति (13वें 14वें) वेदनीय आयु नाम गौत्र कर्म वेदता है।

23. **उदीरणा द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्ध वाला 7, 8, 6 कर्मों की उदीरणा (आयु असाता छोड़ना) करता है। सूक्ष्म संपराय 5 या 6 कर्मों की (आयु, असाता, मोहनीय छोड़ना) उदीरणा करता है। यथाख्यात चारित्र वाला पाँच कर्मों को उदीरता है (आयु, वेद, मोह छोड़ना) या 2 कर्मों (नाम गौत्र) की उदीरणा करता है। या अनुदीरक होता है।

24. **उपसंपद्हान द्वार**–एक चारित्र छोड़ अन्य कहाँ जाता है ऊपर नीचे यह दर्शाया है–

चारित्र	स्थान	सामा.	छेदो.	परिहार.	सूक्ष्म.	यथा.	असंयम	संयमा सं.	मोक्ष	असंयम में
सामायिक	4	–	1	–	1	–	1	1	–	सीधे या मरकर
छेदोप.	5	1	–	1	1	–	1	1	–	सीधे या मरकर
परिहार.	2	–	1	–	–	–	1	–	–	अनुक्रम से या मरकर
सूक्ष्म.	4	1	1	–	–	1	1	–	–	अनुक्रम से या मरकर
यथा.	3	–	–	–	1	–	1	–	1	अनुक्रम से या मरकर

25. **संज्ञा द्वार**–सामायिक, छेदोपस्थापनीय परिहार विशुद्ध में संज्ञोपयुक्त होता है। नो संज्ञोपयुक्त भी होता है। शेष दोनों में नो संज्ञोपयुक्त होता है।

26. **आहार द्वार**–प्रथम चार आहारक होते हैं, यथाख्यात आहारक अनाहारक दोनों होते हैं, समुद्घात और शैलेषी अवस्था में अनाहारक होते हैं।

27. **भव द्वार**–सामायिक और छेदोपस्थापनीय वाले जघन्य 1 भव उत्कृष्ट 8 भव (एकान्तर या देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्तन में)। परिहार विशुद्ध और सूक्ष्म संपराय वाले जघन्य एक उत्कृष्ट तीन भव (एकान्तर से या देशोन अर्द्धपुद्गल परावर्तन में) यथाख्यात चारित्र वाला जघन्य एक भव उत्कृष्ट तीन भव (उपरोक्त कथन से) या उसी भव में मोक्ष जाता है।

28. **आकर्ष द्वार**–

	एक भव आश्रित		अनेक भव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	1 बार	अनेक सौ बार (200 से 900)	2 बार	अनेक हजार बार (2000 से 7200)
छेदोपस्थापनीय	1 बार	अनेक बीस बार (40 से 120)	2 बार	900 से ऊपर (960) हजार के अंदर
परिहारविशुद्धि	1 बार	3 बार	2 बार	7 बार
सूक्ष्म संपराय	1 बार	4 बार	2 बार	9 बार
यथाख्यात	1 बार	2 बार	2 बार	5 बार

29. काल (स्थिति) द्वार–पाँचों चारित्र की एक जीव अनेक जीव आश्रित स्थिति इस प्रकार–

एक भव आश्रित			अनेक भव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत
छेदोपस्थापनीय	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	250 वर्ष, (पार्श्व शासन)	50 लाख करोड़ सागरोपम (ऋषभ शासन)
परिहारविशुद्धि	1 समय	29 वर्ष कम क्रोड़ पूर्व	देशोन 200 वर्ष (142 वर्ष)	देशोन दो क्रोड़ पूर्व (58 वर्ष कम)
सूक्ष्म संपराय	1 समय	अन्तर्मुहूर्त	1 समय	अन्तर्मुहूर्त
यथाख्यात	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व	शाश्वत	शाश्वत

30. अन्तर द्वार–एक जीव और अनेक जीव आसरी अंतर इस प्रकार–

एक जीव आश्रित			अनेक जीव आश्रित	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	अंतर नहीं	अंतर नहीं शाश्वत
छेदोपस्थापनीय	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	63000 वर्ष (झा.)	देशोन 18 करोड़ क्रोड़ सागर (न्यून)
परिहारविशुद्धि	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	84000 वर्ष	देशोन 18 क्रोड़ क्रोड़ सागर (न्यून)
सूक्ष्म संपराय	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	1 समय	6 मास
यथाख्यात	अन्तर्मुहूर्त	देशोन अर्द्धपुद्गल परा.	अंतर नहीं	अंतर नहीं शाश्वत

31. समुद्घात द्वार–सामायिक और छेदोपस्थापनीय में 6 समुद्घात (केवली छोड़ना) परिहार विशुद्ध में प्रथम की तीन, सूक्ष्म संपराय में समुद्घात नहीं होती और यथाख्यात में एक केवली समुद्घात होती है।

32. क्षेत्र द्वार (अवगाहना) प्रथम चार चारित्र लोक के असंख्यातवें भाग में होता है। यथाख्यात चारित्र वाला लोक के असंख्यातवें भाग, लोक के असंख्याता भागों में तथा सर्वलोक (संपूर्ण) में होता है। इसके पाँच भंग बताये हैं (1) एक असं. भाग (शरीरस्थ) (2) बहुत असं. भाग (दण्ड करे तब) (3) एक संख्य. भाग (कपाट करे तब) (4) बहुत सं. भाग (मथानी करे तब) (5) संपूर्ण लोक (लोक पूरे तब)।

33. स्पर्शना द्वार–सभी चारित्रों को स्पर्शना क्षेत्रवत् जानना।

34. भाव द्वार–प्रथम चार चारित्रों में क्षायोपशमिक भाव होते हैं। यथाख्यात में औपशमिक अथवा क्षायिक भाव होते हैं।

35. परिमाण द्वार–पाँचों चारित्र वाले अगर होते हैं तो वर्तमान, भूतकाल आसरी–

वर्तमान प्रति पद्यमान			भूतकाल (पूर्व प्रतिपन्न) आसरी	
चारित्र	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामा.	1-2-3	प्रत्येक हजार	नियमा प्रत्येक हजार करोड़	प्रत्येक हजार करोड़
छेदो.	1-2-3	प्रत्येक सौ	नियमा प्रत्येक सौ करोड़	प्रत्येक सौ करोड़
परिहार.	1-2-3	प्रत्येक सौ	1-2-3	प्रत्येक हजार
सूक्ष्म.	1-2-3	162	1-2-3	प्रत्येक सौ
यथा.	1-2-3	162 (108 और 54)	नियमा अनेक करोड़	अनेक करोड़ (केवली आसरी)

36. अल्प बहुत्व द्वार–

चारित्र	अल्प बहुत्व	
सूक्ष्म.	सबसे कम	प्रत्येक सौ होने से
परि.	संख्यात गुणा	प्रत्येक हजार होने से
यथा.	संख्यात गुणा	प्रत्येक करोड़ होने से
छेदो.	संख्यात गुणा	प्रत्येक सौ करोड़ से
सामा.	संख्यात गुणा	प्रत्येक हजार करोड़ होने से

पाँच संयत का 36 द्वारों से संक्षिप्त विवरण–

सं.	द्वार	सामायिक	छेदोपस्थापनीय	परिहार विशुद्ध	सूक्ष्म संपराय	यथाख्यात
1	प्रज्ञापना	2 प्रकार	2 प्रकार	2 प्रकार	2 प्रकार	2-2-2 प्रकार
2	वेद	3/अवेदी	3/अवेदी	2 (स्त्री नहीं)	अवेदी	अवेदी
3	राग	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी	सरागी
4	कल्प	5	3	3	3	3
5	नियंठा	4	4	1	1	2
6	प्रतिसेवना	3	3	1	1	1
7	ज्ञान	4	4	4	4	5
	श्रुत पढ़े	14 पूर्व	14 पूर्व	देशोन दस पूर्व	14 पूर्व	14 पूर्व
8	तीर्थ	दोनों में	तीर्थ में	तीर्थ में	दोनों में	दोनों में
9	लिंग (द्रव्य भाव)	3/1	3/1	1/1	3/1	3/1
10	शरीर	5	5	3	3	3
11	क्षेत्र जन्म	15 कर्मभूमि	10 कर्मभूमि	10 कर्मभूमि	15 कर्मभूमि	15 कर्मभूमि
	संहरण	सर्वत्र	सर्वत्र	–	सर्वत्र	सर्वत्र
12	काल	3	2	2	3	3
	अवसर्पिणी जन्म	3-4-5 आरा	3-4-5 आरा	3-4	3-4	3-4
	सद्भाव			3-4-5	3-4-5	3-4-5
	उत. जन्म	2-3-4 आरा	2-3-4 आरा	2-3-4 आरा	2-3-4 आरा	2-3-4 आरा

	सद्भाव	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा	3-4 आरा
	साहरण	सर्वत्र	सर्वत्र	–	सर्वत्र	सर्वत्र
	नो अव. उत्स. जन्म/ संहरण	1/4	x/4	x	1/4	1/4
13	गति	वैमानिक सभी	वैमानिक सभी	8वें देवलोक तक	अणुत्तर वि.	अणुत्तर वि. या मोक्ष
	स्थिति	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 18 सागर	2 पल्य/ 33 सागर	2 पल्य/ 33 सागर/सादि अनंत
	पदवी	5	5	4	1	1
14	संयम स्थान	असंख्य	असंख्य	असंख्य	असंख्य	1
	अल्प बहुत्व	4असंख्यगुणा	4 असंख्यगुणा	3 असंख्यगुणा	2 असंख्यगुणा	1 अल्प
15	पर्यव	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत	अनंत
	सा.चा.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	छेदोपस्था.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	परिहार वि.	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग	अनंतवां भाग
	सूक्ष्म सं.	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	छठाणवड़िया	अनंतवां भाग
	यथाख्यात.	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	अनंतगुणा	तुल्य
	अल्प बहुत्व	1/4	1/4	2/3	5/6	7 अनंतगुणा
16	योग	3	3	3	3	3/अयोगी
17	उपयोग	2	2	2	1	2
18	कषाय	4-3-2	4-3-2	4	1	अकषायी
19	लेश्या	6	6	3	1	1/अलेशी
20	परिणाम	3	3	3	2	2
	वर्द्धमान स्थिति	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	1 समय/ अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
	हायमान ''	''	''	''	''	–
	अवस्थित ''	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	1 समय/ 7 समय	–	1 स./देशोन करोड़ पूर्व
21	बंध (कर्म बंध)	7-8	7-8	7-8	6	1/अबंध
22	उदय	8	8	8	8	7/4
23	उदीरणा	7-8-6	7-8-6	7-8-6	6/5	5/2/0
24	उपसंपदहान	4	5	2	4	3
25	संज्ञा	5	5	5	नो संज्ञोप युक्त	नो संज्ञोप युक्त

26	आहार	1 (आहारक)	1	1	1	दोनों
27	भव जघ/ उ.	1/8	1/8	1/3	1/3	1/3
28	आकर्ष एक भव	1/अनेक सौ	1/120	1/3	1/4	1/2
	आकर्ष अनेक भव	2/अनेक हजार	2/960	2/7	2/9	2/5
29	काल (स्थिति) एक जीव	1 समय/ देशोन क्रोड़ पूर्व	1 समय/देशोन क्रोड़ पूर्व	1 समय/29 वर्ष कम करोड़ पूर्व	1 समय/अन्तर्मुहूर्त	1 समय/देशोन क्रोड़ पूर्व
	अनेक जीव	शाश्वत्	250 वर्ष/50 लाख करोड़ सागर	142 वर्ष/58 वर्ष कम दो क्रोड़ पूर्व	1 समय/अन्तर्मुहूर्त	शाश्वत्
30	अंतर एक जीव	अ.मु./अर्द्ध पु. परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पु.परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.	अ.मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल परा.
	अनेक जीव	नहीं	सा. 63000 वर्ष/18 क्रोड़ा क्रोड़ सागर	84 हजार वर्ष साधिक/18 क्रोड़ाक्रोड़ सागर	1 समय/6 मास	शाश्वत्
31	समुद्घात	6 क्रमशः	6	3	–	1
32	क्षेत्र (अवगाहना)	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	असंख्यांश लोक	सर्वलोक आदि
33	क्षेत्र स्पर्शना	असंख्यांश लो. साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	असंख्यांश लोक साधिक	सर्वलोक आदि
34	भाव	क्षयोपशम	क्षयोपशम	क्षयोपशम	क्षयोपशम	उपशम/क्षायिक
35	परिमाण नये	0/1/अनेक हजार	0/1/अनेक सौ	0/1/अनेक सौ	0/1/162 (108+54)	0/1/162 (108+54)
	परिमाण नये-पुराने	अनेक हजार करोड़	0/1/अनेक सौ क्रोड़	0/1/अनेक हजार	0/1/अनेक सौ	अनेक करोड़
36	अल्प बहुत्व	5 सं.गुणा	4 सं.गुणा	2 सं.गुणा	1 अल्प	3 सं.गुणा

188. नारकी में नेरिये (भ.श. 25 उ. 8) (1) जिस प्रकार कोई मनुष्य कूदता है, और अगले स्थान में पहुँचता है, इसी तरह जीव भी इस भव को छोड़कर अगले भव में जाता है। त्रस में उत्पन्न होने की उत्कृष्ट 3 समय गति होती है।
(2) नरक में उत्पन्न होने की शीघ्र गति एक समय, दो समय, तीन समय लगते हैं।
(3) जीव अध्यवसाय द्वारा, मन वचन काया के योग द्वारा और कर्मबंध के हेतु

द्वारा परभव का आयुष्य बांधते हैं। (4) आयु, भव और स्थिति का क्षय हो जाने से परभव की गति होती है।

(5) जीव आत्मऋद्धि से उपजता है, परऋद्धि से नहीं।

(6-7) जीव अपने कर्म से अपने प्रयोग से उपजता है, पर कर्म और पर प्रयोग से नहीं। इसी तरह 24 दंडक में कहना फर्क यह कि पाँच स्थावर (एकेन्द्रिय) में विग्रह गति चार समय की होती है।

189. भवी नेरिया (भ.श. 25 उ. 9) उपरोक्त सारा अधिकार है, विशेषता यहाँ भवी लगाना है।

190. अभवी नेरिया (भ.श. 25 उ. 10) उपरोक्त सारा अधिकार आठवें उद्देशक में नारकी के नेरिये के 7 द्वार की तरह कहना विशेषता यह है कि यहाँ ''अभवी'' शब्द लगाना है।

191. समदृष्टि नेरिया (भ.श. 25 उ. 11) यहाँ भी आठवें उद्देशक की तरह 7 द्वारों का वर्णन कहा है, विशेषता यह है कि पाँच स्थावर छोड़कर शेष 19 दंडक में समदृष्टि शब्द जोड़ना है।

192. मिथ्यादृष्टि नेरिया (भ.श. 25 उ. 12) आठवें उद्देशक की तरह वर्णन, विशेष यह यहाँ मिथ्यादृष्टि शब्द जोड़ना है।

''बंधी शतक''

193. 47 बोलों की बंधी (भ.श. 26 उ. 1 से 11) इसमें 11 उद्देशकों में तीनों काल संबंधी जीव के बंध या अबंध संबंधी विचारणा 11 द्वारों के 47 बोलों के अवलंबन से समुच्चय जीव और 24 दंडक में की गई है। संक्षेप में कर्म संबंधी तत्त्व ज्ञान का चौभंगी द्वारा निरूपण है-

क्रम	द्वार	भेद खुलासा (विवरण)	भेद संख्या
1	जीव द्वार	समुच्चय जीव	1
2	लेश्या द्वार	सलेशी, 6 लेशी, अलेशी	8
3	पक्ष द्वार	कृष्ण पक्षी, शुक्ल पक्षी	2
4	दृष्टि द्वार	तीनों दृष्टि	3
5	अज्ञान द्वार	समुच्चय अज्ञान, तीन अज्ञान	4
6	ज्ञान द्वार	समुच्चय ज्ञान, 5 ज्ञान	6
7	संज्ञा द्वार	चार संज्ञा, नो संज्ञोपयुक्त	5
8	वेद द्वार	सवेदी, तीन वेद, अवेदी	5
9	कषाय द्वार	सकषायी, 4 कषायी, अकषायी	6
10	योग द्वार	सयोगी, 3 योग, अयोगी	5
11	उपयोग द्वार	साकार, अनाकार	2
		11 द्वारों में कुल बोल	47

(1) 24 दंडक में पाये जाने वाले 47 बोल-

जीव	बोल	विवरण
नारकी में	35	4 लेश्या, 2 ज्ञान, नो संज्ञा, 3 वेद, अकषाय, अयोग ये 12 कम हुए
भवनपति, व्यंतर में	37	उपरोक्त में 35 में एक लेश्या और एक वेद बढ़ा
ज्योतिषी, दो देवलोक	34	37 में से 3 लेश्या कम
3 देवलोक से 12 देव.	33	34 में एक वेद कम
नवग्रैवयक	32	33 में मिश्रदृष्टि कम
पाँच अणुत्तर विमान	26	33 में कृष्ण पक्षी, 2 दृष्टि, 4 अज्ञान कम
पृथ्वी पानी वनस्पति	27	जीव, 5 लेश्या, 2 पक्ष, 1 दृष्टि, 3 अज्ञान, 4 संज्ञा, 2 वेद, 5 कषाय, 2 योग, 2 उपयोग, ये कुल 27 बोल
तेउ वायु	26	27 में तेजो लेश्या कम
तीन विकलेन्द्रिय	31	26 में समदृष्टि, 3 ज्ञान, 1 वचन योग ये पाँच बढ़े
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	40	47 में से अलेशी, अवेदी, अकषायी, अयोगी, नो संज्ञा, 2 ज्ञान ये 7 कम
मनुष्य	47	सभी

जीवों में बंध आसरी 4 भांगा-तीन काल में बंध, अबंध की चौभंगी-

(1) पूर्व में कर्म बांधा था, वर्तमान में बांधता है, भविष्य में बांधेगा

(2) बांधा था, बांधता है, नहीं बांधेगा

(3) बांधा था, नहीं बांधता है, बांधेगा

(4) बांधा था, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा

कर्मों में बंधी के 4 भंगों का अस्तित्व-

कर्म	पहला भंग	दूसरा भंग	तीसरा भंग	चौथा भंग
पाप कर्म, मोह कर्म में (समुच्चय 8 कर्म)	अभवी आदि की अपेक्षा	क्षपकश्रेणी के 9वें गुणस्थान तक	उपशम श्रेणी	12-13-14 गुणस्थान में
ज्ञानावरणीयादि 5 में	10वें गुणस्थान के द्वि चरम समय तक	चरम समय में	11वें गुणस्थान में	12-13-14वें गुणस्थान में
वेदनीय कर्म	13वें गुणस्थान के द्वि चरम समय तक	13वें गुणस्थान के चरम समय में	-	14वें गुणस्थान में
आयुष्य कर्म	अभवी आदि की अपेक्षा	अगले भव में मोक्ष गामी	अचरम शरीरी 2/3 आयुष्य तक	चरम शरीरी या मनुष्यायु बांधे हुए जीव में

24 दंडक के बोलों में प्रत्येक कर्म के त्रैकालिक भंग–47 बोलों पर 24 दंडक 8 कर्म–

कर्म	जीव	बोल	भंग
मोह कर्म (पाप कर्म)	जीव, मनुष्य	**20 बोल**–जीव, सलेशी, शुक्ल लेशी, शुक्ल पक्षी, सम्यग्दृष्टि, 5 ज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त, अवेदी, सकषायी, लोभ, 4 योग, 2 उपयोग,	4
		3 बोल (अलेशी, केवली, अयोगी) में	1 चौथा
		1 बोल अकषायी में	2 (3, 4)
		23 बोल शेष सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य (जिसमें जितने बोल हो उनमें)	2 (1, 2)
पाँच कर्म	जीव, मनुष्य	18 बोल (20 में से सकषायी, लोभ कम)	4
		3 बोल (अलेशी केवली अयोगी) में	1 (चौथा)
		1 बोल अकषायी में	2 (3, 4)
		25 बोल शेष सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	2 (1, 2)
वेदनीय कर्म	जीव, मनुष्य	12 (जीव, सलेशी, शुक्ल लेशी, शुक्ल पक्षी, समदृष्टि, सनाणी,	
		केवलज्ञानी, नो संज्ञोपयुक्त, अवेदी,	
		अकषायी, 2 उपयोग ये 12 में)	3 (1, 2, 4)
		2 बोल (अलेशी, अयोगी) में	1 (चौथा)
		33 बोल सभी में	2 (1, 2)
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	2 (1, 2)
आयुष्य कर्म	जीव	1 कृष्ण पक्षी में	2 (1, 3)
		3 मिथ्यादृष्टि, अवेदी, अकषायी में	2 (3, 4)
		3 अलेशी, केवली, अयोगी में	1 (चौथा)
		2 मन:पर्यव, नो संज्ञोपयुक्त में	3 (1, 3, 4)
		38 शेष सभी में	4
	नरक देव में	2 कृष्ण लेशी कृष्ण पक्षी में	2 (1, 3)
		1 मिश्रदृष्टि में	2 (3, 4)
		शेष बोलों में	4
		यथायोग्य सभी बोलों में	2 (3, 4)
	सर्वार्थसिद्ध में	यथायोग्य बोलों में	3 (2, 3, 4)
	पृथ्वी पानी बन. में	तेजोलेश्या में	1 (3)
		1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		25 शेष सभी में	4
	तेउ, वायु में	यथायोग्य (सभी) में	2 (1, 3)
	विकलेन्द्रिय	4 (समदृष्टि, 3 ज्ञान) में	1 (3)

		27 शेष सभी में	2 (1, 3)
	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		1 मिश्रदृष्टि में	2 (3, 4)
		5 (समदृष्टि, 4 ज्ञान) में	3 (1, 3, 4)
		33 सभी बोलों में	4
	मनुष्य	3 (अलेशी, केवली, अयोगी) में	1 (4)
		3 (मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी) में	2 (3, 4)
		7 (समदृष्टि, 5 ज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त) में	3 (1, 3, 4)
		1 कृष्णपक्षी में	2 (1, 3)
		33 शेष सभी बोलों में	4

समुच्चय पाप और मोहकर्म में–20 बोल में 4 भंग पाते है–नवमें गुणस्थान के दो समय बाकी रहते एक पहला भंग, एक समय बाकी रहते एक दूसरा भंग उपशांत मोह (11वें गुण.) में एक तीसरा भंग और क्षीणमोह (12वें गु.) में चौथा।
शेष विवरण चार्ट के अनुसार। **पाँच कर्मों में**–18 बोलों में दसवें गुणस्थान के दो समय बाकी रहते पहला भंग, एक समय बाकी रहते दूसरा भंग, उपशम मोह (11वें गुण.) में एक तीसरा, क्षीणमोह (12वाँ गुण.) में चौथा भांगा। शेष चार्ट में विवरण देखें। **वेदनीय कर्म में**–मनुष्य आसरी 12 बोलों में तेरहवें गुणस्थान के दो समय बाकी रहते पहला भांगा, एक समय बाकी रहते दूसरा भंग और 14वें गुणस्थान में चौथा भंग पाता है। अयोगी अलेशी में चौथा भंग। शेष विवरण चार्ट अनुसार समझें।
दूसरे उद्देशक से–अनन्तरोपपन्नक, परम्परोपपन्नक, अनन्तरावगाढ़, परम्परावगाढ़, अनन्तराहारक, परम्पराहारक, अनन्तरपर्याप्तक, परम्परपर्याप्तक, चरम, अचरम ये 11 उद्देशक कहे है–इनमें अनंतरोपपन्नक आदि 4 प्रकार जीव के प्रारंभिक (प्रथम) समय में अस्तित्व वाले है अत: इनमें नियमत: (1) आयुबंध नहीं होता (2) सात कर्म नियमत: बंधते है (3) अपर्याप्ता में नहीं पाये जाने वाले अर्थात् पर्याप्त में ही पाये जाने वाले बोल इनमें नहीं होते हैं–मिश्रदृष्टि, मन योग, वचन योग, तिर्यंच में विभंग ज्ञान, अवधिज्ञान, मनुष्य में ऊपर के गुणस्थानों में पाने वाले कई बोल नहीं होते (अलेशी, मिश्रदृष्टि, विभंग ज्ञान, मन:पर्यव ज्ञान, केवलज्ञान, नोसंज्ञा, अवेदी, अकषायी, मन, वचन योग, अयोगी ये 11) अत: 24 दंडक में पाये जाने वाले बोलों में कुछ कम होते है इस प्रकार–**अनन्तरोपपन्नक** आदि में 47 बोल– में पाने वाले बोल

जीव	बोल	विवरण
नारकी में	32	35 में (मिश्रदृष्टि, 2 योग ये 3 कम)
भवनपति व्यंतर	34	37 में उपरोक्त कम
ज्योतिषी, दो देवलोक	31	34 में उपरोक्त 3 कम
3 देव. से 12वें देवलोक	30	33 में उपरोक्त 3 कम
नवग्रैवेयक	30	32 में 2 कम
पाँच अनुत्तर देव	24	26 में दो योग कम
पाँच स्थावर	27/26	पूर्ववत्
तीन विकलेन्द्रिय	30	31 में वचन योग कम
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	35	40 में (मिश्रदृष्टि, विभंग, अवधिज्ञान, 2 योग ये 5 कम)
मनुष्य	36	3 (अलेशी, केवली, अयोगी) 3 (मिश्रदृष्टि, अवेदी, अकषायी) 2 (मन:पर्यव, नोसंज्ञा) 2 योग, 1 विभंग ये 11 कम 47 में से।

अनन्तरोपपन्नक 7 कर्म अवश्य बांधते है। अत: 24 दंडक में पाये जाने वाले 4 भंग से वर्तमान में बंधने वाले 2 भंग (पहला, दूसरा) ही होते हैं। वर्तमान में नहीं बंधने वाले दो (तीसरा चौथा) भंग नहीं होते। बंधने वाले दो भंगों में से पहला भंग अभवी और दूसरा भवी की अपेक्षा से होता है। अनन्तरोपपन्नक आदि जीव तो नियमा 7 कर्म का बंध वर्तमान में बांधते ही है, अत: नहीं बंधने वाले दो भंग नहीं होते। **आयुष्य कर्म**-अनंतरोपपन्नक आदि चारों आयुष्य कर्म नहीं बांधते है। उत्पत्ति के बाद असंख्य समय के अन्तर्मुहूर्त बीतने पर ही जीव आयुकर्म बांधते है। अत: आयुकर्म के वर्तमान में बांधने के पहले दूसरे दो भंग नहीं होते। तीसरा भंग बांधा था, नहीं बांधते, बांधेंगे यह भंग 23 दंडक में तथा मनुष्यों में मोक्षगामी की अपेक्षा चौथा भंग (बांध्या, नहीं बांधते, नहीं बांधेंगे) होता है। मनुष्य में पाये जाने वाले सभी बोल वाले चरम शरीरी मोक्षगामी हो सकते है, मात्र एक कृष्णपक्षी मोक्षगामी नहीं होता अत: उसमें तीसरा भंग होता है। अनंतरोपपन्नक में 24 दंडक में 8 कर्म के भंग-

7 कर्म	24 दंडक	यथायोग्य सभी बोलों में	2 (1, 2)
आयुकर्म	23 दंडक	यथायोग्य सभी बोलों में	1 (3)
	मनुष्य	1 कृष्णपक्षी में	1 (3)
		शेष सभी में	2 (3, 4)

परम्परोपपन्नक, परम्परावगाढ़, परम्पराहारक, परम्परपर्याप्तक (तीसरा, पाँचवाँ, सातवाँ,

नवमां उद्देशा) और दसवाँ चरम उद्देशा ये पाँच औघिक की तरह कहना विशेष यहाँ समुच्चय जीव का बोल नहीं कहना।

ग्यारहवें अचरम में चरम की तरह कथन परन्तु यहाँ 44 बोल कहने हैं तीन बोल अलेशी केवली अयोगी नहीं होते और चौथा भंग भी नहीं होता तथा सर्वार्थसिद्ध और समुच्चय जीव का बोल नहीं होता। 24 दंडक अचरम जीवों के बोल-भंग

पापकर्म और	मनुष्य	20 बोल (विवरण पहले दिया हुआ है)	1, 2, 3
मोहकर्म		1 अकषायी	1 (3)
		23 शेष	1, 2
	23 दंडक में	यथा योग्य बोल में	1, 2
5 कर्म	मनुष्य	18 बोल	1, 2, 3
		1 अकषायी	1 (3)
		25 शेष बोल	1, 2
	23 दंडक	यथायोग्य बोलों में	1, 2
वेदनीय कर्म	24 दंडक	यथायोग्य बोलों में	1, 2
आयुष्य कर्म	नैरयिक	34 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	भवन. व्यंतर	36 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	ज्योतिषी 2 देवलोक	33 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	नवग्रैवेयक तक	32 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि	1 (3)
	4 अनुत्तर विमान	26 बोलों में	1, 3
	पृथ्वी पानी वन.	26 बोलों में	1, 3
		1 तेजोलेश्या में	1 (3)
	तेउवायु में	26 बोलों में	1, 3
	3 विकलेन्द्रिय	27 बोलों में	1, 3
		4 बोल (समदृष्टि, 3 ज्ञान) में	1 (3)
	तिर्यंच पंचेन्द्रिय	39 बोलों में	1, 3
		1 मिश्रदृष्टि में	1 (3)
	मनुष्य	41 बोलों में	1, 3
		3 (अवेदी, अकषायी, मिश्रदृष्टि) बोल में	1 (3)

194. करिंसु शतक (भ.श. 27 उ. 1 से 11) छब्बीसवें शतक में 8 कर्मबंध संबंधी निरूपण किया था, इस शतक में पाप कर्मों को पुष्ट करने संबंधी 11 उद्देशक

है। 11 द्वारों के 47 बोलों में समुच्चय जीव और 24 दंडक पर पापकर्म और आठ कर्मों के 4 भंगों का निरूपण प्रथम उद्देशक में करके दूसरे से ग्यारहवें उद्देशक में अनन्तरोपपन्नक से अचरम जीवों का कथन 26वें शतक की तरह है, इन सभी में कर्मबंध के स्थान पर कर्मपुष्ट करना शब्द प्रयोग किया है इसीलिए इस शतक का नाम ''करिंसु'' शतक रखा है। (पापकर्म किये, करता है, करेगा, ऐसा)

195. समज्जिया शतक (भ.श. 28 उ. 1 से 11) इस शतक में बहुवचन से विवक्षित अनेक जीवों के लिए भूतकाल में 4 गति में से कहाँ कर्मों का समार्जन (उपार्जन) किया और उनका आचरण (भुगतान) किया, इस संबंध में 4 गतियों के 8 भंग कहे हैं-(तिर्यंच योनी को सब जीवों की माता कहा है)।

(1) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में पापकर्मों का उपर्जन किया, और तिर्यंच में ही भोगे।

(2) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे, नैरयिक योनि में भोगे।

(3) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे, मनुष्य योनि में भोगे।

(4) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे, देव योनि में भोगे।

(5) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे, और नरक तथा मनुष्य योनि में भोगे।

(6) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे और नरक और देव योनि में भोगे।

(7) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे और मनुष्य और देव योनि में भोगे।

(8) सब जीवों ने तिर्यंच योनि में बांधे और नरक, मनुष्य और देव योनि में भोगे।

47 बोल 24 दंडक और उनमें पाने वाले बोलों में पापकर्म और आठ कर्म के भूतकाल के उपार्जन और भुगतान के 8 विकल्प सर्वत्र होते हैं। यहाँ कम ज्यादा विकल्प (भंग) नहीं होते अतः 11 उद्देशों में 8 विकल्पों का कथन है। यहाँ भूतकाल की ही पृच्छा है, वर्तमान और भविष्य काल की नहीं है।

196. पट्ठविंसु निट्ठविंसु शतक (भ.श. 29 उ. 1 से 11) इस शतक में अनेक जीवों (बहुवचन) का एक भव में कर्मों का वेदन प्रारंभ और उस गति में कर्म वेदन की समाप्ति का कथन 4 भंगों से किया गया है। इस प्रकार-

(1) कर्मों का वेदन (भोगना) बहुत जीवों ने समकाल (एक साथ) में शुरू किया और समकाल में पूरा किया। (2) समकाल में भोगना शुरू किया विषम काल में पूरा किया। (3) विषम काल में भोगना शुरू किया और समकाल में पूरा किया अथवा-

(4) विषम काल में भोगना शुरू किया और विषम काल में पूरा किया। इन चारों भंगों के बनने का कारण जीव के 4 प्रकार बताये हैं-

(1) एक साथ (आयुष्य प्रारंभ करके) उत्पन्न हुए एक साथ मरने वाले (आगामी भव में साथ में जन्मने वाले) (2) साथ में उत्पन्न हुए अलग-अलग मरे (समस्त कर्म वेदन साथ में प्रारंभ, समाप्ति अलग-अलग) एक साथ आयुष्य का उदय वाले विषम काल में उत्पन्न हुए। (3) विषम काल में आयुष्य का उदय वाले समकाल में उत्पन्न हुए (इस भव में अलग समय में उत्पन्न हुए, साथ में मरे) कर्म वेदन प्रारंभ अलग-अलग, समाप्ति साथ में)। (4) विषम काल आयुष्य का उदय वाले, विषम काल में उत्पन्न हुए। अलग समय में इस भव में उत्पन्न होकर अलग-अलग समय मरकर आगामी भव में उत्पन्न होवे (कर्म वेदन प्रारंभ भी अलग और समाप्ति (वेदन) भी अलग-अलग)।

इसी प्रकार शैलेषी जीवों का भी कथन पूर्ववत् अनुसार है। 47 बोलों में पूर्वोक्त चार-चार भंग 24 दंडक में जितने-जितने बोल पावे वह कहना। 11 द्वार 47 बोल 24 दंडक 8 कर्म संबंधी 4 भंगों से कहना। अनन्तरोपपन्नक आदि 4 उद्देशों में 2 भंग ही कहना (पहला दूसरा)। शेष 6 उद्देशों में चार-चार भंग कहना। अनंतरोपपन्नक आदि जीव साथ में ही जन्मते हैं अतः 2 भंग ही बनते हैं।

197. समवसरण (भ.श. 30 उ. 1 से 11) समवसरण शब्द यहाँ वादी और सिद्धांत अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। यहाँ समवसरण 4 कहे हैं, यानि 4 सिद्धांतवादियों का छब्बीसवें शतक वाले 11 द्वारों पर 47 बोल पर कथन किया है।

(1) समवसरण चार प्रकार के-(1) क्रियावादी (2) अक्रियावादी (3) अज्ञानवादी (4) विनयवादी। **क्रियावादी**-आत्मा का अस्तित्व मानने वाले, ज्ञान और क्रिया से मोक्ष मानने वाले इनके 180 भेद हैं। **अक्रियावादी**-आत्मा आदि का अस्तित्व नहीं मानने वाले 84 भेद है। **अज्ञानवादी**-अज्ञान से मोक्ष मानने वाले इनके 67 भेद है। **विनयवादी**-सबका विनय करने से ही मोक्ष मानने वाले। कुत्ता, बिल्ली, गाय, भैंस सबका विनय करने से मोक्ष ये 32 हैं। चारों के 363 मत होते हैं, यद्यपि ये सभी मिथ्यादृष्टि हैं, किन्तु यहाँ क्रियावादी का जो वर्णन है यह सम्यक अस्तित्व मानने वाले सम्यग्दृष्टियों का है, इसलिए उन्हें सम्यग्दृष्टि मानना चाहिए। समुच्चय जीव के 47 बोलों में समवसरण और 24 दंडक में पाने वाले समवसरण और उनमें कितनी गति का आयु बंध होता है इस प्रकार-

46 बोल	समवसरण	आयु बंध	विवरण
कृष्णपक्षी, मिथ्यादृष्टि, 4 अज्ञान	3 (क्रिया. छोड़)	4 गतिका	भव्य अभव्य दोनों है
मिश्रदृष्टि	अज्ञान, विनयवादी	दोनों वादी में अबंध	भव्य है
सम्यग्दृष्टि, 4 ज्ञान	1 क्रियावादी	2 देव और मनुष्य का	भव्य है
तीन अशुभ लेश्या (कृष्ण, नील, कापोत)	4	क्रियावादी-मनुष्य/अबंध 3 समवसरण-4 गतिका	क्रियावादी भव्य भव्य अभव्य दोनों
तीन शुभ लेश्या (तेजो पद्म शुक्ल)	4	क्रियावादी-देव मनुष्य 3 समवसरण-3 गति	भव्य भव्य अभव्य दोनों
मन: पर्यवज्ञान, नो संज्ञोपयुक्त	1	वैमानिक देव	भव्य
अवेदी, अकषायी, अयोगी, अलेशी, केवली	1	अबंध	भव्य
शेष 22 बोल	4	क्रियावादी-2 गति 3 समवसरण-4 गति	भव्य भव्य अभव्य दोनों

विशेष-मिश्रदृष्टि में आयु का अबंध है, समदृष्टि आदि में नारकी देवता-मनुष्य का और तिर्यंच मनुष्य-वैमानिक आयुष्य बांधते हैं। अशुभ लेश्या में क्रियावादी नारकी देवता-मनुष्य का और तिर्यंच मनुष्य आयुष्य नहीं बांधते। तीन शुभ लेश्या में क्रियावादी नारकी देवता-मनुष्य का और मनुष्य तिर्यंच-वैमानिक (विशिष्ट सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा) बाकी के तीन वाले देव मनुष्य तिर्यंच का तथा मनुष्य तिर्यंच-तीन गति (नरक छोड़कर) का आयुष्य बांधते हैं। 22 बोलों में क्रियावादी नारकी देवता तो मनुष्य का, मनुष्य तिर्यंच-वैमानिक का बाकी तीन समवसरण चारों गति का बांधते हैं।

24 दंडक में समवसरण-आयुबंध आदि-

दंडक	47 बोल	समवसरण	आयुबंध
नरक	कृष्णपक्षी आदि 6 बोल	3	2 (मनुष्य, तिर्यंच) का
35 बोल	मिश्रदृष्टि सम्यग्दृष्टि 4 ज्ञान शेष 23 बोल	2 1 4	अबंध मनुष्य का क्रिया. मनुष्य, 3 समवसरण दोनों का
देव-नवग्रैवेयक	कृष्णपक्षी आदि 6 बोल	3	मनुष्य, तिर्यंच का
तक	मिश्रदृष्टि	2	अबंध
35 बोल	सम्यग्दृष्टि 4 ज्ञान	1	मनुष्य का
	शेष 23 बोल	4	क्रियावादी-मनुष्य का, तीन समवसरण-दोनों का, 9 देवलोक से आगे 1 मनुष्यायु का
अणुत्तर देव 26	26 बोल	1	मनुष्यायु

तीन स्थावर 27	तेजोलेश्या	अक्रिया., अज्ञान.	अबंध
	शेष 26 बोल	अक्रिया., अज्ञान.	मनुष्य, तिर्यंचायु
तेउ, वायु 26 विकलेन्द्रिय 31	26 बोल सम्यग्दृष्टि, 3 ज्ञान शेष 27 बोल	अक्रिया., अज्ञान. 1 अक्रिया. अज्ञान.	1 तिर्यंचायु अबंध दोनों का
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	कृष्णपक्षी आदि 6	3	4 गति का
40	मिश्रदृष्टि	अज्ञा. विनय.	अबंध
	सम्यग्दृष्टि, 4 ज्ञान	1	वैमानिक देवों का
	तीन लेश्या कृष्णादि (अशुभ) तीन शुभ लेश्या	4 4	क्रिया. अबंध, 3 समवसरण 4 गति का क्रिया. वैमानिक, 3 समवसरण-3 गति का
	शेष 22 बोल	4	क्रियावादी-वैमानिक का 3 समवसरण-4 गति का
मनुष्य 47	18 बोल		उपरोक्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 5 कोलम के समान वर्णन
मनुष्य	मन:पर्यव, नो संज्ञा.	1	वैमानिक का
	अवेदी आदि 5	1	अबंध
	शेष 22 बोल	4	क्रिया. वैमानिक, 3 समवसरण 4 गति का

विशेष-तीन समवसरण जहाँ कहे हैं, वहाँ क्रियावादी नहीं है। **नारकी** में 35 बोल कृष्ण पाक्षिक आदि मनुष्य, तिर्यंच का आयुबंध, भव्य अभव्य दोनों होते हैं। मिश्रदृष्टि नियमा भव्य, अबंध। समदृष्टि आदि मनुष्यायु, भव्य होते हैं। 23 बोलों में क्रियावादी भव्य बाकी भव्य अभव्य दोनों। **भवनपति से नवग्रैवेयक** भवनपति से 12वें देवलोक तक 12 बोल और नवगैवेयक के 11 बोल नरकवत् कहे। बाकी 22 बोलों में चारों समवसरण आयुष्य मनुष्य का। **अणुत्तर विमानों में** नियमा भव्य, मनुष्यायु। **पृथ्वी पानी वनस्पति** के 27 बोल में से तेजो लेश्या में अबंध बाकी 26 बोलों मनुष्य तिर्यंच दो गति, भव्य अभव्य दोनों। अक्रियावादी अज्ञानवादी। **तेउवायु** भी अक्रिया और अज्ञानवादी 26 बोल गति तिर्यंच भव्य अभव्य दोनों होते हैं। तीन **विकलेन्द्रिय** 31 बोल अक्रियावादी अज्ञानवादी इनमें समदृष्टि 4 नियमा भव्य और अबंध। शेष 27 बोल मनुष्य, तिर्यंच और भव्य अभव्य दोनों होते हैं। **तिर्यंच पंचेन्द्रिय** 40 बोल कृष्णपक्षादि 6 में तीन (क्रियावादी छोड़) समवसरण, 4 गति, भव्य अभव्य दोनों। मिश्रदृष्टि अज्ञानवादी विनयवादी अबंध, भव्य होता हैं। समदृष्टि आदि 5 में क्रियावादी वैमानिक आयु, भव्य। अशुभ लेश्या में 4 समवसरण क्रियावादी में अबंध, नियमा भव्य। तीन समवसरण चारों गति, भव्य अभव्य दोनों।

तीन शुभ लेश्या में चार समवसरण क्रियावादी वैमानिक आयु, भव्य। बाकी तीन नरक छोड़ तीन गति का आयु, भव्य अभव्य दोनों। बाकी 22 बोलों में चार समवसरण-क्रिया वैमानिक का नियमा भव्य, बाकी तीन चारों गति का आयु, भव्य अभव्य दोनों होते हैं। **मनुष्य में** 47 बोल इनमें 18 बोल, तिर्यंच के 18 बोल के अनुसार। मन:पर्यव नो संज्ञा, एक क्रियावादी, वैमानिक, आयु भव्य होते हैं। 5 बोल-अवेदी, अकषायी, अलेशी, केवली, अयोगी, क्रियावादी, अबंध नियमा भव्य। बाकी 22 बोलों में चारों समवसरण, क्रियावादी, वैमानिक आयु, भव्य, शेष तीन समवसरण चारों गति का आयुष्य और भव्य अभव्य दोनों होते हैं।

क्रियावादी, मिश्रदृष्टि, शुक्लपक्षी ये सभी भवी ही होते हैं, शेष भवी अभवी दोनों होते हैं। 14 बोल भवी के-अलेशी, शुक्लपक्षी, समदृष्टि, मिश्रदृष्टि, सज्ञानी, 5 ज्ञानी, नो संज्ञा, अकषायी, अवेदी, अयोगी। शेष 33 बोल में क्रियावादी, एकांत भवी, शेष तीन समवसरण में भवी अभवी दोनों।

अनन्तरोपपन्नक आदि के 4 उद्देशे दूसरा, चौथा, छठा और आठवाँ में 26वें शतक के समान 47 बोलों में से पाये जाने वाले बोल कहना। विशेष चार्ट में कहे बोलों में से मन, वचन योग और मिश्रदृष्टि निकाल देना। आयु का अबंध कहना अनन्तरोपपन्नक आयु नहीं बांधते। परम्परोपपन्नक के चार और चरम अचरम शेष छ उद्देशक प्रथम उद्देशक के समान है। 24 दंडक में कहे। 24 दंडक में 47 बोलों में से बोल छोड़ना आदि 26वें शतक के अनुसार ध्यान दे। पिछले दस उद्देशकों में समुच्चय जीव नहीं कहकर 24 दंडक ही कहना। चरम उद्देशक में अलेशी, केवली, अयोगी ये तीन बोल नहीं कहना और सर्वार्थसिद्ध की भी पृच्छा नहीं कहना।

198. खुड्डाग कड़जुम्मा (भ.श. 31 उ. 1 से 28) लघु संख्या वाली राशि को खुड्डाग जुम्मा कहते हैं। महा जुम्मा आगे आयेगा अत: क्षुद्र (लघु) जुम्मा है। इस शतक में मात्र नरक में उत्पन्न होने जीवों का कथन कृतयुग्म आदि के माध्यम से हैं। समुच्चय नारकी, तीन लेश्या ये 4 उद्देशे, 2 पक्ष, 2 भवी, 2 दृष्टि इन 6 में पुन: 4-4 उद्देशक होने से 4+24=28 उद्देशक हैं। उत्पत्ति से वर्णन होने से इस शतक को उपपात शतक कहते हैं।

(1) खुड्डाग कड़जुम्मा चार है-कड़जुम्मा, तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा

(2) कड़जुम्मा नारकी-5 संज्ञी, 5 असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, और संख्यात वर्षायु वाला मनुष्य इन 11 स्थानों से आकर उत्पन्न होता है। इसी तरह सातों नारकी में कहना।

(1) रत्नप्रभा में आगत स्थान 11 (2) शर्कराप्रभा में 6 (5 असंज्ञी तिर्यंच पं. कम) है। (3) बालुकाप्रभा में 5 (भुज परिसर्प कम) (4) पंकप्रभा में आगति स्थान 4 (खेचर कम) (5) धूमप्रभा में आगति स्थान 3 (स्थलचर कम) (6) तम:प्रभा में आगति 2 (उरपरि सर्प कम) (7) तम:तमाप्रभा में आगति स्थान 2 है (स्त्री नहीं जाती)।

(3) नरक में एक समय में 4, 8, 12, 16 इस तरह चार-चार बढ़ाते यावत् संख्याता, असंख्याता जीव नरक में जाते हैं।

(4) वे जीव कूदने वाले पुरुष की तरह (भ.श. 25 उ. 8 में कहा वैसे) अध्यवसायपूर्वक पूर्व स्थान छोड़ता हुआ उत्पन्न होता है। इसी प्रकार तेओगा का कहना 3, 7, 11, 15 संख्याता, असंख्याता, दावर का 2, 6, 10, 14 संख्याता, असंख्याता, कलियोगा का 1, 5, 9, 13 संख्याता असंख्याता का कहना।

विशेष-कृष्णलेशी खुड्डाग कड़जुम्मा नेरिया दो स्थानों से संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य से आकर उपजता है प्रमाण 4, 8, 12, 16 आदि युग्मों का कथन पूर्ववत् कहना। पाँचवीं, छठी, सातवीं नारकी में अपने-अपने युग्मों के प्रमाण के अनुसार कहना। इसी तरह नीललेशी का तीसरी चौथी पाँचवीं नरक में और कापोतलेशी का पहली दूसरी तीसरी नरक में पूर्ववत् युग्मों के वर्णन के अनुसार कहना।

एक समुच्चय उद्देशा, तीन लेशी के तीन, ये 4 तथा भवी के 4 (समुच्चय और तीन-तीन लेश्या के साथ) इसी तरह अभवी के भी 4, मिथ्यादृष्टि के भी चार समदृष्टि के भी चार परन्तु 7वीं नरक में नहीं कहना (वहाँ जाता भी नहीं, निकलता भी नहीं) इसी तरह कृष्ण पाक्षिक और शुक्ल पाक्षिक के भी चार-चार उद्देशक कहना। ये सभी 28 उद्देशक हुए।

199. उद्वर्तना (उवटना) (भ.श. 32 उ. 1 से 28) इस उद्देशक में उद्वर्तन (मरण) का वर्णन कृतयुग्म आदि संख्या से, लेश्या, भवी, दृष्टि, पक्ष के माध्यम से 31वें शतक की तरह है। इसका नाम इसीलिए उद्वर्त्तना शतक है।

(1) खुड्डाग कड़जुम्मा नेरिया-पाँच संज्ञी तिर्यंच और संख्यात वर्षायु वाले कर्मभूमि मनुष्य में छ: स्थानों में उत्पन्न होते हैं।

(2) एक समय में 4, 8, 12, 16 यावत् चार-चार जोड़ते हुए संख्याता, असंख्याता उवटते हैं।

(3) स्वऋद्धि से पहले की तरह अध्यवसायपूर्वक उवटते हैं। इसी तरह दूसरी नरक से छठी नरक तक का वर्णन कहना। 7वीं नरक के निकले पाँच संज्ञी तिर्यंचों

में ही जाता है, मनुष्य में नहीं जाता। बाकी सारा अधिकार 31वें शतक की तरह समझना। तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा वर्णन भी पूर्वोक्त कहना। कृष्णलेशी का नीललेशी, कापोतलेशी का वर्णन भी उसी तरह कहना किन्तु कृष्णलेशी में पाँचवें छठे नारकी से निकले छ स्थानों और 7वीं नरक से निकले पाँच स्थानों (मनुष्य में नहीं) में जाने का कहना। बाकी 24 उद्देशे 31वें शतक की तरह परन्तु यहाँ उवटना शब्द कहना।

200. एकेन्द्रिय शतक 12 अन्तर शतक (भ.श. 33 के 12 अन्तर शतक 124 उद्देशे) इसमें 12 अवान्तर (अन्तर) शतक है। प्रत्येक शतक में 26वें शतक के समान 11-11 उद्देशक है। जिसमें एकेन्द्रिय के भेद प्रभेद करके उनमें 8 कर्म का अस्तित्व, 8 का बंध एवं वेदन में 8 कर्म, 4 इन्द्रिय का अन्तराय, 2 वेद का अन्तराय यो 14 बोल संख्या रूप वर्णन है, अन्य कोई वर्णन नहीं होने से एकेन्द्रिय शतक कहा है।

(1) एकेन्द्रिय के 5 भेद पृथ्वीकाय आदि 5 सूक्ष्म, 5 बादर इन दस के पर्याप्ता, अपर्याप्ता ये 20 भेद हुए।

(2-3) इनके 8 कर्म की सत्ता है, सात अथवा आठ कर्मों का बंध होता है।

(4) एकेन्द्रिय 14 कर्म प्रकृतियों को वेदते हैं-ज्ञानावरणादि 8 कर्म, श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय इन 4 का आवरण, पुरुष और स्त्रीवेद का आवरण। दूसरे उद्देशक में 4 थे छठे आठवें उद्देशक में अनन्तरोपपन्न, अनन्तरावगाढ़, अनन्तराहारक, अनन्तरपर्याप्तक इन 4 उद्देशक में एकेन्द्रिय के 10 भेद अपर्याप्त के पाये जाते हैं, इनके 8 कर्म की सत्ता 7 का बंध 14 प्रकृतियों को वेदते हैं। परम्परोपन्नक, परम्परावगाढ़, परम्पराहारक, परम्परपर्याप्त के चरम और अचरम ये 6 उद्देशकों में 8 कर्म की सत्ता, 7 या 8 का बंध, 14 प्रकृतियों का वेदन होता है। बाकी सारा अधिकार प्रथम उद्देशक की तरह। प्रथम अन्तर शतक पूर्ण।

कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी इन तीन अन्तर शतकों के भी 11-11 उद्देशे इनमें दूसरा चौथा छठा आठवाँ उद्देशे में पृथ्वीकायादि के 10-10 भेद और 8 कर्म सत्ता, 7 का बंध, 14 का वेदन तथा बाकी 7 उद्देशों में 20-20 भेद आठ कर्म की सत्ता 7 या 8 का बंध 14 का वेदन होता है। चार अन्तर शतक लेश्या संयुक्त चार अन्तर समुच्चय शतक कहे हैं, इसी तरह लेश्या संयुक्त 4-4 शतक भवी, अभवी के कहने परन्तु अभवी में 9-9 उद्देशे कहने क्योंकि चरम अचरम दो उद्देशे नहीं

होते, इन 12 अन्तर शतकों के 124 उद्देशे होते हैं। 12x11=132 में से अभवी के 4 शतकों के 4x2=8 कम ये 124 हुए। इनमें से 48 उद्देशे अनन्तर समय के जिनमें 10-10 बोल अपर्याप्ता के होने से 480 बोलों में आठ कर्मों की सत्ता, 7 का बंध, 14 प्रकृतियों को वेदते हैं। बाकी 76 उद्देशे में एकेन्द्रिय के 20-20 बोल होने से 1520 बोलों में आठ की सत्ता, 7 या 8 का बंध, 14 का वेदन ये कुल 2000 अलावा हुए। (480+1520)। 12 अन्तर शतक के 124 उद्देशक। अनन्तरोपपन्नक के 4 उद्देशों में 10x4=40 बाकी 7 उद्देशों में 20x7=140 ये 180 समुच्चय के, 180x3 तीन लेश्या के 540=720। यों भवी के 720 और अलावा हुए अभवी में चरम अचरम नहीं होते हैं दो उद्देशों में 160 अलावा नहीं होते हैं बाकी 560 रहे। कुल 720+720+560=2000 अलावा हुए।

201. श्रेणी शतक (भ.श. 34 अनन्तर शतक 12 उद्देशक 124) इस शतक में 12 अन्तर शतकों के 124 उद्देशे कहे हैं। एकेन्द्रिय जीवों का 20 भेदों से रत्नप्रभा आदि पृथ्वी के एक दिशा चरमान्त से दूसरी दिशा के चरमान्त में उत्पन्न होने का, उसमें लगने वाले समय, सात श्रेणियों, जीव-पुद्गल की गति, उम्र आदि वर्णन है। भेद, श्रेणी, विग्रहगति, उपपात, समुद्घात, संस्थान, बंध, वेद, आगति और समस्थिति वाले कर्मों का बंध ये द्वार है।

(1) एकेन्द्रिय के 20 भेद है, उनमें से रत्नप्रभा पृथ्वी में चारों दिशा के चरमान्त में 18-18 बोल (बादर तेउकाय के पर्याप्ता, अपर्याप्ता छोड़कर) होते हैं। बादर तेउकाय के दोनों बोल तिर्च्छा लोक यानि मनुष्य लोक में पाये जाते हैं।

(2) रत्नप्रभा के 18 बोलों के जीव पूर्व चरमान्त से पश्चिम चरमान्त में 18 बोलपणे, एक-दो-तीन समय की विग्रह गति से उत्पन्न होते हैं।

(3) तिर्च्छा लोक के 2 बोल रत्नप्रभा के पश्चिम चरमान्त में 18 बोलपणे 1-2-3 समय की विग्रह गति से उपजते हैं।

(4) तिर्च्छा लोक के दो बोल तिर्च्छा लोक के 2 बोलपणे, 1-2-3 समय से विग्रह गति से उपजते हैं।

(5) रत्नप्रभा के 18 बोल के पूर्व चरमान्त के जीव 2 बोलपणे (तेउकाय के दो) 1-2-3 समय की विग्रह गति से उत्पन्न होते हैं।

ये सभी 400 अलावा हुए (18x18=324, 18x2=36, 2x2=4, 18x2=36) इसी तरह (पूर्व चरमान्त से पश्चिम चरमान्त और तिर्च्छा लोक से) पश्चिम के चरमान्त से

पूर्व चरमान्त तथा तिर्च्छा लोक के 400, उत्तर और दक्षिण के चरमान्तों के 400+400 और कहने यो 1600 अलावा हुए।

इसी तरह दूसरी नरक से लेकर सातवीं नरक का भी कहना, किन्तु विशेषता यह कि पूर्व चरमान्त के 18 बोलों के जीव तिर्च्छा लोक में 2 बोलपणे और तिर्च्छा लोक के 2 बोलों के जीव पश्चिम चरमान्त के 18 बोलपणे उपजते हैं। विग्रह गति 2 या तीन समय की ये 36+36=72 अलावा हुए, चारों दिशा में कहना 72x4=288 अलावा यों छ नरक के 288x6=1728 अलावा हुए। ये दो या तीन समय की विग्रह गति के हुए। 1600 में से 288 बाकी करने से 1312 को 6 से (नरक) गुणा करने से 7872 अलावा 1-2-3 समय की विग्रह गति के हुए, यो सब मिलाकर 1600+1728+7872=11200 अलावा हुए। कुल अलावा 1600x7 नरक = 11200 (1728 अलावा 2-3 समय के, 9472 अलावा 1-2-3 समय के) अधोलोक की स्थावर नाल से ऊर्ध्वलोक की स्थावर नाल में 18 बोलों के जीव 18 बोलपणे के 3-4 समय की विग्रह गति से उपजते हैं।

अधोलोक की स्थावर नाल के जीव 18 बोलों के तिर्च्छा लोक में 2 बोलपणे 2-3 समय की विग्रह गति से उपजते हैं।

तिर्च्छा लोक की स्थावर नाल के 2 बोल के जीव ऊर्ध्वलोक की स्थावर नाल में 18 बोलपणे 2-3 समय की विग्रह गति से उपजते हैं।

तिर्च्छा लोक के 2 बोल के जीव तिर्च्छा लोक में 2 बोलपणे 1-2-3 समय की विग्रह गति से उपजते हैं। ये 400 अलावा हुए। इसी तरह ऊर्ध्वलोक की स्थावर नाल से अधोलोक की स्थावर नाल का अधिकार कहना उसके 400 अलावा ये कुल 800+11200=12000 अलावा हुए। लोक की चारों दिशाओं के चरमान्त में 12-12 बोल (पाँच स्थावर सूक्ष्म के पर्याप्त अपर्याप्त तथा बादर वायुकाय के पर्याप्ता अपर्याप्ता) पाये जाते हैं। पूर्व चरमान्त के 12 बोल के जीव मरकर पूर्व चरमान्त में 12 बोलपणे उत्पन्न होते हैं, विग्रह गति 1-2-3-4 समय की। इसी तरह पूर्व से पश्चिम चरमान्त के 12 बोलों का 1-2-3-4 समय की विग्रह गति से कहना।

पूर्व चरमान्त के 12 बोल के जीव उत्तर और दक्षिण चरमान्त में 12 बोलपणे 2-3-4 समय की विग्रह गति से उत्पन्न होते हैं। इसी तरह का कथन (पूर्व की) पश्चिम से पूर्व का कहना तथा पश्चिम से उत्तर व दक्षिण का 2-3-4 समय विग्रह गति कहना। दक्षिण से दक्षिण और दक्षिण से उत्तर का 1-2-3-4 समय और दक्षिण से पूर्व

पश्चिम 2-3-4 समय कहना। ये 12x12=144 अलावा चारों दिशा के 144x4=576 पूर्व दिशा से हुए, यों चारों दिशा से 2304 हुए। इनमें से 1152 अलावा 1-2-3-4 समय के और 1152 दो-तीन-चार समय के। ये सब 12000+2304=14304 अलावा हुए।

20 एकेन्द्रिय जीवों के 8 कर्म की सत्ता, सात-आठ कर्म बांधते हैं, 14 प्रकृतियों (8 कर्म, 4 इन्द्रिय, 2 वेद) को वेदते हैं। 74 ठिकाणों से (46 तिर्यंच, 25 देवता, 3 मनुष्य) आकर उपजते हैं।

20 प्रकार के एकेन्द्रिय जीवों में 4 समुद्घात (बादर वायुकाय के पर्याप्ता में 4 बाकी तीन) पाई जाती है। वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक, वैक्रिय।

कर्मबंध के 4 भंग-

(1) समस्थिति वाले सम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं

(2) समस्थिति वाले विषम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं

(3) विषमस्थिति वाले सम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं

(4) विषमस्थिति वाले विषम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं। इनके 4 कारण है-

(1) समान आयुष्य साथ में उत्पन्न हुए (2) समान आयुष्य विषम समय में उत्पन्न हुए (3) विषम आयुष्य साथ में उत्पन्न हुए (4) विषम आयुष्य अलग समयों में उत्पन्न हुए।

प्रथम भंग वाले तुल्यस्थिति वाले तुल्य एवं विशेषाधिक कर्म बांधते हैं।

दूसरे भंग वाले तुल्यस्थिति वाले किन्तु कर्मबंध विमात्रा में विशेषाधिक करते हैं। तीसरे भंग वाले असमान आयु वाले किन्तु साथ में उत्पन्न होने से तुल्य एवं विशेषाधिक कर्मबंध करते हैं। चौथे भंग वाले असमान उम्र वाले और विमात्रा से विशेषाधिक कर्मबंध करते हैं।

दूसरा चौथा छठा आठवाँ उद्देशा अनन्तरोपपन्नक आदि के 4 उद्देशा है, इनमें एकेन्द्रिय के 10-10 भेद (अपर्याप्त) है, इनके 8 कर्मों की सत्ता, 7 का बंध 14 प्रकृतियों का वेदन, 74 ठिकाणों से आकर उपजते हैं। दो समुद्घात (वेदनीय, कषाय) पाई जाती है। 4 उद्देशों में 2 भंग कर्मबंध के (1) समस्थिति सम विशेषाधिक कर्म बांधते हैं (2) समस्थिति विषम विशेषाधिक कर्म बांधे। क्योंकि दो प्रकार के जीव होते हैं (1) समान आयु साथ में उत्पन्न (2) समान आयु विषम उत्पन्न। शेष 7 उद्देशे तीसरा पाँचवाँ, सातवाँ नवमां दसवाँ ग्यारवाँ ये पहले औघिक की तरह कहना।

पहले 14304 अलावा थे उनको 7 उद्देशों से गुणा करने से 100128 अलावा हुए। दूसरा कृष्णलेशी, तीसरा नीललेशी, चौथा कापोतलेशी ये 4 तथा भवी के चार (औघिक, तीन लेश्या के साथ) इन आठ शतकों में 11-11 उद्देशे हैं। प्रत्येक शतक में 100128 अलावा है, कुल 100128x8=801024 हुए। अभवी के 4 शतक (औघिक, तीन लेश्या) में 9-9 उद्देशे हैं (चरम-अचरम नहीं होते) इन नौ में से 5 उद्देशों के (4 उद्देशों में मरते नहीं है) 14304 अलावों से 14304x5=71520 अलावा हुए, इनको इन 4 शतकों से गुणा करने पर 286080 अलावा हुए। ये सभी मिलाकर 1087104 (801024+286080) अलावा श्रेणी शतक के हुए।

202. एकेन्द्रिय महाजुम्मा (महायुग्म) शतक (भ.श. 35 के 12 अन्तर शतकों के 132 उद्देशक) यहाँ महायुग्मों का वर्णन है, ये 16 हैं, एक-एक महायुग्म से उत्पन्न होने वाले जीवों का 33 द्वारों से वर्णन है, फिर 2 से 11 तक उद्देशकों में पढ़म, अपढ़म, चरम अचरम के द्वारा नये ढ़ंग से बने हैं, इस प्रकार इस शतक में भी 12 अवान्तर शतक द्वारा एकेन्द्रिय का ही वर्णन है एकेन्द्रिय महायुग्म शतक कहलाता है। 33 द्वार इस प्रकार है।

(1) उपपात द्वार (2) परिमाण (3) अपहार (4) अवगाहना (5) बंध (6) वेदक द्वार (7) उदय (8) उदीरणा (9) लेश्या (10) दृष्टि (11) ज्ञान (12) योग (13) उपयोग (14) वर्ण (15) उच्छवास (16) आहार (17) विरति (18) क्रिया (19) बंधक द्वार (20) संज्ञा (21) कषाय (22) वेद (23) वेदबंध द्वार (24) संज्ञी (25) इन्द्रिय द्वार (26) अनुबंध (27) कायसंवेध (28) आहार द्वार (29) स्थिति (30) समुद्घात द्वार (31) समोहया-असमोहया (32) च्यवन (33) उपपात द्वार।

महायुग्म 16 प्रकार के होते हैं।

(1) कृतयुग्म-कृतयुग्म-16, 32, 48, 64 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(2) कृतयुग्म-तेओगा-19, 35, 51, 67 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(3) कृतयुग्म द्वापर-18, 34, 50, 66 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(4) कृतयुग्म कलियोगा-17, 33, 49, 65 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(5) तेओगा कृतयुग्म-12, 28, 44, 60 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(6) तेओगा तेओगा-15, 31, 47, 63 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(7) तेओगा दावरजुम्मा-14, 30, 46, 62 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता

(8) तेओगा कलियोगा-13, 29, 45, 61 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(9) दावरजुम्मा कृतयुग्म-8, 24, 40, 56 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(10) द्वापरयुग्म तेओगा-11, 27, 43, 59 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(11) द्वापरयुग्म द्वापर-10, 26, 42, 58 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(12) द्वापरयुग्म कलियोगा-9, 25, 41, 57 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(13) कलियोगा कड़जुम्मा-4, 20, 36, 52 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(14) कलियोगा तेओगा-7, 23, 39, 55 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(15) कलियोगा दावरजुम्मा-6, 22, 38, 54 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता
(16) कलियोगा कलियोगा-5, 21, 37, 53 यावत् संख्याता असंख्याता अनंता

(1)	उपपात द्वार	तिर्यंच 46, मनुष्य 3, देवता 25 (10 भवन. 8 व्यंतर, 5 ज्योतिषी 2 देवलोक) 74 ठिकानों से आकर उपजते हैं।
(2)	परिमाण द्वार	कृतयुग्म कृतयुग्म 16, 32, 48, 64 यावत् संख्य, असंख्य, अनन्ता उपजे।
(3)	अपहारद्वार	समय-समय अनंता अपहरे, तो अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में भी निर्लेप नहीं।
(4)	अवगाहना	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन झाझेरी।
(5)	बंधक द्वार	7 कर्मों के बंधक, आयुष्य के बंधक भी, अबंधक भी।
(6)	वेदक द्वार	8 कर्मों के वेदक, साता वेदनीय के भी, असाता के भी।
(7)	उदय द्वार	आठों कर्मों के उदय वाले हैं।
(8)	उदीरणा द्वार	6 कर्मों की, आयुष्य और वेदनीय के उदीरक भी, अनुदीरक भी।
(9)	लेश्या द्वार	कृष्ण, नील, कपोत, तेजो-4 लेश्या।
(10)	दृष्टि द्वार	मिथ्यादृष्टि
(11)	ज्ञान द्वार	2 अज्ञान-मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान।
(12)	योग द्वार	1 काय योग
(13)	उपयोग द्वार	2 उपयोग
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा नहीं, शरीर अपेक्षा दो शरीर में वर्णादी 20, (औ.ते.), कार्मण में 16
(15)	उच्छवास द्वार	उच्छवासक भी, नि:श्वासक भी, नो उच्छवासक नि:श्वासक भी।

(16)	आहारक द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी।
(17)	विरति द्वार	अविरति।
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय
(19)	बंधक द्वार	आठ कर्मों के और सात कर्मों के बंधक।
(20)	संज्ञा द्वार	चारों संज्ञाए
(21)	कषाय द्वार	चारों कषाय
(22)	वेद द्वार	एक नपुंसक वेद
(23)	वेद बंध द्वार	तीनों वेद बांधते हैं।
(24)	संज्ञी द्वार	असंज्ञी
(25)	इन्द्रिय द्वार	सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं
(26)	काल (अनुबंध)	जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अनन्तकाल (वनस्पति काल)
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता। अपनी काया छोड़कर अन्य में जाकर वापस आना कायसंवेध होता है, उत्पल के जीवों का उत्पाद विवक्षित है, परन्तु यहाँ कड़जुम्मा कड़जुम्मा कथन होने से यहाँ से निकलना, पुनः सभी का आना असंभव है, त्रस जीवों से आकर उत्पन्न होने की अपेक्षा से कहा है परन्तु वह वास्तविक उत्पाद नहीं है, एकेन्द्रियों में प्रति समय अनन्त जीवों का उत्पाद होता है, इसलिए एकेन्द्रिय की अपेक्षा कायसंवेध असंभव होने से नहीं कहा है।
(28)	आहार द्वार	निर्व्याघात नियम 6 दिशा का, व्याघात आसरी 3-4-5 दिशा का 288 बोलों का आहार करते हैं।
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष (कृतयुग्म कृतयुग्म महायुग्म से)
(30)	समुद्घात द्वार	प्रथम की चार
(31)	समोहया असमो.	दोनों मरण।
(32)	च्यवन द्वार	मनुष्य के 3 तिर्यंच के 46 यों 49 स्थानों में उत्पन्न होते हैं।
(33)	उपपात द्वार	सभी प्राण, भूत, जीव, सत्व पहले कड़जुम्मा कड़जुम्मा रूप से एकेन्द्रियपणे अनेक बार या अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं।

उपरोक्त कड़जुम्मा कड़जुम्मा राशि पर कहे अनुसार अन्य 15 जुम्मा पर भी कहना, विशेष यह कि परिमाण अपना-अपना कहना।

ग्यारह उद्देशक-(1) औघिक (2) पढ़म (प्रथम समय के उत्पन्न) (3) अपढ़म (पहला समय को छोड़कर शेष समय के) (4) चरम (अंतिम समय के) (5) अचरम (अंतिम समय छोड़कर शेष समय के) (6) पढ़मपढ़म (एकेन्द्रिय बनने का पहला समय और कड़जुम्मा बनाने का पहला समय) (7) पढ़म अपढ़म (एकेन्द्रिय का पहला समय और कड़जुम्मा बनने के पहले समय को छोड़ शेष समय) (8) पढ़म-चरम (एकेन्द्रिय बनने का पहला समय कड़जुम्मा बिखरने का अंतिम समय) (9) पढ़म-अचरम (एकेन्द्रिय बनने का पहला समय कड़जुम्मा के अंतिम के सिवाय समय) (10) चरम-चरम (एकेन्द्रिय के आखिरी समय और कड़जुम्मा बिखरने का भी अंतिम) (11) चरम-अचरम (एकेन्द्रिय का अंतिम समय कड़जुम्मा के अंतिम के सिवाय समय) दूसरे प्रथम उद्देशक में 33 द्वार औघिक के अनुसार कहने हैं, किन्तु प्रथम समय के उत्पन्न जीवों में 10 णाणत्ता (10 बातों में फर्क) है-

(1)	अवगाहना	जघन्य उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग।
(2)	आयु बंधक	आयु के अबंधक है।
(3)	उदीरणा	छः कर्म के उदीरक, वेदनीय के उदीरक, अनुदीरक, आयुष्य के अनुदीरक।
(4)	उच्छवास	उच्छवास, निःश्वास नहीं होते (नो उच्छवास निःश्वास वाले हैं)
(5)	बंध	सात कर्मों के बंधक, है आठ के नहीं।
(6)	अनुबंध	काल की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट एक समय।
(7)	स्थिति	जघन्य उत्कृष्ट एक समय आयु के समान।
(8)	समुद्घात	दो वेदनीय, कषाय।
(9)	मरण	समोहया असमोहया कोई भी मरण नहीं होता।
(10)	च्यवन	च्यवन गति नहीं। मरते नहीं।

ग्यारह उद्देशों में पहला, तीसरा, पाँचवाँ ये तीन उद्देशा एक समान। बाकी 8 उद्देशा (दूसरा, चौथा, छठा, आठवाँ, नौवा, दसवाँ, ग्यारवाँ) एक समान है, इन उपरोक्त 8 में 10-10 बातों का फर्क है। चौथा-आठवाँ-दसवाँ ये तीन उद्देशों में देव नहीं

उपजते, इनमें तीन लेश्याएं होती है। कड़जुम्मा कड़जुम्मा की तरह शेष 15 जुम्मा का भी कहना है, विशेष यह कि परिमाण अपनी-अपनी अनुसार कहना। पहले अन्तर शतक के 11 उद्देश पूर्ण हुए।

दूसरा अंतर शतक में कृष्णलेशी के 11 उद्देशों में तीन बातों का णाणत्ता है (1) कृष्ण लेश्या कहनी (2) अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त (3) स्थिति में जघन्य एक समय स्थिति उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त। इसके चौथे छठे दसवें उद्देशे में देवता उत्पन्न नहीं होते। नीललेशी और कापोतलेशी के भी 11-11 उद्देशे अपनी-अपनी लेश्या के नाम से कहने।

इन चार शतकों के 44 उद्देशे हुए, इसी तरह भवी के भी 4 शतक के 44 उद्देशे कहने किन्तु सभी जीव भवी एकेन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए ऐसा कहना। इसी तरह अभवी के भी 4 शतक 44 उद्देशे कहना, उसमें सभी जीव अभवी एकेन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुये कहना। ये 12 अन्तर शतकों के 132 उद्देशे हुए।

203. बेइन्द्रिय महाजुम्मा (भ.श. 36 के 12 अन्तर शतकों के 132 उद्देशक)

शतक 35 में कहे एकेन्द्रिय सरीखा समस्त महायुग्म सहित 33 द्वारों के कथन इस प्रकार-

(1)	उपपात द्वार	मनुष्य और तिर्यंच दो गतियों से (मनुष्य के 3 तिर्यंच 46) 49 ठिकानों से
(2)	परिमाण द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा एक समय में 16, 32, 48 यावत् संख्य, असंख्य।
(3)	अपहार द्वार	एक-एक समय संख्य-असंख्य अपहरे तो भी असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी में भी खाली नहीं होवे।
(4)	अवगाहना द्वार	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट 12 योजन
(5)	बंधक द्वार	सात कर्म के बंधक, आयुष्य के बंधक भी अबंधक भी
(6)	वेदक द्वार	आठों कर्मों के वेदक, साता वेदक भी असाता वेदक भी
(7)	उदय द्वार	आठों कर्मों का उदय
(8)	उदीरणा द्वार	छः कर्म की उदीरणा, आयुष्य वेदनीय के उदीरक भी, अनुदीरक भी
(9)	लेश्या द्वार	कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या

(10)	दृष्टि द्वार	दो दृष्टि (सम और मिथ्या)
(11)	ज्ञान द्वार	दो ज्ञान दो अज्ञान
(12)	योग द्वार	दो योग-काय योग, वचन योग
(13)	उपयोग द्वार	दो-साकार, अनाकार
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा नहीं, शरीर की अपेक्षा औदारिक तैजस के 20, कार्मण के 16
(15)	उच्छवास द्वार	उच्छवासक भी, नि:श्वासक भी, नो उच्छवास नि:श्वासक भी
(16)	आहारक द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी
(17)	विरति द्वार	अविरति
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय है, अक्रिय नहीं
(19)	कर्मबंधक द्वार	सात या आठ कर्म के बंधक
(20)	संज्ञा द्वार	चार संज्ञा
(21)	कषाय द्वार	चार कषाय
(22)	वेद द्वार	एक नपुंसक वेद
(23)	वेदबंध	तीनों वेद बांधते हैं।
(24)	संज्ञी द्वार	असंज्ञी है
(25)	इन्द्रिय द्वार	सइन्द्रिय हैं
(26)	अनुबंध काल द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता काल
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता
(28)	आहार द्वार	नियमा 6 दिशा का 288 प्रकार का बोलों का आहार
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 12 वर्ष (यह कड़जुम्मा कड़जुम्मा आदि महाजुम्मा से)
(30)	समुद्घात द्वार	पहले की तीन-वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक समुद्घात
(31)	समोहया असमो.	समोहया असमोहया दोनों मरण मरते हैं।
(32)	च्यवन द्वार	मरकर मनुष्य तिर्यंच दोनों के 49 (46+3) ठिकानों में उत्पन्न होते हैं।
(33)	उपपात द्वार	सब प्राण, भूत, जीव, सत्व, बेइन्द्रिय कड़जुम्मा कड़जुम्मा अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुके हैं।

इसी प्रकार अन्य 15 जुम्मा पर भी कहना, परिमाण द्वार अपना-अपना कहना। दूसरा उद्देशक पद्म का है इसमें वचन योग कम हुआ और अन्य 10 णाणत्ता एकेन्द्रिय की तरह ये 11 बोलों में फर्क है। इस तरह 16 जुम्मा कह देना। इन 11 उद्देशों में पहला, तीसरा, पाँचवाँ ये तीन एक सरीखा है, बाकी 8 उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठे से ग्यारवें तक) सरीखे हैं। चौथा छठा आठवाँ दसवाँ इन 4 उद्देशों में ज्ञान नहीं, सम्यग्दृष्टि नहीं होते। पहला अन्तर शतक पूरा। दूसरे तीसरे और चौथे अन्तर शतक में कृष्ण, नील, कापोत लेश्या का वर्णन अपनी-अपनी लेश्या का कहना। अनुबंध और स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कहनी।

इसी तरह भवी के चार शतक है इनमें विशेष यह कि सब जीव पहले भवी रूप से बेइन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए। अभवी के 4 शतक इनमें कहना कि सब जीव पहले अभवीपणे बेइन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुए। ये 12 अंतर शतक और इनके 132 उद्देशक पूर्ण हुए।

204. तेइन्द्रिय महाजुम्मा (भ.श. 37 अन्तर शतक 12 उद्देशक 132) 36वें शतक की तरह वर्णन है, इसमें तेइन्द्रिय महाजुम्मा का अधिकार है विशेष यह कि अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है। स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट 49 अहोरात्रि होती है।

205. चौइन्द्रिय महाजुम्मा (भ.श. 38 अन्तर शतक 12 उ. 132) यह भी 36वें शतक के समान अधिकार वाला है यहाँ चौइन्द्रिय महाजुम्मा कहना है। विशेषता यह कि अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चार गाऊ और स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट छः माह होती है।

206. असंज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा (भ.श. 39 अन्तर शतक 12 उद्देशे 132) इसका भी 36वें शतक की तरह अधिकार है यहाँ असंज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा कहना विशेषता यह कि अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन। तथा स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट करोड़ पूर्व होती है। असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर चारों गति में 87 ठिकाणों में (46 तिर्यंच, 3 मनुष्य, ये 49 और 10 भवनपति, 8 व्यंतर, पहली नरक इन 19 के पर्याप्ता अपर्याप्ता 87) 38+49 जाता है।

207. संज्ञी पंचेन्द्रिय महाजुम्मा (भ.श. 40 अन्तर शतक 21 उद्देशक 231) पूर्व के महाजुम्मा की तरह यह सन्नी महायुग्म है, इसमें सन्नी तिर्यंच तथा सन्नी मनुष्य दोनों का समावेश है। इसमें अन्तर शतक 21 है, क्योंकि लेश्या 6+औघिक

ये 7 तथा भवी के और अभवी के सात-सात यों कुल 21 शतक तथा इनके 11-11 उद्देशकों से 231 उद्देशक 33 द्वारों से-

(1)	उपपात द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा संज्ञी पंचेन्द्रिय चारों गति से आकर उपजते हैं।
(2)	परिमाण द्वार	एक समय में कड़जुम्मा कड़जुम्मा 16, 32, 48 यावत् संख्य, असंख्य उपजे।
(3)	अपहार द्वार	कड़जुम्मा कड़जुम्मा एक समय में असंख्याता असंख्याता अपहरे तो असंख्याता उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पूर्ण होवे तो भी निर्लेप नहीं होते।
(4)	अवगाहना द्वार	जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन।
(5)	बंध द्वार	7 कर्म की भजना (बंधक भी अबंधक भी) वेदनीय की नियमा (12वाँ गुण.) ही है।
(6)	वेदक द्वार	7 कर्मों के वेदक, मोहनीय की भजना (वेदक भी, अवेदक भी) साता असाता है।
(7)	उदय द्वार	7 कर्मों के उदय वाले, मोहनीय के उदय भी, अनुदय भी (उपशांत मोहादि गुणस्थान वाले अनुदयी होते हैं) दसवें गुणस्थान तक मोहनीय का उदय है।
(8)	उदीरणा द्वार	नाम और गौत्र के उदीरक, बाकी छः कर्मों के उदीरक भी अनुदीरक भी है। क्षीण मोहनीय गुणस्थान तक नाम और गौत्र की उदीरणा, प्रमत्त संयत तक आठों की, आयुष्य कर्म आवलिका मात्र रहे तब तक सात की, तीसरे में आठ की (मरण नहीं होता इसलिए) अप्रमत्त आदि चार में वेदनीय, आयु के सिवाय छः की, सूक्ष्म सम्पराय आवलिका मात्र रहे तब मोहनीय, वेदनीय, आयु छोड़ पाँच की, उपशांत मोह में पाँच की, क्षीण मोहनीय गुणस्थान तक समय आवलिका मात्र रहे तब नाम और गौत्र की। सयोगी केवली में भी इन दो की, अयोगी में उदीरणा नहीं होती।
(9)	लेश्या द्वार	छहों लेश्याएं होती हैं।
(10)	दृष्टि द्वार	तीन दृष्टि
(11)	ज्ञान द्वार	4 ज्ञान, तीन अज्ञान
(12)	योग द्वार	तीन योग

(13)	उपयोग द्वार	साकार उपयोग, अनाकार उपयोग
(14)	वर्ण द्वार	जीव की अपेक्षा वर्ण नहीं। शरीर-औदारिक, वैक्रिय, आहारक,
		तैजस से 20 बोल, कार्मण शरीर में 16 वर्णादि बोल।
(15)	उच्छवास द्वार	उच्छवासक भी, नि:श्वासक भी, नो उच्छवासक नि:श्वासक भी है।
(16)	आहार द्वार	आहारक भी, अनाहारक भी है।
(17)	विरति द्वार	विरति (सर्वविरति) भी, अविरति भी, विरताविरति भी है।
(18)	क्रिया द्वार	सक्रिय है, अक्रिय नहीं।
(19)	कर्मबंधक द्वार	सप्तविध, अष्टविध, षड्विध, एकविध कर्म के बंधक है, अबंधक नहीं।
(20)	संज्ञा द्वार	चारों संज्ञा
(21)	कषाय द्वार	चारों कषाय, अकषायी भी होते हैं।
(22)	वेद द्वार	तीनों वेद, अवेदी भी।
(23)	वेदबंध	तीनों वेद बांधते हैं, और नहीं भी बांधते हैं।
(24)	संज्ञी द्वार	संज्ञी है, असंज्ञी नहीं
(25)	इन्द्रिय द्वार	सइन्द्रिय है, अनिन्द्रिय नहीं
(26)	अनुबंध द्वार	जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अनेक सौ सागर साधिक काल तक रहते हैं।
(27)	कायसंवेध द्वार	नहीं होता।
(28)	आहार द्वार	नियमा 6 दिशा का, 288 बोलों का आहार लेते हैं।
(29)	स्थिति द्वार	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम।
(30)	समुद्घात द्वार	6 समुद्घात (केवली समुद्घात छोड़कर)।
(31)	समोहया असमो.	समोहया असमोहया दोनों मरण मरते हैं।
(32)	च्यवन द्वार	संज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर चारों गति में सब ठिकानों में (नारकी के सात पर्याप्त अपर्याप्त, ये 14 नारकी, 46 तिर्यंच, 3 मनुष्य और 98 देवता) (10 भवनपति, 8 वाणव्यंतर, 5 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर ये 49 के पर्याप्त अपर्याप्त) ये कुल 161 ठिकाणों में जाता है।
(33)	उपपात द्वार	सभी प्राण, भूत, जीव, सत्व कड़जुम्मा कड़जुम्मा रूप से पहले अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं।

ये सभी 33 द्वार कड़जुम्मा कड़जुम्मा राशि पर कहे हैं, शेष 15 महाजुम्मा इसी तरह कहना, किन्तु परिमाण द्वार अपने-अपने परिमाणानुसार कहना। दूसरा उद्देशक प्रथम (पढ़म) में प्रथम समय के उत्पन्न हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय का है इसमें भी 33 द्वारों से पहले औघिक उद्देशे के समान कहना, परन्तु इसमें 19 णाणत्ता (बातों का फर्क) है-19 बातों में फर्क-

(1)	अवगाहना	जघन्य होती है अंगुल के असंख्यातवें भाग की
(2)	बंध	आयु का अबंध, 7 कर्मों का बंध
(3)	वेदन	आठ कर्मों को वेदते हैं, साता असाता दोनों के वेदक
(4)	उदय	आठ कर्मों का उदय
(5)	उदीरणा	आयुष्य के अनुदीरक, वेदनीय के उदीरक अनुदीरक, 6 कर्म के उदीरक
(6)	दृष्टि द्वार	दो दृष्टि (सम, मिथ्या) पाई जाती है
(7)	योग द्वार	एक काययोग
(8)	श्वासोच्छवास	नो उच्छवासक नो नि:श्वासक (उच्छवासक, नि:श्वासक नहीं होते)
(9)	विरति	अविरति वाले होते हैं
(10)	बंधक	7 कर्मों के बंधक, आयुष्य के अबंधक
(11)	संज्ञा	चार संज्ञा (नो संज्ञा वाले नहीं)
(12)	कषाय	चार कषाय (अकषायी नहीं)
(13)	वेद	तीनों वेद वाले (अवेदी नहीं)
(14)	वेदबंध	तीनों वेद के बंधक, अबंधक नहीं
(15)	अनुबंध	जघन्य उत्कृष्ट एक समय का अनुबंध
(16)	स्थिति	एक समय की
(17)	समुद्घात	दो-वेदनीय और कषाय समुद्घात
(18)	मरण	समोहया असमोहया दोनों मरण नहीं मरते हैं।
(19)	च्यवन	उनका च्यवन (मरण) नहीं होता।

बाकी सारा अधिकार पूर्ववत् जानना। पहला तीसरा पाँचवाँ ये तीन उद्देशक समान है। बाकी 8 उद्देशे (दूसरा, चौथा, छठा से ग्यारवाँ) एक समान है। चौथा छठा आठवाँ दसवाँ इन चार में ज्ञान नहीं, सम्यग्दृष्टि नहीं होते। कड़जुम्मा कड़जुम्मा की तरह शेष 15 जुम्मा भी कहना, परिमाण अपना-अपना कहना। दूसरे अन्तर शतक कृष्ण लेशी कड़जुम्मा कड़जुम्मा पर 33 द्वार कहना उसमें 12 बातों का णाणत्ता है- (1) बंध (2) वेदक (3) उदय (4) उदीरणा (5) लेश्या (6) बंधक (7) संज्ञा (8) कषाय (9) वेदबंधक इन नौ द्वारों का णाणत्ता बेइन्द्रिय के समान कहना। (10) वेद-तीनों वेद (अवेदी नहीं) (11) अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर (12) स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर। अन्य 21 द्वार औघिक के समान कहना। यह पहला उद्देशा औघिक पूर्ण हुआ। दूसरे उद्देशक पढ़म कृष्ण लेशी कड़जुम्मा कड़जुम्मा में औघिक की तरह कहना, किन्तु इसमें 13 बातों का णाणत्ता है-प्रथम अन्तर शतक के दूसरे उद्देशक के समान-

(1)	अवगाहना-	अंगुल के असंख्यातवें भाग
(2)	बंधक-	सात के बंधक, आयुष्य के अबंधक
(3)	उदीरणा-	छः कर्मों के उदीरक, वेदनीय के उदीरक-अनुदीरक दोनों, आयुष्य के अनुदीरक
(4)	दृष्टि-	दो (सम, मिथ्या)
(5)	योग-	एक काययोग
(6)	उच्छवास-	नो उच्छवासक नो निःश्वासक (उच्छवास की भी नहीं, निःश्वासक भी नहीं)
(7)	विरति-	अविरति
(8)	बंधक-	7 कर्म के बंधक, आयु के अबंधक
(9)	अनुबंध-	एक समय का
(10)	स्थिति-	1 समय की
(11)	समुद्घात-	2
(12)	समोहया असमोहया मरण नहीं	
(13)	च्यवन नहीं होता।	

इसी तरह शेष 15 जुम्मा कहना, परिमाण अपना-अपना कहना। पहला, तीसरा, पाँचवाँ उद्देशा समान है। बाकी 8 (दूसरा, चौथा, छठा से ग्यारवाँ) एक समान है। तीसरे नीललेशी अन्तर शतक में कृष्णलेशी की तरह कहना, लेश्या नील कहना, अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग साधिक कहना। इसी तरह स्थिति भी कहना।

चौथे शतक कापोतलेशी का कृष्णलेशी की तरह परन्तु कापोतलेशी कहना। अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक कहना, इसी तरह स्थिति भी कहना।

पाँचवें शतक तेजो लेश्या का कृष्ण लेश्या की तरह, परन्तु तेजो लेश्या कहना, अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट 2 सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक का और स्थिति इसी प्रकार का कहना। पहले और तीसरे उद्देशक में नो संज्ञा भी कहना क्योंकि तेजो लेश्या सातवें गुणस्थान में भी होती है, वहाँ पर संज्ञा नहीं होती, शेष पूर्ववत् कहना।

छठा अन्तर शतक-उपरोक्त प्रकार से कहना लेश्या में पद्म लेश्या कहना। अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक, स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागरोपम होती है।

सातवाँ शतक में संज्ञी पंचेन्द्रिय के औघिक शतक की तरह वर्णन है, किन्तु यहाँ शुक्ल लेश्या कहना। अनुबंध जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक। स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम होती है। औघिक और 6 लेश्या के 7 अन्तर शतक कहे उसी प्रकार सात अन्तर शतक भवी जीवों की अपेक्षा से कहना, विशेषता यह कि सब जीव (प्राण भूत जीव सत्व) पहले भवीपने उत्पन्न नहीं हुए कहना। (40-14-11 हुए) जिस तरह भवी जीवों के 7 अन्तर शतक कहे हैं, उसी तरह अभवी जीव के भी सात अन्तर शतक कहना किन्तु उनमें 9 बातों का णाणत्ता है-

(1)	उपपात द्वार-	आगति में 5 अणुत्तर विमान नहीं (वहाँ अभवी नहीं जाते)
(2)	दृष्टि-	एक मिथ्यादृष्टि
(3)	ज्ञान-	नहीं, अज्ञान 3 है
(4)	विरति-	अविरति होते हैं।
(5)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनेक सौ सागर साधिक
(6)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागरोपम (7वीं नरक)
(7)	समुद्घात-	पहले के पाँच समुद्घात
(8)	लेश्या-	छहों लेश्याएं
(9)	च्यवन-	पाँच अणुत्तर विमान छोड़कर (वर्जकर) च्यवन होता है।

सब प्राण, भूत, जीव, सत्व अभवीपने उत्पन्न नहीं हुए है।

पहला तीसरा पाँचवाँ उद्देशा समान है, शेष 8 उद्देशा एक समान है। (40-15-11) अभवी कृष्णलेशी में तीन णाणत्ता है-

(1)	लेश्या-	एक कृष्ण लेश्या
(2)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर अन्तर्मुहूर्त साधिक
(3)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 33 सागर

बाकी सारा अधिकार अभवी के औघिक उद्देशा की तरह। (40-16-11) अभवी नीललेशी में तीन नाणत्ते-

(1)	लेश्या-	नीललेशी
(2)	अनुबंध-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर पल्योपम के
		असंख्यातवें भाग अधिक
(3)	स्थिति-	जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर पल्य के असंख्यातवें भाग अधिक अन्य सारा अधिकार औघिक (अभवी के) की तरह (40-17-11)

अभवी कापोतलेशी में तीन नाणत्ते-

(1) लेश्या-कापोत

(2-3) अनुबंध और स्थिति- ज. 1 समय उत्कृष्ट तीन सागर पल्य के असंख्यात भाग अधिक अन्य अधिकार पूर्ववत् (श. 40 अं.श. 18-11)

अभवी तेजो लेश्या तीन नाणत्ते

(1) लेश्या- तेजो लेश्या

(2-3) अनुबंध और स्थिति- जघन्य एक समय उत्कृष्ट दो सागर पल्य के असंख्यातवें भाग अधिक शेष वर्णन पूर्ववत् (40-19-11)

अभवी पद्म लेश्या तीन नाणत्ते (1) लेश्या-पद्म लेश्या

(2) अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर अन्तर्मुहूर्त अधिक

(3) स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 10 सागर। अन्य वर्णन पूर्ववत् (40-20-11)

अभवी शुक्ल लेश्या-तीन णाणत्ता (1) लेश्या-एक शुक्ल लेश्या होती है

(2) अनुबंध-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 31 सागरोपम अन्तर्मुहूर्त अधिक

(3) स्थिति-जघन्य एक समय उत्कृष्ट 31 सागर बाकी सारा पूर्ववत् (40-21-11)

40वें शतक के 21 अन्तर शतक और 231 उद्देशे पूर्ण

208. राशि जुम्मा (राशि शतक) (भ.श. 41 के 196 उद्देशक) भगवतीसूत्र का यह अंतिम शतक है, इसमें अन्तर शतक नहीं, केवल 196 उद्देशक है। (1) समुच्चय, (2) भवी (3) अभवी (4) सम्यग्दृष्टि (5) मिथ्यादृष्टि (6) कृष्णपक्षी (7) शुक्लपक्षी। इनमें 6-6 लेश्या होने से 7-7 उद्देशक हैं। अत: 7x7=49 इनको चार राशि युग्म से गुणा करने पर 49x4=196 उद्देशे हुए।

राशि जुम्मा (युग्म) 4 प्रकार के (1) कड़जुम्मा (कृतयुग्म) (2) तेओगा (त्र्योज्य) (3) दावरजुम्मा (द्वापर युग्म) (4) कलियोगा (कल्योज)।

(1) उपपात द्वार-राशि कड़जुम्मा नैरयिक पूर्ववत् 11 स्थानों (सन्नी 5, असन्नी 5 तिर्यंच, संख्यात वर्षायु कर्मभूमि मनुष्य) से आकर उपजते हैं।

(2) परिमाण द्वार-राशि कड़जुम्मा एक समय में 4, 8, 12, 16 यावत् संख्याता, असंख्याता उपजे।

(3) सांतर निरंतर (सांतर-निरंतर)-यदि सांतर उपजे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय के अंतर से और निरंतर उपजे तो जघन्य समय उत्कृष्ट असंख्यात समय तक उपजते हैं।

(4) जिस समय कड़जुम्मा राशि रूप होते हैं तब तेओगा नहीं होते, तेओगा राशि रूप होने के समय दावर जुम्मा नहीं होते, इसी तरह एक राशि रूप होने के समय अन्य दूसरी राशि रूप नहीं होते।

(5) नेरिया अध्यवसाय और स्वक्रिया से पूर्व स्थान छोड़कर नरक में उपजता है। कूदते हुए मनुष्य की तरह।

(6-7) नरक में नेरिया अपने असंयम से उत्पन्न होता है, असंयम से जीता है, संयम से नहीं।

(8-9) नेरिया सलेशी है, अलेशी नहीं, सक्रिय है अक्रिय नहीं।

(10) नेरिया उसी भव में मोक्ष नहीं जाता।

इसी तरह 24 दंडक में कहना, नाणत्ता इस प्रकार है

(1) वनस्पति में उपपात यावत् अनन्ता कहना, विग्रह गति चार समय तक की ही होती है।

(2) आगति-श्री प्रज्ञापना सूत्र वर्णित 6ठे वक्कंति पद के अनुसार

(3) मनुष्य गति में जीव उत्कृष्ट संख्याता या असंख्याता उत्पन्न होते हैं, आत्म असंयम से उत्पन्न होते हैं परन्तु आत्म असंयम और आत्म संयम दोनों से जीते हैं। सलेशी और अलेशी दोनों प्रकार के होते हैं। सलेशी सक्रिय, अलेशी अक्रिय होते हैं। अक्रिय नियमा उसी भव से मोक्ष जाते हैं, जो सक्रिय होते हैं, कितनेक तो उसी भव मोक्ष चले जाते हैं, कितनेक उसी भव नहीं जाते। जो आत्म असंयम से जीते हैं, वे नियमा सलेशी और सक्रिय होते हैं, वे उसी भव में मोक्ष नहीं जाते।

वैमानिक देव आत्म संयम से भी उत्पन्न होते हैं, असंयम से भी उत्पन्न होते हैं।

कड़जुम्मा राशि की तरह तेओगा का भी कहना परिमाण में 3, 7, 11, 15 यावत् संख्याता असंख्याता कहना। इसी तरह दावर राशि का भी कहना परिमाण में 2, 6, 10, 14 यावत् संख्याता असंख्याता कहना। कलियोगा का भी इसी तरह, परन्तु परिमाण में 1, 5, 9, 13 यावत् संख्याता असंख्याता कहना। ये औघिक के 4 उद्देशे हुए। (41-4)

कृष्ण लेश्या-औघिक की तरह कहना परन्तु यहाँ 22 दंडक में ही कहना (ज्योतिषी वैमानिक छोड़कर)। नारकी में देवता में जितने स्थानों में कृष्ण लेश्या हो वहाँ कहना, आगति जितनी हो यथायोग्य कहना। मनुष्य में विशेष यह कि संयम, अलेशी, अक्रिय और तद्भव मोक्ष ये चार बोल नहीं कहना। कृष्ण लेश्या (भाव लेश्या) में चार बोलों का अभाव होता है। (41-8)

नील लेश्या-नील लेश्या के चार उद्देशक कहना इसमें अपना स्थान और आगति यथानुसार कहनी, शेष अधिकार कृष्ण लेश्या की तरह। (41-12)

कापोत लेश्या-चार उद्देशा इसके भी कहना। स्थान और आगति लेश्या के अनुसार, शेष सारा अधिकार कृष्ण लेश्या की तरह कहना। (41-16)

तेजो लेश्या-चार उद्देशा इसके भी होते हैं, किन्तु इनमें 18 दंडक ही कहना क्योंकि नारकी में तेजो लेश्या नहीं होती, वैमानिक में भी पहले दूसरे देवलोक तक ही होती है। आगति यथासंभव कहनी। (41-20)

पद्म लेश्या-चार उद्देशा इसके भी है यह लेश्या तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, और तीसरे से पाँचवें देवलोक में होती है अतः तीन दंडक में ही कहना। (41-24)

शुक्ल लेश्या-इसी तरह शुक्ल लेश्या के चार उद्देशा कहना दंडक तीन में ही कहना। जिस तरह समुच्चय में संयम, सलेशी, अलेशी, सक्रिय, अक्रिय, तद्भव (उसी भव) मोक्ष आदि विस्तार से कहा है, वह सब यहाँ भी कहना। (41-28)

इस तरह औघिक के चार, छः लेश्या के 24 ये सब 28 उद्देशे हुए।

इस तरह भवी जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए।

इसी तरह अभवी जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए।

इसी तरह समदृष्टि जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए।

इसी तरह मिथ्यादृष्टि जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए।

इसी तरह कृष्णपक्षी जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए।

इसी तरह शुक्लपक्षी जीवों के औघिक के समान 28 उद्देशे हुए ये 196 हुए।

अभवी में मनुष्य और नरक का कथन समान है, केवल संख्याता असंख्याता का फर्क है। सब जगह असंयम कहना। ये 41वें शतक के 196 उद्देशे पूर्ण हुए।

''इतिश्री भगवतीसूत्रं समाप्तम्''